



बहत्स्तोत्ररत्नाकरः

देवी - लक्ष्मी - सरस्वती - नवग्रह - दत्तात्रेय - दशावतार -
राम - गायत्री - हनुमत्स्तोत्रात्मकः

❧ द्वितीयो भागः ❧

(स्तोत्राणि २२६-४२५)



नारायण राम आचार्य, 'काव्य-न्यायतीर्थ'
इत्येतैः समुपबृंह्य संशोधितः

षोडशं संस्करणम् १९६५

निर्णयसागरप्रेस, मुंबई २

- मुद्रक - प्रकाशक -

लक्ष्मीबाई नारायण चौधरी

निर्णयसागर प्रेस,

२६।२८ डॉ. वेलकर स्ट्रीट, मुंबई २

मूल्य ५ रूप्यकाः

ध न्य वा द —

इस अनमोल एवं महाकाय ग्रंथ की संकलना में स्तोत्र - ग्रंथ, हस्तलिखित, आदर्श या अन्य सहयोग देकर जिन्होंने हमें अनुगृहीत किया है, एवं जिनकी रचनाएँ इस ग्रन्थ में दारिजिल करने की वजह से इस ग्रन्थ की उपादेयता में अभिवृद्धि हुई है उन सभी महानुभावों या संस्थाओं का यहां नामनिर्देश करना निहायत नामुमकिन है, अत एव हम कृतज्ञता पुरःसर उन सभी को हार्दिक धन्यवाद देकर अपने आधमर्ण्य की स्वीकृति यहां सविनय पेश करते हैं ।

सं पा द क

संपादक की ओर से —

इस वे-नजीर ग्रंथ का पहला भाग करीब एक वर्ष के पहले ही हमारे ग्राहकों के हाथों में पहुँच चुका है। उसके बाहरी और अन्तर्गत आकर्षण से लुब्ध ग्राहकों के सामने हम आज तक दूसरा भाग किसी ना किसी वजह से पेश कर नहीं सके, जिस हेतु से वे हम-से शायद रुठ भी गये हैं, यह हाल उनकी चिठियों से प्रतीत होता है। यह बात हुई हमारे माननीय ग्राहकों की। उनसे भी ज्यादा रुठे-से हैं वे महानुभाव, जिन्होंने इस कार्य में निरभिलाषतया एवं स्वयंस्फूर्ति से स्तोत्रों भेज कर हमें अनुगृहीत किया है ! उन सभी के लिए 'कृते पापेऽनुतापो वै यस्य पुंसः प्रजायते' इस उक्ति के अनुसार क्षमायाचना करना यह एक पारम्परिक या सभ्यतानुस्यूत आसान रास्ता है, फिर भी हम जो हमारी कठिनाइयाँ उनके सामने पेश किए वगैर उस मार्ग का सहारा हर-हमेशा ले लें तो वह भी वेहूदा कहलाया जायगा, इस खयाल से दो लब्ज उस विषय पर लिखना हमारी फ़र्ज समझकर उसे यहां अदा कर रहे हैं।

दरअसल स्तोत्रों का संकलन पुराण व उपपुराणों से होता है। भारतीय पुराण ग्रंथ तो एक अनोखा सागर एवं सद्भक्तिवारा का अमिट स्रोत है। उसमें से स्तोत्रों को चुन चुन कर लेना व उपलब्ध पाठों में से शुद्ध पाठ को निश्चित करना आदि इस महान् कार्य में ही काफी समय व्यतीत होता है, यह अनुभवसिद्ध है।

स्वयंस्फूर्त सहयोग एक सात्विक ज्ञानयज्ञ है। इस कार्य में हमारे कई एक महाशयों ने अनभिलषित सहयोग देकर जरूर हमें उपकृत

किया है, पर उनका साहित्य फलाना दैवत का स्तोत्रसंग्रह छप जाने के पश्चात् हमें प्राप्त होने के कारण आदिम या दोनों भागों में निविष्ट करना नामुंकिन हुआ है और आखरी याने तीसरे भाग में जो संकीर्ण विभाग होनेवाला है, उसीमें निविष्ट करना यह एकही हमारे लिये आसान रास्ता है। दो भाग छपते छपते बहोत समय व्यतीत हुआ, और उसी वजह से हम सहयोगी महानुभाव और ग्राहकों की नाराजी के हेतु बने हैं। फिर भी हमें विश्वास है, कि इस दूसरे भाग को देखते ही वे सब कुछ जरूर भूल जाएंगे।

प्रथम भाग में गणपति, विष्णु और शिव सिर्फ इन तीन देवताओं के २२५ का स्तोत्रों संग्रह छप चुका है जिसकी अंदाजा पृष्ठसंख्या ३५८ से अधिक है।

इस **द्वितीय भाग** में देवी, लक्ष्मी, सरस्वती, नवग्रह, दत्तात्रेय, दशावतार, राम, गायत्री और हनुमान इन ९ देवताओं के (स्तोत्रांक २२६ से ४२५ तक) स्तोत्रों का संग्रह मौजूद है, और पृष्ठसंख्या करीब ४६८ से ज्यादा है। उर्वरित विषय तीसरे भाग में प्रकाशित होंगे।

इस ग्रंथ के जरिये पाठक को संकल्पित ऐहिक या पारत्रिक लाभ प्राप्त हो जाय तो सचमुच हम अपने श्रम सफल समझेंगे।

१५ ऑगस्ट १९६५

संशोधन विभाग
निर्णयसागर प्रेस,
बम्बई २

नारायण राम आचार्य

बृहत्स्तोत्ररत्नाकरस्य
द्वितीय भागस्य
स्तोत्रानुक्रमकोशः

स्तोत्राङ्कः	नाम	पृ.	स्तोत्राङ्कः	नाम	पृ.
२२६	देव्यथर्वशीर्षम्	१	२४१	आर्यादुर्गाष्टकम्	३८
२२७	देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम्	३	२४२	कात्यायन्यष्टकम्	३९
२२८	आनन्दलहरी	५	२४३	पुराणोक्तं रात्रिसूक्तम्	४०
२२९	त्रिपुरसुन्दरीस्तोत्रम्	७	२४४	शक्रादिकृता देवीस्तुतिः	४१
२३०	शीतलाष्टकम्	८	२४५	नारायणीस्तुतिः	४४
२३१	वाराहीनिग्रहाष्टकम्	९	२४६	ललितासहस्रनाम-	
२३२	वाराह्यनुग्रहाष्टम्	१०		स्तोत्रम्	४७
२३३	चण्डीकवचम्	११	२४७	शाकम्भरीस्तवः	६९
२३४	अर्गलास्तोत्रम्	१४	२४८	भगवत्यष्टकम्	७०
२३५	भगवत्याः कीलकस्तोत्रम्	१६	२४९	सङ्कष्टनाशनं सङ्कटाष्टकम्	७१
२३६	सौन्दर्यलहरीस्तोत्रम्	१७	२५०	श्रीकुञ्जिकास्तोत्रम्	७२
२३७	सप्तशतीध्यानात्मकं		२५१	लघुसप्तशतीस्तोत्रम्	७३
	स्तोत्रम्	२९	२५२	देवीक्षमापनस्तोत्रम्	७५
२३८	सप्तशतीसारभूतदुर्गा-		२५३	अम्बाष्टम्	७५
	स्तोत्रम्	३३	२५४	भ्रमराम्बास्तोत्रम्	७७
२३९	दुर्गास्तोत्रम्	३६	२५५	तांत्रिकं देवीसूक्तम्	७८
२४०	रात्रिसूक्तात्मकं		२५६	प्राधानिकं रहस्यम्	८०
	देवीस्तोत्रम्	३७	२५७	वैकृतिकं रहस्यम्	८२

स्तोत्राङ्कः	नाम	पृ.	स्तोत्राङ्कः	नाम	पृ.
२५८	मूर्तिरहस्यम्	८४	२७३	त्रिपुरसुन्दर्यपराध-	
२५९	भगवतीस्तोत्रम्	८६		क्षमापनस्तवः	१११
२६०	देवाष्टकम्	८७	२७४	त्रिपुरसुन्दरीवेदसार-	
२६१	देवीस्तोत्रम्	८७		स्तवः	११३
२६२	कल्याणवृष्टिस्तवः	८८	२७५	श्रेयस्करीस्तोत्रम्	११६
२६३	नामरत्ननवरत्नमालिका	९०	२७६	दुर्गापदुद्धारस्तवराजः	११७
२६४	मीनाक्षीपञ्चरत्नस्तोत्रम्	९१	२७७	वाग्वादिनीस्तोत्रम्	११८
२६५	मीनाक्षीस्तोत्रम्	९२	२७८	मंत्रमातृकापुष्पमाला-	
२६६	देवीशतकम्	९३		स्तवः	११९
२६७	त्रिपुरसुन्दरीप्रातःस्मरण-		२७९	चण्डीकुचपञ्चाशिका-	
	स्तोत्रम्	१०१		स्तोत्रम्	१२२
२६८	त्रिपुरसुन्दरीसान्निध्य-		२८०	महामारीस्तोत्रम्	१३१
	स्तवः	१०२	२८१	त्रिपुरसुन्दरीमानसिको-	
२६९	त्रिपुरसुन्दरीषोडशोपचार-			पचारपूजास्तोत्रम्	१३३
	पूजास्तोत्रम्	१०४	२८२	श्रीचक्रराजवर्णनम्	१४८
२७०	त्रिपुरसुन्दरीविजय-		२८३	देवीगीतिशतकम्	१५१
	स्तवः	१०६	२८४	त्रिपुरसुन्दरीमानसपूजन-	
२७१	त्रिपुरसुन्दरीपुष्पाञ्जलि-			स्तोत्रम्	१५९
	स्तवः	१०८	२८५	परा मानसिका पूजा	१६६
२७२	त्रिपुरसुन्दरीचक्रराज-		२८६	विन्ध्यवासिनीस्तोत्रम्	१७३
	स्तवः	१०९	२८७	वंशवृद्धिकरं वंश-	
				कवचम्	१७४

स्तोत्राङ्कः	नाम	पृ.	स्तोत्राङ्कः	नाम	पृ.
२८८	ललितापञ्चरत्नम्	१७६	३०८	मोहिन्यर्गलास्तोत्रम्	२२०
२८९	विन्ध्येश्वरीस्तोत्रम्	१७६	३०९	अन्नपूर्णास्तवः	२२२
२९०	भवानीभुजङ्गस्तुतिः	१७७	३१०	बीजषोडशार्णमकरंद- स्तोत्रम्	२२३
२९१	भगवतीपद्मपुष्पाञ्जलि- स्तोत्रम्	१७९	३११	कालिकास्तोत्रम्	२२६
२९२	भवानीस्तुतिः	१८२	३१२	देवीपङ्कम्	२२७
२९३	देवीभुजङ्गप्रयात- स्तोत्रम्	१८२	❀ लक्ष्मीस्तोत्राणि ❀		
२९४	गौरीदशकस्तोत्रम्	१८५	३१३	महालक्ष्म्यष्टकस्तवः	२२९
२९५	देवीपदपङ्कजाष्टकम्	१८६	३१४	श्रीकनकलक्ष्मीधारा- स्तवः	२३०
२९६	मातङ्गीषङ्कम्	१८७	३१५	देवकृतलक्ष्मीस्तोत्रम्	२३१
२९७	श्रीभुवनेश्वरीस्तोत्रम्	१८९	३१६	राधाकवचम्	२३३
२९८	इन्द्राक्षीस्तोत्रम्	१९३	३१७	श्रीस्तोत्रम्	२३४
२९९	शक्तिमहिम्नः स्तोत्रम्	१९५	३१८	लक्ष्मीलहरी	२३६
३००	कालिकाकवचम्	२०३	३१९	सिद्धिलक्ष्मीस्तवः	२४०
३०१	वरदवलभास्तोत्रम्	२०५	३२०	श्रीस्तवः	२४३
३०२	लघुस्तवः	२०६	३२१	श्रीलक्ष्म्यष्टोत्तरशतनाम- स्तोत्रम्	२४४
३०३	ताराष्टकम्	२०९	३२२	महालक्ष्मीकवचम्	२४६
३०४	अम्बास्तवः	२११	३२३	श्रीस्तुतिः	२४७
३०५	चर्चास्तवः	२१३	३२४	लक्ष्मीस्तोत्रम्	२५०
३०६	श्यामलादण्डकम्	२१६	३२५	लक्ष्मीहृदयम्	२५२
३०७	मोहिनीकवचम्	२१९	३२६	जगन्मङ्गलास्तोत्रम्	२६२

स्तोत्राङ्कः	नाम	पृ.	स्तोत्राङ्कः	नाम	पृ.
३२७	शारदाभुजङ्गप्रयात-		३४४	शुकस्तवराजः	२८१
	स्तोत्रम्	२६३	३४५	शुककवचम्	२८१
३२८	सरस्वतीस्तोत्रम्	२६३	३४६	शनैश्वरस्तवराजः	२८२
३२९	शारदाषट्कस्तोत्रम्	२६४	३४७	शनैश्वरस्तोत्रम्	२८४
३३०	सरस्वतीस्तोत्रम्	२६५	३४८	शनिवज्रपञ्जरकवचम्	२८५
३३१	शारदास्तोत्रम्	२६५	३४९	राहुस्तोत्रम्	२८६
३३२	नीलसरस्वतीस्तोत्रम्	२६९	३५०	राहुकवचम्	२८६
❁ नवग्रहस्तोत्राणि ❁			३५१	केतुपञ्चविंशतिनाम-	
३३३	आदित्यस्तोत्रम्	२७०		स्तोत्रम्	२८७
३३४	सूर्यकवचम्	२७१	३५२	केतुकवचम्	२८८
३३५	चन्द्राष्टाविंशतिनाम-		३५३	नवग्रहस्तोत्रम्	२८८
	स्तोत्रम्	२७३	३५४	नवग्रहपीडाहरस्तोत्रम्	२८९
३३६	चंद्रकवचम्	२७३	❁ दत्तात्रेयस्तोत्राणि ❁		
३३७	अङ्गारककवचम्	२७४	३५५	दत्तलहरिः	२९१
३३८	ऋणमोचकमङ्गल-		३५६	दत्तात्मपूजास्तोत्रम्	३०२
	स्तोत्रम्	२७५	३५७	शंकराचार्यकृत-	
३३९	मङ्गलकवचम्	२७६		गुर्वष्टकम्	३०४
३४०	बुधपञ्चविंशतिनाम-		३५८	दत्तात्रेयस्तोत्रम्	३०५
	स्तोत्रम्	२७७	३५९	दत्तापराधक्षमापन-	
३४१	बुधकवचम्	२७७		स्तोत्रम्	३०६
३४२	बृहस्पतिस्तोत्रम्	२७९	३६०	श्रीदत्तप्रार्थनाचतुष्टकम्	३०७
३४३	बृहस्पतिकवचम्	२८०	३६१	दत्तप्रबोधः	३०७

स्तोत्राङ्कः	नाम	पृ.	स्तोत्राङ्कः	नाम	पृ.
३६२	दत्तात्रेयाष्टोत्तरशत- नामावलिस्तोत्रम्	३०८	❀ रामस्तोत्राणि ❀		
३६३	दत्तवेदपादस्तुतिः	३१०	३७८	रामहृदयम्	३४२
३६४	श्रीमहावाक्यार्थबोधः	३१४	३७९	रामस्तवराजः	३४२
३६५	दत्तात्रेयभक्तिनिरूपण- स्तोत्रम्	३१९	३८०	रामगीता	३४९
३६६	गुरुवरप्रार्थनापञ्चरत्न- स्तोत्रम्	३२३	३८१	रामरक्षास्तोत्रम्	३५५
३६७	दक्षिणामूर्तिस्तोत्रम्	३२३	३८२	ब्रह्मदेवकृता राम- स्तुतिः	३५७
३६८	श्रीदत्तात्रेयवज्रकवचम्	३२५	३८३	जटायुकृतं राम- स्तोत्रम्	३५८
३६९	श्रीदत्तशरणाष्टकम्	३३१	३८४	रामाष्टकम्	३५९
❀ दशावतारस्तोत्राणि ❀			३८५	रामाष्टकम्	३६०
३७०	मत्स्यस्तोत्रम्	३३२	३८६	महादेवकृतं राम- स्तोत्रम्	३६१
३७१	कूर्मस्तोत्रम्	३३२	३८७	अहल्याकृतं राम- स्तोत्रम्	३६२
३७२	वराहस्तोत्रम्	३३३	३८८	इन्द्रकृतं रामस्तोत्रम्	३६४
३७३	नृसिंहस्तोत्रम्	३३४	३८९	रामचन्द्राष्टकम्	३६५
३७४	लक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम्	३३६	३९०	श्रीसीतारामाष्टकम्	३६६
३७५	वामनस्तोत्रम्	३३७	३९१	श्रीराममहिम्नः स्तोत्रम्	३६७
३७६	वामनस्तोत्रम्	३३८	३९२	रामभुजङ्गप्रयात- स्तोत्रम्	३७२
३७७	परशुरामाष्टाविंशतिनाम- स्तोत्रम्	३३९			

स्तोत्राङ्कः	नाम	पृ.	स्तोत्राङ्कः	नाम	पृ.
❁ गायत्रीस्तोत्राणि ❁			४०९	सूर्यार्थर्वशीर्षम्	४१२
३९४	गायत्रीशापोद्धार-		४१०	आदित्यहृदयम्	४१५
	स्तोत्रम्	३७६	४११	सूर्यकवचस्तोत्रम्	४२८
३९४	गायत्रीकवचम्	३७७	४१२	अगस्त्योक्तं आदित्य-	
३९५	गायत्रीस्तोत्रम्	३८०		हृदयम्	४२८
३९६	गायत्रीकवचम्	३८२	४१३	सूर्यस्तोत्रम्	४३०
३९७	सावित्रीपञ्जरस्तोत्रम्	३८६	४१४	सूर्याष्टोत्तरशतनाम-	
३९८	गायत्रीस्तोत्रम्	३९१		स्तोत्रम्	४३१
३९९	गायत्रीनामाष्टाविंशति-		४१५	सूर्यस्तोत्रम्	४३२
	स्तोत्रम्	३९३	४१६	सूर्यशतकम्	४३४
४००	गायत्र्यथर्वशीर्षम्	३९५	४१७	सूर्यार्यास्तोत्रम्	४५०
४०१	गायत्रीस्तवराजः	४००	४१८	सूर्याष्टकम्	४५१
४०२	गायत्रीतत्त्वस्तोत्रम्	४०३	४१९	साम्बपञ्चाशिका	४५१
❁ कार्तिकेयस्तोत्राणि ❁			४२०	सूर्यस्तोत्रम्	४५८
४०३	सुब्रह्मण्यस्तोत्रम्	४०५	❁ हनुमत्स्तोत्राणि ❁		
४०४	सुब्रह्मण्यभुजङ्गस्तोत्रम्	४०५	४२१	मारुतिस्तोत्रम्	४६०
४०५	कार्तिकेयस्तोत्रम्	४०७	४२२	हनुमद्वाडवानल-	
४०६	सुब्रह्मण्याष्टकम्	४०८		स्तोत्रम्	४६२
४०७	सुब्रह्मण्याष्टोत्तरशतनाम-		४२३	पञ्चमुखहनुमत्कवचम्	४६५
	स्तोत्रम्	४०९	४२४	हनुमद्वङ्गुलाञ्ज-	
❁ सूर्यस्तोत्राणि ❁				स्तोत्रम्	४६५
४०८	त्रैलोक्यमङ्गलसूर्य-		४२५	एकादशमुखहनुम-	
	कवचम्	४१३		त्कवचम्	४६६

बृहत्स्तोत्ररत्नाकरः

द्वितीयो भागः

❀ देवीस्तोत्राणि ❀

२२६. देव्यथर्वशीर्षम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुः कासि त्वं
महादेवीति साऽब्रवीदहं ब्रह्मस्वरूपिणी । मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं
जगत् । शून्यं चाशून्यं च । अहमानंदानंदौ । अहं विज्ञानाविज्ञाने ।
अहं ब्रह्माब्रह्मणी । द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये । इति चाथर्वणी श्रुतिः ।
अहं पंचभूतानि । अहं पंचतन्मात्राणि । अहमखिलं जगत् ।
वेदोऽहमवेदोऽहम् । विद्याहमविद्याहम् । अजाहमनजाहम् । अधश्चोर्ध्वं
च तिर्यक्चाहम् । अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि । अहमादित्यैरुत
विश्वदेवैः । अहं मित्रावरुणावुभौ बिभर्मि । अहमिंद्राग्नी अहमश्विना
उभौ । अहं सोमं त्वष्टारं भगं दधामि । अहं विष्णुमुरुक्रमम् ।
ब्रह्माणमुत प्रजापतिं दधामि । अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये
यजमानाय सुव्रते । अहं राज्ञी संगमनी वसूनां चिकितुषी
प्रथमा यज्ञियानाम् । अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्मम योनिरप्स्वंतः
समुद्रे । य एवं वेद स दैवीं संपदमाप्नोति । ते देवा अब्रुवन् ।
नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः । नमः प्रकृत्यै भद्रायै
नियताः प्रणताः स्म ताम् । तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं
कर्मफलेषु जुष्टाम् । दुर्गां देवीं शरणं प्रपद्यामहेऽसुरान्नाशयिष्यै ते
नमः । देवीं वाचमजनयंत देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति । सा नो

मंद्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुपसुष्टुतैतु ॥ कालरात्रीं ब्रह्मस्तुतां
 वैष्णवीं स्कंदमातरम् । सरस्वतीमदितिं दक्षदुहितरं नमामः पावनां
 शिवाम् । महालक्ष्म्यै च विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि । तन्नो देवी
 प्रचोदयात् । अदितिर्ह्यजनिष्ट दक्ष या दुहिता तव । तां देवा
 अन्वजायंत भद्रा अमृतबंधवः ॥ कामे योनिः कमला वज्रपाणिर्गुहा
 हंसा मातलिश्चाभ्रमिंद्रः । पुनर्गुहा सकला मायया चापृथक्
 क्लेशा विश्वमातादिविद्याः ॥ एषात्मशक्तिः । एषा विश्वमोहिनी
 पाशांकुशधनुर्बाणधरा । एषा श्रीमहाविद्या । य एवं वेद स शोकं
 तरति । नमस्ते भगवति मातरस्मान्पाहि सर्वतः । सैषा वैष्णव्यष्टौ
 वसवः, सैवैकादश रुद्राः, सैषा द्वादशादित्याः, सैषा विश्वेदेवाः सोमपा
 असोमपाश्च, सैषा यातुधाना असुरा रक्षांसि पिशाचयक्षसिद्धाः ।
 सैषा सत्त्वरजस्तमांसि, सैषा ब्रह्मविष्णुरुद्ररूपिणी, सैषा प्रजापतींद्र-
 मनवः, सैषा ग्रहनक्षत्रज्योतिःकलाकाष्ठादिविश्वरूपिणी, तामहं
 प्रणौमि नित्यम् । पापापहारिणीं देवीं भुक्तिमुक्तिप्रदायिनीम् ।
 अनंतां विजयां शुद्धां शरण्यां सर्वदां शिवाम् । वियदाकारसंयुक्तं
 वीतिहोत्रसमन्वितम् । अर्धेन्दुलसितं देव्या बीजं सर्वार्थसाधकम् ।
 एवमेकाक्षरं मंत्रं यतयः शुद्धचेतसः । ध्यायन्ति परमानंदमया
 ज्ञानांबुराशयः । वाङ्मया ब्रह्मभूस्तस्मात्षष्ठवक्त्रसमन्वितम् । सूर्यो
 वामश्रोत्रबिंदुसंयुक्ताष्टतृतीयकम् । नारायणेन संमिश्रो वायुश्चा-
 धारयुक्ततः । विच्चेनवार्णकोणस्य महानानंददायकः । हृत्पुंडरीक-
 मध्यस्थां प्रातःसूर्यसमप्रभाम् । पाशांकुशधरां सौम्या वरदाभय-
 हस्तकाम् । त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्तकामदुहं भजे । भजामि त्वां
 महादेवि महाभयविनाशिनि । महादारिद्र्यशमनि महाकारुण्य-
 रूपिणि । यस्याः स्वरूपं ब्रह्मादयो न जानन्ति तस्मादुच्यते अज्ञेया ।

यस्या अंतो न लभ्यते तस्मादुच्यते अनंता । यस्या लक्षं
नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अलक्षा । यस्या जननं नोपलक्ष्यते
तस्मादुच्यते अजा । एकैव सर्वत्र वर्तते तस्मादुच्यते एका ।
एकैव विश्वरूपिणी तस्मादुच्यतेऽनेका । अत एवोच्यतेऽज्ञेया-
ऽनंतालक्ष्याऽजैकानेका । मंत्राणां मातृका देवी शब्दानां ज्ञानरूपिणी ।
ज्ञानानां चिन्मयातीता शून्यानां शून्यसाक्षिणी ॥ यस्याः परतरं नास्ति
सैषा दुर्गा प्रकीर्तिता । तां दुर्गां दुर्गमां देवीं दुराचारविघातिनीम् ।
नमामि भवभीतोऽहं संसारार्णवतारिणीम् । इदमथर्वशीर्षं योऽधीते ।
स पंचाथर्वशीर्षफलमाप्नोति । इदमथर्वशीर्षं ज्ञात्वा योऽर्चां स्थाप-
यति । शतलक्षं प्रजप्तापि नार्चाशुद्धिं च विंदति । शतमष्टोत्तरं चास्य
पुरश्चर्याविधिः स्मृतः । दशवारं पठेद्यस्तु सद्यः पापैः प्रमुच्यते ।
महादुर्गाणि तरति महादेव्याः प्रसादतः । सायमधीयानो दिवसकृतं
पापं नाशयति । प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायंप्रातः
प्रयुंजानोऽपापो भवति । निशीथे तुरीयसंध्यायां जप्त्वा वाक्सिद्धिर्भ-
वति । नूतनायां प्रतिमायां जप्त्वा देवतासांनिध्यं भवति । भौमाश्विन्यां
महादेवीसंनिधौ जप्त्वा महामृत्युं तरति स महामृत्युं तरति । य एवं
वेद । इत्युपनिषत् ॥ इति देव्यथर्वशीर्षं संपूर्णम् ॥

लीलया ॥ ३ ॥ कदंबवनमध्यगां कनकमंडलोपस्थितां पडंबुरुह-
वासिनीं सततसिद्धसौदामिनीम् । विडंबितजपारुचिं विकचचंद्र-
चूडामणिं त्रिलोचनकुटुंबिनीं त्रिपुरसुंदरीमाश्रये ॥ ४ ॥ कुचांचित-
विपंचिकां कुटिलकुंतलालंकृतां कुशेशयनिवासिनीं कुटिलचित्त-
विद्वेषिणीम् । मदारुणविलोचनां मनसिजारिसंमोहिनीं मतंगमुनि-
कन्यकां मधुरभाषिणीमाश्रये ॥ ५ ॥ स्मरेत्प्रथमपुष्पिणीं रुधिर-
बिंदुनीलांबरां गृहीतमधुपात्रिकां मधुविघूर्णनेत्रांचलाम् । घनस्तन-

सन्ति सरलाः परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽयं तव सुतः । मदीयोऽयं
 त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे कुपुत्रो जायेत कचिदपि कुमाता
 न भवति ॥ ३ ॥ जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता न वा दत्तं
 देवि द्रविणमपि भूयस्तव मया । तथापि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्र-
 कुरुषे कुपुत्रो जायेत कचिदपि कुमाता न भवति ॥ ४ ॥ परित्यक्त्वा
 देवान्विविधविधसेवाकुलतया मया पंचाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि ।
 इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नापि भविता निरालंबो लंबोदरजननि
 कं यामि शरणम् ॥ ५ ॥ श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा
 निरातंको रंको विहरति चिरं कोटिकनकैः । तवापर्णे कर्णे विशति
 मनुवर्णे फलमिदं जनः को जानीते जननि जपनीयं जपविधौ ॥ ६ ॥
 चिताभस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो जटाधारी कंठे भुजगपतिहारी
 पशुपतिः । कपाली भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं भवानि त्वत्पाणि-
 ग्रहणपरिपाटीफलमिदम् ॥ ७ ॥ न मोक्षस्याकांक्षा न च विभव-
 वांछापि च न मे न विज्ञानापेक्षा शशिसुखि सुखेच्छापि न पुनः ।
 अतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै मृडानी रुद्राणी शिव
 शिव भवानीति जपतः ॥ ८ ॥ नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः
 किं रूक्षचिंतनपरैर्न कृतं वचोभिः । श्यामे त्वमेव यदि किंचन मय्य-

ज्ञानांबुराशयः । वाङ्मया ब्रह्मभूस्तस्मात्पृष्ठवक्त्रसमन्वितम् । सूर्यो
 वामश्रोत्रबिंदुसंयुक्ताष्टतृतीयकम् । नारायणेन संमिश्रो वायुश्चा-
 धारयुक्ततः । विज्ञेनवार्णकोणस्य महानानंददायकः । हृत्पुंडरीक-
 मध्यस्थां प्रातःसूर्यसमप्रभाम् । पाशांकुशधरां सौम्या वरदाभय-
 हस्तकाम् । त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्तकामदुहं भजे । भजामि त्वां
 महादेवि महाभयविनाशिनि । महादारिद्र्यशमनि महाकारुण्य-
 रूपिणि । यस्याः स्वरूपं ब्रह्मादयो न जानन्ति तस्मादुच्यते अज्ञेया ।

स्ताम्यद्वदनकमलं वीक्ष्य कृपया प्रतिष्ठामातेने निजशिरसि वासेन
गिरिशः ॥ १८ ॥ विशालश्रीखंडद्रवमृगमदाकीर्णधुसृणः प्रसून-
व्यामिश्रं भगवति तवाभ्यंगसलिलम् । समादाय स्रष्टा चलितपद-
पांसूत्रिजकरैः समाधत्ते सृष्टिं विबुधपुरपंकेरुहदशाम् ॥ १९ ॥
वसन्ते सानंदे कुसुमितलताभिः परिवृते स्फुरन्नानापद्मे सरसि
कलहंशालिसुभगे । सखीभिः खेलन्तीं मलयपवनांदोलितजलैः स्मरे-
द्यस्त्वां तस्य ज्वरजनितपीडाऽपसरति ॥ २० ॥ इति श्रीमत्परमहंस-
परिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचितानंदलहरी संपूर्णा ॥

२२९. त्रिपुरसुंदरीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कदंबवनचारिणीं मुनिकदंबकादंबिनीं नितम्ब-
जितभूधरां सुरनितंबिनीसेविताम् । नवांबुरुहलोचनामभिनवांबुद-
श्यामलां त्रिलोचनकुटुंबिनीं त्रिपुरसुंदरीमाश्रये ॥ १ ॥ कदंब-
वनवासिनीं कनकवल्लीधारिणीं महार्हमणिहारिणीं मुखसमुल्लस-
द्वारुणीम् । दयाविभवकारिणीं विशदलोचनीं चारिणीं त्रिलोचन-
कुटुंबिनीं त्रिपुरसुंदरीमाश्रये ॥ २ ॥ कदंबवनशालया कुचभरोल-
सन्मालया कुचोपमितशैलया गुरुकृपालसद्वेलया । मदारुण-
कपोलया मधुरगीतवाचालया कयापि घननीलया कवचिता वयं
लीलया ॥ ३ ॥ कदंबवनमध्यगां कनकमंडलोपस्थितां षडंबुरुह-
वासिनीं सततसिद्धसौदामिनीम् । विडंबितजपारुचिं विकचचंद्र-
चूडामणिं त्रिलोचनकुटुंबिनीं त्रिपुरसुंदरीमाश्रये ॥ ४ ॥ कुचांचित-
विपंचिकां कुटिलकुंतलालंकृतां कुशेशयनिवासिनीं कुटिलचित्त-
विद्वेषिणीम् । मदारुणविलोचनां मनसिजारिसंमोहिनीं मतंगमुनि-
कन्यकां मधुरभाषिणीमाश्रये ॥ ५ ॥ स्मरेत्प्रथमपुष्पिणीं रुधिर-
बिंदुनीलांबरां गृहीतमधुपात्रिकां मधुविधूर्णेन्नेत्रांचलाम् । घनस्तन-

भरोन्नतां गलितचूलिकां श्यामलां त्रिलोचनकुटुंबिनीं त्रिपुरसुंदरी-
माश्रये ॥ ६ ॥ सकुंकुमविलेपनामलकचुंबिकस्तूरिकां समंदहसिते-
क्षणां सशरचापपाशांकुशाम् । अशेषजनमोहिनीमरुणमाल्यभूषांबरं
जपाकुसुमभासुरां जपविधौ स्मराम्यंबिकाम् ॥ ७ ॥ पुरंदरपुरंध्रिका-
चिकुरबंधसैरंध्रिकां पितामहपतिव्रतां पटुपटीरचर्चरताम् । मुकुंद-
रमणीं मणीलसदलंक्रियाकारिणीं भजामि भुवनांबिकां सुरवधूटिका-
चेटिकाम् ॥ ८ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकरा-
चार्यविरचितं त्रिपुरसुंदरीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२३०. शीतलाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीशीतलाष्टकस्तोत्रस्य महादेव ऋषिः,
अनुष्टुप् छंदः, शीतला देवता, लक्ष्मीबीजम्, भवानी शक्तिः,
सर्वविस्फोटकनिवृत्तये जपे विनियोगः ॥ ईश्वर उवाच ॥ वंदेऽहं
शीतलां देवीं रासभस्थां दिगंबराम् । मार्जनीकलशोपेतां शूर्पा-
लंकृतमस्तकाम् ॥ १ ॥ वंदेऽहं शीतलां देवीं सर्वरोगभयापहाम् ।
यामासाद्य निवर्तेत विस्फोटकभयं महत् ॥ २ ॥ शीतले शीतले
चेति यो ब्रूयाद्वाहपीडितः । विस्फोटकभयं घोरं क्षिप्रं तस्य
प्रणश्यति ॥ ३ ॥ यस्त्वामुदकमध्ये तु धृत्वा पूजयते नरः ।
विस्फोटकभयं घोरं गृहे तस्य न जायते ॥ ४ ॥ शीतले
ज्वरदग्धस्य पूतिगंधयुतस्य च । प्रनष्टचक्षुषः पुंसस्त्वा-
माहुर्जीवनौषधम् ॥ ५ ॥ शीतले तनुजान् रोगान्नृणां हरसि
दुस्त्यजान् । विस्फोटकविदीर्णानां त्वमेकामृतवर्षिणी ॥ ६ ॥ गल-
गंडग्रहा रोगा ये चान्ये दारुणा नृणाम् । त्वदनुध्यानमात्रेण
शीतले यांति संक्षयम् ॥ ७ ॥ न मंत्रो नौषधं तस्य पापरोगस्य
विद्यते । त्वामेकां शीतले धात्रीं नान्यां पश्यामि देवताम् ॥ ८ ॥

मृणालतंतुसदृशीं नाभिहृन्मध्यसंस्थिताम् । यस्त्वां संचितयेदेवि
तस्य मृत्युर्न जायते ॥ ९ ॥ अष्टकं शीतलादेव्या यो नरः
प्रपठेत्सदा । विस्फोटकभयं घोरं गृहे तस्य न जायते ॥ १० ॥
श्रोतव्यं पठितव्यं च श्रद्धाभक्तिसमन्वितैः । उपसर्गविनाशाय
परं स्वस्त्ययनं सहत् ॥ ११ ॥ शीतले त्वं जगन्माता शीतले
त्वं जगत्पिता । शीतले त्वं जगद्वात्री शीतलायै नमो नमः ॥ १२ ॥
रासभो गर्दभश्चैव खरो वैशाखनन्दनः । शीतलावाहनश्चैव दूर्वाकंद-
निकृंतनः ॥ १३ ॥ एतानि खरनामानि शीतलाग्रे तु यः पठेत् । तस्य
गेहे शिशूनां च शीतलारुड् न जायते ॥ १४ ॥ शीतलाष्टकमेवेदं
न देयं यस्यकस्यचित् । दातव्यं च सदा तस्मै श्रद्धाभक्तियुताय वै
॥ १५ ॥ इति श्रीस्कंदपुराणे शीतलाष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२३१. वाराहीनिग्रहाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ देवि क्रोडमुखि त्वदंग्रिकमलद्वंद्वानुरक्तात्मने
मह्यं द्रुह्यति यो महेशि मनसा कायेन वाचा नरः । तस्याशु त्वदयो-
ग्रनिष्ठुरहलाघातप्रभूतव्यथापर्यस्यन्मनसो भवंतु वपुषः प्राणाः प्रयाणो-
न्मुखाः ॥ १ ॥ देवि त्वत्पदपद्मभक्तिविभवप्रक्षीणदुष्कर्मणि प्रादुर्भूत-
नृशंसभावमलिनां वृत्तिं विधत्ते मयि । यो देही भुवने तदीयहृद-
याग्निर्गतवरैर्लोहितैः सद्यः पूरयसे कराजचषकं वांछाफलैर्मांसपि
॥ २ ॥ चंडोतुंडविदीर्णदंष्ट्रहृदयप्रोद्भिन्नरक्तच्छायाहालापानमदादृहासनि-
नदाटोपप्रतापोत्कटम् । मातर्मत्परिपंथिनामपहतैः प्राणैस्त्वदंग्रिद्वयं
ध्यानोद्दामरवैर्भवोदयवशात्संतर्पयामि क्षणात् ॥ ३ ॥ श्यामां ताम-
रसाननाग्निनयनां सोमार्धचूडां जगन्नाणव्यग्रहलायुधाग्रमुसलां संत्रा-
समुद्रावतीम् । ये त्वां रक्तकपालिनीं हरवरारोहे वराहाननां भावैः
संदधते कथं क्षणमपि प्राणंति तेषां द्विषः ॥ ४ ॥ विश्वाधीश्वरवल्लभे

विजयसे या त्वं नियंज्यात्मिका भूतांता पुरुषायुषावधिकरी पाकप्रदा
 कर्मणाम् । त्वां याचे भवतीं किमप्यवितथं यो मद्विरोधी जनस्तस्यायु-
 र्मम वांछितावधि भवेन्मातस्तवैवाज्ञया ॥ ५ ॥ मातः सम्यगुपासितुं
 जडमतिस्त्वां नैव शक्नोम्यहं यद्यप्यन्वितदैशिकाङ्घ्रिकमलानुक्रोशपात्रस्य
 मे । जंतुः कश्चन चिंतयत्यकुशलं यस्तस्य तद्वैशसं भूयादेवि विरोधिनो
 मम च ते श्रेयःपदासंगिनः ॥ ६ ॥ वाराहि व्यथमानमानसगलत्सौख्यं
 तदाशाबलिं सीदंतं यमपाकृताध्यवसितं प्राप्ताखिलोत्पादितम् ।
 क्रंदद्वंधुजनैः कलंकितकुलं कंठव्रणोद्यत्कृमिं पश्यामि प्रतिपक्षमाशु पतितं
 भ्रातं लुठंतं मुहुः ॥ ७ ॥ वाराहि त्वमशेषजंतुषु पुनः प्राणात्मिका
 स्पंदसे शक्तिव्याप्तचराचरा खलु यतस्त्वामेतदभ्यर्थये । त्वत्पादांबुज-
 संगिनो मम सकृत्पापं चिकीर्षति ये तेषां मा कुरु शंकरप्रियतमे
 देहांतरावस्थितिम् ॥ ८ ॥ इति श्रीवाराहीनिग्रहाष्टकं संपूर्णम् ॥

२३२. वाराहनुग्रहाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ईश्वर उवाच ॥ मातर्जगद्रचननाटकसूत्रधार-
 स्त्वद्रूपमाकलयितुं परमार्थतोऽयम् । ईशोऽप्यनीश्वरपदं समुपैति
 तादृकोऽन्यः स्तवं किमिव तावकमादधातु ॥ १ ॥ नामानि किंतु
 गृणतस्तव लोकतुंडे नाडंबरं स्पृशति दंडधरस्य दंडः । यल्लेशलंबित-
 भवांबुनिधिर्यतो यत्त्वन्नामसंसृतिरियं ननु नः स्तुतिस्ते ॥ २ ॥
 त्वच्चिंतनादरसमुल्लसदप्रमेयानंदोदयात्समुदितः स्फुटरोमहर्षः । मात-
 र्नमामि सुदिनानि सदेत्यमुं त्वामभ्यर्थयेऽर्थमिति पूरयताद्वयालो ॥ ३ ॥
 इंद्रेंदुमौलिविधिकेशवमौलिरत्नरोचिश्चयोज्ज्वलितपादसरोजयुग्मे । चेतो
 मतौ मम सदा प्रतिबिंबिता त्वं भूया भवानि विदधातु
 सदोरुहारे ॥ ४ ॥ लीलोद्धृतक्षितितलस्य वराहमूर्तेर्वाराहमूर्तिरखिला-

र्थकरी त्वमेव । प्रालेयरश्मिसुकलोल्लसितावतंसा त्वं देवि वामतनु-
भागहरा हरस्य ॥ ५ ॥ त्वामंब तप्तकनकोज्ज्वलकांतिमंतये चिंतयंति
युवतीतनुमागलांताम् । चक्रायुधत्रिनयनांबरपोतृवक्त्रां तेषां पदांबुज-
युगं प्रणमंति देवाः ॥ ६ ॥ त्वत्सेवनस्खलितपापचयस्य मातर्मोक्षोऽपि
यत्र न सतां गणनामुपैति । देवासुरोरगनृपालनमस्य पादस्तत्र श्रियः
पदुगिरः कियदेवमस्तु ॥ ७ ॥ किं दुष्करं त्वयि मनोविषयं गतायां
किं दुर्लभं त्वयि विधानवदचिंतायाम् । किं दुष्करं त्वयि सकृत्स्मृति-
मागतायां किं दुर्जयं त्वयि कृतस्तुतिवादपुंसाम् ॥ ८ ॥ इति
श्रीचाराह्यनुग्रहाष्टकं संपूर्णम् ॥

२३३. चण्डीकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीचण्डीकवचस्य ब्रह्मा ऋषिः, अनुष्टुप्
छंदः, चामुण्डा देवता, अंगन्यासोक्तमातरो बीजम्, दिग्बंधदेवता-
स्तत्त्वम्, श्रीजगदंबाप्रोत्यर्थे जपे विनियोगः । ॐ नमश्चण्डिकायै । ॐ
मार्कण्डेय उवाच ॥ ॐ यद्ब्रुह्यं परमं लोके सर्वरक्षाकरं नृणाम् । यन्न
कस्यचिदाख्यातं तन्मे ब्रूहि पितामह ॥ १ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ अस्ति गुह्यतमं
विप्र सर्वभूतोपकारकम् । देव्यास्तु कवचं पुण्यं तच्छृणुष्व महामुने
॥ २ ॥ प्रथमं शैलपुत्रीति द्वितीयं ब्रह्मचारिणी । तृतीयं चन्द्रघण्टेति
कूष्माण्डेति चतुर्थकम् ॥ ३ ॥ पंचमं स्कन्दमातेति षष्ठं कात्यायनीति
च । सप्तमं कालरात्रिश्च महागौरीति चाष्टमम् ॥ ४ ॥ नवमं
सिद्धिदात्री च नवदुर्गाः प्रकीर्तिताः । उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव
महात्मना ॥ ५ ॥ अग्निना दह्यमानस्तु शत्रुमध्ये गतो रणे । विषमे
दुर्गमे चैव भयार्ताः शरणं गताः ॥ ६ ॥ न तेषां जायते किंचिदशुभं
रणसंकटे । नापदं तस्य पश्यामि शोकदुःखभयं नहि ॥ ७ ॥ यैस्तु
भक्त्या स्मृता नूनं तेषां सिद्धिः प्रजायते । प्रेतसंस्था तु चामुण्डा

वाराही महिषासना ॥ ८ ॥ ऐन्द्री गजसमारूढा वैष्णवी गरुडासना ।
 माहेश्वरी वृषारूढा कौमारी शिखिवाहना ॥ ९ ॥ ब्राह्मी हंससमारूढा
 सर्वाभरणभूषिता । नानाभरणशोभाढ्या नानारत्नोपशोभिता ॥ १० ॥
 दृश्यन्ते रथमारूढा देव्यः क्रोधसमाकुलाः । शंखं चक्रं गदां शक्तिं
 हलं च मुसलायुधम् ॥ ११ ॥ खेटकं तोमरं चैव परशुं पाशमेव
 च । कुन्तायुधं त्रिशूलं च शार्ङ्गमायुधमुत्तमम् ॥ १२ ॥ दैत्यानां
 देहनाशाय भक्तानामभयाय च । धारयन्त्यायुधानीत्यं देवानां च
 हिताय वै ॥ १३ ॥ महाबले महोत्साहे महाभयविनाशिनि ।
 त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां भयवर्धिनि ॥ १४ ॥ प्राच्यां
 रक्षतु मामैन्द्री आग्नेय्यामग्निदेवता । दक्षिणेऽवतु वाराही नैऋत्यां
 खड्गधारिणी ॥ १५ ॥ प्रतीच्यां वारुणी रक्षेद्वायव्यां मृगवाहिनी ।
 उदीच्यां रक्ष कौबेरि ईशान्यां शूलधारिणि ॥ १६ ॥ ऊर्ध्वं ब्रह्माणी
 मे रक्षेदधस्ताद्वैष्णवी तथा । एवं दश दिशो रक्षेच्चामुण्डा शव-
 वाहना ॥ १७ ॥ जया मे अग्रतः स्थातु विजया स्थातु पृष्ठतः ।
 अजिता वामपार्श्वे तु दक्षिणे चापराजिता ॥ १८ ॥ शिखां मे
 द्योतिनी रक्षेदुमा मूर्ध्नि व्यवस्थिता । मालाधरी ललाटे च भ्रुवौ
 रक्षेद्यशस्विनी ॥ १९ ॥ त्रिनेत्रा च भ्रुवोर्मध्ये यमघण्टा च
 नासिके । शंखिनी चक्षुषोर्मध्ये श्रोत्रयोद्गारवासिनी ॥ २० ॥
 कपोलौ कालिका रक्षेत्कर्णमूले तु शांकरी । नासिकायां सुगन्धा
 च उत्तरोष्ठे च चर्चिका ॥ २१ ॥ अधरे चामृतकला जिह्वायां च
 सरस्वती । दन्तान् रक्षतु कौमारी कण्ठमध्ये तु चण्डिका ॥ २२ ॥
 घण्टिकां चित्रघण्टा च महामाया च तालुके । कामाक्षी चिबुकं
 रक्षेद्वाचं मे सर्वमंगला ॥ २३ ॥ ग्रीवायां भद्रकाली च पृष्ठवंशे
 धनुर्धरी । नीलग्रीवा बहिःकण्ठे नलिकां नलकूबरी ॥ २४ ॥ खड्ग-

धारिण्युभौ स्कंधौ बाहू मे वज्रधारिणी । हस्तयोर्दण्डिनी रक्षेदम्बिका
चांगुलीस्तथा ॥ २५ ॥ नखान्मूलेश्वरी रक्षेत् कुक्षौ रक्षेन्नलेश्वरी ।
स्तनौ रक्षेन्महालक्ष्मीर्मनःशोकविनाशिनी ॥ २६ ॥ हृदये ललिता-
देवी उदरे शूलधारिणी । नाभौ च कामिनी रक्षेद्गुह्यं गुह्येश्वरी तथा
॥ २७ ॥ कट्यां भगवती रक्षेज्जानुनी विन्ध्यवासिनी । भूतनाथा च
मेढ्रं मे ऊरू महिषवाहिनी ॥ २८ ॥ जंघे महाबला प्रोक्ता सर्वकाम-
प्रदायिनी । गुल्फयोर्नारसिंही च पादौ चामिततेजसी ॥ २९ ॥
पादांगुलीः श्रीर्मे रक्षेत्पादाधस्तलवासिनी । नखान्दंष्ट्राकराली च
केशांश्चैवोर्ध्वकेशिनी ॥ ३० ॥ रोमकूपेषु कौवेरी त्वचं वागीश्वरी
तथा । रक्तमज्जावसामांसान्यस्थिमेदांसि पार्वती ॥ ३१ ॥ अत्राणि
कालरात्रिश्च पित्तं च मुकुटेश्वरी । पद्मावती पद्मकोशे कफे चूडामणि-
स्तथा ॥ ३२ ॥ ज्वालामुखी नखज्वाला अभेद्या सर्वसंधिषु । शुक्रं
ब्रह्माणी मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी तथा ॥ ३३ ॥ अहंकारं मनो बुद्धिं
रक्ष मे धर्मचारिणि । प्राणापानौ तथा व्यानं समानोदानमेव च
॥ ३४ ॥ यशः कीर्तिं च लक्ष्मीं च सदा रक्षतु वैष्णवी । गोत्रमिन्द्राणी
मे रक्षेत्पशून्मे रक्ष चण्डिके ॥ ३५ ॥ पुत्रान् रक्षेन्महालक्ष्मीर्भार्या
रक्षतु भैरवी । मार्गं क्षेमकरी रक्षेद्विजया सर्वतः स्थिता ॥ ३६ ॥
रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन तु । तत्सर्वं रक्ष मे देवि जयन्ती
पापनाशिनी ॥ ३७ ॥ पदमेकं न गच्छेत्तु यदीच्छेच्छुभमात्मनः ।
कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्राधिगच्छति ॥ ३८ ॥ तत्र तत्रार्थलाभश्च
विजयः सार्वकामिकः । यं यं कामयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्
॥ ३९ ॥ परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते भूतले पुमान् । निर्भयो जायते
मर्त्यः संग्रामेष्वपराजितः ॥ ४० ॥ त्रैलोक्ये तु भवेत्पूज्यः कवचेना-
वृतः पुमान् । इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम् ॥ ४१ ॥

यः पठेत्प्रयतो नित्यं त्रिसन्ध्यं श्रद्धयान्वितः । दैवी कला भवेत्तस्य
 त्रैलोक्येष्वपराजितः ॥ ४२ ॥ जीवेद्द्वर्षशतं साग्रमपमृत्युविवर्जितः ।
 नश्यन्ति व्याधयः सर्वे लूताविस्फोटकादयः ॥ ४३ ॥ स्थावरं जंगमं
 वापि कृत्रिमं चापि यद्विषम् । आभिचाराणि सर्वाणि मंत्रयंत्राणि
 भूतले ॥ ४४ ॥ भूचराः खेचराश्चैव जलजाश्चोपदेशिकाः । सहजाः
 कुलजा मालाः शाकिनी डाकिनी तथा ॥ ४५ ॥ अन्तरिक्षचरा घोरा
 डाकिन्यश्च महाबलाः । ग्रहभूतपिशाचाश्च यक्षगन्धर्वराक्षसाः ॥ ४६ ॥
 ब्रह्मराक्षसवेतालाः कूष्माण्डा भैरवादयः । नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे
 हृदि संस्थिते ॥ ४७ ॥ मानोन्नतिर्भवेद्वाज्ञस्तेजोवृद्धिकरं परम् । यशसा
 वर्धते सोऽपि कीर्तिमण्डितभूतले ॥ ४८ ॥ जपेत्सप्तशतीं चण्डीं
 कृत्वा तु कवचं पुरा । यावद्भूमण्डलं धत्ते सशैलवनकाननम् ॥ ४९ ॥
 तावत्तिष्ठति मेदिन्यां सन्ततिः पुत्रपौत्रिकी । देहान्ते परमं स्थानं
 यत्सुरैरपि दुर्लभम् ॥ ५० ॥ प्राप्नोति पुरुषो नित्यं महामायाप्रसादतः
 ॥ ५० १/२ ॥ इति श्रीवाराहपुराणे हरिहरब्रह्मविरचितं देव्याः कवचम् ॥

२३४. अर्गलास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशायः नमः ॥ अस्य श्रीअर्गलास्तोत्रमंत्रस्य विष्णुर्ऋषिः,
 अनुष्टुप्छन्दः, श्रीमहालक्ष्मीर्देवता, श्रीजगदंबाप्रोतये जपे विनि-
 योगः । ॐ नमश्चण्डिकायै । जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली
 कपालिनी । दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते
 ॥ १ ॥ मधुकैटभविद्रावि विधातृवरदे नमः । रूपं देहि जयं देहि
 यशो देहि द्विषो जहि ॥ २ ॥ महिषासुरनिर्नाशविधात्रि वरदे
 नमः । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ३ ॥ वन्दि-
 तांघ्रियुगे देवि सर्वसौभाग्यदायिनि । रूपं देहि जयं देहि यशो
 देहि द्विषो जहि ॥ ४ ॥ रक्तबीजवधे देवि चंडमुंडविनाशिनि ।

रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ५ ॥ अचिन्त्यरूप-
 चरिते सर्वशत्रुविनाशिनि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो
 जहि ॥ ६ ॥ नतेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके दुरितापहे । रूपं
 देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ७ ॥ स्तुवन्त्र्यो भक्तिपूर्वं
 त्वां चण्डिके व्याधिनाशिनि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि
 द्विषो जहि ॥ ८ ॥ चण्डिके सततं ये त्वामर्चयन्तीह भक्तितः ।
 रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ९ ॥ देहि सौभाग्य-
 मारोग्यं देहि देवि परं सुखम् । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि
 द्विषो जहि ॥ १० ॥ विधेहि द्विषतां नाशं विधेहि बलमुच्चकैः ।
 रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ११ ॥ विधेहि देवि
 कल्याणं विधेहि परमां श्रियम् । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि
 द्विषो जहि ॥ १२ ॥ विद्यावन्तं यशस्वन्तं लक्ष्मीवन्तं जनं कुरु ।
 रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १३ ॥ प्रचण्डदैत्य-
 दर्पघ्ने चण्डिके प्रणताय मे । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो
 जहि ॥ १४ ॥ चतुर्भुजे चतुर्वक्त्रसंस्तुते परमेश्वरि । रूपं देहि जयं
 देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १५ ॥ कृष्णेन संस्तुते देवि शश्व-
 द्भक्त्या त्वमम्बिके । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि
 ॥ १६ ॥ हिमाचलसुतानाथसंस्तुते परमेश्वरि । रूपं देहि जयं देहि
 यशो देहि द्विषो जहि ॥ १७ ॥ सुरासुरशिरोरत्ननिघृष्टचरणे-
 ऽम्बिके । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १८ ॥
 इन्द्राणीपतिसद्भावपूजिते परमेश्वरि । रूपं देहि जयं देहि यशो
 देहि द्विषो जहि ॥ १९ ॥ देवि भक्तजनोदामदत्तानन्दोदये-
 ऽम्बिके । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ २० ॥
 पुत्रान्देहि धनं देहि सर्वकामांश्च देहि मे । रूपं देहि जयं देहि

यशो देहि द्विषो जहि ॥ २१ ॥ पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम् । तारिणीं दुर्गसंसारसागरस्य कुलोद्भवाम् ॥ २२ ॥ इदं स्तोत्रं पठित्वा तु महास्तोत्रं पठेन्नरः । स तु सप्तशतीसंख्यावरमाप्नोति सम्पदाम् ॥ २३ ॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे अर्गलास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२३५. भगवत्याः कीलकस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीकीलकमंत्रस्य शिव ऋषिः, अनुष्टुप्-छंदः, श्रीमहासरस्वती देवता, श्रीजगदंबाप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः । ॐ नमश्चण्डिकायै । ॐ मार्कण्डेय उवाच ॥ विशुद्धज्ञानदेहाय त्रिवेद्री-दिव्यचक्षुषे । श्रेयःप्राप्तिनिमित्ताय नमः सोमार्धधारिणे ॥ १ ॥ सर्वमेतद्विना यस्तु मन्त्राणामपि कीलकम् । सोऽपि क्षेममवाप्नोति सततं जाप्यतत्परः ॥ २ ॥ सिद्ध्यन्त्युच्चाटनादीनि वस्तूनि सकलान्यपि । एतेन स्तुवतां नित्यं स्तोत्रमात्रेण सिद्ध्यति ॥ ३ ॥ न मन्त्रो नौषधं तत्र न किञ्चिदपि विद्यते । विना जाप्येन सिद्ध्येत सर्वमुच्चाटनादिकम् ॥ ४ ॥ समग्राण्यपि सिद्ध्यन्ति लोकशंकामिमां हरः । कृत्वा निमंत्रयामास सर्वमेवमिदं शुभम् ॥ ५ ॥ स्तोत्रं वै चण्डिकायास्तु तच्च गुह्यं चकार सः । समाप्तिर्न च पुण्यस्य तां यथावन्नियन्त्रणाम् ॥ ६ ॥ सोऽपि क्षेममवाप्नोति सर्वमेव न संशयः । कृष्णायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहितः ॥ ७ ॥ ददाति प्रतिगृह्णाति नान्यथैषा प्रसीदति । इत्थंरूपेण कीलेन महादेवेन कीलितम् ॥ ८ ॥ यो निष्क्रीलां विधायैनां नित्यं जपति सुस्फुटम् । ससिद्धः सगणः सोऽपि गन्धर्वो जायते वने ॥ ९ ॥ न चैवाप्यटतस्तस्य भयं कापि हि जायते । नाऽपमृत्युवशं याति मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ॥ १० ॥ ज्ञात्वा प्रारभ्य कुर्वीत ह्यकुर्वणो विनश्यति । ततो ज्ञात्वैव सम्पन्नमिदं प्रारभ्यते बुधैः ॥ ११ ॥

सौभाग्यादि च यत्किञ्चिद्दृश्यते ललनाजने । तत्सर्वं तत्प्रसादेन तेन
जाप्यमिदं शुभम् ॥ १२ ॥ शनैस्तु जप्यमानेऽस्मिन्स्तोत्रे सम्पत्ति-
रुच्चकैः । भवत्येव समग्रापि ततः प्रारभ्यमेव तत् ॥ १३ ॥ ऐश्वर्यं
यत्प्रसादेन सौभाग्यारोग्यसम्पदः । शत्रुहानिः परो मोक्षः स्तूयते
सा न किं जनैः ॥ १४ ॥ इति भगवत्याः कीलकस्तोत्रं समाप्तम् ॥

२३६. सौन्दर्यलहरीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीसौन्दर्यलहरीस्तोत्रस्य गोविन्द ऋषिः,
अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी देवता, 'शिवः शक्त्या युक्त'
इति बीजम्, 'सुधासिन्धोर्मध्ये' इति शक्तिः, 'जपो जल्पः शिल्पम्'
इति कीलकम्, अस्माकं सर्वेषां सकुटुम्बानां क्षेम-स्थैर्यायुरारोग्य-
धन-धान्य-सम्पत्ति-सन्तत्यवासिद्वारा ऐहिकामुष्मिकसकलामीष्ट-
सिद्ध्यर्थं श्रीमन्निपुरासुन्दरीप्रीत्यर्थं च सौन्दर्यलहरीस्तोत्रपाठमहं
करिष्ये ॥ अथ करन्यासः । ॐ ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ह्रीं तर्ज-
नीभ्यां स्वाहा । ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट् । ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं ।
ॐ ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट् । ॐ हः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ॥
अथाङ्गन्यासः । ॐ ह्रां हृदयाय नमः । ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा । ॐ ह्रूं
शिखायै वषट् । ॐ ह्रैं कवचाय हुं । ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ॐ हः अस्त्राय फट् ॥ अथ ध्यानम् । लौहित्यनिर्जितजपाकुसुमानुरागां
पाशाङ्कुशौ धनुरिषूनपि धारयन्तीम् ॥ ताम्रेक्षणामरुणमाल्यविशेषभूषां
ताम्बूलपूरितमुखीं त्रिपुरां नमामि ॥ अथ पञ्चोपचाराः । लं पृथिव्या-
त्मन्यै नमो गन्धं परिकल्पयामि । हं आकाशात्मन्यै नमः पुष्पं परि-
कल्पयामि । यं वाय्वात्मन्यै नमो धूपं परिकल्पयामि । रं वह्न्यात्मन्यै
नमो दीपं परिकल्पयामि । वं जलात्मन्यै नमो नैवेद्यं परिकल्पयामि ॥

शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं न चेदेवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि । अतस्त्वामाराध्यां हरिहरविरिञ्चयादिभिरपि प्रणन्तुं स्तोतुं वा कथमकृतपुण्यः प्रभवति ॥ १ ॥ तनीयांसं पांसुं तव चरणपङ्केरुहभवं विरिञ्चिः सञ्चिन्वन् विरचयति लोकानविकलम् । वहृत्येनं शौरिः कथमपि सहस्रेण शिरसां हरः संक्षुभ्यैनं भजति भसितोद्धूलनविधिम् ॥ २ ॥ अविद्यानामन्तस्तिमिरमिहिरद्वीपनगरी जडानां चैतन्यस्तवकमकरन्दस्रुतिझरी । दरिद्राणां चिन्तामणिगुणानिका जन्मजलधौ निमग्नानां दंष्ट्रा मुररिपुवराहस्य भवती ॥ ३ ॥ त्वदन्यः पाणिभ्यामभयवरदो दैवतगणस्त्वमेका नैवासि प्रकटितवराभीत्यभिनया । भयात्रातुं दातुं फलमपि च वाञ्छासमधिकं शरण्ये ! लोकानां तव हि चरणावेव निपुणौ ॥ ४ ॥ हरिस्त्वामाराध्य प्रणतजनसौभाग्यजननीं पुरा नारी भूत्वा पुररिपुमपि क्षोभमनयत् । सरोऽपि त्वां नत्वा रतिनयनलेह्येन वपुषा मुनीनामप्यन्तः प्रभवति हि मोहाय महताम् ॥ ५ ॥ धनुः पौष्पं मौर्वी मधुकरमयी पञ्च विशिखा वसन्तः सामन्तो मलयमरुदायोधनरथः । तथाप्येकः सर्वं हिमगिरिसुते ! कामपि कृपामपाङ्गात्ते लब्ध्वा जगदिदमनङ्गो विजयते ॥ ६ ॥ कण-त्काञ्चीदामा करिकलभकुम्भस्तनभरा परिक्षीणा मध्ये परिणतशरच्चन्द्र-वदना । धनुर्वाणान् पाशं सृणिमपि दधाना करतलैः पुरस्तादास्तां नः पुरमथितुराहोपुरुषिका ॥ ७ ॥ सुधासिन्धोर्मध्ये सुरविटपिवाटी-परिवृते मणिद्वीपे नीपोपवनवति चिन्तामणिगृहे । शिवाकारे मञ्चे परमशिवपर्यङ्कनिलयां भजन्ति त्वां धन्याः कतिचन चिदानन्दलहरीम् ॥ ८ ॥ महीं मूलाधारे कमपि मणिपूरे हुतवहं स्थितं स्वाधिष्ठाने हृदि मरुतमाकाशमुपरि । मनोऽपि भ्रूमध्ये सकलमपि भित्त्वा कुलपथं सहस्रारे पद्मे सह रहसि पत्या विहरसि ॥ ९ ॥ सुधाधारासारैश्चरण-

युगलान्तर्विगलितैः प्रपञ्चं सिञ्चन्ती पुनरपि रसान्नायमहसः । अवाप्य
स्वां भूमिं भुजगनिभमध्युष्टवलयं स्वमात्मानं कृत्वा म्रपिषि कुलकुण्डे
कुहरिणि ॥ १० ॥ चतुर्भिः श्रीकण्ठैः शिवयुधतिभिः पञ्चभिरपि
प्रभिन्नाभिः शम्भोर्नवभिरिति मूलप्रकृतिभिः । त्रयश्चत्वारिंशद्वसुदल-
कलास्त्रिवलयत्रिरेखाभिः सार्धं तव चरणकोणाः परिणताः ॥ ११ ॥
त्वदीयं सौन्दर्यं तुहिनगिरिकन्ये ! तुल्यितुं कवीन्द्राः कल्पन्ते कथमपि
विरिञ्चिप्रभृतयः । यदालोकौत्सुक्यादमरललना यान्ति मनसा तपोभि-
र्दुष्प्रापामपि गिरिशसायुज्यपदवीम् ॥ १२ ॥ नरं वर्षीयांसं नयनवि-
रसं नर्मसु जडं तवापाङ्गालोके पतितमनुधावन्ति शतशः । गलद्वेणी-
बन्धा कुचकलशविस्त्रस्तसिचया हठात् त्रुव्यत्काञ्चयो विगलितदुकूल ।
युवतयः ॥ १३ ॥ क्षितौ षट्पञ्चाशद् द्विसमधिकपञ्चाशदुदके हुताशे
द्वाषष्टिश्चतुरधिकपञ्चाशदनिले । दिवि द्विःषट्त्रिंशन्मनसि च चतुः-
षष्टिरिति ये मयूखास्तेषामप्युपरि तव पादाम्बुजयुगम् ॥ १४ ॥ शर-
ज्ज्योत्स्नाशुभ्रां शशियुतजटाजूटमुकुटां वरत्रासत्राणस्फटिकगुटिकापुस्तक-
कराम् । सकृन्न त्वा नत्वा कथमिव सतां सन्निदधते मधुक्षीरद्राक्षा-
मधुरिमधुरीणा भणितयः ॥ १५ ॥ कवीन्द्राणां चेतःकमलवनबालातप-
रुचिं भजन्ते ये सन्तः कतिचिदरुणामेव भवतीम् । विरिञ्चिप्रेयस्या-
स्तरलतरशृङ्गारलहरीगभीराभिर्वाग्भिर्विदधति सतां रञ्जनममी ॥ १६ ॥
सवित्रीभिर्वाचां शशिमणिशिलाभङ्गरुचिभिर्वशिन्याद्याभिस्त्वां सह
जननि सञ्चिन्तयति यः । स कर्ता काव्यानां भवति महतां भङ्गसुभ-
गैर्वचोभिर्वाग्देवीवदनकमलामोदमधुरैः ॥ १७ ॥ तनुच्छायाभिस्ते
तरुणतरणिश्रीसरणिभिर्दिवं सर्वांमुर्वीमरुणिमन्तिमग्नां स्मरति यः ।
भवन्त्यस्य त्रस्यद्वनहरिणशालीननयनाः सहोर्वश्या वश्याः कति कति न
गीर्वाणगणिकाः ॥ १८ ॥ मुखं बिन्दुं कृत्वा कुचयुगमधस्तस्य तदधो

हरार्धं ध्यायेद्यो हरमहिषि ! ते मन्मथकलाम् । स सद्यः सङ्क्षोभं नयति
 वनिता इत्यतिलघु त्रिलोकीमप्याशु भ्रमयति रवीन्दुस्तनयुगाम् ॥ १९ ॥
 किरन्तीमङ्गेभ्यः किरणनिकुरम्बामृतरसं हृदि त्वामाधत्ते हिमकरशिला-
 मूर्तिमिव यः । स सर्पाणां दर्पं शमयति शकुन्ताधिप इव ज्वरप्लुष्टान्
 दृष्ट्या सुखयति सुधाधारसिरया ॥ २० ॥ तडिल्लेखातन्वीं तपनशशि-
 वैश्वानरमयीं निषण्णां षण्णामप्युपरि कमलानां तव कलाम् । महा-
 पद्माटव्यां मृदितमलमायेन मनसा महान्तः पश्यन्तो दधति परमाह्लाद-
 लहरीम् ॥ २१ ॥ भवानि ! त्वं दासे मयि वितर दृष्टिं सकरुणां
 इति स्तोतुं वाञ्छन् कथयति भवानि ! त्वमिति यः । तदैव त्वं
 तस्मै दिशसि निजसायुज्यपदवीं मुकुन्दब्रह्मेन्द्रस्फुटमुकुटनीराजित-
 पदाम् ॥ २२ ॥ त्वया हृत्वा वामं वपुरपरितृप्तेन मनसा शरीरार्धं
 शम्भोरपरमपि शङ्के हृतमभूत् । तथा हि त्वद्रूपं सकलमरुणाभं त्रिन-
 यनं कुचाभ्यामानम्रं कुटिलशशिचूडालमुकुटम् ॥ २३ ॥ जगत्सूते
 धाता हरिरवति रुद्रः क्षपयते तिरस्कुर्वन्नेतत्स्वमपि वपुरीशस्तिरयति ।
 सदापूर्वः सर्वं तदिदमनुगृह्णाति च शिवस्तवाज्ञामालम्ब्य क्षणचलित-
 योर्भ्रूलतिकयोः ॥ २४ ॥ त्रयाणां देवानां त्रिगुणजनितानां तव शिवे
 भवेत्पूजा पूजा तव चरणयोर्या विरचिता । तथा हि त्वत्पादोद्बहन-
 मणिपीठस्य निकटे स्थिता ह्येते शश्वन्मुकुलितकरोत्तंसमुकुटाः ॥ २५ ॥
 विरिञ्चिः पञ्चत्वं व्रजति हरिरामोति विरतिं विनाशं कीनाशो भजति
 धनदो याति निधनम् । वितन्द्री माहेन्द्री विततिरपि सम्मीलितदशा
 महासंहारेऽस्मिन् विहरति सति त्वत्पतिरसौ ॥ २६ ॥ जपो जल्पः
 शिल्पं सकलमपि मुद्राविरचना गतिः प्रादक्षिण्यक्रमणमशनाद्याहुति-
 विधिः । प्रणामः संवेशः सुखमखिलमात्मार्पणदशा सपर्यापर्यायस्तव
 भवतु यन्मे विलसितम् ॥ २७ ॥ ददाने दीनेभ्यः श्रियमनिशमाशानु-

सदृशीममन्दं सौन्दर्यप्रकरमकरन्दं विकिरति । तवास्मिन्मन्दारस्तवक-
 सुभगे यातु चरणे निमज्जन् मज्जीवः करणचरणैः षट्चरणताम् ॥ २८ ॥
 सुधामप्यास्वाद्य प्रतिभयजरामृत्युहरिणीं विपद्यन्ते विश्वे विधिशतम-
 खाद्या दिविषदः । करालं यत्क्ष्वेडं कवलितवतः कालकलना न शम्भो-
 स्तन्मूलं तव जननि ! ताटङ्गमहिमा ॥ २९ ॥ किरीटं वैरिञ्चं परिहर पुरः
 कैटभभिदः कठोरे कोटीरे स्वलसि जहि जम्भारिमुकुटम् । प्रणन्नेव्वे-
 तेषु प्रसभमभियातस्य भवनं भवस्यभ्युत्थाने तव परिजनोक्तिर्वि-
 जयते ॥ ३० ॥ चतुःपट्या तत्रैः सकलमभिसन्धाय भुवनं स्थितस्त-
 त्तिसिद्धिप्रसवपरतत्रैः पशुपतिः । पुनस्त्वन्निर्बन्धादखिलपुरुषार्थैक-
 घटनास्वतन्त्रं ते तन्त्रं क्षितितलमवातीतरदिदम् ॥ ३१ ॥ शिवः शक्तिः
 कामः क्षितिरथ रविः शीतकिरणः स्मरो हंसः शक्रस्तदनु च परमार-
 हरयः । अमी हल्लेखाभिस्तिस्मृभिरवसानेषु घटिता भजन्ते वर्णास्ते तव
 जननि ! नामावयवताम् ॥ ३२ ॥ स्मरं योनिं लक्ष्मीं त्रितयमिदमादौ
 तव मनोनिर्धायैके निलये निरवधिमहाभोगरसिकाः । जपन्ति त्वां
 चिन्तामणिगुणनिबद्धाक्षवल्याः शिवाग्रौ जुह्वन्तः सुरभिघृतधाराहुति-
 शतैः ॥ ३३ ॥ शरीरं त्वं शम्भोः शशिमिहिरवक्षोरुहयुगं तवात्मानं
 मन्ये भगवति ! तवात्मानमनघम् । अतः शेषः शेपीत्ययमुभयसाधा-
 रणतया स्थितः सम्बन्धो वां समरसपरानन्दपरयोः ॥ ३४ ॥ मनस्त्वं
 व्योम त्वं मरुदसि मरुत्सारथिरसि त्वमापस्त्वं भूमिस्त्वयि परिणतायां
 न हि परम् । त्वमेव स्वात्मानं परिणमयितुं विश्ववपुषा चिदानन्दाकारं
 शिवयुवति ! भावेन विभृषे ॥ ३५ ॥ तवाज्ञाचक्रस्थं तपनशशिकोटि-
 द्युतिधरं परं शम्भुं वन्दे परिमिलितपार्श्वं परचिता । यमाराध्यन्
 भक्त्या रविशशिशुचीनामविषये निरालोके लोको निवसति हि भालोक-
 भुवने ॥ ३६ ॥ विशुद्धौ ते शुद्धस्फटिकविशदं व्योमजनकं सेवे शिवं

देवीमपि शिवसमानव्यसनिनीम् । ययोः कान्त्या यान्त्या शशिकिरण-
सारूप्यसरणिं विधूतान्तर्ध्वान्ता विलसति चकोरीव जगति ॥ ३७ ॥
समुन्मीलत्संवित्कमलमकरन्दैकरसिकं भजे हंसद्वन्द्वं किमपि महतां
मानसचरम् । यदालापादष्टादशगुणितविद्यापरिणतिर्यदादत्ते दोषाद्गुण-
मखिलमद्भयः पय इव ॥ ३८ ॥ तव स्वाधिष्ठाने हुतवहमधिष्ठाय निरतं
तमीडे संवर्तं जननि महतां तां च समयाम् । यदालोके लोकान् दहति
महति क्रोधकलिले दयार्द्रा ते दृष्टिः शिशिरमुपचारं रचयति ॥ ३९ ॥
तडित्वन्तं शक्या तिमिरपरिपन्थिस्फुरणया स्फुरन्नानारत्नाभरणपरिण-
द्धेन्द्रधनुषम् । तव श्यामं मेघं कमपि मणिपूरैकशरणं निषेवे वर्षन्तं
हरमिहिरतप्तं त्रिभुवनम् ॥ ४० ॥ तवाधारे मूले सह समयया लास्य-
परया नवात्मानं मन्ये नवरसमहाताण्डवनटम् । उभाभ्यामेताभ्यामु-
दयविधिमुद्दिश्य दयया सनाथाभ्यां जज्ञे जनकजननीमज्जगदिदम् ॥ ४१ ॥
गतैर्माणिक्यत्वं गगनमणिभिः सान्द्रघटितं किरीटं ते हैमं हिमगिरि-
सुते कीर्तयति यः । स नीडेयच्छायाच्छुरणशबलं चन्द्रशकलं धनुः
सौनासीरं किमिति न निबध्नाति धिषणाम् ॥ ४२ ॥ धुनोतु ध्वान्तं
नस्तुलितदलितेन्दीवरवनं घनस्निग्धं श्लक्ष्णं चिकुरनिकुरनिम्बं तव
शिवे ! । यदीयं सौरभ्यं सहजमुपलब्धुं सुमनसो वसन्त्यस्मिन् मन्ये
बलमथनवाटीविटपिनाम् ॥ ४३ ॥ वहन्ती सिन्दूरं प्रबलकवरीभारति-
मिरत्विषां वृन्दैर्बन्दीकृतमिव नवीनार्ककिरणम् । तनोतु क्षेमं नस्तव
वदनसौन्दर्यलहरीपरीवाहस्रोतःसरणिरिव सीमन्तसरणिः ॥ ४४ ॥
अरालैः स्वाभाव्यादलिकलभसश्रीभिरलकैः परीतं ते वक्रं परिहसति
पङ्केरुहरुचिम् । दरस्मेरे यस्मिन् दशनरुचिकिञ्जल्करुचिरे सुगन्धौ
माद्यन्ति स्मरमथनचक्षुर्मधुलिहः ॥ ४५ ॥ ललाटं लावण्यद्युतिवि-
मलमाभाति तव यद् द्वितीयं तन्मन्ये मुकुटशशिखण्डस्य शकलम् ।

विपर्यासन्यासादुभयमपि सम्भूय च मिथः सुधालेपस्यूतिः परिणमति
 राकाहिमकरः ॥ ४६ ॥ भ्रुवौ भुग्ने किञ्चिद्भुवनभयभङ्गव्यसननि
 त्वदीये नेत्राभ्यां मधुकररुचिभ्यां धृतगुणे । धनुर्मन्ये सव्येतरकर-
 गृहीतं रतिपतेः प्रकोष्ठे मुष्टौ च स्थगयति निगूढान्तरमुमे ! ॥ ४७ ॥
 अहः सूते दक्षं तव नयनमर्कात्मकतया त्रियामां वामं ते सृजति
 रजनीनायकमयम् । तृतीया ते दृष्टिर्दरदलितहेमाम्बुजरुचिः समाधत्ते
 सन्ध्यां दिवसनिशयोरन्तरचरीम् ॥ ४८ ॥ विशाला कल्याणी स्फुट-
 रुचिरयोध्या कुवल्यैः कृपाधाराधारा किमपि मधुरा भोगवतिका ।
 अवन्ती दृष्टिस्ते बहुनगरविस्तारविजया ध्रुवं तत्तन्नामव्यवहरणयोग्या
 विजयते ॥ ४९ ॥ कवीनां सन्दर्भस्तवकमकरन्दैकरसिकं कटाक्षव्या-
 क्षेपभ्रमरकलभौ कर्णयुगलम् । अमुञ्चन्तौ दृष्ट्वा तव नवरसास्वादतर-
 लावसूयासंसर्गादलिकनयनं किञ्चिदरुणम् ॥ ५० ॥ शिवे ! शृङ्गारार्द्रा
 तदितरमुखे कुत्सनपरा सरोषा गङ्गायां गिरिशचरिते विस्मयवती ।
 हराहिभ्यो भीता सरसिरुहसौभाग्यजयिनी सखीषु स्मेरा ते जननि !
 मयि दृष्टिः सकरुणा ॥ ५१ ॥ गते कर्णाभ्यर्णं गरुत इव पक्ष्माणि
 दधती पुरां भेत्तुश्चित्तप्रशमरसविद्रावणफले । इमे नेत्रे गोत्राधरपति-
 कुलोत्तंसकलिके तवाकर्णाकृष्टस्मरशरविलासं कलयतः ॥ ५२ ॥ विभक्त-
 त्रैवर्ण्यं व्यतिकरितनीलाञ्जनतया विभाति त्वन्नेत्रत्रितयमिदमीशा-
 नदयिते ! । पुनः स्रष्टुं देवान् द्रुहिणहरिरुद्रानुपूरतान् रजः सत्त्वं बिभ्र-
 त्तम इति गुणानां त्रयमिव ॥ ५३ ॥ पवित्रीकर्तुं नः पशुपतिपराधीन-
 हृदये ! दयामित्रैर्नैत्रैररुणधवलश्यामरुचिभिः । नदः शोणो गङ्गा तपन-
 तनयेति ध्रुवममुं त्रयाणां तीर्थानामुपनयसि सम्भेदमनघे ! ॥ ५४ ॥
 तवापर्णे ! कर्णेजपनयनपैशुन्यचकिता निलीयन्ते तोये नियतमनिमेषाः
 शफरिकाः । इयं च श्रीर्बद्धच्छदपुटकपाटं कुवल्यं जहाति प्रत्यूषे निशि

च विघटय्य प्रविशति ॥ ५५ ॥ निमेषोन्मेषाभ्यां प्रलयमुदयं याति
जगती तवेत्याहुः सन्तो धरणिधरराजन्यतनये ! त्वदुन्मेषाज्जातं जग-
दिदमशेषं प्रलयतः परित्रातुं शक्ने परिहृतनिमेषास्तव दृशः ॥ ५६ ॥
दृशा द्वाधीयस्या दरदलितनीलोत्पलरूचा दवीयांसं दीनं स्तपय कृपया
मामपि शिवे ! अनेनायं धन्यो भवति न च ते हानिरियता वने वा
हर्म्ये वा समकरनिपातो हिमकरः ॥ ५७ ॥ अरालं ते पालीयुगलमग-
राजन्यतनये ! न केषामाधत्ते कुसुमशरकोदण्डकुतुकम् । तिरश्चीनो
यत्र श्रवणपथमुल्लङ्घ्य विलसन्नपाङ्गव्यासङ्गो दिशति शरसन्धानधिप-
णाम् ॥ ५८ ॥ स्फुरद्गण्डाभोगप्रतिफलितताटङ्कयुगलं चतुश्चक्रं शक्ने
तव मुखमिदं मन्मथरथम् । यमारुह्य द्रुह्यत्यवनिरथमर्केन्दुचरणं
महावीरो मारः प्रमथपतये स्वं जितव्रते ॥ ५९ ॥ सरस्वत्याः सूक्ती
रमृतलहरीकौशलहरीः पिबन्त्याः शर्वाणि ! श्रवणचुलकाभ्याम-
विरतम् । चमत्कारश्लाघाचलितशिरसः कुण्डलगणो झणत्कारैस्तारै-
प्रतिवचनमाचष्ट इव ते ॥ ६० ॥ असौ नासावंशस्तुहिनगिरिवंश-
ध्वजपटि ! त्वदीयो नेदीयः फलतु फलमस्माकमुचितम् । वहन्नन्त-
मुक्ताः शिशिरतरनिःश्वासघटिताः समृद्ध्या यस्तासां बहिरपि च मुक्ता-
मणिधरः ॥ ६१ ॥ प्रकृत्या रक्तायास्तव सुदति ! दन्तच्छदरुचेः प्रवक्ष्ये
सादृश्यं जनयतु फलं विद्रुमलता । न बिम्बं त्वद्विम्बप्रतिफलनलाभाद-
रुणितं तुलामध्यारोढुं कथमिव विलज्जेत कलया ॥ ६२ ॥ स्मितज्यो-
त्स्नाजालं तव वदनचन्द्रस्य पिबतां चकोराणामासीदतिरसतया चञ्चु-
जडिमा । अतस्ते शीतांशोरमृतलहरीमम्लरुचयः पिबन्ति स्वच्छंदं
निशि निशि भृशं काञ्जिकधिया ॥ ६३ ॥ अविश्रान्तं पत्युर्गुणगण-
कथात्रेडनजपा जपापुष्पच्छाया तव जननि ! जिह्वा जयति सा । यद-
ग्रासीनायाः स्फटिकदृषदच्छच्छविमयी सरस्वत्या मूर्तिः परिणमति

माणिक्यवपुषा ॥ ६४ ॥ रणे जित्वा दैत्यानपहतशिरस्त्रैः कवचिभि-
 निवृत्तैश्चण्डांशुत्रिपुरहरनिर्माल्यविमुखैः । विशाखेन्द्रोपेन्द्रैः शशि-
 शशिरकर्पूरशकला विलीयन्ते मातस्तव वदनताम्बूलकवलाः ॥ ६५ ॥
 विपद्भ्या गायन्ती विविधमवदानं पशुपतेस्त्वयारब्धे वक्तुं चलितशिरसा
 साधुवचने । त्वदीयैर्माधुर्यैरपहसिततन्त्रीकलरवां निजां वीणां वाणीं
 निचुलयति चोलेन निभृतम् ॥ ६६ ॥ कराग्रेण स्पृष्टं तुहिनगिरिणा
 वत्सलतया गिरीशेनोदस्तं मुहुरधरपानाकुलतया । करग्राह्यं शम्भोर्मुख-
 मुकुरवृन्तं गिरिसुते ! कथङ्कारं ब्रूमस्तव चिबुकमौपम्यरहितम् ॥ ६७ ॥
 भुजाश्लेषान्नित्यं पुरदमयितुः कण्टकवती तव ग्रीवा धत्ते मुखकमल-
 नालश्रियमियम् । स्वतः श्वेता कालागरुबहुलजम्बालमलिना मृणाली-
 लालित्यं वहति यदधो हारलतिका ॥ ६८ ॥ गले रेखास्तिस्रो गतिगम-
 कगीतैकनिपुणे ! विवाहव्यानद्धन्निगुणगुणसङ्ख्याप्रतिभुवः । विराजन्ते
 नानाविधमधुररागाकरभुवां त्रयाणां ग्रामाणां स्थितिनियमसीमान इव
 ते ॥ ६९ ॥ मृणालीमृद्वीनां तव भुजलतानां चतसृणां चतुर्भिः सौन्दर्यं
 सरसिजभवः स्तौति वदनैः । नखेभ्यः संत्रस्यन् प्रथममथनादन्धकरिपो-
 श्रतुर्णां वक्त्राणां सममभयहस्तार्पणधिया ॥ ७० ॥ नखानामुद्ध्योर्तैर्नव-
 नलिनरागं विहसतां कराणां ते कान्तिं कथय कथयामः कथमुमे ! ।
 कयाचिद्वा साम्यं भजतु कलया हन्त कमलं यदि क्रीडलक्ष्मीचरणतल-
 लाक्षारुणदलम् ॥ ७१ ॥ समं देवि ! स्कन्दद्विपवदनपीतं स्तनयुगं
 तवेदं नः खेदं हरतु सततं प्रस्रुतमुखम् । यदालोक्याशङ्काकुलितहृदयो
 हासजनकः स्वकुम्भौ हेरम्बः परिमृशति हस्तेन झटिति ॥ ७२ ॥ अमू-
 ते वक्षोजावमृतरसमाणिक्यकुतुपौ न सन्देहस्पन्दो नगपतिपताके
 मनसि नः । पिबन्तौ तौ यस्मादविदितवधूसङ्गमरसौ कुमारावद्यापि
 द्विरदवदनकौञ्चदलनौ ॥ ७३ ॥ वहत्यम्ब ! स्तम्बेरमदनुजकुम्भप्रकू-

तिभिः समारब्धां मुक्तामणिभिरमलां हारलतिकाम् । कुचाभोगो
विम्बाधररुचिभिरन्तः शबलितां प्रतापव्यामिश्रां पुरविजयिनः कीर्ति-
मिव ते ॥ ७४ ॥ तव स्तन्यं मन्ये धरणिधरकन्ये ! हृदयतः पयःपारा-
वारः परिवहति सारस्वत इव । दयावत्या दत्तं द्रविडशिशुरास्वाद्य तव
यत् कवीनां प्रौढानामजनि कमनीयः कवयिता ॥ ७५ ॥ हरक्रोध-
ज्वालावलिभिरवलीढेन वपुषा गभीरे ते नाभीसरसि कृतसङ्गो मन-
सिजः । समुत्तस्थौ तस्मादचलतनये ! धूमलतिका जनस्तां जानीते
जननि ! तव रोमावलिरिति ॥ ७६ ॥ यदेतत्कालिन्दीतनुतररङ्गा-
कृति शिवे ! कृशे मध्ये किञ्चिज्जननि ! तव तद्भाति सुधियाम् । विम-
र्दादन्योन्यं कुचकलशयोरन्तरगतं तनूभूतं व्योम प्रविशदिव नाभी-
कुहरिणीम् ॥ ७७ ॥ स्थिरो गङ्गावर्तः स्तनमुकुलरोमावलिलताकलावालं
कुण्डं कुसुमशरतेजोहुतभुजः । रतेलीलागारं किमिति तव नाभीति
गिरिजे ! बिलद्वारं सिद्धेर्गिरिशनयनानां विजयते ॥ ७८ ॥ निसर्गक्षी-
णस्य स्तनतटभरेण क्लमजुषो नमन्मूर्तेर्नाभौ वलिषु शनकैस्त्रुध्यत इव ।
चिरं ते मध्यस्य त्रुटिततटिनीतीरतरुणा समावस्थास्थेऽसौ भवतु कुशलं
शैलतनये ! ॥ ७९ ॥ कुचौ सद्यःस्विद्यत्तरघटितकूर्पासभिदुरौ कषन्तौ
दोर्मूले कनककलशाभौ कलयता । तव त्रातुं भङ्गादलमिति विलग्नं
तनुभुवा त्रिधा नद्धं देवि ! त्रिवलि लवलीवल्लिभिरिव ॥ ८० ॥ गुरुत्वं
विस्तारं क्षितिधरपतिः पार्वति ! निजान् नितम्बादाच्छिद्य त्वयि हरण-
रूपेण निदधे । अतस्ते विस्तीर्णो गुरुरयमशेषां वसुमतीं नितम्बप्रागभारः
स्थगयति लघुत्वं नयति च ॥ ८१ ॥ करीन्द्राणां शुण्डाः कनककदली-
काण्डपटलीमुभाभ्यामूरुभ्यामुभयमपि निर्जित्य भवती । सुवृत्ताभ्यां
पत्युः प्रणतिकठिनाभ्यां गिरिसुते ! विजिग्ये जानुभ्यां विबुधकरिकुम्भ-
द्वयमपि ॥ ८२ ॥ पराजेतुं रुद्रं द्विगुणशरगभा गिरिसुते निषङ्गौ जङ्घे

ते विषमविशिखो बाढमकृत । यदग्रे दृश्यन्ते दशशरफलाः पादयुगली-
 नखाग्रच्छन्नाः सुरमुकुटशाणैकनिशिताः ॥ ८३ ॥ श्रुतीनां मूर्धानो
 दधति तव यौ शेखरतया ममाप्येतौ मातः ! शिरसि दयया धेहि
 चरणौ । ययोः पाद्यं पाथः पशुपतिजटाजूटतटिनी ययोर्लक्षालक्ष्मीर-
 रुणहरिचूडामणिरुचिः ॥ ८४ ॥ नमोवाकं ब्रूमो नयनरमणीयाय पदयो-
 स्तवास्मै द्वन्द्वाय स्फुटरुचिरसालक्तकवते । असूयत्यत्यन्तं यदभिहननाय
 स्पृह्यते पशूनामीशानः प्रमदवनकंकलितरवे ॥ ८५ ॥ मृषा कृत्वा
 गोत्रस्खलनमथ वैलक्ष्यनमितं ललाटे भर्तारं चरणकमले ताडयति ते ।
 चिरादन्तःशल्यं दहनकृतमुन्मीलितवता तुलाकोटिकाणैः किलिकिलित-
 मीशानरिपुणा ॥ ८६ ॥ हिमानीहन्तव्यं हिमगिरितटाक्रान्तिचतुरौ
 निशायां निद्राणां निशि च परभागे च विशदौ । परं लक्ष्मीपात्रं श्रिय-
 मतिसृजन्तौ समयिनां सरोजं त्वत्पादौ जननि ! जयतश्चित्रमिह किम्
 ॥ ८७ ॥ पदं ते कान्तीनां प्रपदमपदं देवि ! विपदां कथं नीतं सद्भिः
 कठिनकमठीकर्परतुलाम् । कथं वा बाहुभ्यामुपयमनकाले पुरभिदा
 यदादाय न्यस्तं दृषदि दयमानेन मनसा ॥ ८८ ॥ नखैर्नाकस्त्रीणां कर-
 कमलसङ्कोचशशिभिस्तरुणां दिव्यानां हसत इव ते चण्डि ! चरणौ ।
 फलानि स्वस्थेभ्यः किसलयकराग्रेण ददतां दरिद्रेभ्यो भद्रां श्रियमनि-
 शमहाय ददतौ ॥ ८९ ॥ कदा काले मातः ! कथय कलितालक्तकरसं
 पिवेयं विद्यार्थी तव चरणनिर्णेजनजलम् । प्रकृत्या मूकानामपि च
 कविताकारणतया यदाधत्ते वाणीमुखकमलताम्बूलरसताम् ॥ ९० ॥
 पदन्यासक्रीडापरिचयमिवारब्धुमनसश्चरन्तस्ते खेलं भवनकलहंसा न
 जहति । सुविक्षेपे शिक्षां सुभगमणिमञ्जीररणितच्छलादाचक्षाणं चरण-
 कमलं चारुचरिते ॥ ९१ ॥ अराला केशेषु प्रकृतिसरला मन्दहसिते
 शिरीषाभा चित्ते दृषदिव कठोरा कुचतटे । भृशं तन्वी मध्ये पृथुर-

सिजारोहविषये जगत्रातुं शम्भोर्जयति करुणा काचिदरुणा ॥ ९२ ॥
 पुरारातेरन्तःपुरमसि यतस्त्वच्चरणयोः सपर्यामर्यादा तरलकरणानाम-
 सुलभा । तथा ह्येते नीताः शतमुखमुखाः सिद्धिमतुलां तव द्वारोपान्त-
 स्थितिभिरणिमाद्याभिरमराः ॥ ९३ ॥ गतास्ते मञ्चत्वं द्रुहिणहरिरुद्रे-
 श्वरभृतः शिवः स्वच्छच्छायाघटितकपटप्रच्छदपटः । त्वदीयानां भासां
 प्रतिफलनलाभारुणतया शरीरी शृङ्गारो रस इव दृशां दोग्धि कुतु-
 कम् ॥ ९४ ॥ कलङ्कः कस्तूरी रजनिकरविम्बं जलमयं कलाभिः कर्पूरै-
 र्मरकतकरण्डं निविडितम् । अतस्त्वद्भोगेन प्रतिदिनमिदं रिक्तकुहरं
 विधिर्भूयो भूयो निविडयति नूनं तव कृते ॥ ९५ ॥ स्वदेहोद्धृता-
 भिर्घृणिभिरणिमाद्याभिरभितो निषेव्ये नित्ये त्वामहमिति सदा भाव-
 यति यः । किमाश्चर्यं तस्य त्रिनयनसमृद्धिं तृणयतो महासंवर्ताभिर्विर-
 चयति नीराजनविधिम् ॥ ९६ ॥ कलत्रं वैधात्रं कति कति भजन्ते न
 कवयः श्रियो देव्याः को वा भवति न पतिः कैरपि धनैः । महादेवं
 हित्वा तव सति ! सतीनामचरमे कुचाभ्यामासङ्गाः कुरवकतरोरप्य-
 सुलभः ॥ ९७ ॥ गिरामाहुर्देवीं द्रुहिणगृहिणीमागमविदो हरेः पत्नीं
 पद्मां हरसहचरीमद्रितनयाम् । तुरीया कापि त्वं दुरधिगमनिःसीम-
 महिमा महामाये ! विश्वं भ्रमयसि परब्रह्ममहिषि ! ॥ ९८ ॥ सरस्वत्या
 लक्ष्म्या विधिहरिसपत्न्यो विहरते रतेः पातिव्रत्यं शिथिलयति रम्येण
 वपुषा । चिरञ्जीवन्नेष क्षपतिपशुपाशव्यतिकरः । परब्रह्माभिख्यं
 रसयति रसं त्वद्भजनवान् ॥ ९९ ॥ प्रदीपज्वालाभिर्दिवसकर-
 नीराजनविधिः सुधासूतेश्चन्द्रोपलजललवैरर्घ्यघटना । स्वकीयैरम्भोभिः
 सलिलनिधिसौहित्यकरणं त्वदीयाभिर्वाग्भिस्तव जननि वाचां स्तुति-
 रियम् ॥ १०० ॥ इति सौन्दर्यलहरी संपूर्णा ॥

२३७. सप्तशतीध्यानात्मकं स्तोत्रम् ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां
भीषणां कन्याभिः करवालखेटविलसद्गस्ताभिरासेविताम् । हस्तैश्चक्र-
दरालिखेटविशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं विभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां
दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥ १ ॥ मातर्मे मधुकैटभन्नि महिषप्राणापहारो-
द्यमे हेलानिर्मितधूम्रलोचनवधे हे चण्डमुण्डादिनि ॥ निःशेषीकृत-
रक्तबीजदनुजे नित्ये निशुम्भापहे शुम्भध्वंसिनि संहराशु दुरितं
दुर्गे नमस्तेऽम्बिके ॥ २ ॥ या देवी मधुकैटभप्रमथिनी या
माहिषोन्मूलिनी या धूम्रेक्षणचण्डमुण्डशमनी या रक्तबीजाशिनी ॥
या शुम्भादिनिशुम्भदैत्यदमनी या सिद्धलक्ष्मी परा सा चण्डी
नवकोटिशक्तिसहिता मां पातु विश्वेश्वरी ॥ ३ ॥ दुर्गा ध्यायतु दुर्गति-
प्रशमनीं दूर्वादलश्यामलां चन्द्रार्धोज्ज्वलशेखरां त्रिनयनामापीतवासो-
वसम् ॥ चक्रं शंखमिपुं धनुश्च दधतीं कोदण्डबाणाशयोर्मुद्देवाभयका-
मदे सकटिबन्धाभीष्टदां वानयोः ॥ ४ ॥ भावोद्भेदवृता सहाभयवरा
विस्त्रस्तनीलालका विम्बोष्ठी तरुणाऽरुणाब्जचरणा रक्तान्तनेत्रत्रया ॥
पीनोरुस्तनभारभङ्गुरतनुः श्यामा प्रसन्नानना देवी वस्त्वरिता तनोतु
विभवानानन्दयन्ती मनः ॥ ५ ॥ मुक्ताविद्युत्पयोदस्फटिकनवजपा-
भास्वरैः पद्मवक्त्रैः शीतांशूलासिचूडैस्त्रिनयनलसितैर्भासुरामच्छ-
वर्णाम् ॥ चक्रं शंखं कपालं गुणपरशुसुधाकुम्भवेदाक्षमाला विद्या-
पद्मान्वहन्तीं नमत मुनिनतां भारतीं पद्मसंस्थाम् ॥ ६ ॥ हंसारूढा
हरहसितहारेन्दुकुन्दावदाता वाणी मन्दसिततरमुखी मौलिबद्धेन्दु-
लेखा ॥ विद्यावीणाऽमृतमयघटाक्षस्रजादीप्तहस्ता श्वेताब्जस्था भवद-
भिमतप्राप्तये भारती स्यात् ॥ ७ ॥ सौवर्णाम्बुजमध्यगां त्रिनयनां
सौदामिनीसन्निभां शंखं चक्रवराभयं च दधतीमिन्दोः कलां विभ्र-

तीम् ॥ ग्रैवेयाङ्गदहारकुण्डलधरामाखण्डलाद्यैः स्तुतां ध्यायेद्विन्ध्य-
निवासिनीं शशिमुखीं पार्श्वस्थपञ्चाननाम् ॥ ८ ॥ शंखं चक्रमथो
धनुश्च दधती बिभ्रामि तां तर्जनीं वामे शक्तिमसिं शरान्कलयतीं
तिर्यक् त्रिशूलं भुजैः ॥ सन्नद्धां विविधायुधैः परिवृतां मन्त्री कुमारी-
जनैर्ध्यायेदिष्टवरप्रदां त्रिनयनां सिंहाधिरूढां शिवाम् ॥ ९ ॥
शंखासिचापशरभिन्नकरां त्रिनेत्रां तिग्मेतरांशुकलया विलसत्किरी-
टाम् ॥ सिंहस्थितां ससुरसिद्धनुतां च दुर्गां दूर्वाभिभां दुरितवर्गहरां
नमामि ॥ १० ॥ प्रकाशमध्यस्थितचित्स्वरूपां वराभये संदधतीं
त्रिनेत्राम् ॥ सिन्दूरवर्णामतिकोमलाङ्गीं मायामयीं तत्त्वमयीं नमामि
॥ ११ ॥ शोणप्रभां सोमकलावतंसां पाणिस्फुरत्पञ्चशरेषुचापाम् ॥
प्राणप्रियां नौमि पिनाकपाणेः कोणत्रयस्थां कुलदेवतां मे ॥ १२ ॥
खङ्गोद्भिन्नेन्दुबिम्बस्त्रवदमृतरसाप्लाविताङ्गी त्रिनेत्रा सन्ध्ये पाणौ कपा-
लाद्गलदमृतमथो मुक्तकेशी पिबन्ती ॥ दिग्बस्त्राबद्धकाञ्चीमणिमय-
मुकुटाद्यैर्युता दीप्तजिह्वा पायावलीलोत्पलाभा रविशशिविलसत्कुण्डला-
लीढपादा ॥ १३ ॥ सद्यश्छिन्नशिरःकृपाणमभयं हस्तैर्वैर्बिभ्रतीं
घोरास्यां शिरसाऽस्त्रजासुरचिरामुन्मुक्तकेशावलिम् ॥ सृक्कासृक्प्रवहां
श्मशाननिलयां श्रुत्योः शवालंकृतिं श्यामाङ्गीं कृतमेखलाशवकरां देवीं
भजे कालिकाम् ॥ १४ ॥ सर्वाद्यामगुणामलक्ष्यवपुषं व्याप्याखिलं
संस्तुतां लक्ष्यां च त्रिगुणात्मिकां कनकभां सौवर्णभूषान्विताम् ॥
बीजापूरगदे च खेटकसुधापात्रे करैर्बिभ्रतीं योनिं लिङ्गमहिं च मूर्ध्नि
दधतीं चण्डीं भजे चिन्मयीम् ॥ १५ ॥ धृत्वा श्रीमांतुलिङ्गं तदुपरि
च गदां खेटकं पानपात्रं नागं लिङ्गं च योनिं शिरसि धृतवती राजते
हेमवर्णा ॥ आद्या शक्तिस्त्रिरूपा त्रिगुणपरिवृता ब्रह्मणो हेतुभूता
विश्वाद्या सृष्टिकर्त्री वसतु मम गृहे सर्वदा सुप्रसन्ना ॥ १६ ॥

या सा पद्मासनस्था विपुलकटितटीपद्मपत्रायताक्षी गम्भीरावर्तनाभि-
 स्तनभरनमिता शुभ्रवस्त्रोत्तरीया ॥ लक्ष्मीर्दिव्यैर्गजेन्द्रैर्मणिगणखचितैः
 स्नापिता हेमकुम्भैर्नित्यं सा पद्महस्ता मम वसतु गृहे सर्वमाङ्गल्य-
 युक्ता ॥ १७ ॥ लक्ष्मीं कोल्हापुरस्थां भुवि गणपतिनाऽग्रे च पार्श्वद्वये
 तां काल्या वाण्याऽऽसमन्तात्परिजननिकरैः सेवितां देवताभिः ॥ नागं
 लिङ्गं च योनिं स्वशिरसि दधतीं मातुलिङ्गं गदां तत् खेटं
 श्रीपानपात्रं त्रिभुवनजननीं नौमि दोर्भिश्चतुर्भिः ॥ १८ ॥ हस्तैः पद्मं
 रथाङ्गं गुणमथ हरिणं पुस्तकं वर्णमालां टङ्कं शूलं कपालं दरममृत-
 लसद्देमकुम्भं वहन्तीम् ॥ मुक्ताविद्युत्पयोधेः स्फटिकनवजपावन्धुरैः
 पञ्चवक्त्रैस्त्र्यक्षैर्वक्षोजनम्रां सकलशशिनिभां मातृकां तां नमामि ॥ १९ ॥
 ब्रह्माणी कमलेन्दुसौम्यवदना माहेश्वरी लीलया कौमारी रिपुदर्पनाशन-
 करी चक्रायुधा वैष्णवी ॥ वाराही वनघोरघर्घरमुखी चैन्द्री च
 वज्रायुधा चामुण्डा गणनाथरुद्रसहिता रक्षन्तु मां मातरः ॥ २० ॥
 अरुणकमलसंस्था तद्रजःपुञ्जवर्णा करकमलघृतेष्टाभीतियुग्माम्बुजा
 च ॥ मणिमुकुटविचित्राऽलंकृता कल्पजालैर्भवतु भुवनमाता सन्ततं
 श्रीः श्रिये नः ॥ २१ ॥ हेमप्रख्यामिन्दुखण्डात्तमौलिं शंखारिष्टाभीति-
 हस्तां त्रिनेत्राम् ॥ हेमाब्जस्थां पीतवर्णां प्रसन्नां देवीं दुर्गां दिव्यरूपां
 नमामि ॥ २२ ॥ सिन्दूरारुणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्यमौलिस्फुर-
 त्तारानायकशेखरां स्मितमुखीमापीनवक्षोरुहाम् ॥ पाणिभ्यामतिपूर्ण-
 रत्नचषकं रक्तोत्पलं विभ्रतीं सौम्यां रत्नघटस्थरक्तचरणां ध्यायेत्पराम-
 म्बिकाम् ॥ २३ ॥ विभ्राणा शूलबाणास्यरिसदरगदाचापपाशा-
 न्कराजैर्मैघश्यामा किरीटोल्लासितशशिकला भीषणा भूषणाढ्या ॥
 सिंहस्कन्धाधिरूढा चतसृभिरसिखेटान्विताभिः परीता कन्याभिर्भिन्न-
 दैत्या भवतु भवभयध्वंसिनी शूलिनी वः ॥ २४ ॥ अष्टौभुजाङ्गीं

महिषस्य मर्दिनीं सशंखचक्रां शरशूलधारिणीम् ॥ तां दिव्यरूपां
 सह जातवेदसीं दुर्गां सदा शरणमहं प्रपद्ये ॥ २५ ॥ महिषमस्तक-
 नृत्तविनोदनस्फुटरणन्मणिनूपुरमेखला ॥ जननरक्षणमोक्षविधायिनी
 जयतु शुम्भनिशुम्भनिषूदिनी ॥ २६ ॥ उद्धतौ मधुकैटभौ महिषासुरं
 च निहत्य तं धूम्रलोचन चण्ड मुण्ड रक्तबीजमुखांश्च तान् ॥
 दुष्टशुम्भनिशुम्भमर्दिनि नन्दिताऽमरवन्दिते विष्टपत्रयतुष्टिकारिणि
 भद्रकालि नमोऽस्तु ते ॥ २७ ॥ लक्ष्मीप्रदानसमये नवविद्रुमाभां
 विद्याप्रदानसमये शरदिन्दुशुभ्राम् ॥ विद्वेषिवर्गविजयेऽपि तमाल-
 नीलां देवीं त्रिलोकजननीं शरणं प्रपद्ये ॥ २८ ॥ चन्द्रहासं त्रिशूलं च
 शंखचक्रगदास्तथा ॥ धनुर्बाणं च मुसलं पिङ्गलं मुष्टिमेव च ॥ २९ ॥
 पाशाङ्कुशमुसृण्ठीश्च मुद्गरं परशुं तथा ॥ वज्रायुधं च कुन्तं च
 खट्वाङ्गं च हलायुधम् ॥ ३० ॥ तूणीरं क्षुरिकां मुद्रां तोमरं पान-
 पात्रकम् ॥ पट्टसदण्डनागं च कुन्तदन्तौ तथैव च ॥ ३१ ॥ दर्पणं
 रुद्रवीणां च विभ्रद्वात्रिंशदोस्तलाम् ॥ पद्मरागप्रभां देवीं बालार्क-
 किरणारुणाम् ॥ ३२ ॥ रक्तवस्त्रपरीधानां रक्तमाल्यानुलेपनाम् ॥
 दशपादाम्बुजां देवीं दशमण्डलपूरिताम् ॥ ३३ ॥ दशाननां त्रिनेत्रां
 च समुन्नतपयोधराम् ॥ एवं ध्यायेन्महाज्वालां महिषासुर-
 मर्दिनीम् ॥ ३४ ॥ सर्वदारिद्र्यशमनीं सर्वदुःखनिवारिणीम् ॥
 ब्रह्माण्डमध्यजिह्वां तां महावक्रकरालिनीम् ॥ ३५ ॥ दशसाहस्र-
 दोर्दण्डां नानाशस्त्रास्त्रधारिणीम् ॥ विचित्रायुधसन्नदां विश्वरूपां
 शिवात्मिकाम् ॥ ३६ ॥ दानवान्तकरीं देवीं रक्तबीजवधोद्यताम् ॥
 रक्तवस्त्रधरां चण्डीं भीषणामतिभैरवाम् ॥ ३७ ॥ सम्पूर्णयौवनां
 लक्ष्मीं कालिकां कमलाननाम् ॥ मधुकैटभसंहर्त्रीं महिषासुरमर्दि-
 नीम् ॥ ३८ ॥ चण्डमुण्डशिरश्छेत्रीं सर्वदैत्यनिषूदिनीम् ॥ रक्तबीजस्य

संहर्त्रीमशेषासुरभक्षिणीम् ॥ ३९ ॥ निशुम्भशुम्भमथिनीमशेषायु-
धभीषणाम् ॥ महाब्रह्माण्डमालाङ्गीं सर्वाभरणभूषिताम् ॥ ४० ॥
वेतालवाहनारूढां सिंहव्याघ्रादिवाहनाम् ॥ नररक्तप्रियां मायां
मधुमांसोपहारिणीम् ॥ ४१ ॥ य इदं शृणुयान्नित्यं त्रिसन्ध्यं यः
पठेन्नरः ॥ ऋणकोट्यपहरणं रोगदारिद्र्यनाशनम् ॥ ४२ ॥ सर्वसिद्धिकरं
पुण्यं सर्वकामफलप्रदम् ॥ भक्तानन्दकरीं देवीं परब्रह्मस्वरूपिणीम्
॥ ४३ ॥ तामष्टादशपीठस्थां त्रिपुरामधिदेवताम् ॥ वन्दे विश्वेश्वरीं
देवीं भुक्तिमुक्तिफलप्रदाम् ॥ ४४ ॥ इदं सप्तशतीध्यानं सर्वरक्षाकरं
नृणाम् ॥ रसं रसायनं सिद्धेद्दुलिकाञ्जनसिद्धिदम् ॥ ४५ ॥ पादुका-
युगुलं सिद्धेन्मन्त्रसिद्धिकरं नृणाम् ॥ सौन्दर्यराजसमानपुत्रपौत्राभि-
वर्धनम् ॥ ४६ ॥ ऐश्वर्यलाभविजयभुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥ सदा-
सन्निहितां लक्ष्मीं चण्डिकां मम देवताम् ॥ ४७ ॥ स्मरेन्नित्यं
प्रयत्नेन षण्मासात्प्राप्यते फलम् ॥ महाभयापहरणं शत्रुक्षयकरं तथा
॥ ४८ ॥ अचलां श्रियमाप्नोति सर्वव्याधिविनाशनम् ॥ अन्ते स्वर्गं
च मोक्षं च सत्यमेव न संशयः ॥ इति श्रीकाशीकरअनंतभट्टसुत-
रामकृष्णभट्टसंपादितसप्तशतीध्यानात्मकस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

२३८. सप्तशतीसारभूतदुर्गास्तोत्रम् ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ यस्या दक्षिणभागके दशभुजा काली कराला
स्थिता यद्वामे च सरस्वती वसुभुजा भाति प्रसन्नाऽऽनना ॥ यत्पृष्ठे
मिथुनत्रयं च पुरतो यस्या हरिः सैरिभस्तामष्टादशबाहुमम्बुजगतां
लक्ष्मीं स्मरेन्मध्यगाम् ॥ १ ॥ (इति ध्यानम् ॥) लं पृथ्व्यात्मक-
मर्पयामि रुचिरं गन्धं ह्रस्वमात्मकं पुष्पं यं मरुदात्मकं च सुरभिं
धूपं विधूतागमम् ॥ रं वह्न्यात्मकदीपकं वममृताऽऽत्मानं च नैवेद्यकं

मातर्मानसिकान्गृहाण रुचिरान्पञ्चोपचारानमून् ॥ १ ॥ (इति
मनसा सम्पूज्य पठेत् ॥) कल्पान्ते भुजगाधिपं मुररिपावास्तीर्य
निद्रामिते सञ्जातौ मधुकैटभौ सुररिपू तत्कर्णपीयूषतः ॥ दृष्ट्वा
भीतिभरान्वितेन विधिना या संस्तुताऽघातयद् वैकुण्ठेन विमोह्य तौ
भगवती तामसि कालीं भजे ॥ १ ॥ या पूर्वं महिषासुरार्दितसु-
रोदन्तश्रुतिप्रोत्थितक्रोधव्याप्तशिवाददैवतनुतो निर्गत्य तेजोमयी ॥
देवप्राप्तसमस्तवेषरुचिरा सिंहेन साकं सुरद्वेष्टृणां कदनं चकार नितरां
तामसि लक्ष्मीं भजे ॥ २ ॥ सैन्यं नष्टमवेक्ष्य चिक्षुरमुखा योद्धुं
ययुर्येऽथ तान् हत्वा शृङ्गखुराऽऽस्यपुच्छवलनैस्त्रिस्तत्रिलोकीजनम् ॥
आक्रम्य प्रपदेन तं च महिषं शूलेन कण्ठेऽभिनद् या मद्यास्त्रनेत्रवक्त्र-
कमला तामसि लक्ष्मीं भजे ॥ ३ ॥ ब्रह्मा विष्णुमहेश्वरौ च गदितुं
यस्याः प्रभावं बलं नालं सा परिपालनाय जगतोऽस्माकं च कुर्यान्म-
तिम् ॥ इत्थं शक्रमुखैः स्तुताऽमरगणैर्या संस्मृताऽऽपद्रजं हन्ताऽस्मीति
वरं ददावतिशुभं तामसि लक्ष्मीं भजे ॥ ४ ॥ भूयः शुम्भनिशुम्भ-
पीडितसुरैः स्तोत्रं हिमाद्रौ कृतं श्रुत्वा तत्र समागतेशरमणीदेहाद-
भूत्कौशिकी ॥ या नैजग्रहणे रिताय सुरजिह्वाय संधारणे यो जेता स
पतिर्ममेत्यकथयत्तामसि वाणीं भजे ॥ ५ ॥ तद्वृतस्य वचो निशम्य
कुपितः शुम्भोऽथ यं प्रेषयत् केशाकर्षणविह्वलां बलयुतस्तामानयेति
द्रुतम् ॥ दैत्यं भस्म चकार धूम्रनयनं हुङ्कारमात्रेण या तत्सैन्यं च
जघान यन्मृगपतिस्तामसि वाणीं भजे ॥ ६ ॥ चण्डं मुण्डयुतं च
सैन्यसहितं दृष्ट्वाऽऽगतं संयुगे काल्या भैरवया ललाटफलादुद्धृतया-
घातयत् ॥ तावादाय समागतेत्यथ च या तस्याः प्रसन्ना सती चामुण्डे-
त्यभिधां व्यधात्रिभुवने तामसि वाणीं भजे ॥ ७ ॥ श्रुत्वा संयति
चण्डमुण्डमरणं शुम्भो निशुम्भान्वितः क्रुद्धस्त्र समेत्य सैन्यसहित-

श्रक्नेऽद्भुतं संयुगम् ॥ ब्रह्माण्यादियुता रणे बलपतिं या रक्तबीजासुरं
 चामुण्डा परिपीतरक्तमवधीत्तामस्मि वाणीं भजे ॥ ८ ॥ दृष्ट्वा रक्त-
 जनुर्वधं प्रकुपितौ शुम्भो निशुम्भोऽप्युभौ चक्राते तुमुलं रणं प्रतिभयं
 नानास्त्रशस्त्रोत्करैः ॥ तत्राद्यं विनिपात्य मूर्च्छितमलं छित्त्वा निशुम्भं
 शिरः खड्गेनैनमपातयत्सपदि या तामस्मि वाणीं भजे ॥ ९ ॥ शुम्भं
 भ्रातृवधादतीव कुपितं दुर्गे त्वमन्याश्रयात् गर्विष्ठा भव मेत्युदीर्य
 सहसा युध्यन्तमत्युत्कटम् ॥ एकैवाऽस्मि न चापरेति वदती भित्त्वा च
 शूलेन या वक्षस्येनमपातयद्भुवि बलात्तामस्मि वाणीं भजे ॥ १० ॥
 दैत्येऽस्मिन्निहतेऽनलप्रभृतिभिर्देवैः स्तुता प्रार्थिता सर्वातिप्रशमाय
 सर्वजगतः स्वीयारिनाशाय च ॥ बाधा दैत्यजनिर्भविष्यति यदा तत्राव-
 तीर्य स्वयं दैत्यान्नाशयितास्म्यहं वरमदात्तामस्मि वाणीं भजे ॥ ११ ॥
 यश्चैतच्चरितत्रयं पठति ना तस्यैधते सन्ततिर्धान्यं कीर्तिधनादिकं च
 विपदां सद्यश्च नाशो भवेत् ॥ इत्युक्त्वान्तरधीयत स्वयमहो या पूजिता
 प्रत्यहं वित्तं धर्ममतिं सुतांश्च ददते तामस्मि वाणीं भजे ॥ १२ ॥
 इत्येतत्कथितं निशम्य चरितं देव्याः शुभं मेधसा राजासौ सुरथः
 समाधिरतुलं वैश्यश्च तेपे तपः ॥ या तुष्टाऽत्र परत्र जन्मनि वरं राज्यं
 ददौ भूभृते ज्ञानं चैव समाधये भगवतीं तामस्मि वाणीं भजे ॥ १३ ॥
 दुर्गासप्तशतीत्रयोदशमिताध्यायार्थसंगर्भितं दुर्गास्तोत्रमिदं पठिष्यति
 जनो यः कश्चिदत्यादरात् ॥ तस्य श्रीरतुला मतिश्च विमला पुत्रः
 कुलालङ्कृतिः श्रीदुर्गाचरणारविन्दकृपया स्यादत्र कः संशयः ॥ १४ ॥
 वेदाभ्रावणिसम्मिता १०४ नवरसा ६९ वर्णाब्धितुल्याः ४४ करा-
 न्नाया ४२ नन्दकरेन्दवो १२९ युगकराः २४ शैलद्वयो २७ ऽङ्ग-
 जकाः ६३ चन्द्रांभोधिसमा ४१ भुजानलमिता ३२ बाणेष्वो
 ५५ ऽब्जार्णवा ४१ नन्दद्वन्द्व २९ समा इतीह कथिता अध्यायमन्त्राः

क्रमात् ॥ १५ ॥ श्रीमत्काशीकरोपाख्यरामकृष्णसुधीकृतम् ॥ दुर्गा-
स्तोत्रमिदं धीराः पश्यन्तु गतमत्सराः ॥ १६ ॥ इति श्रीकाशीकरो-
पनामकअनन्तभट्टपुत्ररामकृष्णभट्टविरचितं श्रीदुर्गासप्तशतीसारभूत-
दुर्गास्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

२३९. दुर्गास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ लक्ष्मीशे योगनिद्रां प्रभजति भुजगाधीशतल्पे
सदर्पादुत्पन्नौ दानवौ तच्छ्रवणमलमयाङ्गौ मधुं कैटभं च ॥ दृष्ट्वा
भीतस्य धातुः स्तुतिभिरभिनुतामाशु तौ नाशयन्तीं दुर्गां देवीं प्रपद्ये
शरणमहमशेषापदुन्मूलनाय ॥ १ ॥ युद्धे निर्जित्य दैत्यस्त्रिभुवनम-
खिलं यस्तदीयेषु धिष्येष्वास्थाप्य स्वान् विधेयान् स्वयमगमदसौ
शक्रतां विक्रमेण ॥ तं सामात्यासमित्रं महिषमभिनिहत्यास्य
मूर्धाधिरूढां दुर्गां देवीं ० ॥ २ ॥ विश्वोत्पत्तिप्रणाशस्थितिविहृति-
परे देवि घोराभरारित्रासात्रातुं कुलं नः पुनरपि च महासङ्कटेष्वी-
दृशेषु ॥ आविर्भूयाः पुरस्तादिति चरणनमत्सर्वगीर्वाणवर्गां दुर्गां
देवीं प्र० ॥ ३ ॥ हन्तुं शुम्भं निशुम्भं विबुधगणनुतां हेमडोलां
हिमाद्रावारूढां व्यूढदर्पान्युधि निहतवतीं धूम्रदक्चण्डमुण्डान् ॥
चामुण्डाख्यां दधानामुपशमितमहारक्तबीजोपसर्गां दुर्गां देवीं ० ॥ ४ ॥
ब्रह्मेशस्कन्दनारायणकिटिनरसिंहेन्द्रशक्तिः स्वभृत्याः कृत्वा हत्वा
निशुम्भं जितविबुधगणं त्रासिताऽशेषलोकम् ॥ एकीभूयाऽथ शुम्भं
रणशिरसि निहत्य स्थितामात्तखड्गां दुर्गां देवीं ० ॥ ५ ॥ उत्पन्ना
नन्दजेति स्वयमवनितले शुम्भमन्यं निशुम्भं भ्रामर्याख्याऽरुणाख्या
पुनरपि जननी दुर्गमाख्यं निहन्तुम् ॥ भीमाशाकम्भरीति त्रुटितरिपु-
भटां रक्तदन्तेति जातां दुर्गां देवीं ० ॥ ६ ॥ त्रैगुण्यानां गुणानामनु-

सरणकलाकेलिनानावतारैस्त्रैलोक्यत्राणशीलां दनुजकुलवनीवह्निलीलां
 सलीलाम् ॥ देवीं सच्चिन्मयीं तां वितरितविनमत्सत्रिवर्गापवर्गां
 दुर्गां देवीं० ॥ ७ ॥ सिंहारूढां त्रिनेत्रां करतलविलसच्छंखचक्रासि
 रम्यां भक्ताभीष्टप्रदात्रीं रिपुमथनकरीं सर्वलोकैकवन्द्याम् ॥ सर्वा-
 लङ्कारयुक्तां शशियुतमुकुटां श्यामलाङ्गीं कृशाङ्गीं दुर्गां देवीं० ॥ ८ ॥
 त्रायस्व स्वामिनीति त्रिभुवनजननि प्रार्थना त्वय्यपार्था पाल्यन्ते-
 ऽभ्यर्थनायां भगवति शिशवः किंवनन्या जनन्या ॥ तनुभ्यं स्यान्न-
 मस्येत्यवनतविबुधाह्लादवीक्षा विसर्गां दुर्गां देवीं० ॥ ९ ॥ एतं
 सन्तः पठन्तु स्तवमखिलविपज्जालतूलाऽनलाभं हन्मोहध्वान्तभानु-
 प्रतिममखिलसङ्कल्पकल्पद्रुकल्पम् ॥ दौर्गं दौर्गत्यघोरा तपतु हिनकर-
 प्रख्यमंहो गजेन्द्रश्रेणीपञ्चास्यदेश्यं विपुलभयदकालाहिताक्ष्यप्रभावम्
 ॥ १० ॥ इति श्रीदुर्गास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२४०. रात्रिसूक्तात्मकं देवीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ रात्रिदेवीं प्रपद्येऽहं शरणागतवत्सलाम् ॥
 करालवदनां कृष्णां दुष्टग्रहविनाशिनीम् ॥ १ ॥ नमामि खड्गहस्तां तां
 खेटहस्तां भयानकाम् ॥ वरदाभयहस्तां च भक्तलोकभयापहाम् ॥ २ ॥
 शूलहस्तां शंखचक्रगदाचापेपुधारिणीम् ॥ चतुर्भुजामष्टभुजां द्विभुजा-
 मरिमर्दिनीम् ॥ ३ ॥ अष्टादशभुजां लक्ष्मीं दशहस्तां सरस्वतीम् ॥
 सर्वसम्पत्प्रदात्रीं च सर्वविद्याप्रदायिनीम् ॥ ४ ॥ सहस्रबाहुचरणां
 सहस्रमुखलोचनाम् ॥ सहस्रमुकुटोपेतां सहस्रचरणाम्बुजाम् ॥ ५ ॥
 पद्मयोनिमुखाब्जस्थां विष्णुवक्षःस्थलस्थिताम् ॥ शिवाङ्कनिलयां
 गौरां वन्दे मूर्तित्रयात्मिकाम् ॥ ६ ॥ आर्भक्या वैष्णवी चोग्रा
 कुलानि विबुधद्विषाम् ॥ या निर्दहति रक्ताक्षी तां वन्दे सिंहवाहनाम्
 ॥ ७ ॥ मधुकैटभसंहारं महिषासुरमर्दनम् ॥ याऽकरोन्नौमि दुर्गां

तां वधं शुम्भनिशुम्भयोः ॥ ८ ॥ इन्द्रादिसर्वदेवानां सूर्यादि-
ज्योतिषामपि ॥ सर्वशक्तिस्वरूपा या रात्रीं तां प्रणमाम्यहम् ॥ ९ ॥
रात्रिसूक्तं जपेद्रात्रौ त्रिवारं च दिने दिने ॥ भूतप्रेतपिशाचादिचोर-
सर्पादिनाशनम् ॥ १० ॥ इति श्रीरात्रिसूक्तात्मकदेवीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

२४१. आर्यादुर्गाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ आर्यादुर्गाऽभिधाना हिमनगदुहिता शङ्करार्धा-
सनस्था माता षण्मातुरस्याखिलजनविनुता संस्थिता स्वासनेऽग्रे ॥
गीता गन्धर्वसिद्धैर्विरचितविरुदैर्याऽखिलाऽङ्गेषु पीता संवीता भक्त-
वृन्दैरतिशुभचरिता देवता नः पुनातु ॥ १ ॥ मातस्त्वां साम्बपत्नीं
विदुरखिलजना वेदशास्त्राश्रयेण नाहं मन्ये तथा त्वां मयि हरिदयिता-
मम्बुजैकासनस्थाम् ॥ नित्यं पित्रा स देशे निजतनुजनिता स्थाप्यते
प्रेमभावादेतादृश्यानुभूत्यो दधितटसविधे संस्थितां तर्कयामि ॥ २ ॥
नासीदालोकिता त्वत्तनुरतिरुचिराऽद्यावधीत्यात्मदृष्ट्या लोकोक्त्या मे
भ्रमोऽभूत्सरसिजनिलये नामयुग्माक्षरार्थात् ॥ सोऽयं सर्वो निरस्तस्तव
कनकमयीं मूर्तिमालोक्य सद्यः साऽपर्णा स्वर्णवर्णाऽर्णवतनुजनिते न
श्रुता नापि दृष्टा ॥ ३ ॥ श्रीसूक्तोक्ताद्यमन्त्रात्कनकमयतनुः स्वर्ण-
कञ्जोच्चहारा सारा लोकत्रयान्तर्भगवति भवतीत्येवमेवागमोक्तम् ॥
तन्नामोक्ताऽक्षरार्थात्कथमयि वितथं स्यात्सरिन्नाथकन्ये दृष्टार्थे व्यर्थतर्को
ह्यनयपथगतिं सूचयत्यर्थदृष्ट्या ॥ ४ ॥ तन्वस्ते मातरस्मिञ्जगति
गुणवशाद्विश्रुतास्तिष्ठ एव काली श्रीर्गीश्व तासां प्रथममभिहिता
कृष्णवर्णा ह्यपर्णा ॥ लक्ष्मीस्तु स्वर्णवर्णा विशदतनुरथो भारती
चेदमुषु स्वच्छा नोनापि कृष्णा भगवति भवती श्रीरसीत्येव सिद्धम्
॥ ५ ॥ नामाद्यायाः स्वरूपं कनकमयमिदं मध्यमायाश्च यानमन्यायाः
सिंहरूपं त्रितयमपि तनौ धारयन्त्यास्तवेदृक् ॥ दृष्ट्वा नूतैव सर्वा

व्यवहृतिसरणीरिन्दरे चेदतर्क्या त्वामाद्यां विश्ववन्द्यां त्रिगुणमयतनुं
चेतसा चिन्तयामि ॥ ६ ॥ त्वद्रूपज्ञानकामा विविधविधसमाकृत-
तर्कैरनेकैर्नो शक्ता निर्जरास्ते विधि-हरि-हरसंज्ञा जगद्वन्द्यपादाः ॥
का शक्तिर्मे भवित्री जलनिधितनये ज्ञातुमुग्रं तवेदं रूपं नाम्ना
प्रभावादपि वितथफलो मे बभूव प्रयत्नः ॥ ७ ॥ अस्त्वम्ब त्वय्यनेकैर-
शुभशुभतैरैः कल्पितैरम्ब तर्कैरद्याहं मन्दबुद्धिः सरसिजनिलये सापरा-
धोऽस्मि जातः ॥ तस्मात्त्वत्पादपद्मद्वयनमितशिरा प्रार्थयाम्येतदेव
क्षन्तव्यो मेऽपराधो हरिहरदयिते भेदबुद्धिर्न मेऽस्ति ॥ ८ ॥ आर्या-
दुर्गाष्टकमिदमनन्तकविना कृतम् ॥ तव प्रीतिकरं भूयादित्यभ्यर्थन-
मम्बिके ॥ ९ ॥ इति श्रीमदनन्तकविविरचितमार्यादुर्गाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

२४२. कात्यायन्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अवर्षिसंज्ञं पुरमस्ति लोके कात्यायनी तत्र
विराजते या ॥ प्रसाददा या प्रतिमा तदीया सा छत्रपुर्यां जयतीह
गेया ॥ १ ॥ त्वमस्य भिन्नैव विभासि तस्यास्तेजस्विनी दीपजदीप-
कल्पा ॥ कात्यायनी स्वाश्रितदुःखहर्त्री पवित्रगात्री मतिमानदात्री
॥ २ ॥ ब्रह्मोरुवेतालकसिंहदाढोसुभैरवैरग्निगणाभिधेन ॥ संसेव्यमाना
गणपत्यभिख्या युजा च देवि स्वगणैरिहासि ॥ ३ ॥ गोत्रेषु
जातैर्जमदग्निभारद्वाजात्रिस्तकाश्यपकौशिकानाम् ॥ कौण्डिण्यवत्सा-
न्वयजैश्च विप्रैर्निजैर्निषेव्ये वरदे नमस्ते ॥ ४ ॥ भजामि गोक्षीरकृता-
भिषेके रक्ताम्बरे रक्तसुचन्दनाक्ते ॥ त्वां बिल्वपत्रीशुभदामशोभे
भक्ष्यप्रिये हृत्प्रियदीपमाले ॥ ५ ॥ खड्गं च शङ्खं महिषासुरीयं पुच्छं
त्रिशूलं महिषासुरास्ये ॥ प्रवेशितं देवि करैर्दधाने रक्षानिशं मां
महिषासुरघ्ने ॥ ६ ॥ स्वाग्रस्थबाणेश्वरनामलिङ्गं सुरलोकं स्वममयं किरी-
टम् ॥ शीर्षे दधाने जय हे शरण्ये विद्युत्प्रभे मां जयिनं कुरुष्व ॥ ७ ॥

नेत्रावतीदक्षिणपार्श्वसंस्थे विद्याधरैर्नागगणैश्च सेव्ये ॥ दयाघने प्रापय
शं सदास्नान्मातर्यशोदे शुभदे शुभाक्षि ॥ ८ ॥ इदं कात्यायनी-
देव्याः प्रसादाष्टकमिष्टदम् ॥ कुमठाचार्यजं भक्त्या पठेद्यः स सुखी
भवेत् ॥ ९ ॥ इति श्रीकात्यायन्यष्टकं संपूर्णम् ॥

२४३. पुराणोक्तं रात्रिसूक्तम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारिणीम् ।
निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ॥ १ ॥ ब्रह्मोवाच ॥
त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारस्वरात्मिका । सुधा
त्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ॥ २ ॥ अर्धमात्रा
स्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः । त्वमेव संध्या सावित्री त्वं देवि
जननी परा ॥ ३ ॥ त्वयैतद्धार्यते विश्वं त्वयैतत्सृज्यते जगत् ।
त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यते च सर्वदा ॥ ४ ॥ विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं
स्थितिरूपा च पालने । तथा संहतिरूपांते जगतोऽस्य जगन्मये ॥ ५ ॥
महाविद्या महामाया महामेधां महास्मृतिः । महामोहा च भवती
महादेवी महेश्वरी ॥ ६ ॥ प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी ।
कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा ॥ ७ ॥ त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी
त्वं हीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा । लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः
क्षांतिरेव च ॥ ८ ॥ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ।
शंखिनी चापिनी वाणभुशुंडीपरिघायुधा ॥ ९ ॥ सौम्यासौम्यतरा-
शेषसौम्येभ्यस्त्वतिसुंदरी । परा पराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ॥ १० ॥
यच्च किञ्चित्कचिद्वस्तु सदसद्वाऽखिलात्मिके । तस्य सर्वस्य या शक्तिः
सा त्वं किं स्तूयसे मया ॥ ११ ॥ यथा त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पालयति
यो जगत् । सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥ १२ ॥
विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च । कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः

स्तोतुं शक्तिमान्भवेत् ॥ १३ ॥ सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि
संस्तुता । मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधुकैटभौ ॥ १४ ॥ प्रबोधं
च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु । बोधश्च क्रियतामस्य हंतुमेतौ
महासुरौ ॥ १५ ॥ इति पुराणोक्तं रात्रिसूक्तं संपूर्णम् ॥

२४४. शक्रादिकृता देवीस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ शक्रादयः सुरगणा
निहतेऽतिवीर्ये तस्मिन्दुरात्मनि सुरारिवले च देव्या । तां तुष्टुवुः
प्रणतिनम्रशिरोधरांसा वाग्भिः प्रहर्षपुलकोद्गमचारुदेहाः ॥ २ ॥
देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या निःशेषदेवगणशक्तिसमूहमूर्या ।
तामंबिकामखिलदेवमहर्षिपूज्यां भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि
सा नः ॥ ३ ॥ यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननंतो ब्रह्मा हरश्च नहि
वक्तुमलं बलं च । सा चण्डिकाखिलजगत्परिपालनाय नाशाय
चाशुभभयस्य मतिं करोतु ॥ ४ ॥ या श्रीः स्वयं सुकृतिनां
भवनेष्वलक्ष्मीः पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः । श्रद्धा सतां
कुलजनप्रभवस्य लज्जा तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम्
॥ ५ ॥ किं वर्णयाम तव रूपमचिंत्यमेतत्किं चातिवीर्यमसुरक्षयकारि
भूरि । किं चाहवेषु चरितानि तवाति यानि सर्वेषु देव्यसुरदेवगणा-
दिकेषु ॥ ६ ॥ हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषैर्न ज्ञायसे हरिहरा-
दिभिरप्यपारा । सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंशभूतमव्याकृता हि परमा
प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥ ७ ॥ यस्याः समस्तसुरता समुदीरणेन तृप्तिं प्रयाति
सकलेषु मखेषु देवि । स्वाहासि वै पितृगणस्य च तृप्तिहेतुरुच्चार्यसे
त्वमत एव जनैः स्वधा च ॥ ८ ॥ या मुक्तिहेतुरविचिंत्यमहाव्रता
त्वमभ्यस्यसे सुनियतेंद्रियतत्त्वसारैः । मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्तसमस्त-
दोषैर्विद्याऽसि सा भगवती परमा हि देवी ॥ ९ ॥ शब्दात्मिका

सुविमलर्ग्यजुषां निधानमुद्रीथरम्यपदपाठवतां च साम्नाम् । देवि
 त्रयी भगवती भवभावनाय वार्तासि सर्वजगतां परमार्तिहन्त्री
 ॥ १० ॥ मेधासि देवि विदिताखिलशास्त्रसारा दुर्गाऽसि दुर्गभव-
 सागरनौरसंगा । श्रीः कैटभारिहृदयैककृताधिवासा गौरि त्वमेव
 शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा ॥ ११ ॥ ईषत्सहासममलं परिपूर्णचंद्र-
 विम्बानुकारि कनकोत्तमकांति कांतम् । अत्यद्भुतं प्रहृतमात्तरुषा
 तथापि वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण ॥ १२ ॥ दृष्ट्वा तु देवि
 कुपितं भृकुटीकगलमुद्यच्छशांकसदृशच्छवि यन्न सद्यः । प्राणान्मुमोच
 महिषस्तदतीव चित्रं कैर्जीव्यते हि कुपितांतकदर्शनेन ॥ १३ ॥
 देवि प्रसीद परमाभवती भवाय सद्यो विनाशयति कोपवती
 कुलानि । विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेतन्नीतं बलं सुविपुलं महिषा-
 सुरस्य ॥ १४ ॥ ते संमता जनपदेषु धनानि तेषां तेषां यशांसि
 न च सीदति बंधुवर्गः । धन्यास्त एव निभृतात्मजभृत्यदारा
 येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥ १५ ॥ धर्म्याणि देवि
 सकलानि सदैव कर्माण्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृती करोति । स्वर्गं
 प्रयाति च ततो भवतीप्रसादालोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि
 तेन ॥ १६ ॥ दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः स्वस्थैः
 स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि । दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का
 त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदाद्र्दचित्ता ॥ १७ ॥ एभिर्हतैर्जगदुपैति
 सुखं तथैते कुर्वंतु नाम नरकाय चिराय पापम् । संग्राममृत्यु-
 मधिगम्य दिवं प्रयांतु मत्वेति नूनमहितान्विनिहंसि देवि ॥ १८ ॥
 दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म सर्वासुरानरिषु यत्प्रहिणोषि
 शस्त्रम् । लोकान्प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्रपूता इत्थं मति-
 भवति तेष्वहितेषु साध्वी ॥ १९ ॥ खड्गप्रभानिकरविस्फुरणैस्तथोग्रैः

शूलाग्रकांतिनिवहेन दृशोऽसुराणाम् । यन्नागता विलयमंशुमर्दिदुखं-
 योग्याननं तव विलोकयतां तदेतत् ॥ २० ॥ दुर्वृत्तवृत्तशमनं तव
 देवि शीलं रूपं तथैतदविचिंत्यमतुल्यमन्यैः । वीर्यं च हंतृ हतदेव-
 पराक्रमाणां वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्यम् ॥ २१ ॥ केनोपमा
 भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य रूपं च शत्रुभयकार्यतिहारि कुत्र । चित्ते कृपा
 समरनिष्ठुरता च दृष्टा त्वय्येव देवि वरदे भुवनत्रयेऽपि ॥ २२ ॥
 त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपुनाशनेन त्रातं त्वया समरमूर्धनि तेऽपि हत्वा ।
 नीता दिवं रिपुगणा भयमप्यपास्तमस्माकमुन्मदसुरारिभवं नमस्ते
 ॥ २३ ॥ शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके । घण्टास्वनेन
 नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥ २४ ॥ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च
 चण्डिके रक्ष दक्षिणे । आमणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथे-
 श्वरि ॥ २५ ॥ सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति
 ते । यानि चात्यंतघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥ २६ ॥
 खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके । करपल्लवसंगीनि तैरस्मान्
 रक्ष सर्वतः ॥ २७ ॥ ऋषिरुवाच ॥ २८ ॥ एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः
 कुसुमैर्नदनोद्भवैः । अर्चिता जगतां धात्री तथा गंधानुलेपनैः ॥ २९ ॥
 भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैः सुधूपिता । ग्राह प्रसादसुमुखी
 समस्तान्प्रणतान्सुरान् ॥ ३० ॥ देव्युवाच ॥ ३१ ॥ त्रियतां त्रिदशाः
 सर्वे यदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम् ॥ ३२ ॥ देवा ऊचुः ॥ ३३ ॥ भगवत्या
 कृतं सर्वं न किञ्चिदवशिष्यते । यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः
 ॥ ३४ ॥ यदि चापि वरो देयस्त्वयाऽस्माकं महेश्वरि । संस्मृताऽ-
 संस्मृता त्वं नो हिंसेथाः परमापदः ॥ ३५ ॥ यश्च मर्त्यः स्तवै-
 रेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने । तस्य वित्तर्द्धिविभवैर्धनदारादिसंपदाम्
 ॥ ३६ ॥ वृद्धयेऽस्मत्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाम्बिके ॥ ३७ ॥

ऋषिरुवाच ॥ ३८ ॥ इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथात्मनः ।
 तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवांतर्हिता नृप ॥ ३९ ॥ इत्येतत्कथितं भूप
 संभूता सा यथा पुरा । देवी देवशरीरेभ्यो जगन्नयहितैषिणी ॥ ४० ॥
 पुनश्च गौरीदेहात्सा समुद्भूता यथाऽभवत् । वधाय दुष्टदैत्यानां तथा
 शुंभनिशुंभयोः ॥ ४१ ॥ रक्षणाय च लोकानां देवानामुपकारिणी ।
 तच्छृणुष्व मयाख्यातं यथावत्कथयामि ते । ह्रीम् ॐ ॥ ४२ ॥
 इति श्रीशक्रादिकृता देवीस्तुतिः संपूर्णा ॥

२४५. नारायणीस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ देव्या हते तत्र महा-
 सुरेंद्रे सेंद्राः सुरा वह्निपुरोगमास्ताम् । कात्यायनीं तुष्टुवुरिष्टलाभा-
 द्विकाशिवक्राब्जविकासिताशाः ॥ २ ॥ देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद प्रसीद
 मातर्जगतोऽखिलस्य । प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं त्वमीश्वरी देवि
 चराचरस्य ॥ ३ ॥ आधारभूता जगतस्त्वमेका महीस्वरूपेण यतः
 स्थितासि । अपांस्वरूपस्थितया त्वयैतदाप्यायते कृत्स्नमलंघ्यवीर्ये
 ॥ ४ ॥ त्वं वैष्णवी शक्तिरनंतवीर्या विश्वस्य बीजं परमासि माया ।
 संमोहितं देवि समस्तमेतत्त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः ॥ ५ ॥
 विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु ।
 त्वयैकया पूरितमंबयैतत् का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः ॥ ६ ॥
 सर्वभूता यदा देवि भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी । त्वं स्तुता स्तुतये का
 वा भवंतु परमोक्तयः ॥ ७ ॥ सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि
 संस्थिते । स्वर्गापवर्गदे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥ कला-
 काष्ठादिरूपेण परिणामप्रदायिनी । विश्वस्योपरतौ शक्ते नारायणि
 नमोऽस्तु ते ॥ ९ ॥ सर्वमंगलमांगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
 शरण्ये ज्यंबके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १० ॥ सृष्टिस्थिति-

विनाशानां शक्तिभूते सनातनि । गुणाश्रये गुणमये नारायणि
 नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥ शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।
 सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १२ ॥ हंसयुक्त-
 विमानस्थे ब्रह्माणीरूपधारिणि । कौशांभःक्षरिके देवि नारायणि
 नमोऽस्तु ते ॥ १३ ॥ त्रिशूलचंद्राहिधरे महावृषभवाहिनि ।
 माहेश्वरीस्वरूपेण नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १४ ॥ मयूरकुण्डवृते
 महाशक्तिधरेऽनघे । कौमारीरूपसंस्थाने नारायणि नमोऽस्तु
 ते ॥ १५ ॥ शंखचक्रगदाशार्ङ्गगृहीतपरमायुधे । प्रसीद
 वैष्णवीरूपे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १६ ॥ गृहीतोग्रमहाचक्रे
 दंष्ट्रोद्धृतवसुंधरे । वराहरूपिणि शिवे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १७ ॥
 नृसिंहरूपेणोग्रेण हंतुं दैत्यान्कृतोद्यमे । त्रैलोक्यत्राणसहिते नारायणि
 नमोऽस्तु ते ॥ १८ ॥ किरीटिनि महावज्रे सहस्रनयनोज्ज्वले ।
 वृत्रप्राणहरे चैद्रि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १९ ॥ शिवदूतीस्वरूपेण
 हतदैत्यमहाबले । घोररूपे महारावे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ २० ॥
 दंष्ट्राकरालवदने शिरोमालाविभूषणे । चासुंडे मुंडमथने नारायणि
 नमोऽस्तु ते ॥ २१ ॥ लक्ष्मि लज्जे महाविद्ये श्रद्धे पुष्टि स्वधे ध्रुवे ।
 महारात्रि महामाये नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ २२ ॥ मेघे सरस्वति
 वरे भूति बाभ्रवि तामसि । नियते त्वं प्रसीदेशे नारायणि नमोऽस्तु
 ते ॥ २३ ॥ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते । भयेभ्यस्त्राहि
 नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ॥ २४ ॥ एतत्ते वदनं सौम्यं
 लोचनत्रयभूषितम् । पातु नः सर्वभूतेभ्यः कालायनि नमोऽस्तु ते
 ॥ २५ ॥ ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम् । त्रिशूलं पातु नो
 भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तु ते ॥ २६ ॥ हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य
 या जगत् । सा घंटा पातु नो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव ॥ २७ ॥

असुरासृग्वसापंकचर्चितस्ते करोज्ज्वलः । शुभाय खड्गो भवतु
 चंडिके त्वां नता वयम् ॥ २८ ॥ रोगानशेषानपहंसि तुष्टा रुष्टा तु
 कामान्सकलानभीष्टान् । त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां त्वामाश्रिता
 ह्याश्रयतां प्रयांति ॥ २९ ॥ एतत्कृतं यत्कदनं त्वयाऽद्य धर्मद्विषां
 देवि महासुराणाम् । रूपैरनेकैर्वहुधात्ममूर्तिं कृत्वाऽम्बिके तत्
 प्रकरोति काऽन्या ॥ ३० ॥ विद्यासु शास्त्रेषु विवेकदीपेष्वान्येषु
 वाक्येषु च का त्वदन्या । ममत्वगतेऽतिमहांधकारे विभ्रामयत्येत-
 दतीव विश्वम् ॥ ३१ ॥ रक्षांसि यत्रोग्रविषाश्च नागा यत्रारयो
 दस्युबलानि यत्र । दावानलो यत्र तथाब्धिमध्ये तत्र स्थिता त्वं
 परिपासि विश्वम् ॥ ३२ ॥ विश्वेश्वरि त्वं परिपासि विश्वं
 विश्वात्मिका धारयसीह विश्वम् । विश्वेशवंद्या भवती भवंति
 विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः ॥ ३३ ॥ देवि प्रसीद परिपालय
 नोऽरिभीतेर्नित्यं यथाऽसुरवधादधुनैव सद्यः । पापानि सर्वजगतां
 प्रशमं नयाशु उत्पातपाकजनितांश्च महोपसर्गान् ॥ ३४ ॥
 प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणि । त्रैलोक्यवासि-
 नामीड्ये लोकानां वरदा भव ॥ ३५ ॥ देव्युवाच ॥ ३६ ॥
 वरदाहं सुरगणा वरं यं मनसेच्छथ । तं वृणुध्वं प्रयच्छामि
 जगतामुपकारकम् ॥ ३७ ॥ देवा ऊचुः ॥ ३८ ॥ सर्वाबाधा-
 प्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि । एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरि-
 विनाशनम् ॥ ३९ ॥ देव्युवाच ॥ ४० ॥ वैवस्वतेऽंतरे प्राप्ते
 अष्टाविंशतिमे युगे । शुंभो निशुंभश्चैवान्याबुत्पत्येते महासुरौ ॥ ४१ ॥
 नंदगोपगृहे जाता यशोदागर्भसंभवा । ततस्तौ नाश-
 यिष्यामि विंध्याचलनिवासिनी ॥ ४२ ॥ पुनरप्यतिरौद्रेण रूपेण
 पृथिवीतले । अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांश्च दानवान् ॥ ४३ ॥

भक्षयंत्याश्च तानुग्रान् वैप्रचित्तान्महासुरान् । रक्ता दंता भवि-
 प्यन्ति दाडिमीकुसुमोपमाः ॥ ४४ ॥ ततो मां देवताः स्वर्गे
 मर्त्यलोके च मानवाः । स्तुवंतो व्याहरिष्यन्ति सततं रक्तदंतिकाम्
 ॥ ४५ ॥ भूयश्च शतवार्षिक्यामनावृष्ट्यामनंभसि । मुनिभिः
 संस्मृता भूमौ संभविष्याम्ययोनिजा ॥ ४६ ॥ ततः शतेन नेत्राणां
 निरीक्षिष्याम्यहं मुनीन् । कीर्तयिष्यन्ति मनुजाः शताक्षीमिति मां
 ततः ॥ ४७ ॥ ततोऽहमखिलं लोकमात्मदेहसमुद्भवैः । भरिष्यामि
 सुराः शकैरावृष्टेः प्राणधारकैः ॥ ४८ ॥ शाकंभरीति विख्यातिं तदा
 यास्याम्यहं भुवि ॥ ४९ ॥ तत्रैव च वधिष्यामि दुर्गमाख्यं
 महासुरम् । दुर्गादेवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति ॥ ५० ॥
 पुनश्चाहं यदा भीमं रूपं कृत्वा हिमाचले । रक्षांसि भक्षयिष्यामि
 मुनीनां त्राणकारणात् ॥ ५१ ॥ तदा मां मुनयः सर्वे स्तोष्यं-
 त्यानम्रमूर्तयः । भीमादेवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति ।
 ॥ ५२ ॥ यदारुणाख्यस्रैलोक्ये महाबाधां करिष्यति । तदाहं
 भ्रामरं रूपं कृत्वाऽसंख्येयवट्पदम् ॥ ५३ ॥ त्रैलोक्यस्य हितार्थाय
 वधिष्यामि महासुरम् । भ्रामरीति च मां लोकास्तदा स्तोष्यन्ति
 सर्वतः ॥ ५४ ॥ इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति । तदा
 तदावतीर्याहं करिष्याम्यरिसंक्षयम् ॥ ५५ ॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे
 सावर्णिके मन्वंतरे देवीमाहात्म्ये नारायणीस्तुतिः संपूर्णा ॥

२४६. ललितासहस्रनामस्तोत्रम् ।

(❀ उपोद्धाताख्या प्रथमा कला । ❀) त्रिपुरां कुलनिधिमीडे-
 रुणश्रियं कामराजविद्वाङ्गीम् । त्रिगुणैर्देवैर्निनुतामेकान्तां बिन्दुगां
 महारम्भाम् ॥ १ ॥ ललितानामसहस्रे छलार्णसूत्रानुयायिन्यः ।

परिभाषा भाष्यन्ते संक्षेपात्कौलिकप्रमोदाय ॥ २ ॥ पञ्चाशदेक आदौ
 नामसु सार्धद्व्यशीतिशतम् । षडशीतिः सार्धान्ते सर्वे विंशतिशतत्रयं
 श्लोकाः ॥ ३ ॥ दशभूः सार्धनृपाला अध्युष्टं सार्धनवषडध्युष्टम् । मुनि-
 सूतहयाम्बाश्चोक्तिर्ध्यानमेकेन ॥ ४ ॥ अगस्त्य उवाच ॥ अश्वानन महाबुद्धे
 सर्वशास्त्रविशारद । कथितं ललितादेव्याश्चरितं परमाद्भुतम् ॥ १ ॥
 पूर्वं प्रादुर्भवो मातुस्ततः पट्टाभिषेचनम् । भण्डासुरवधश्चैव विस्त-
 रेण त्वयोदितः ॥ २ ॥ वर्णितं श्रीपुरं चापि महाविभवविस्तरम् ।
 श्रीमत्पञ्चदशाक्षर्या महिमा वर्णितस्तथा ॥ ३ ॥ षोढान्यासादयो
 न्यासा न्यासखण्डे समीरिताः ॥ ४ ॥ अन्तर्यागक्रमश्चैव बहिर्याग-
 क्रमस्तथा । महायागक्रमश्चैव पूजाखण्डे प्रकीर्तितः ॥ ५ ॥ पुर-
 श्वरणखण्डे तु जपलक्षणमीरितम् । होमखण्डे त्वया प्रोक्तो होम-
 द्रव्यविधिक्रमः ॥ ६ ॥ चक्रराजस्य विद्यायाः श्रीदेव्या देशिका-
 त्मनोः । रहस्यखण्डे तादात्म्यं परस्परमुदीरितम् । स्तोत्रखण्डे
 बहुविधाः स्तुतयः परिकीर्तिताः ॥ ७ ॥ मन्त्रिणीदण्डिनीदेव्योः
 प्रोक्ते नामसहस्रके । नतु श्रीललितादेव्याः प्रोक्तं नामसहस्रकम् ॥ ८ ॥
 तत्र मे संशयो जातो हयग्रीव दयानिधे । किंवा त्वया
 विस्मृतं तज्ज्ञात्वा वा समुपेक्षितम् ॥ ९ ॥ मम वा योग्यता नास्ति
 श्रोतुं नामसहस्रकम् । किमर्थं भवता नोक्तं तत्र मे कारणं वद
 ॥ १० ॥ सूत उवाच ॥ इति पृष्टो हयग्रीवो मुनिना कुम्भजन्मना ।
 प्रहृष्टो वचनं प्राह तापसं कुम्भसंभवम् ॥ ११ ॥ लोपामुद्रा-
 पतेऽगस्त्य सावधानमनाः शृणु । नाम्नां सहस्रं यन्नोक्तं कारणं
 तद्वदामि ते ॥ १२ ॥ रहस्यमिति मत्वाहं नोक्तवांस्ते न चान्यथा ।
 पुनश्च पृच्छसे भक्त्या तस्मात्तत्ते वदाम्यहम् ॥ १३ ॥

ब्रूयाच्छिष्याय भक्ताय रहस्यमपि देशिकः । भवता न प्रदेयं
 स्यादभक्ताय कदाचन ॥ १४ ॥ न शठाय न दुष्टाय नाविश्वासाय
 कर्हिचित् । श्रीमातृभक्तियुक्ताय श्रीविद्याराजवेदिने ॥ १५ ॥
 उपासकाय शुद्धाय देयं नामसहस्रकम् । यानि नामसहस्राणि
 सद्यःसिद्धिप्रदानि वै ॥ १६ ॥ तन्त्रेषु ललितादेव्यास्तेषु मुख्यमिदं
 मुने । श्रीविद्यैव तु मन्त्राणां तत्र कादिर्यथा परा ॥ १७ ॥ पुराणां
 श्रीपुरमिव शक्तीनां ललिता यथा । श्रीविद्योपासकानां च यथा
 देवो वरः शिवः ॥ १८ ॥ तथा नामसहस्रेषु वरमेतत्प्रकीर्तितम्
 ॥ १९ ॥ यथास्य पठनादेवी प्रीयते ललिताम्बिका । अन्यनाम-
 सहस्रस्य पाठान्न प्रीयते तथा । श्रीमातुः प्रीतये तस्मादनिशं कीर्तये-
 दिदम् ॥ २० ॥ विल्वपत्रैश्चक्रराजे योऽर्चयेल्ललिताम्बिकाम् ।
 पद्मैर्वा तुलसीपत्रैरेभिर्नामसहस्रकैः ॥ २१ ॥ सद्यः प्रसादं कुरुते
 तत्र सिंहासनेश्वरी । चक्राधिराजमभ्यर्च्य जप्त्वा पञ्चदशाक्षरीम्
 ॥ २२ ॥ जपान्ते कीर्तयेन्नित्यमिदं नामसहस्रकम् । जपपूजाद्य-
 शक्तोऽपि पठेन्नामसहस्रकम् ॥ २३ ॥ साङ्गार्चने साङ्गजपे
 यत्फलं तदवाप्नुयात् । उपासने स्तुतीरन्याः पठेदभ्युदयो
 हि सः ॥ २४ ॥ इदं नामसहस्रं तु कीर्तयेन्नित्यकर्मवत् ।
 चक्रराजार्चनं देव्या जपो नाम्नां च कीर्तनम् ॥ २५ ॥
 भक्तस्य कृत्यमेतावदन्यदभ्युदयं विदुः । भक्तस्यावश्यकमिदं
 नामसाहस्रकीर्तनम् ॥ २६ ॥ तत्र हेतुं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं
 कुम्भसंभव । पुरा श्रीललितादेवी भक्तानां हितकाम्यया ॥ २७ ॥
 वाग्देवीर्वशिनीमुख्याः समाहूयेदमब्रवीत् । वाग्देवता वशिण्याद्याः
 शृणुध्वं वचनं मम ॥ २८ ॥ भवत्यो मत्प्रसादेन प्रोल्लसद्वाग्नि-
 भूतयः । मद्भक्तानां वाग्निभूतिप्रदाने विनियोजिताः ॥ २९ ॥

मच्चक्रस्य रहस्यज्ञा मम नामपरायणाः । मम स्तोत्रविधानाय
 तस्मादाज्ञापयामि वः ॥ ३० ॥ कुरुध्वमङ्कितं स्तोत्रं मम नाम-
 सहस्रकैः । येन भक्तैः स्तुताया मे सद्यः प्रीतिः परा भवेत्
 ॥ ३१ ॥ हयग्रीव उवाच ॥ इत्याज्ञप्ता वचोदेव्यः श्रीदेव्या ललि-
 ताम्बया । रहस्यैर्नामभिर्दिव्यैश्चक्रुः स्तोत्रमनुत्तमम् ॥ ३२ ॥
 रहस्यनामसाहस्रमिति तद्विश्रुतं परम् । ततः कदाचित्सदसि
 स्थित्वा सिंहासनेऽम्बिका ॥ ३३ ॥ स्वसेवावसरं प्रादात्सर्वेषां
 कुम्भसंभव । सेवार्थमागतास्तत्र ब्रह्माणीब्रह्मकोटयः ॥ ३४ ॥
 लक्ष्मीनारायणानां च कोटयः समुपागताः । गौरीकोटिसमेतानां
 रुद्राणामपि कोटयः ॥ ३५ ॥ मन्त्रिणीदण्डिनीमुख्याः सेवार्थं याः
 समागताः । शक्तयो विविधाकारास्तासां संख्या न विद्यते ॥ ३६ ॥
 दिव्यौघा मानवौघाश्च सिद्धौघाश्च समागताः । तत्र श्रीललितादेवी
 सर्वेषां दर्शनं ददौ ॥ ३७ ॥ तेषु दृष्टोपविष्टेषु स्वे स्वे स्थाने
 यथाक्रमम् । तत्र श्रीललितादेवीकटाक्षाक्षेपचोदिताः ॥ ३८ ॥
 उत्थाय वशिनीमुख्या बद्धाञ्जलिपुटास्तदा । अस्तुवन्नामसाहस्रैः
 स्वकृतैर्ललिताम्बिकाम् ॥ ३९ ॥ श्रुत्वा स्तवं प्रसन्नाऽभूल्ललिता
 परमेश्वरी । सर्वे ते विस्मयं जग्मुर्ये तत्र सदसि स्थिताः ॥ ४० ॥
 ततः प्रोवाच ललिता सदस्यान्देवतागणान् । ममाज्ञयैव वाग्देव्य-
 श्चक्रुः स्तोत्रमनुत्तमम् ॥ ४१ ॥ अङ्कितं नामभिर्दिव्यैर्मम प्रीति-
 विधायकैः ॥ ४२ ॥ तत्पठध्वं सदा यूयं स्तोत्रं मत्प्रीतिवृद्धये ।
 प्रवर्तयध्वं भक्तेषु मम नामसहस्रकम् ॥ ४३ ॥ इदं नामसहस्रं मे
 यो भक्तः पठते सकृत् । स मे प्रियतमो ज्ञेयस्तस्मै कामान्ददाम्यहम्
 ॥ ४४ ॥ श्रीचक्रे मां समभ्यर्च्य जह्वा पञ्चदशाक्षरीम् । पश्चान्नाम-
 सहस्रं मे कीर्तयेन्मम तुष्टये ॥ ४५ ॥ ममाचर्यतु वा मा वा

विद्यां जपतु वा न वा । कीर्तयेन्नामसाहस्रमिदं मत्प्रीतये सदा ॥ ४६ ॥ मत्प्रीत्या सकलान्कामाँल्लभते नात्र संशयः । तस्मान्नाम-
सहस्रं मे कीर्तयध्वं सदादरात् ॥ ४७ ॥ हयग्रीव उवाच ॥ इति
श्रीललितेशानी शास्ति देवान्सहानुगान् ॥ ४८ ॥ तदाज्ञया तदारभ्य
ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः । शक्तयो मन्त्रिणीमुख्या इदं नामसहस्रकम् ॥ ४९ ॥
पठन्ति भक्त्या सततं ललितापरितुष्टये । तस्मादवश्यं भक्तेन
कीर्तनीयमिदं मुने ॥ ५० ॥ आवश्यकत्वे हेतुत्वे मया प्रोक्तो
मुनीश्वर । इदानीं नामसाहस्रं वक्ष्यामि श्रद्धया शृणु ॥ ५१ ॥

इति ललितासहस्रनाम्युपोद्धातप्रकरणं समाप्तम् ॥

अस्य श्रीललितासहस्रनामस्तोत्रमहामन्त्रस्य वशिन्यादयो वाग्देवता-
ऋषयः, अनुष्टुप् छन्दः, महात्रिपुरसुन्दरी देवता, श्रीमद्वाग्भवकूटेति
बीजम्, मध्यकूटेति शक्तिः, शक्तिकूटेति कीलकम्, मूलप्रकृतिरिति
स्वरूपम्, श्रीललितात्रिपुरसुन्दरीप्रसादसिद्धिद्वारा चिन्तितफला-
वाप्त्यर्थं जपे विनियोगः ॥ अथ ध्यानम् ॥ सिन्दूरारुणविग्रहां
त्रिनयनां माणिक्यमौलिस्फुरत्तारानायकशेखरां स्मितमुखीमापीन-
वक्षोरुहाम् । पाणिभ्यामलिपूर्णरत्नचषकं रक्तोत्पलं विभ्रतीं सौम्यां
रत्नघटस्थरक्तचरणां ध्यायेत्परामम्बिकाम् ॥ ५२ ॥

(❀ द्वितीया तापिनी कला । ❀) श्रीमाता श्रीमहाराज्ञी
श्रीमत्सिंहासनेश्वरी । चिदम्बिकुण्डसंभूता देवकार्यसमुद्यता ॥ ५२ ॥
उद्यद्गानुसहस्राभा चतुर्बाहुसमन्विता । रागस्वरूपपाशाढ्या क्रोधा-
काराङ्कुशोज्ज्वला ॥ ५३ ॥ मनोरूपेक्षुकोदण्डा पञ्चतन्मात्र-
सायका । निजारुणप्रभापूरमज्जद्ब्रह्माण्डमण्डला ॥ ५४ ॥ चम्प-
काशोकपुन्नागसौगन्धिकलसत्कचा । कुरुविन्दमणिश्रेणीकनत्को-
टीरमण्डिता ॥ ५५ ॥ अष्टमीचन्द्रविभ्राजदलिकस्थलशोभिता ।

मुखचन्द्रकलङ्काभमृगनाभिविशेषका ॥ ५६ ॥ वदनस्मरमाङ्गल्य-
 गृहतोरणचिल्लिका । वक्रलक्ष्मीपरीवाहचलन्मीनाभलोचना ॥ ५७ ॥
 नवचम्पकपुष्पाभनासादण्डविराजिता । तारकान्तितिरस्कारि-
 नासाभरणभासुरा ॥ ५८ ॥ कदम्बमञ्जरीक्लृप्तकर्णापूरमनोहरा ।
 ताटङ्कयुगलीभूततपनोडुपमण्डला ॥ ५९ ॥ पद्मरागशिलादर्श-
 परिभाषिकपोलभूः । नवविद्रुमबिम्बश्रीन्यक्कारिरदनच्छदा ॥ ६० ॥
 शुद्धविद्याङ्कुराकारद्विजपङ्क्तिद्वयोजवला । कर्पूरवीटिकामोदसमा-
 कर्षिदिगन्तरा ॥ ६१ ॥ निजसंलापमाधुर्यविनिर्भर्त्सितकच्छपी ।
 मन्दस्मितप्रभापूरमज्जत्कामेशमानसा ॥ ६२ ॥ अनाकलितसादृश्य-
 चिबुकश्रीविराजिता । कामेशबद्धमाङ्गल्यसूत्रशोभितकन्धरा ॥ ६३ ॥
 कनकाङ्गदकेयूरकमनीयभुजान्विता । रत्नप्रैवेयचिन्ताकलोलमुक्ता-
 फलान्विता ॥ ६४ ॥ कामेश्वरप्रेमरत्नमणिप्रतिपणस्तनी ।
 नाभ्यालवालरोमालिलताफलकुचद्वयी ॥ ६५ ॥ लक्ष्यरोमलता-
 धारतासमुन्नेयमध्यमा । स्तनभारदलन्मध्यपट्टबन्धवलित्रया
 ॥ ६६ ॥ अरुणारुणकौसुम्भवस्त्रभास्वत्कटीतटी । रत्नकिङ्किणिका-
 रम्यरशनादामभूषिता ॥ ६७ ॥ कामेशज्ञातसौभाग्यमार्दवोरु-
 द्वयान्विता । माणिक्यमुकुटाकारजानुद्वयविराजिता ॥ ६८ ॥
 इन्द्रगोपपरिक्षिप्तस्मरतूणाभजङ्घिका । गूढगुल्फा कूर्मपृष्ठजयिष्णु-
 प्रपदान्विता ॥ ६९ ॥ नखदीधितिसंछन्ननमजनतमोगुणा ।
 पदद्वयप्रभाजालपराकृतसरोरुहा ॥ ७० ॥ सिञ्जानमणिमञ्जीर-
 मण्डितश्रीपदाम्बुजा । मरालीमन्दगमना महालावण्यशेवधिः ॥ ७१ ॥
 सर्वारुणाऽनवद्याङ्गी सर्वाभरणभूषिता । शिवकामेश्वराङ्गस्था
 शिवा स्वाधीनवल्लभा ॥ ७२ ॥ सुमेरुमध्यशृङ्गस्था श्रीमन्नगर-
 नायिका । चिन्तामणिगृहान्तःस्था पञ्चब्रह्मासनस्थिता ॥ ७३ ॥

महापद्माटवीसंस्था कदम्बवनवासिनी । सुधासागरमध्यस्था
 कामाक्षी कामदायिनी ॥ ७४ ॥ देवर्षिगणसंघातस्तूय-
 मानात्मवैभवा । भण्डासुरवधोद्युक्तशक्तिसेनासमन्विता ॥ ७५ ॥
 संपत्करीसमारूढसिंधुरव्रजसेविता । अश्वारूढाधिष्ठिताश्चकोटिकोटि-
 भिरावृता ॥ ७६ ॥ चक्रराजरथारूढसर्वायुधपरिष्कृता ।
 गेयचक्ररथारूढमन्त्रिणीपरिसेविता ॥ ७७ ॥ किरिचक्ररथारूढ-
 दण्डनाथापुरस्कृता । ज्वालामालिनिकाक्षिसवह्निप्राकारमध्यगा
 ॥ ७८ ॥ भण्डसैन्यवधोद्युक्तशक्तिविक्रमहर्षिता । नित्या पराक्र-
 माटोपनिरीक्षणसमुत्सुका ॥ ७९ ॥ भण्डपुत्रवधोद्युक्तबालावि-
 क्रमनन्दिता । मन्त्रिण्यम्बाविरचितविपद्भवधतोपिता ॥ ८० ॥
 विशुकप्राणहरणवाराहीवीर्यनन्दिता । कामेश्वरमुखालोककल्पित-
 श्रीगणेश्वरा ॥ ८१ ॥ महागणेशनिर्भिन्नविघ्नयन्त्रहर्षिता । भण्डा-
 सुरेन्द्रनिर्मुक्तशस्त्रप्रत्ययवर्षिणी ॥ ८२ ॥ कराङ्गुलिनखोत्पन्ननारा-
 यणदशाकृतिः । महापाशुपतास्त्राग्निनिर्दग्धासुरसैनिका ॥ ८३ ॥
 कामेश्वरास्त्रनिर्दग्धसभण्डासुरशून्यका । ब्रह्मोपेन्द्रमहेन्द्रादिदेवसं-
 स्तुतवैभवा ॥ ८४ ॥ हरनेत्राग्निसंदग्धकामसंजीवनौषधिः । श्रीम-
 द्वाग्भवकूटैकस्वरूपमुखपङ्कजा ॥ ८५ ॥ कण्ठाधःकटिपर्यन्तमध्य-
 कूटस्वरूपिणी । शक्तिकूटैकतापन्नकव्यधोभागधारिणी ॥ ८६ ॥
 मूलमन्त्रात्मिका मूलकूटत्रयकलेवरा । कुलामृतैकरसिका कुलसंकेत-
 पालिनी ॥ ८७ ॥ कुलाङ्गना कुलान्तःस्था कौलिनी कुलयोगिनी ।
 अकुला समयान्तस्था समयाचारतत्परा ॥ ८८ ॥ मूलाधारैकनिलया
 ब्रह्मग्रन्थिविभेदिनी । मणिपूरान्तरुदिता विष्णुग्रन्थिविभेदिनी ॥ ८९ ॥

इति ललितासहस्रनाम्नि प्रथमशतकं समाप्तम् ॥ १ ॥

(❀ तृतीया धूम्रिका कला । ❀) आज्ञाचक्रान्तरालस्था रुद्रप्रस्थि-
विभेदिनी । सहस्राराम्बुजारूढा सुधासाराभिवर्षिणी ॥ ९० ॥ तडि-
लतासमरुचिः षट्चक्रोपरिसंस्थिता । महासक्तिः कुण्डलिनी विस-
तन्तुतनीयसी ॥ ९१ ॥ भवानी भावनागम्या भवारण्यकुठारिका ।
भद्रप्रिया भद्रमूर्तिर्भक्तसौभाग्यदायिनी ॥ ९२ ॥ भक्तिप्रिया
भक्तिगम्या भक्तिवश्या भयापहा । शांभवी शारदाराध्या शर्वाणी
शर्मदायिनी ॥ ९३ ॥ शांकरी श्रीकरी साध्वी शरच्चन्द्रनिभानना ।
शातोदरी शान्तिमती निराधारा निरञ्जना ॥ ९४ ॥ निर्लेपा
निर्मला नित्या निराकारा निराकुला । निर्गुणा निष्कला शान्ता
निष्कामा निरुपप्लवा ॥ ९५ ॥ नित्यमुक्ता निर्विकारा निष्प्रपञ्चा
निराश्रया । नित्यशुद्धा नित्यबुद्धा निरवद्या निरन्तरा ॥ ९६ ॥
निष्कारणा निष्कलङ्का निरुपाधिर्निरीश्वरा । नीरागा रागमथनी
निर्मदा मदनाशिनी ॥ ९७ ॥ निश्चिन्ता निरहंकारा निर्मोहा मोह-
नाशिनी । निर्ममा ममताहन्त्री निष्पापा पापनाशिनी ॥ ९८ ॥
निष्क्रोधा क्रोधशमनी निर्लोभा लोभनाशिनी । निःसंशया संशयघ्नी
निर्भवा भवनाशिनी ॥ ९९ ॥ निर्विकल्पा निराबाधा निर्भेदा
भेदनाशिनी । निर्नाशा मृत्युमथनी निष्क्रिया निष्परिग्रहा ॥ १०० ॥
निस्तुला नीलचिकुरा निरपाया निरत्यया । दुर्लभा दुर्गमा दुर्गा
दुःखहन्त्री सुखप्रदा ॥ १०१ ॥ दुष्टदूरा दुराचारशमनी दोषवर्जिता ।
सर्वज्ञा सान्द्रकरुणा समानाधिकवर्जिता ॥ १०२ ॥

इति ललितासहस्रनाम्नि द्वितीयशतकं समाप्तम् ॥ २ ॥

(❀ चतुर्थी मरीच्याख्या कला । ❀) सर्वशक्तिमयी सर्वमङ्गला
सद्गतिप्रदा । सर्वेश्वरी सर्वमयी सर्वमन्त्रस्वरूपिणी ॥ १०३ ॥
सर्वयन्त्रात्मिका सर्वतन्त्ररूपा मनोन्मनी । माहेश्वरी महादेवी

महालक्ष्मीमृडप्रिया ॥ १०४ ॥ महारूपा महापूज्या महापातक-
 नाशिनी । महामाया महासत्त्वा महाशक्तिर्महारतिः ॥ १०५ ॥
 महाभोगा महैश्वर्या महावीर्या महाबला । महाबुद्धिर्महासिद्धि-
 र्महायोगेश्वरेश्वरी ॥ १०६ ॥ महातन्त्रा महामन्त्रा महायन्त्रा महा-
 सना । महायागक्रमाराध्या महाभैरवपूजिता ॥ १०७ ॥ महेश्वर-
 महाकल्पमहाताण्डवसाक्षिणी । महाकामेशमहिषी महात्रिपुरसुन्दरी
 ॥ १०८ ॥ चतुःषष्ट्युपचाराढ्या चतुःषष्टिकलामयी । महाचतुः-
 षष्टिकोटियोगिनीगणसेविता ॥ १०९ ॥ मनुविद्या चन्द्रविद्या चन्द्र-
 मण्डलमध्यगा । चारुरूपा चारुहासा चारुचन्द्रकलाधरा ॥ ११० ॥
 चराचरजगन्नाथा चकराजनिकेतना । पार्वती पद्मनयना पद्मराग-
 समप्रभा ॥ १११ ॥ पञ्चप्रेतासनासीना पञ्चब्रह्मस्वरूपिणी ।
 चिन्मयी परमानन्दा विज्ञानधनरूपिणी ॥ ११२ ॥ ध्यानध्यातृ-
 ध्येयरूपा धर्माधर्मविवर्जिता । विश्वरूपा जागरिणी स्वपन्ती तैज-
 सात्मिका ॥ ११३ ॥ सुप्ता प्राज्ञात्मिका तुर्या सर्वावस्थाविवर्जिता ।
 सृष्टिकर्त्री ब्रह्मरूपा गोप्त्री गोविन्दरूपिणी ॥ ११४ ॥ संहारिणी
 रुद्ररूपा तिरोधानकरीश्वरी । सदाशिवाऽनुग्रहदा पञ्चकृत्यपरायणा
 ॥ ११५ ॥ भानुमण्डलमध्यस्था भैरवी भगमालिनी । पद्मासना
 भगवती पद्मनाभसहोदरी ॥ ११६ ॥ उन्मेषनिमिषोत्पन्नविपन्न-
 भुवनावली । सहस्रशीर्षवदना सहस्राक्षी सहस्रपात् ॥ ११७ ॥
 आब्रह्मकीटजननी वर्णाश्रमविधायिनी । निजाज्ञारूपनिगमा पुण्या-
 पुण्यफलप्रदा ॥ ११८ ॥ श्रुतिसीमन्तसिन्दूरीकृतपादाब्जधूलिका ।
 सकलागमसंदोहशुक्तिसंपुटमौक्तिका ॥ ११९ ॥ पुरुषार्थप्रदा पूर्णा
 भोगिनी भुवनेश्वरी । अम्बिकाऽनादिनिधना हरिब्रह्मेन्द्रसेविता ॥ १२० ॥
 इति ललितासहस्रनाम्नि तृतीयशतकं समाप्तम् ॥ ३ ॥

(❀ पञ्चमी ज्वालिनी कला । ❀) नारायणी नादरूपा नामरूप-
विवर्जिता । ह्रींकारी ह्रीमती हृद्या हेयोपादेयवर्जिता ॥ १२१ ॥
राजराजार्चिता राज्ञी रम्या राजीवलोचना । रञ्जनी रमणी रम्या
रणत्किङ्किणिमेखला ॥ १२२ ॥ रमा राकेन्दुवदना रतिरूपा रति-
प्रिया । रक्षाकरी राक्षसघ्नी रामा रमणलम्पटा ॥ १२३ ॥ काम्या
कामकलारूपा कदम्बकुसुमप्रिया । कल्याणी जगतीकन्दा करुणा-
रससागरा ॥ १२४ ॥ कलावती कलालापा कान्ता कादम्बरीप्रिया ।
वरदा वामनयना वारुणीमदविह्वला ॥ १२५ ॥ विश्वाधिका वेद-
वेद्या विन्ध्याचलनिवासिनी । विधात्री वेदजननी विष्णुमाया
विलासिनी ॥ १२६ ॥ क्षेत्रस्वरूपा क्षेत्रेशी क्षेत्रक्षेत्रज्ञपालिनी ।
क्षयवृद्धिविनिर्मुक्ता क्षेत्रपालसमर्चिता ॥ १२७ ॥ विजया विमला
वन्द्या वन्दारुजनवत्सला । वाग्वादिनी वामकेशी वह्निमण्डल-
वासिनी ॥ १२८ ॥ भक्तिमत्कल्पलतिका पशुपाशविमोचिनी । संहता-
शेषपाखण्डा सदाचारप्रवर्तिका ॥ १२९ ॥ तापत्रयाग्निसंतप्तसमा-
ह्लादनचन्द्रिका । तरुणी तापसाराध्या तनुमध्या तमोपहा ॥ १३० ॥
चित्तिस्तपदलक्ष्यार्था चिदेकरसरूपिणी । स्वात्मानन्दलवीभूत-
ब्रह्माद्यानन्दसंततिः ॥ १३१ ॥ परा प्रत्यक्चितीरूपा पश्यन्ती पर-
देवता । मध्यमा वैखरीरूपा भक्तमानसहंसिका ॥ १३२ ॥ कामे-
श्वरप्राणनाडी कृतज्ञा कामपूजिता । शृङ्गाररससंपूर्णा जया जाल-
न्धरस्थिता ॥ १३३ ॥ ओङ्घ्याणपीठनिलया बिन्दुमण्डलवासिनी ।
रहोयागक्रमाराध्या रहस्तर्पणतर्पिता ॥ १३४ ॥ सद्यःप्रसादिनी विश्व-
साक्षिणी साक्षिवर्जिता । षडङ्गदेवतायुक्ता षाड्गुण्यपरिपूरिता
॥ १३५ ॥ नित्यक्लिन्ना निरुपमा निर्वाणसुखदायिनी । नित्या षोड-
शिकारूपा श्रीकण्ठार्धशरीरिणी ॥ १३६ ॥ प्रभावती प्रभारूपा

प्रसिद्धा परमेश्वरी । मूलप्रकृतिरव्यक्ता व्यक्ताव्यक्तस्वरूपिणी ॥ १३७ ॥

इति ललितासहस्रनाम्नि चतुर्थशतकं समाप्तम् ॥ ४ ॥

(❀ षष्ठी रुच्याख्या कला । ❀) व्यापिनी विविधाकारा विद्या
विद्यास्वरूपिणी । महाकामेशनयनकुमुदाह्लादकौमुदी ॥ १३८ ॥
भक्तहार्दतमोभेदभानुमद्भानुसंततिः । शिवदूती शिवाराध्या शिवमूर्तिः
शिवंकरी ॥ १३९ ॥ शिवप्रिया शिवपरा शिष्टेष्टा शिष्टपूजिता ।
अप्रमेया स्वप्रकाशा मनोवाचामगोचरा ॥ १४० ॥ चिच्छक्तिश्चेत-
नारूपा जडशक्तिर्जडात्मिका । गायत्री व्याहृतिः संध्या द्विजवृन्द-
निषेविता ॥ १४१ ॥ तत्त्वासना तत्त्वमयी पञ्चकोशान्तरस्थिता ।
निःसीममहिमा नित्ययौवना मदशालिनी ॥ १४२ ॥ मदघूर्णित-
रक्ताक्षी मदपाटलगण्डभूः । चन्दनद्रवदिग्धाङ्गा चाम्पेयकुसुमप्रिया
॥ १४३ ॥ कुशला कोमलाकारा कुरुकुला कुलेश्वरी । कुलकुण्डा-
लयाकौलमार्गतत्परसेविता ॥ १४४ ॥ कुमारगणनाथाम्बा तुष्टिः
पुष्टिर्मतिर्धृतिः । शान्तिः स्वस्तिमती कान्तिर्नन्दिनी विघ्न-
नाशिनी ॥ १४५ ॥ तेजोवती त्रिनयना लोलाक्षीकामरूपिणी । मालिनी
हंसिनी माता मलयाचलवासिनी ॥ १४६ ॥ सुमुखा नलिनी सुभ्रूः
शोभना सुरनायिका । कालकंठी कान्तिमती क्षोभिणी सूक्ष्मरूपिणी
॥ १४७ ॥ वज्रेश्वरी वामदेवी वयोवस्थाविवर्जिता । सिद्धेश्वरी
सिद्धविद्या सिद्धमाता यशस्विनी ॥ १४८ ॥ विशुद्धिचक्रनिलया-
ऽऽरक्तवर्णा त्रिलोचना । खट्वाङ्गादिप्रहरणा वदनैकसमन्विता
॥ १४९ ॥ पायसान्नप्रिया त्वक्स्था पशुलोकभयंकरी । अमृतादि-
महाशक्तिसंवृता डाकिनीश्वरी ॥ १५० ॥ अनाहताब्जनिलया
श्यामाभा वदनद्वया । दंष्ट्रोज्ज्वलाक्षमालादिधरा रुधिरसंस्थिता
॥ १५१ ॥ कालरात्र्यादिशक्त्यौघवृता स्निग्धौदनप्रिया । महावीरे-

न्द्रवरदा राकिण्यम्बास्वरूपिणी ॥ १५२ ॥ मणिपूराब्जनिलया
वदनत्रयसंयुता । वज्रादिकायुधोपेता डामर्यादिभिरावृता ॥ १५३ ॥
इति ललितासहस्रनाम्नि पञ्चमशतकं समाप्तम् ॥ ५ ॥

(❀ सप्तमी सुधुम्णा कला । ❀) रक्तवर्णा मांसनिष्ठा गुडान्नप्रीत-
मानसा । समस्तभक्तसुखदा लाकिन्यम्बास्वरूपिणी ॥ १५४ ॥
स्वाधिष्ठानाम्बुजगता चतुर्वक्त्रमनोहरा । शूलाद्यायुधसंपन्ना पीत-
वर्णाऽतिगर्विता ॥ १५५ ॥ मेदोनिष्ठा मधुप्रीता बन्धिन्यादि-
समन्विता । दध्यन्नासक्तहृदया काकिनीरूपधारिणी ॥ १५६ ॥
मूलाधाराऽम्बुजारूढा पञ्चवक्त्राऽस्थिसंस्थिता । अङ्कुशादिप्रहरणा
वरदादिनिषेविता ॥ १५७ ॥ मुद्रौदनासक्तचित्ता साकिन्यम्बा-
स्वरूपिणी । आज्ञाचक्राब्जनिलया शुक्लवर्णा षडानना ॥ १५८ ॥
मज्जासंस्था हंसवतीमुख्यशक्तिसमन्विता ॥ हरिद्राक्षैकरसिका
हाकिनीरूपधारिणी ॥ १५९ ॥ सहस्रदलपद्मस्था सर्ववर्णोपशो-
भिता । सर्वायुधधरा शुक्लसंस्थिता सर्वतोमुखी ॥ १६० ॥ सर्वौ-
दनप्रीतचित्ता याकिन्यम्बास्वरूपिणी । स्वाहा स्वधाऽमतिर्मैधा
श्रुतिस्मृतिरनुत्तमा ॥ १६१ ॥ पुण्यकीर्तिः पुण्यलभ्या पुण्य-
श्रवणकीर्तना । पुलोमजार्चिता बन्धमोचनी बन्धुरालका ॥ १६२ ॥
विमर्शरूपिणी विद्या वियदादिजगत्प्रसूः । सर्वव्याधिप्रशमनी
सर्वमृत्युनिवारिणी ॥ १६३ ॥ अग्रगण्याऽचिन्त्यरूपा कलिकल्मष-
नाशिनी । कात्यायनी कालहन्त्री कमलाक्षनिषेविता ॥ १६४ ॥
ताम्बूलपूरितमुखी दाडिमीकुसुमप्रभा । मृगाक्षी मोहिनी मुख्या
मृडानी मित्ररूपिणी ॥ १६५ ॥ निलयवृक्षा भक्तनिधिर्नियन्त्री निखि-
लेश्वरी । मैत्र्यादिवासनालभ्या महाप्रलयसाक्षिणी ॥ १६६ ॥ परा-
शक्तिः परानिष्ठा प्रज्ञानघनरूपिणी । माध्वीपानालसा मत्ता मातृ-

कावर्णरूपिणी ॥ १६७ ॥ महाकैलासनिलया मृणालमृदुदोर्लता ।
महनीया दयामूर्तिर्महासाम्राज्यशालिनी ॥ १६८ ॥ आत्मविद्या
महाविद्या श्रीविद्या कामसेविता । श्रीषोडशाक्षरीविद्या त्रिकूटा
कामकोटिका ॥ १६९ ॥ कटाक्षकिंकरीभूतकमलाकोटिसेविता ।
शिरःस्थिता चन्द्रनिभा भालस्थेन्द्रधनुःप्रभा ॥ १७० ॥ हृदयस्था
रविप्रख्या त्रिकोणान्तरदीपिका । दाक्षायणी दैत्यहन्त्री दक्षयज्ञ-
विनाशिनी ॥ १७१ ॥

इति ललितासहस्रनाम्नि षष्ठशतकं समाप्तम् ॥ ६ ॥

(❀ अष्टमी भोगदा कला । ❀) दरान्दोलितदीर्घाक्षी दरहासो-
ज्ज्वलन्मुखी । गुरुमूर्तिर्गुणनिधिर्गोमाता गुहजन्मभूः ॥ १७२ ॥ देवेशी
दण्डनीतिस्था दहराकाशरूपिणी । प्रतिपन्मुख्यराकान्ततिथि-
मण्डलपूजिता ॥ १७३ ॥ कलात्मिका कलानाथा काव्यालाप-
विमोदिनी । सचामररमावाणीसव्यदक्षिणसेविता ॥ १७४ ॥ आदि-
शक्तिरमेयात्मा परमा पावनाकृतिः । अनेककोटिब्रह्माण्डजननी
दिव्यविग्रहा ॥ १७५ ॥ क्लींकरी केवला गुह्या कैवल्यपददायिनी ॥
त्रिपुरा त्रिजगद्वन्द्या त्रिमूर्तिस्त्रिदशेश्वरी ॥ १७६ ॥ त्र्यक्षरी
दिव्यगन्धाढ्या सिन्दूरतिलकाञ्चिता । उमा शैलेन्द्रतनया गौरी
गन्धर्वसेविता ॥ १७७ ॥ विश्वगर्भा स्वर्णगर्भाऽवरदा वागधीश्वरी ।
ध्यानगम्याऽपरिच्छेद्या ज्ञानदा ज्ञानविग्रहा ॥ १७८ ॥ सर्ववेदान्त-
संवेद्या सत्यानन्दस्वरूपिणी । लोपामुद्रार्चिता लीलाकृतब्रह्माण्ड-
मण्डला ॥ १७९ ॥ अदृश्या दृश्यरहिता विज्ञात्री वेद्यवर्जिता ।
योगिनी योगदा योग्या योगानन्दयुगंधरा ॥ १८० ॥ इच्छाशक्ति-
ज्ञानशक्तिक्रियाशक्तिस्वरूपिणी । सर्वाधारा सुप्रतिष्ठा सदसद्रूप-
धारिणी ॥ १८१ ॥ अष्टमूर्तिरजाजैत्री लोकयात्राविधायिनी ।

एकाकिनी भूमरूपा निर्द्वैता द्वैतवर्जिता ॥ १८२ ॥ अन्नदा वसुदा
 वृद्धा ब्रह्मात्मैक्यस्वरूपिणी । बृहती ब्राह्मणी ब्राह्मी ब्रह्मानन्दा
 बलिप्रिया ॥ १८३ ॥ भाषारूपा बृहत्सेना भावाभावविवर्जिता ।
 सुखाराध्या शुभकरी शोभना सुलभागतिः ॥ १८४ ॥ राजराजेश्वरी
 राज्यदायिनी राज्यवल्लभा । राजत्कृपा राजपीठनिवेशितनिजाश्रिता
 ॥ १८५ ॥ राज्यलक्ष्मीः कोशनाथा चतुरङ्गवलेश्वरी । साम्राज्य-
 दायिनी सत्यसंधा सागरमेखला ॥ १८६ ॥ दीक्षिता दैत्यशमनी
 सर्वलोकवशंकरी । सर्वार्थदात्री सावित्री सच्चिदानन्दरूपिणी ॥ १८७ ॥

इति ललितासहस्रनाम्नि सप्तमशतकं समाप्तम् ॥ ७ ॥

(❀ नवमी विश्वा कला । ❀) देशकालापरिच्छिन्ना सर्वगा सर्व-
 मोहिनी । सरस्वती शास्त्रमयी गुहाम्बा गुह्यरूपिणी ॥ १८८ ॥ सर्वोपा-
 धिविनिर्मुक्ता सदाशिवपतिव्रता । संप्रदायेश्वरी साध्वी गुरुमण्डल-
 रूपिणी ॥ १८९ ॥ कुलोत्तीर्णा भगाराध्या माया मधुमती
 मही । गणाम्बा गुह्यकाराध्या कोमलाङ्गी गुरुप्रिया ॥ १९० ॥
 स्वतन्त्रा सर्वतन्त्रेशी दक्षिणामूर्तिरूपिणी । सनकादिसमाराध्या
 शिवज्ञानप्रदायिनी ॥ १९१ ॥ चित्कलानन्दकलिका प्रेमरूपा
 प्रियंकरी । नामपारायणप्रीता नन्दिविद्या नटेश्वरी ॥ १९२ ॥
 मिथ्याजगदधिष्ठाना मुक्तिदा मुक्तिरूपिणी । लास्यप्रिया लयकरी
 लज्जा रम्भादिवन्दिता ॥ १९३ ॥ भवदावसुधावृष्टिः पापारण्य-
 दवानला । दौर्भाग्यतूलवातूला जराध्वान्तरविप्रभा ॥ १९४ ॥
 भाग्याब्धिचन्द्रिका भक्तचित्तकेकिघनाघना । रोगपर्वतदम्भो-
 लिर्मृत्युदारुकुठारिका ॥ १९५ ॥ महेश्वरी महाकाली
 महाग्रासा महाशना । अपर्णा चण्डिका चण्डमुण्डासुरनिषूदनी
 ॥ १९६ ॥ क्षराक्षरात्मिका सर्वलोकेशी विश्वधारिणी । त्रिवर्गदात्री

सुभगा त्र्यम्बका त्रिगुणात्मिका ॥ १९७ ॥ स्वर्गापवर्गदा शुद्धा
जपापुष्पनिभाकृतिः । ओजोवती द्युतिधरा यज्ञरूपा प्रियव्रता
॥ १९८ ॥ दुराराध्या दुराधर्षा पाटलीकुसुमप्रिया । महती मेरु-
निलया मन्दारकुसुमप्रिया ॥ १९९ ॥ वीराराध्या विराड्रूपा विरजा
विश्वतोमुखी । प्रत्यग्रूपा पराकाशा प्राणदा प्राणरूपिणी ॥ २०० ॥
मार्तण्डभैरवाराध्या मन्त्रिणीन्यस्तराज्यधूः । त्रिपुरेशी जयत्सेना
निस्त्रैगुण्या परापरा ॥ २०१ ॥ सत्यज्ञानानन्दरूपा सामरस्यपरायणा ।
कपर्दिनी कलामाला कामधुक्कामरूपिणी ॥ २०२ ॥

इति ललितासहस्रनाम्नि अष्टमशतकं समाप्तम् ॥ ८ ॥

(❀ दशमी बोधिनी कला । ❀) कलानिधिः काव्यकला रसज्ञा
रसशेवधिः । पुष्टा पुरातना पूज्या पुष्करा पुष्करेक्षणा ॥ २०३ ॥
परंज्योतिः परंधाम परमाणुः परात्परा । पाशहस्ता पाशहन्त्री पर-
मन्नविभेदिनी ॥ २०४ ॥ मूर्तामूर्ताऽनित्यवृत्ता मुनिमानसहंसिका ।
सत्यव्रता सत्यरूपा सर्वान्तर्यामिणी सती ॥ २०५ ॥ ब्रह्माणी
ब्रह्मजननी बहुरूपा बुधार्चिता । प्रसवित्री प्रचण्डाऽऽज्ञा प्रतिष्ठा
प्रकटाकृतिः ॥ २०६ ॥ प्राणेश्वरी प्राणदात्री पञ्चाशत्पीठरूपिणी ।
विशङ्खला विविक्तस्था वीरमाता वियत्प्रसूः ॥ २०७ ॥ मुकुन्दा
मुक्तिनिलया मूलविग्रहरूपिणी । भावज्ञा भवरोगघ्नी भवचक्र-
प्रवर्तिनी ॥ २०८ ॥ छन्दःसारा शास्त्रसारा मन्त्रसारा तलोदरी ।
उदारकीर्तिरुद्दामवैभवा वर्णरूपिणी ॥ २०९ ॥ जन्ममृत्युजरा-
तप्तजनविश्रान्तिदायिनी । सर्वोपनिषदुद्घुष्टा शान्त्यतीता कला-
त्मिका ॥ २१० ॥ गम्भीरा गगनान्तःस्था गर्विता गानलोलुपा ।
कल्पनारहिता काष्ठाऽकान्ताकान्तार्धविग्रहा ॥ २११ ॥ कार्यकारण-
निर्मुक्ता कामकेलितरङ्गिता । कनकनकताटङ्का लीलाविग्रह-

धारिणी ॥ २१२ ॥ अजा क्षयविनिर्मुक्ता मुग्धा क्षिप्रप्रसादिनी ।
 अन्तर्मुखसमाराध्या बहिर्मुखसुदुर्लभा ॥ २१३ ॥ त्रयी त्रिवर्ग-
 निलया त्रिस्था त्रिपुरमालिनी । निरामया निरालम्बा स्वात्मारामा
 सुधास्रुतिः ॥ २१४ ॥ संसारपङ्कनिर्मग्नसमुद्धरणपण्डिता । यज्ञ-
 प्रिया यज्ञकर्त्री यजमानस्वरूपिणी ॥ २१५ ॥ धर्माधारा धना-
 ध्यक्षा धनधान्यविवर्धिनी । विप्रप्रिया विप्ररूपा विश्वभ्रमणकारिणी
 ॥ २१६ ॥ विश्वग्रासा विद्रुमाभा वैष्णवी विष्णुरूपिणी । अयो-
 न्रिर्योनिनिलया कूटस्था कुलरूपिणी ॥ २१७ ॥

इति ललितासहस्रनाम्नि नवमशतकं समाप्तम् ॥ ९ ॥

(❀ एकादशी धारिणी कला । ❀) वीरगोष्ठीप्रिया वीरा नैष्कर्म्या
 नादरूपिणी । विज्ञानकलना कल्या विदग्धा वैन्दवासना ॥ २१८ ॥
 तत्त्वाधिका तत्त्वमयी तत्त्वमर्थस्वरूपिणी । सामगानप्रिया सौम्या
 सदाशिवकुटुम्बिनी ॥ २१९ ॥ सव्यापसव्यमार्गस्था सर्वापद्वि-
 निवारिणी । स्वस्था स्वभावमधुरा धीरा धीरसमर्चिता ॥ २२० ॥
 चैतन्यार्घ्यसमाराध्या चैतन्यकुसुमप्रिया । सदोदिता सदातुष्टा
 तरुणादित्यपाटला ॥ २२१ ॥ दक्षिणादक्षिणाराध्या दरस्मेरमुखा-
 म्बुजा । कौलिनीकेवलाऽनर्घ्यकैवल्यपददायिनी ॥ २२२ ॥ स्तोत्र-
 प्रिया स्तुतिमती श्रुतिसंस्तुतवैभवा । मनस्विनी मानवती महेशी
 मङ्गलाकृतिः ॥ २२३ ॥ विश्वमाता जगद्धात्री विशालाक्षी
 विरागिणी । प्रगल्भा परमोदारा परमोदा मनोमयी ॥ २२४ ॥
 व्योमकेशी विमानस्था वज्रिणी वामकेश्वरी । पञ्चयज्ञप्रिया पञ्च-
 प्रेतमञ्चाधिशायिनी ॥ २२५ ॥ पञ्चमी पञ्चभूतेशी पञ्चसंख्यो-
 पचारिणी । शाश्वती शाश्वतैश्वर्या शर्मदा शंभुमोहिनी ॥ २२६ ॥
 धरा धरसुता धन्या धर्मिणी धर्मवर्धिनी । लोकातीता गुणातीता

सर्वातीता शमात्मिका ॥ २२७ ॥ बन्धूककुसुमप्रख्या वाला लीला-
 विनोदिनी । सुमङ्गली सुखकरी सुवेषाढ्या सुवासिनी ॥ २२८ ॥
 सुवासिन्यर्चनप्रीताऽऽशोभना शुद्धमानसा । विन्दुतर्पणसंतुष्टा पूर्वजा
 त्रिपुराम्बिका ॥ २२९ ॥ दशमुद्रासमाराध्या त्रिपुराश्रीव-
 शंकरी । ज्ञानमुद्रा ज्ञानगम्या ज्ञानज्ञेयस्वरूपिणी ॥ २३० ॥ योनि-
 मुद्रा त्रिखण्डेशी त्रिगुणाम्बा त्रिकोणगा । अनवाऽद्भुतचारित्रा
 वाञ्छितार्थप्रदायिनी ॥ २३१ ॥ अभ्यासातिशयज्ञाता षडध्यातीत-
 रूपिणी । अव्याजकरुणामूर्तिरज्ञानध्वान्तदीपिका ॥ २३२ ॥
 आबालगोपविदिता सर्वानुलङ्घयशासना । श्रीचक्रराजनिलया
 श्रीमन्निपुरसुन्दरी ॥ २३३ ॥ श्रीशिवाशिवशक्त्यैक्यरूपिणी
 ललिताम्बिका । श्रीमणिसश्रीविविधगुडदरान्देशैश्च पुष्टनादाभ्याम् ।
 नामसु शतकारम्भा न स्तोभो नापि शब्दपुनरुक्तिः ॥ ३३ ॥
 मतिवरदाकान्तादावकारयोगेन रक्तवर्णादौ । आकारस्य कचन तु
 पदयोर्योगेन भेदयेन्नाम ॥ ३४ ॥ साध्वी तत्त्वमयीति द्वेधा त्रेधा
 बुधो भिद्यात् । हंसवती चानर्घ्यैत्यर्धान्तादेकनामैव ॥ ३५ ॥ शक्ति-
 निर्णिष्टाधामज्योतिःपरपूर्वकं द्विपदम् । शोभनसुलभा सुगतिस्त्रिपदैक-
 पदानि शेषाणि ॥ ३६ ॥ निधिरात्मा दम्भोलिः शैवधिरिति नाम
 पुंलिङ्गम् । तद्ब्रह्मधाम साधुज्योतिः क्लीबेऽव्ययं स्वधा स्वाहा ॥ ३७ ॥
 इति ललितासहस्रनाम्नि दशमशतकं समाप्तम् ॥ १० ॥

(❀ क्षमाख्या द्वादशी कला । ❀) आर्विंशतितः सार्धाज्ञानाफल-
 साधनत्वोक्तिः । तस्य क्रमशो विवृतिः षट्चत्वारिंशता श्लोकैः ॥ ३८ ॥
 इत्येवं नामसाहस्रं कथितं ते घटोद्भव ॥ २३४ ॥ रहस्यानां रहस्यं
 च ललिताप्रीतिदायकम् । अनेन सदृशं स्तोत्रं न भूतं न भविष्यति
 ॥ २३५ ॥ सर्वरोगप्रशमनं सर्वसंपत्प्रवर्धनम् । सर्वापमृत्युशमनं

कालमृत्युनिवारणम् ॥ २६६ ॥ सर्वज्वरार्तिशमनं दीर्घायुष्यप्रदा-
यकम् । पुत्रप्रदमपुत्राणां पुरुषार्थप्रदायकम् ॥ २३७ ॥ इदं विशेष-
षाच्छ्रीदेव्याः स्तोत्रं प्रीतिविधायकम् । जपेन्नित्यं प्रयत्नेन ललितो-
पास्तितत्परः ॥ २३८ ॥ प्रातः स्नात्वा विधानेन संध्याकर्म समाप्य
च । पूजागृहं ततो गत्वा चक्रराजं समर्चयेत् ॥ २३९ ॥ विद्यां
जपेत्सहस्रं वा त्रिशतं शतमेव वा । रहस्यनामसाहस्रमिदं पश्चात्
पठेन्नरः ॥ २४० ॥ जन्ममध्ये सकृच्चापि य एवं पठते सुधीः । तस्य
पुण्यफलं वक्ष्ये शृणु त्वं कुम्भसंभव ॥ २४१ ॥ गङ्गादिसर्वतीर्थेषु
यः स्नायात्कोटिजन्मसु । कोटिलिङ्गप्रतिष्ठां तु यः कुर्यादविमुक्तके
॥ २४२ ॥ कुरुक्षेत्रे तु यो दद्यात्कोटिवारं रविग्रहे । कोटिं सौवर्ण-
भाराणां श्रोत्रियेषु द्विजन्मसु ॥ २४३ ॥ यः कोटिं हयमेधानामा-
हरेद्वाङ्मरोधसि । आचरेत्कूपकोटीर्यो निर्जले मरुभूतले ॥ २४४ ॥
दुर्भिक्षे यः प्रतिदिनं कोटिब्राह्मणभोजनम् । श्रद्धया परया कुर्यात्स-
हस्रपरिवत्सरान् ॥ २४५ ॥ तत्पुण्यं कोटिगुणितं लभेत्पुण्यमनु-
त्तमम् । रहस्यनामसाहस्रे नाम्नोऽप्येकस्य कीर्तनात् ॥ २४६ ॥
रहस्यनामसाहस्रे नामैकमपि यः पठेत् । तस्य पापानि नश्यन्ति
महान्त्यपि न संशयः ॥ २४७ ॥ नित्यकर्मानुष्ठानान्निषिद्धकरणा-
दपि । यत्पापं जायते पुंसां तत्सर्वं नश्यति द्रुतम् ॥ २४८ ॥
बहुनात्र किमुक्तेन शृणु त्वं कलशीसुत । अत्रैकनाम्नो या शक्तिः
पातकानां निवर्तने । तन्निवर्त्यमघं कर्तुं नालं लोकाश्चतुर्दश
॥ २४९ ॥ यस्यक्त्वा नामसाहस्रं पापहानिमभीप्सति । स हि
शीतनिवृत्त्यर्थं हिमशैलं निषेवते ॥ २५० ॥ भक्तो यः कीर्तय-
न्नित्यमिदं नामसहस्रकम् । तस्मै श्रीललितादेवी प्रीताऽभीष्टं
प्रयच्छति ॥ २५१ ॥ अकीर्तयन्नित्दं स्तोत्रं कथं भक्तो

भविष्यति ॥ २५२ ॥ नित्यं संकीर्तनाशक्तः कीर्तयेत्पुण्यवासरे ।
 संक्रान्तौ विपुवे चैव स्वजन्मत्रितयेऽयने ॥ २५३ ॥ नवम्यां
 वा चतुर्दश्यां सितायां शुक्रवासरे । कीर्तयेन्नामसाहस्रं पौर्णमास्यां
 विशेषतः ॥ २५४ ॥ पौर्णमास्यां चन्द्रविम्बे ध्यात्वा श्रीललिता-
 म्बिकाम् । पञ्चोपचारैः संपूज्य पठेन्नामसहस्रकम् ॥ २५५ ॥ सर्वे
 रोगाः प्रणश्यन्ति दीर्घमायुश्च विन्दति । अयमायुष्करो नाम प्रयोगः
 कल्पनोदितः ॥ २५६ ॥ ज्वरार्तं शिरसि स्पृष्ट्वा पठेन्नामसहस्रकम् ।
 तत्क्षणात्प्रशमं याति शिरस्तोदो ज्वरोऽपि च ॥ २५७ ॥ सर्वव्याधि-
 निवृत्त्यर्थं स्पृष्ट्वा भस्म जपेदिदम् । तद्भस्मधारणादेव नश्यन्ति
 व्याधयः क्षणात् ॥ २५८ ॥ जलं संमन्त्र्य कुम्भस्थं नामसाहस्रतो
 मुने । अभिषिञ्चेद्ब्रह्मस्तान्ग्रहा नश्यन्ति तत्क्षणात् ॥ २५९ ॥
 सुधासागरमध्यस्थां ध्यात्वा श्रीललिताम्बिकाम् । यः पठेन्नाम-
 साहस्रं विषं तस्य विनश्यति ॥ २६० ॥ वन्ध्यानां पुत्रलाभाय
 नामसाहस्रमञ्जितम् । नवनीतं प्रदद्यात् पुत्रलाभो भवेद्भुवम्
 ॥ २६१ ॥ देव्याः पाशेन संबद्धामाकृष्टामङ्कुशेन च । ध्यात्वाऽभीष्टां
 स्त्रियं रात्रौ पठेन्नामसहस्रकम् ॥ २६२ ॥ आयाति स्वसमीपं सा
 यद्यप्यन्तःपुरं गता । राजाकर्षणकामश्चेद्राजावसथदिङ्मुखः ॥ २६३ ॥
 त्रिरात्रं यः पठेदेतच्छ्रीदेवीध्यानतत्परः । स राजा पारवश्येन तुरङ्गं
 वा मतङ्गजम् ॥ २६४ ॥ आरुह्य याति निकटं दासवत्प्रणिपत्य च ।
 तस्मै राज्यं च कोशं च दद्यादेव वशंगतः ॥ २६५ ॥ रहस्यनाम-
 साहस्रं यः कीर्तयति नित्यशः । तन्मुखालोकमात्रेण मुह्येल्लोकत्रयं
 मुने ॥ २६६ ॥ यस्त्विदं नामसाहस्रं सकृत्पठति भक्तिमान् । तस्य
 ये शत्रवस्तेषां निहन्ता शरभेश्वरः ॥ २६७ ॥ यो वाऽभिचारं कुरुते
 नामसाहस्रपाठके । निवर्त्य तत्क्रियां हन्यात्तं वै प्रत्यङ्गिरा स्वयम्

॥ २६८ ॥ ये क्रूरदृष्ट्या वीक्षन्ते नामसाहस्रपाठकम् । तानन्धान्
 कुरुते क्षिप्रं स्वयं मार्तण्डभैरवः ॥ २६९ ॥ धनं यो हरते चोरैर्नाम-
 साहस्रजापिनः । यत्र कुत्र स्थितं वापि क्षेत्रपालो निहन्ति तम्
 ॥ २७० ॥ विद्यासु कुरुते वादं यो विद्वान्नामजापिनः । तस्य
 वाक्स्तम्भनं सद्यः करोति नकुलीश्वरी ॥ २७१ ॥ यो राजा कुरुते
 वैरं नामसाहस्रजापिनः । चतुरङ्गबलं तस्य दण्डिनी संहरेत्स्वयम्
 ॥ २७२ ॥ यः पठेन्नामसाहस्रं षण्मासं भक्तिसंयुतः । लक्ष्मी-
 श्चाञ्चल्यरहिता सदा तिष्ठति तद्गृहे ॥ २७३ ॥ मासमेकं प्रतिदिनं
 त्रिवारं यः पठेन्नरः । भारती तस्य जिह्वाग्रे रङ्गे नृत्यति नित्यशः
 ॥ २७४ ॥ यस्त्वैकवारं पठति पक्षमेकमतन्द्रितः । मुह्यन्ति कामवशगा
 मृगाक्ष्यस्तस्य वीक्षणात् ॥ २७५ ॥ यः पठेन्नामसाहस्रं जन्ममध्ये
 सकृन्नरः । तद्दृष्टिगोचराः सर्वे मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः ॥ २७६ ॥ यो
 वेत्ति नामसाहस्रं तस्मै देयं द्विजन्मने । अन्नं वस्त्रं धनं धान्यं नान्ये-
 भ्यस्तु कदाचन ॥ २७७ ॥ श्रीमन्नराजं यो वेत्ति श्रीचक्रं यः समर्चति ।
 यः कीर्तयति नामानि तं सत्पात्रं विदुर्बुधाः ॥ २७८ ॥ तस्मै देयं
 प्रयत्नेन श्रीदेवीप्रीतिमिच्छता । यः कीर्तयति नामानि मन्नराजं
 न वेत्ति यः ॥ २७९ ॥ पशुतुल्यः स विज्ञेयस्तस्मै दत्तं निरर्थकम् ।
 परीक्ष्य विद्याविदुषस्तेभ्यो दद्याद्विचक्षणः ॥ २८० ॥ श्रीमन्नराज-
 सदृशो यथा मन्त्रे न विद्यते । देवता ललितातुल्या यथा नास्ति
 घटोद्भव ॥ २८१ ॥ रहस्यनामसाहस्रतुल्या नास्ति तथा स्तुतिः ।
 लिखित्वा पुस्तके यस्तु नामसाहस्रमुत्तमम् ॥ २८२ ॥ समर्चयेत्सदा
 भक्त्या तस्य तुष्यति सुन्दरी । बहुनात्र किमुक्तेन शृणु त्वं कुम्भ-
 संभव ॥ २८३ ॥ नानेन सदृशं स्तोत्रं सर्वतन्त्रेषु विद्यते । तस्मादु-
 पासको नित्यं कीर्तयेदिदमादरात् ॥ २८४ ॥ एभिर्नामसहस्रैस्तु

श्रीचक्रं योऽर्चयेत्सकृत् । पद्मैर्वा तुलसीपुष्पैः कङ्कारैर्वा कदम्बकैः
 ॥ २८५ ॥ चम्पकैर्जातिकुसुमैर्मल्लिकाकरवीरकैः । उत्पलैर्विल्वपत्रैर्वा
 कुन्दकेसरपाटलैः ॥ २८६ ॥ अन्यैः सुगन्धिकुसुमैः केतकीमाधवी-
 मुखैः । तस्य पुण्यफलं वक्तुं न शक्नोति महेश्वरः ॥ २८७ ॥ सा
 वेत्ति ललितादेवी स्वचक्रार्चनजं फलम् । अन्ये कथं विजानीयु-
 र्ब्रह्माद्याः स्वल्पमेधसः ॥ २८८ ॥ प्रतिमासं पौर्णमास्यामेभिर्नाम-
 सहस्रकैः । रात्रौ यश्चक्रराजस्थामर्चयेत्परदेवताम् ॥ २८९ ॥ स एव
 ललितारूपस्तद्रूपा ललिता स्वयम् । न तयोर्विद्यते भेदो भेदकृत्पाप-
 कृद्भवेत् ॥ २९० ॥ महानवम्यां यो भक्तः श्रीदेवीं चक्रमध्यगाम् ।
 अर्चयेन्नामसाहस्रैस्तस्य मुक्तिः करे स्थिता ॥ २९१ ॥ यस्तु नाम-
 सहस्रेण शुक्रवारे समर्चयेत् । चक्रराजे महादेवीं तस्य पुण्यफलं
 शृणु ॥ २९२ ॥ सर्वान्कामानवाप्स्येह सर्वसौभाग्यसंयुतः । पुत्र-
 पौत्रादिसंयुक्तो भुक्त्वा भोगान्यथेप्सितान् ॥ २९३ ॥ अन्ते
 श्रीललितादेव्याः सायुज्यमतिदुर्लभम् । प्रार्थनीयं शिवाद्यैश्च
 प्राप्नोत्येव न संशयः ॥ २९४ ॥ यः सहस्रं ब्राह्मणानामेभिर्नाम-
 सहस्रकैः । समर्च्य भोजयेद्भक्त्या पायसापूपषड्रसैः ॥ २९५ ॥
 तस्मै प्रीणाति ललिता स्वसाम्राज्यं प्रयच्छति । न तस्य दुर्लभं वस्तु
 त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥ २९६ ॥ निष्कामः कीर्तयेद्यस्तु नामसाहस्र-
 मुत्तमम् । ब्रह्मज्ञानमवाप्नोति येन मुच्येत बन्धनात् ॥ २९७ ॥
 धनार्थी धनमाप्नोति यशोर्थी प्राप्नुयाद्यशः । विद्यार्थी चाप्नुयाद्विद्यां
 नामसाहस्रकीर्तनात् ॥ २९८ ॥ नानेन सदृशं स्तोत्रं भोगमोक्ष-
 प्रदं मुने । कीर्तनीयमिदं तस्माद्भोगमोक्षार्थिभिर्नरैः ॥ २९९ ॥
 चतुराश्रमनिष्ठैश्च कीर्तनीयमिदं सदा । स्वधर्मसमनुष्ठानवैकल्य-
 परिपूर्यते ॥ ३०० ॥ कलौ पापैकबहुले धर्मानुष्ठानवर्जिते ।

नामानुकीर्तनं मुक्त्वा नृणां नान्यत्परायणम् ॥ ३०१ ॥
 लौकिकाद्रचनान्मुख्यं विष्णुनामानुकीर्तनम् । विष्णुनामसहस्राच्च
 शिवनामैकमुत्तमम् ॥ ३०२ ॥ शिवनामसहस्राच्च देव्या नामैक-
 मुत्तमम् । देवीनामसहस्राणि कोटिशः सन्ति कुम्भज ॥ ३०३ ॥
 तेषु मुख्यं दशविधं नामसाहस्रमुच्यते । रहस्यनामसाहस्रमिदं
 शस्तं दशस्वपि ॥ ३०४ ॥ तस्मात्संकीर्तयेन्नित्यं कलिदोषनिवृत्तये ।
 मुख्यं श्रीमातृनामेति न जानन्ति विमोहिताः ॥ ३०५ ॥
 विष्णुनामपराः केचिच्छिवनामपराः परे । न कश्चिदपि लोकेषु
 ललितानामतत्परः ॥ ३०६ ॥ येनान्यदेवतानाम कीर्तितं जन्मकोटिषु ।
 तस्यैव भवति श्रद्धा श्रीदेवीनामकीर्तने ॥ ३०७ ॥ चरमे जन्मनि
 यथा श्रीविद्योपासको भवेत् । नामसाहस्रपाठश्च तथा चरम-
 जन्मनि ॥ ३०८ ॥ यथैव विरला लोके श्रीविद्याचारवेदिनः ।
 तथैव विरलो गुह्यनामसाहस्रपाठकः ॥ ३०९ ॥ मन्त्रराजजपश्चैव
 चक्रराजार्चनं तथा । रहस्यनामपाठश्च नाल्पस्य तपसः फलम् ॥ ३१० ॥
 अपठन्नामसाहस्रं प्रीणयेद्यो महेश्वरीम् । स चक्षुषा विना रूपं
 पश्येदेव विमूढधीः ॥ ३११ ॥ रहस्यनामसाहस्रं त्यक्त्वा यः
 सिद्धिकामुकः । स भोजनं विना नूनं क्षुन्नवृत्तिमभीप्सति ॥ ३१२ ॥
 यो भक्तो ललितादेव्याः स नित्यं कीर्तयेदिदम् । नान्यथा प्रीयते
 देवी कल्पकोटिशतैरपि ॥ ३१३ ॥ तस्माद्रहस्यनामानि श्रीमातुः
 प्रयतः पठेत् । इति ते कथितं स्तोत्रं रहस्यं कुम्भसंभव ॥ ३१४ ॥
 नाविद्यावेदिने ब्रूयान्नाभक्ताय कदाचन । यथैव गोप्या श्रीविद्या
 तथा गोप्यमिदं मुने ॥ ३१५ ॥ पशुतुल्येषु न ब्रूयाज्जनेषु
 स्तोत्रमुत्तमम् । यो ददाति विमूढात्मा श्रीविद्यारहिताय तु ॥ ३१६ ॥
 तस्मै कुप्यन्ति योगिन्यः सोऽनर्थः सुमहान्स्मृतः । रहस्यनामसाहस्रं

तस्मात्संगोपयेदिदम् ॥ ३१७ ॥ स्वतन्त्रेण मया नोक्तं तवापि
कलशीभव । ललिताप्रेरणादेव मयोक्तं स्तोत्रमुत्तमम् ॥ ३१८ ॥
कीर्तनीयमिदं भक्त्या कुम्भयोने निरन्तरम् । तेन तुष्टा महादेवी
तवाभीष्टं प्रदास्यति ॥ ३१९ ॥ सूत उवाच ॥ इत्युक्त्वा
श्रीहयग्रीवो ध्यात्वा श्रीललिताम्बिकाम् । आनन्दमग्नहृदयः सद्यः
पुलकितोऽभवत् ॥ ३२० ॥ इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे ललितोपाख्याने
हयग्रीवागस्त्यसंवादे ललितासहस्रनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२५७. श्रीशकंभरीस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्रातः स्मरामि तव शंकरि वक्त्रपद्मं कान्तालकं
मधुरसंदहसं प्रसन्नम् । काश्मीरदर्पमृगनाभिलसल्लालं लोकत्रया-
भयदचारुविलोचनाढ्यम् ॥ १ ॥ प्रातर्भजामि तव शंकरि हस्तवृन्दं
माणिक्यहेमवलयदिविभूषणाढ्यम् । घंटात्रिशूलकरवालसुपुस्तखेट-
पात्रोत्तमांगडमरूलसितं मनोज्ञम् ॥ २ ॥ प्रातर्नमामि तव शंकरि
पादपद्मं पद्मोद्भवादिसुमनोगणसेव्यमानम् । मञ्जुकण्ठकनकनूपुर-
राजमानं नन्दारुन्दसुरवीरुधमार्यहृद्यम् ॥ ३ ॥ प्रातः स्तुवे च तव
शंकरि दिव्यमूर्तिं कादंबकाननगतां करुणारसाद्राम् । कल्याणधाम
नवनीरदनीलभासां पंचास्ययानलसितां परमार्तिहन्त्रीम् ॥ ४ ॥ प्रातर्व-
दामि तव शंकरि दिव्यनाम शकंभरीति ललितेति शतेक्षणेति । दुर्गेति
दुर्गममहासुरनाशिनीति श्रीमंगलेति कमलेति महेश्वरीति ॥ ५ ॥
यः श्लोकपंचकमिदं पठति प्रभाते शकंभरीप्रियकरं दुरितौघनाशम् ।
तस्मै ददाति शिवदा वनशंकरी सा विद्यां प्रजां श्रियमुदारमतिं
सुकीर्तिम् ॥ ६ ॥ इति श्रीशकंभरीप्रातःस्मरणस्तवः संपूर्णः ॥

१ स्तोत्रमिदं क्वचित् 'श्रीवनशंकरीस्तव' इति नाम्नापि लभ्यते ।

२४८. भगवत्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमोऽस्तु ते सरस्वति त्रिशूलचक्रधारिणि
 सितांबरावृते शुभे मृगेंद्रपीठसंस्थिते । सुवर्णबंधुराधरे सुम्रलरीशिरोरुहे
 सुवर्णपद्मभूषिते नमोऽस्तु ते महेश्वरि ॥ १ ॥ पितामहादिभिर्नुते स्वकां-
 तिलुप्तचंद्रभे सरत्नमालया वृते भवाब्धिचकटहारिणि । तमालहस्तमंडिते
 तमालभालशोभिते गिरामगोचरे इले नमोऽस्तु ॥ २ ॥ स्वभक्तवत्स-
 लेऽनघे सदापवर्गभोगदे दरिद्रदुःखहारिणि त्रिलोकशंकरीश्वरि । भवानि
 भीमअश्विके प्रचंडतेजउज्ज्वले भुजाकलापमंडिते नमोऽस्तु ॥ ३ ॥
 प्रपन्नभीतिनाशिके प्रसूनमाल्यकंधरे धियस्तमोनिवारिके विशुद्धबुद्धिका-
 रिके । सुरार्चितांघ्रिपंकजे प्रचंडविक्रमेऽक्षरे विशालपद्मलोचने नमोऽ-
 स्तु ॥ ४ ॥ हतस्त्वया स दैत्यधूम्रलोचनो यदा रणे तदा प्रसूनवृष्ट-
 यस्त्रिविष्टपे सुरैः कृताः । निरीक्ष्य तत्र ते प्रभामलज्जत प्रभाकरस्त्वयि
 दयाकरे ध्रुवे नमोऽस्तु ॥ ५ ॥ ननाद केसरी यदा चचाल मेदिनी
 तदा जगाम दैत्यनायकः स्वसेनया द्रुतं श्रिया । सकोपकंपदच्छदे सचंड-
 मुंडघातिके मृगेंद्रनादनादिते नमोऽस्तु ॥ ६ ॥ कुचंदनार्चितालके
 सितोष्णवारणाधरे सर्वकरानने वरे निशुंभशुंभमर्दिके । प्रसीद चंडिके
 अजे समस्तदोषघातिके शुभामतिप्रदेऽचले नमोऽस्तु ॥ ७ ॥ त्वमेव
 विश्वधारिणी त्वमेव विश्वकारिणी त्वमेव सर्वहारिणी न गम्यसेऽजिता-
 त्मभिः । दिवौकसां हिते रता करोषि दैत्यनाशनं शताक्षि रक्तदंतिके
 नमोऽस्तु ॥ ८ ॥ पठंति ये समाहिता इमं स्तवं सदा नरा
 अनन्यभक्तिसंयुताः अहर्मुखेऽनुवासरम् । भवंति ते तु पंडिताः
 सुपुत्रधान्यसंयुताः कलत्रभृतिसंयुता व्रजंति चामृतं सुखम् ॥ ९ ॥
 इति श्रीमद्रामदासपूज्यपादशिष्यश्रीमद्वंसदासशिष्येणामरदासकविना
 विरचितं भगवत्यष्टकं समाप्तम् ॥

२४९. संकष्टनाशनं सङ्कटाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ नारद उवाच ॥ जैगीषव्य मुनिश्रेष्ठ सर्वज्ञ
 सुखदायक । आख्यातानि सुपुण्यानि श्रुतानि त्वत्प्रसादतः ॥ १ ॥
 न तृप्तिमधिगच्छामि तत्र वागमृतेन च । वदस्वैकं महाभाग
 संकटाख्यानमुत्तमम् ॥ २ ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा जैगीषव्यो-
 ऽब्रवीत्ततः । संकष्टनाशनं स्तोत्रं शृणु देवर्षिसत्तम ॥ ३ ॥ द्वापरे
 तु पुरा वृत्ते भ्रष्टराज्यो युधिष्ठिरः । भ्रातृभिः सहितो राज्यनिर्वेदं
 परमं गतः ॥ ४ ॥ तदानीं तु ततः काशीं पुरीं यातो महामुनिः ।
 मार्कण्डेय इति ख्यातः सह शिष्यैर्महायशाः ॥ ५ ॥ तं दृष्ट्वा स
 समुत्थाय प्रणिपत्य सुपूजितः । किमर्थं ग्लानवदन एतत्त्वं
 मां निवेदय ॥ ६ ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ संकष्टं मे महत्प्राप्तमेता-
 द्गवदनं ततः । एतन्निवारणोपायं किञ्चिद्ब्रूहि मुने मम ॥ ७ ॥
 मार्कण्डेय उवाच ॥ आनन्दकानने देवी संकटा नाम विश्रुता ।
 वीरेश्वरोत्तरे भागे पूर्वं चन्द्रेश्वरस्य च ॥ ८ ॥ शृणु नामाष्टकं तस्याः
 सर्वसिद्धिकरं नृणाम् । संकटा प्रथमं नाम द्वितीयं विजया तथा
 ॥ ९ ॥ तृतीयं कामदा प्रोक्तं चतुर्थं दुःखहारिणी । शर्वाणी पंचमं
 नाम षष्ठं कात्यायनी तथा ॥ १० ॥ सप्तमं भीमनयना सर्वरोग-
 हराऽष्टमम् । नामाष्टकमिदं पुण्यं त्रिसंध्यं श्रद्धयान्वितः ॥ ११ ॥
 यः पठेत्पाठयेद्वापि नरो मुच्येत संकटात् । इत्युक्त्वा तु द्विजश्रेष्ठ-
 मृषिर्वाराणसीं ययौ ॥ १२ ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा नारदो
 हर्षनिर्भरः । ततः संपूजितां देवीं वीरेश्वरसमन्विताम् ॥ १३ ॥
 भुजैस्तु दशभिर्युक्तां लोचनत्रयभूषिताम् । मालाकमंडलुयुतां
 पद्मशंखगदायुताम् ॥ १४ ॥ त्रिशूलडमरुधरां खड्गचर्मविभूषि-

ताम् । वरदाभयहस्तां तां प्रणम्य विधिर्नन्दनः ॥ १५ ॥ वारत्रयं
गृहीत्वा तु ततो विष्णुपुरं ययौ । एतत्स्तोत्रस्य पठनं पुत्रपौत्र-
विवर्धनम् ॥ १६ ॥ संकष्टनाशनं चैव त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् ।
गोपनीयं प्रयत्नेन महावंध्याप्रसूतिकृत् ॥ १७ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे
संकष्टनाशनं सङ्कटाष्टकं संपूर्णम् ॥

२५०. श्रीकुञ्जिकास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीकुञ्जिकास्तोत्रमंत्रस्य सदाशिव
ऋषिः, अनुष्टुप् छंदः, श्रीत्रिगुणात्मिका देवता, ॐ ऐं वीजम्,
ॐ ह्रीं शक्तिः, ॐ क्लीं कीलकम्, मम सर्वाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे
विनियोगः ॥ शिव उवाच ॥ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि कुञ्जिकास्तोत्र-
मुत्तमम् । येन मंत्रप्रभावेण चण्डीजापः शुभो भवेत् ॥ १ ॥
न कवचं नार्गलास्तोत्रं कीलकं न रहस्यकम् । न सूक्तं नापि वा
ध्यानं न न्यासो न वार्चनम् ॥ २ ॥ कुञ्जिकापाठमात्रेण दुर्गा-
पाठफलं लभेत् । अतिगुह्यतरं देवि देवानामपि दुर्लभम् ॥ ३ ॥
गोपनीयं प्रयत्नेन स्वयोनिरिव पार्वति । मारणं मोहनं वश्यं स्तम्भ-
नोच्चाटनादिकम् ॥ ४ ॥ पाठमात्रेण संसिद्ध्येत् कुञ्जिकास्तोत्रमुत्त-
मम् । ॐ श्रूं श्रूं श्रूं शं फट् ऐं ह्रीं क्लीं ज्वल उज्ज्वल प्रज्वल ह्रीं
ह्रीं क्लीं स्वावय स्वावय-शापं नाशय नाशय श्रीं श्रीं श्रीं जूं सः
स्वावय आदय स्वाहा ॥ ५ ॥ ॐ श्लीं हूं क्लीं ग्लां जूं सः
ज्वल उज्ज्वल मंत्रं प्रज्वल हं सं लं क्षं फट् स्वाहा ॥ ६ ॥
नमस्ते रुद्ररूपायै नमस्ते मधुमर्दिनि ॥ नमस्ते कैटभनाशिन्यै
नमस्ते महिषार्दिनि ॥ नमस्ते शुम्भहृद्भ्यै च निशुम्भासुरसूदिनि
॥ ७ ॥ नमस्ते जाग्रते देवि जपे सिद्धिं कुरुष्व मे ॥ ऐंकारी

सृष्टिरूपिण्यै हींकारी प्रतिपालिका ॥ ८ ॥ क्लीं काली काल-
 रूपिण्यै बीजरूपे नमोऽस्तु ते ॥ चामुण्डा चण्डरूपा च यैङ्कारी
 वरदायिनी ॥ ९ ॥ विच्चे त्वभयदा नित्यं नमस्ते मन्त्ररूपिणि ॥ धां
 धीं धूं धूर्जटेः पत्नी वां वीं वागीश्वरी तथा ॥ १० ॥ क्रां क्रीं कूं
 कुञ्जिका देवि श्रां श्रीं श्रूं मे शुभं कुरु ॥ हूं हूं हूंकाररूपिण्यै ज्ञां
 ज्रीं जूं भालनादिनी ॥ ११ ॥ आं श्रीं अूं भैरवी भद्रे भवान्यै ते नमो
 नमः ॥ ॐ अं कं चं टं तं पं सां विदुरां विदुरां विमर्दय विमर्दय
 हीं क्षां क्षीं स्त्रीं जीवय जीवय त्रोटय त्रोटय जंभय जंभय दीपय
 दीपय मोचय मोचय हूं फट् ज्ञां वौषट् ऐं हीं क्लीं रंजय रंजय
 संजय संजय गुंजय गुंजय बंधय बंधय आं श्रीं अूं भैरवी भद्रे
 संकुच संकुच त्रोटय त्रोटय म्लीं स्वाहा ॥ १२ ॥ पां पीं पूं पार्वती
 पूर्णा खां खीं खूं खेचरी तथा ॥ म्लीं म्लीं म्लूं मूलविस्तीर्णा
 कुञ्जिकास्तोत्रहेतवे ॥ अभक्ताय न दातव्यं गोपितं रक्ष पार्वति ॥
 विहीना कुञ्जिकादेव्या यस्तु सप्तशतीं पठेत् ॥ न तस्य जायते
 सिद्धिर्हरण्ये रुदितं यथा ॥ १३ ॥ इति श्रीडामरतन्त्र ईश्वरपार्वती-
 संवादे कुञ्जिकास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२५१. लघुसप्तशतीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यत्कर्म धर्मनित्यं प्रवदन्ति तज्ज्ञा यज्ञादिकं
 तदखिलं सकलं त्वयैव । त्वां चेतनायत इति प्रविचार्य चित्ते नित्यं
 त्वदीयचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥ १ ॥ पाथोधिनाथतनयापतिरेव शेष-
 पर्यंकलालितवपुः पुरुषः पुराणः । त्वन्मोहपाशविवशो जगदंब
 सोऽपि व्याघूर्णमाननयनः शयनं चकार ॥ २ ॥ तत्कौतुकं जननि
 यस्य जनार्दनस्य कर्णप्रसूतमलजौ मधुकैटभाख्यौ । तस्यापि यौ न
 भवतः सुलभौ विहंतुं त्वन्मायया कवलितौ विलयं गतौ तौ ॥ ३ ॥

यन्माहिषं वपुरपूर्वबलोपपन्नं यन्नाकनायकपराक्रमजित्वरं च । यल्लोक-
 शोकजननप्रतिबद्धहार्दं तल्लीलयैव दलितं गिरिजे भवत्या ॥ ४ ॥
 यो धूम्रलोचन इति प्रथितः पृथिव्यां भस्मीबभूव समरे तव
 हुंकृतेन । सर्वासुरक्षयकरे गिरिराजकन्ये मन्ये स्वमन्युदहने कृत
 एष होमः ॥ ५ ॥ केषामपि त्रिदशनायकपूर्वकाणां जेतुं न जातु
 सुलभाविति चंडमुंडौ । तौ दुर्मदौ तु परमांबरतुल्यरूपे मात-
 स्तवासि कुलिशात्पतितौ विशीणौ ॥ ६ ॥ दौत्येन ते शिव इति
 प्रथितप्रभावो देवोऽपि दानवपतेः सदनं जगाम । भूयोऽपि तस्य
 चरितं प्रथयांचकार सा त्वं प्रतीति शिवदूतिविजृम्भितं तत् ॥ ७ ॥
 चित्रं तदेतदमरैरपि ये न पेयाः शस्त्राभिघातपतिताद्बुधिरादपर्णे ।
 भूमौ बभूवुरमिताः प्रतिरक्तबीजास्तेऽपि त्वयैव गगने गलिताः
 समस्ताः ॥ ८ ॥ आश्चर्यमेतदखिलं यदभूः सुरारित्रैलोक्यवैभव-
 विलुंठनजुष्टपाणी । शस्त्रैर्निहत्य भुवि शुंभनिशुंभसंज्ञौ नीतौ त्वया
 जननि तावपि नाकलोकम् ॥ ९ ॥ त्वत्तेजसि प्रलयकालहुताशने-
 ऽस्मिन्नस्तं प्रयांति भुवनान्यखिलानि सद्यः । तस्मिन्निपत्य शलभा
 इव दानवेंद्रा भस्मीभवन्ति हि भवानि किमत्र चित्रम् ॥ १० ॥
 किं वर्णयामि भवतीं भवति प्रतापसंवर्धनप्रणयिनी प्रणमज्जनेषु ।
 तत्किं पृणामि भवतीं भवति प्रतापसंवर्धनि प्रणयिनीं विपदास्थि-
 तेषु ॥ ११ ॥ वामे करे तदितरे च तथोपरिष्ठात् पात्रं सुधारस-
 युतं वरमातुलिंगम् । खेटं गदां च दधतीं भवतीं भवानीं ध्यायन्ति
 येऽरुणनिभां कृतिनस्त एव ॥ १२ ॥ यद्धारुणात्परमिदं जगदंब
 यस्ते बीजं स्मरेदनुदिनं मदनादिरूढम् । मायांकितं तिलकितं
 तरुणेन्दुबिन्दु नदैरतींद्रमिह राज्यमसौ भुनक्ति ॥ १३ ॥ आवाहनं
 यजनवर्णनमग्निहोत्रं कर्मार्पणं तव विसर्जनमत्र देवि । मोहान्मया

२५४. अमरांवाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ चांचल्यारुणलोचनाञ्चितकृपाचंद्रार्कचूडामणिं
 चारुस्मेरमुखां चराचरजगत्संरक्षणीं तत्पदाम् । चञ्चच्चम्पकनासि-
 काग्रविलसन्मुक्तामणीरञ्जितां श्रीशैलस्थलवासिनीं भगवतीं श्रीमा-
 तरं भावये ॥ १ ॥ कस्तूरीतिलकाञ्चितेन्दुविलसत्प्रोक्षासिभाल-
 स्थलीं कर्पूरद्रवमिश्रचूर्णखदिरामोदोल्लसद्दीप्तिकाम् । लोलापाङ्ग-
 तरङ्गितैरधिकृपासारैर्नतानन्दिनीं श्रीशैलस्थलवासिनीं भगवतीं
 श्रीमातरं भावये ॥ २ ॥ राजन्मत्तमरालमन्दगमनां राजीवपत्रे-
 क्षणां राजीवप्रभवादिदेवमुकुटै राजत्पदाम्भोरुहाम् । राजीवायतमन्द-
 मण्डितकुचां राजाधिराजेश्वरीं श्रीशैलस्थलवासिनीं भगवतीं
 श्रीमातरं भावये ॥ ३ ॥ षट्पदारां गणदीपिकां शिवसतीं षड्वैरि-
 वर्गापहां षट्चक्रान्तरसंस्थितां वरसुधां षड्योगिनीवेष्टिताम् ।
 षट्चक्राञ्चितपादुकाञ्चितपदां षड्भावगां षोडशीं श्रीशैलस्थल-
 वासिनीं भगवतीं श्रीमातरं भावये ॥ ४ ॥ श्रीनाथादृतपालित-
 त्रिभुवनां श्रीचक्रसंसारिणीं ज्ञानासक्तमनोजयौवनलसद्गन्धर्वकन्या-
 दृताम् । दीनानामतिवेलभाग्यजननीं दिव्यांबरालंकृतां श्रीशैलस्थल-
 वासिनीं भगवतीं श्रीमातरं भावये ॥ ५ ॥ लावण्याधिकभूषितांग-
 तिलकां लाक्षालसद्रागिणीं सेवायातसमस्तदेववनितां सीमंतभूषा-
 न्विताम् । भावोल्लासवशीकृतप्रियतमां भण्डासुरच्छेदिनीं श्रीशैल-
 स्थलवासिनीं भगवतीं श्रीमातरं भावये ॥ ६ ॥ धन्यां सोमविभाव-
 नीयचरितां धाराधरश्यामलां मुन्याराधनमेधिनीं सुमवतां मुक्ति-
 प्रदानवताम् । कन्यापूजनसुप्रसन्नहृदयां काञ्चीलसन्मध्यमां
 श्रीशैलस्थलवासिनीं भगवतीं श्रीमातरं भावये ॥ ७ ॥ कर्पूरागरु-
 कुंकुमांकितकुचां कर्पूरवर्णस्थितां कृष्टोत्कृष्टसुकृष्टकर्मदहनां कामेश्वरीं

कामिनीम् । कामाक्षीं करुणारसार्द्रहृदयां कल्पांतरस्थायिनीं श्रीशैल-
स्थलवासिनीं भगवतीं श्रीमातरं भावये ॥ ८ ॥ गायत्रीं गरुड-
ध्वजां गगनगां गान्धर्वगानप्रियां गम्भीरां गजगामिनीं गिरिसुतां
गन्धाक्षतालंकृताम् । गङ्गागौतमगर्गसंनुतपदां गां गौतमीं गोमतीं
श्रीशैलस्थलवासिनीं भगवतीं श्रीमातरं भावये ॥ ९ ॥ इति श्रीम-
त्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीगोविन्दभगवत्पूज्यपादशिष्यस्य श्रीमच्छं-
करभगवतः कृतौ भ्रमरांबाष्टकं संपूर्णम् ॥

२५१. तांत्रिकं देवीसूक्तम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म तां ॥ १ ॥ रौद्रायै
नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः । ज्योत्स्नायै चेंदुरुपिण्यै
सुखायै सततं नमः ॥ २ ॥ कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो
नमो नमः । नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः
॥ ३ ॥ दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै । ख्यात्यै तथैव
कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥ ४ ॥ अतिसौम्यातिरौद्रायै नता-
स्त्यै नमो नमः । नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः
॥ ५ ॥ या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता । नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ६ ॥ या देवी सर्वभूतेषु चेत-
नेत्यभिधीयते । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ७ ॥
या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ८ ॥ या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण
संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ९ ॥ या
देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमो नमः ॥ १० ॥ या देवी सर्वभूतेषु छाया रूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ११ ॥ या देवी सर्वभूतेषु
 शक्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः
 ॥ १२ ॥ या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता । नम-
 स्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १३ ॥ या देवी सर्व-
 भूतेषु क्षांतरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो
 नमः ॥ १४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १५ ॥ या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण
 संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १६ ॥ या
 देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नम-
 स्तस्यै नमो नमः ॥ १७ ॥ या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता ।
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १८ ॥ या देवी सर्वभूतेषु
 कांतरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः
 ॥ १९ ॥ या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नम-
 स्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २० ॥ या देवी सर्वभूतेषु वृत्ति-
 रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २१ ॥
 या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै
 नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २२ ॥ या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण
 संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २३ ॥ या
 देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै
 नमो नमः ॥ २४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता ।
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २५ ॥ या देवी सर्वभूतेषु
 भ्रातरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २६ ॥
 इंद्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या । भूतेषु सततं तस्यै
 व्याप्त्यै देव्यै नमो नमः ॥ २७ ॥ चित्तरूपेण या कृत्स्नमेतद्व्याप्य

स्थिता जगत् । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २८ ॥
 स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता । करोतु
 सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहंतु चापदः ॥ २९ ॥
 या सांप्रतं चोद्धतदैत्यतापितैरस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते । या च
 स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्तिभिः ॥ ३० ॥
 इति तान्त्रिकं देवीसूक्तं संपूर्णम् ॥

२५६. प्राधानिकरहस्यम् ।

* श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीसप्तशतीरहस्यत्रयस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा
 ऋषयः, महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः, अनुष्टुप् छंदः,
 नवदुर्गामहालक्ष्मीबीजं, श्रीं शक्तिः, ममाभीष्टफलसिद्धये जपे विनि-
 योगः ॥ राजोवाच ॥ भगवन्नवतारा मे चंडिकायास्त्वयोदिताः ॥
 एतेषां प्रकृतिं ब्रह्मन् प्रधानं वक्तुमर्हसि ॥ १ ॥ आराध्यं यन्मया
 देव्याः स्वरूपं येन वै द्विज ॥ विधिना ब्रूहि सकलं यथावत्प्रणतस्य
 मे ॥ २ ॥ ऋषिरुवाच ॥ इदं रहस्यं परममनाख्येयं प्रचक्षते ॥
 भक्तोऽसीति न मे किञ्चित्तवावाच्यं नराधिप ॥ ३ ॥ सर्वस्याद्या
 महालक्ष्मीस्त्रिगुणा परमेश्वरी ॥ लक्ष्यालक्ष्यस्वरूपा सा व्याप्य कृत्स्नं
 व्यवस्थिता ॥ ४ ॥ मातुलिंगं गदां खेटं पानपात्रं च विभ्रती ॥ नागं
 लिंगं च योनिं च विभ्रती नृप मूर्धनि ॥ ५ ॥ तप्तकांचनवर्णाभा
 तप्तकांचनभूषणा ॥ शून्यं तदखिलं स्वेन पूरयामास तेजसा ॥ ६ ॥
 शून्यं तदखिलं लोकं विलोक्य परमेश्वरी ॥ बभार रूपमपरं तमसा
 केवलेन हि ॥ ७ ॥ सा भिन्नांजनसंकाशा दंष्ट्रांचितवरानना ॥ विशाल-
 लोचना नारी बभूव तनुमध्यमा ॥ ८ ॥ खड्गपात्रशिरःखेटैरलंकृतचतु-
 र्भुजा ॥ कबंधहारं शिरसा विभ्राणा हि शिरःखजम् ॥ ९ ॥ तां प्रोवाच
 महालक्ष्मीस्तामसीं प्रमदोत्तमाम् ॥ ददामि तव नामानि यानि कर्माणि

तानि ते ॥ १० ॥ महामाया महाकाली महामारी क्षुधा नृषा । निद्रा
 नृणा चैकवीरा कालरात्रिर्दुरत्यया ॥ ११ ॥ इमानि तव नामानि
 प्रतिपाद्यानि कर्मभिः । एभिः कर्माणि ते ज्ञात्वा योऽधीते सोऽभुते
 सुखम् ॥ १२ ॥ तामित्युक्त्वा महालक्ष्मीः स्वरूपमपरं नृप ॥ सत्त्वा-
 ख्येनातिशुद्धेन गुणेनेदुप्रभं दधौ ॥ १३ ॥ अक्षमालांकुशधरा वीणा-
 पुस्तकधारिणी ॥ सा बभूव वरा नारी नामान्यस्यै च सा ददौ ॥ १४ ॥
 महाविद्या महावाणी भारती वाक् सरस्वती ॥ आर्या ब्राह्मी कामधेनु-
 वेदगर्भा सुरेश्वरी ॥ १५ ॥ अथोवाच महालक्ष्मीर्महाकालीं सरस्व-
 तीम् ॥ युवां जनयतां देव्यौ मिथुने स्नानुरूपतः ॥ १६ ॥ इत्युक्त्वा
 ते महालक्ष्मीः ससर्ज मिथुनं स्वयम् ॥ हिरण्यगर्भौ रुचिरौ स्त्रीपुंसौ
 कमलासनौ ॥ १७ ॥ ब्रह्मन्विधे विरिंचेति धातरित्याह तं नरम् ॥ श्रीः
 पद्मे कमले लक्ष्मीत्याह माता स्त्रियं च ताम् ॥ १८ ॥ महाकाली
 भारती च मिथुने सृजतः सह ॥ एतयोरपि रूपाणि नामानि च वदामि
 ते ॥ १९ ॥ नीलकण्ठं रक्तबाहुं श्वेताङ्गं चन्द्रशेखरम् ॥ जनयामास पुरुषं
 महाकाली सितां स्त्रियम् ॥ २० ॥ स रुद्रः शंकरः स्थाणुः कपर्दी च
 त्रिलोचनः ॥ त्रयीविद्याकामधेनुः सा स्त्री भाषास्वराक्षरा ॥ २१ ॥
 सरस्वती स्त्रियं गौरीं कृष्णं च पुरुषं नृप ॥ जनयामास नामानि तयो-
 रपि वदामि ते ॥ २२ ॥ विष्णुः कृष्णो हृषीकेशो वासुदेवो जनार्दनः ॥
 उमा गौरी सती चण्डी सुन्दरी सुभगा शुभा ॥ २३ ॥ एवं युवतयः
 सद्यः पुरुषत्वं प्रपेदिरे ॥ चक्षुष्मन्तो नु पश्यन्ति नेतरे तद्विदो जनाः
 ॥ २४ ॥ ब्रह्मणे प्रददौ पत्नीं महालक्ष्मीर्नृप त्रयीम् ॥ रुद्राय गौरी वरदां
 वासुदेवाय च श्रियम् ॥ २५ ॥ स्वरया सह संभूय विरंचोऽण्डमजी-
 जनत् ॥ बिभेद भगवान् रुद्रस्तद्रौर्या सह वीर्यवान् ॥ २६ ॥ अण्ड-
 मध्ये प्रधानादि कार्यजातमभून्नृप ॥ महाभूतात्मकं सर्वं जगत्स्थावर-

जंगमम् ॥ २७ ॥ पुषोष पालयामास तलक्ष्म्या सह केशवः ॥ महालक्ष्मी-
रेवमजा राजन् सर्वेश्वरेश्वरी ॥ २८ ॥ निराकारा च साकारा सैव नाना-
भिधानभृत् ॥ नामांतरैर्निरूप्यैषा नाम्ना नान्येन केनचित् ॥ २९ ॥
इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे प्राधानिकं रहस्यं संपूर्णम् ॥

२५७. वैकृतिकं रहस्यम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ऋषिरुवाच ॥ त्रिगुणा तामसी देवी सात्त्विकी
या त्वयोदिता ॥ सा शर्वा चंडिका दुर्गा भद्रा भगवतीर्यते ॥ १ ॥
योगनिद्रा हरेरुक्ता महाकाली तमोगुणा ॥ मधुकैटभनाशार्थं यां
तुष्टावांबुजासनः ॥ २ ॥ दशवक्त्रा दशभुजा दशपादांजनप्रभा ॥ विशा-
लया राजमाना त्रिंशल्लोचनमालया ॥ ३ ॥ स्फुरद्दशनदंष्ट्रा सा भीम-
रूपापि भूमिप ॥ रूपसौभाग्यकांतीनां सा प्रतिष्ठां महाश्रियाम् ॥ ४ ॥
खड्गबाणगदाशूलशंखचक्रभुशुंडिभृत् ॥ परिधं कार्मुकं शीर्षं निश्च्रोत-
द्रुधिरं दधौ ॥ ५ ॥ एषा सा वैष्णवी माया महाकाली दुरत्यया ॥
आराधिता वशीकुर्यात्पूजाकर्तुश्चराचरम् ॥ ६ ॥ सर्वदेवशरीरेभ्यो
याविर्भूताऽमितप्रभा ॥ त्रिगुणा सा महालक्ष्मीः साक्षान्महिषमर्दिनी
॥ ७ ॥ श्वेतानना नीलभुजा सुश्वेतस्तनमंडला ॥ रक्तमध्या रक्तपादा
रक्तजंघोरुर्लम्बदा ॥ ८ ॥ सुचित्रजघना चित्रमाल्यांबरविभूषणा ॥
चित्रानुलेपना कांतिरूपसौभाग्यशालिनी ॥ ९ ॥ अष्टादशभुजा पूज्या
सा सहस्रभुजा सती ॥ आयुधान्यत्र वक्ष्यंते दक्षिणाधःकरक्रमात्
॥ १० ॥ अक्षमाला च कमलं बाणोऽसिः कुलिशं गदा ॥ चक्रं त्रिशूलं
परशुः शंखो घंटा च पाशकः ॥ ११ ॥ शक्तिर्दंडश्चर्म चापं पानपात्रं
कमंडलुः ॥ अलंकृतभुजामेभिरायुधैः कमलासनाम् ॥ १२ ॥ सर्वदेवम-
यीमीशां महालक्ष्मीमिमां नृप ॥ पूजयेत्सर्वलोकानां स देवानां प्रभु-

भवेत् ॥ १३ ॥ गौरीदेहात्समुद्भूता या सत्त्वैकगुणाश्रया ॥ साक्षात्सरस्वती
 प्रोक्ता शुंभासुरनिबर्हिणी ॥ १४ ॥ दधौ चाष्टभुजा बाणान्मुसलं शूल-
 चक्रभृत् ॥ शंखं घंटां लांगलं च कार्मुकं वसुधाधिप ॥ १५ ॥ एषा
 संपूजिता भक्त्या सर्वज्ञत्वं प्रयच्छति ॥ निशुंभमथिनी देवी शुंभासुर-
 निबर्हिणी ॥ १६ ॥ इत्युक्तानि स्वरूपाणि मूर्तीनां तव पार्थिव ॥ उपासनं
 जगन्मातुः पृथगासां निशामय ॥ १७ ॥ महालक्ष्मीर्यदा पूज्या महा-
 काली सरस्वती ॥ दक्षिणोत्तरयोः पूज्ये पृष्ठतो मिथुनत्रयम् ॥ १८ ॥
 विरंचिः स्वरया मध्ये रुद्रो गौर्या च दक्षिणे ॥ वामे लक्ष्म्या हृषीकेशः
 पुरतो देवतात्रयम् ॥ १९ ॥ अष्टादशभुजा मध्ये वामे चास्या
 दशानना ॥ दक्षिणेऽष्टभुजा लक्ष्मीर्महतीति समर्चयेत् ॥ २० ॥
 अष्टादशभुजा चैषा यदा पूज्या नराधिप ॥ दशानना चाष्टभुजा
 दक्षिणोत्तरयोस्तदा ॥ २१ ॥ कालमृत्यू च संपूज्यौ सर्वारिप्रशां-
 तये ॥ यदा चाष्टभुजा पूज्या शुंभासुरनिबर्हिणी ॥ २२ ॥ नवास्याः
 शक्तयः पूज्यास्तदा रुद्रविनायकौ ॥ नमो देव्या इति स्तोत्रैर्महा-
 लक्ष्मीं समर्चयेत् ॥ २३ ॥ अवतारत्रयार्चायां स्तोत्रमंत्रास्तदाश्रयाः ॥
 अष्टादशभुजा चैषा पूज्या महिषमर्दिनी ॥ २४ ॥ महालक्ष्मी-
 र्महाकाली सैव प्रोक्ता सरस्वती ॥ ईश्वरी पुण्यपापानां सर्वलोक-
 महेश्वरी ॥ २५ ॥ महिषांतकरी येन पूजिता स जगत्प्रभुः ॥ पूजये-
 ज्जगतां धार्त्रीं चंडिकां भक्तवत्सलाम् ॥ २६ ॥ अर्घादिभिरलंकारैर्गंध-
 पुष्पैस्तथोत्तमैः ॥ धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्नानाभक्ष्यसमन्वितैः ॥ २७ ॥
 रुधिराक्तेन बलिना मांसेन सुरया नृप ॥ प्रणामाचमनीयेन चंदनेन
 सुगंधिना ॥ २८ ॥ सकर्पूरैश्च तांबूलैर्भक्तिभावसमन्वितैः ॥ वामभागे-
 ऽग्रतो देव्याश्छिन्नशीर्षं महासुरम् ॥ २९ ॥ पूजयेन्महिषं येन प्राप्तं
 सायुज्यमीशया ॥ दक्षिणे पुरतः सिंहं समग्रं धर्ममीश्वरम् ॥ ३० ॥

वाहनं पूजयेद्देव्या धृतं येन चराचरम् ॥ ततः कृतांजलिर्भूत्वा स्तुवीत
 चरितैरिमैः ॥ ३१ ॥ एकेन वा मध्यमेन नैकेनेतरयोरिह ॥ चरितार्थं
 तु न जपेज्जपच्छिद्रमवामुयात् ॥ ३२ ॥ स्तोत्रमंत्रैः स्तुवीतेमां यदि
 वा जगदंबिकाम् ॥ प्रदक्षिणानमस्कारान्कृत्वा मूर्ध्नि कृतांजलिः ॥ ३३ ॥
 क्षमापयेज्जगद्धात्रीं मुहुर्मुहुरतंद्रितः ॥ प्रतिश्लोकं च जुहुयात्पायसं
 तिलसर्पिषा ॥ ३४ ॥ जुहुयात्स्तोत्रमंत्रैर्वा चंडिकायै शुभं हविः ॥
 नमोनमःपदैर्देवीं पूजयेत्सुसमाहितः ॥ ३५ ॥ प्रयतः प्रांजलिः प्रह्वः
 प्राणानारोप्य चात्मनि ॥ सुचिरं भावयेद्देवीं चंडिकां तन्मयो भवेत्
 ॥ ३६ ॥ एवं यः पूजयेद्भक्त्या प्रत्यहं परमेश्वरीम् ॥ भुक्त्वा भोगान्
 यथाकामं देवीसायुज्यमामुयात् ॥ ३७ ॥ यो न पूजयते नित्यं चंडिकां
 भक्तवत्सलाम् ॥ भस्मीकृत्यास्य पुण्यानि निर्दहेत्परमेश्वरी ॥ ३८ ॥
 तस्मात्पूजय भूपाल सर्वलोकमहेश्वरीम् ॥ यथोक्तेन विधानेन चंडिकां
 सुखमाप्स्यसि ॥ ३९ ॥ इति श्रीमार्कंडेयपुराणे वैकृतिकं रहस्यं
 संपूर्णम् ॥

२५८. मूर्तिरहस्यम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ऋषिरुवाच ॥ नंदा भगवती नाम या भवि-
 ष्यति नंदजा ॥ सा स्तुता पूजिता भक्त्या वशीकुर्याज्जगन्नयम् ॥ १ ॥
 कनकोत्तमकांतिः सा सुकांतिः कनकांबरा ॥ देवी कनकवर्णाभा कन-
 कोत्तमभूषणा ॥ २ ॥ कमलांकुशपाशाजैरलंकृतचतुर्भुजा ॥ इंदिरा
 कमला लक्ष्मीः सा श्री रूक्मांबुजासना ॥ ३ ॥ या रक्तदंतिका नाम
 देवी प्रोक्ता मयानघ ॥ तस्याः स्वरूपं वक्ष्यामि शृणु सर्वभयापहम्
 ॥ ४ ॥ रक्तांबरा रक्तवर्णा रक्तसर्वांगभूषणा ॥ रक्तायुधा रक्तनेत्रा
 रक्तकेशातिभीषणा ॥ ५ ॥ रक्ततीक्ष्णनखा रक्तरसना रक्तदंष्ट्रिका ॥
 पतिं नारीवानुरक्ता देवी भक्तं भजेज्जनम् ॥ ६ ॥ वसुधैव विशाला

सा सुमेरुयुगलस्तनी ॥ दीर्घौ लंबावतिस्थूलौ तावतीव मनोहरौ ॥ ७ ॥
 कर्कशावतिकांतौ तौ सर्वानंदपयोनिधी ॥ भक्तान्संपायायेद्देवी सर्व-
 कामदुघौ स्तनौ ॥ ८ ॥ खड्गपात्रं च सुसलं लांगलं च विभर्ति सा ॥
 आख्याता रक्तचामुंडा देवी योगेश्वरीति च ॥ ९ ॥ अनया व्याप्तम-
 खिलं जगत्स्थावरजंगमम् ॥ इमां यः पूजयेद्भक्त्या स व्याप्नोति चरा-
 चरम् ॥ १० ॥ अधीते य इमं नित्यं रक्तदंत्या वपुःस्तवम् ॥ तं सा
 परिचरेद्देवी पतिं प्रियमिवांगना ॥ ११ ॥ शाकंभरी नीलवर्णा नीलो-
 त्पलविलोचना ॥ गंभीरनाभिस्त्रिवलीविभूषिततनूदरी ॥ १२ ॥
 सुकर्कशसमोत्तुंगवृत्तपीनघनस्तनी ॥ मुष्टिं शिलीमुखैः पूर्णं कमलं
 कमलालया ॥ १३ ॥ पुष्पपल्लवमूलादिफलाढ्यं शाकसंचयम् ॥
 काम्यानंतरसैर्युक्तं क्षुत्तृणमृत्युजरापहम् ॥ १४ ॥ कार्मुकं च स्फुर-
 त्कांति विभर्ति परमेश्वरी ॥ शाकंभरी शताक्षी सा सैव दुर्गा
 प्रकीर्तिता ॥ १५ ॥ शाकंभरीं स्तुवन्ध्यायन् जपन्संपूजयन्नमन् ॥
 अक्षय्यमश्रुते शीघ्रमन्नपानादि सर्वशः ॥ १६ ॥ भीमापि नीलवर्णा
 सा दंष्ट्रादशनभासुरा ॥ विशाललोचना नारी वृत्तपीनघनस्तनी ॥ १७ ॥
 चंद्रहासं च डमरुं शिरःपात्रं च विभ्रती ॥ एकवीरा कालरात्रिः
 सैवोक्ता कामदा स्तुता ॥ १८ ॥ तेजोमंडलदुर्धर्षा भ्रामरी चित्र-
 कांतिभृत् ॥ चित्रभ्रमरसंकाशा महामारीति गीयते ॥ १९ ॥ इत्येता
 मूर्तयो देव्या व्याख्याता वसुधाधिप ॥ जगन्मातुश्रंडिकायाः कीर्तिताः
 कामधेनवः ॥ २० ॥ इदं रहस्यं परमं न वाच्यं यस्य कस्यचित् ॥
 व्याख्यानं दिव्यमूर्तीनामधीष्ठावहितः स्वयम् ॥ २१ ॥ देव्या ध्यानं
 तवाख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं महत् ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सर्वकामफलप्रदम्
 ॥ २२ ॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे खिलांशे मूर्तिरहस्यं संपूर्णम् ॥

२५९. भगवतीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमामि त्वां मातर्द्रविणरहितोऽहं तव सुतो
जगद्वन्द्यां स्वर्गे भुवि बलिगृहे चापि विदिताम् । पृथिव्यां कल्याणी
मम भयहरा त्वं न च परा यतोऽहं यातस्त्वां भवगतभयात्सांप्रत-
मुमे ॥ १ ॥ प्रसीदेशे नित्यं भगवति भवाम्भोधितरणे शरण्ये
नास्त्यन्या विपदघहरा कापि जगति । जडो मूर्खोऽहं ते जननि नहि
जाने विलसितमतोऽहं संयातस्तव पदपयोजे गिरिसुते ॥ २ ॥ अहो
संसारेऽस्मिन् जननि तव तुल्या नहि परा खलं दुष्टं पुत्रं जगति जननी
रक्षति निजम् । परित्यक्त्वेदानीं सकलसुरवृन्दं गिरिसुते नमामि त्वां
देवीं भवभयहरां मङ्गलकराम् ॥ ३ ॥ जगन्मातर्दुर्गे भवभयविभङ्गक-
निपुणे मया संसारेऽस्मिन् तव चरणपूजाऽपि न कृता । न पुष्पाणां
हारस्तव शिरसि शुभ्रोऽर्पित इति क्षमस्वागो मातर्मम बहुविधं शैल-
तनये ॥ ४ ॥ धनाद्धीनं दीनं परिजनविहीनं बहुशुचं तथा शत्रुग्रस्तं
विविधभययुक्तं जडमतिम् । भवत्याः संयातं निकटमयि भूमीधरसुते
समाश्वस्तं दृष्ट्या कुरु जगति कीर्त्या च विदितम् ॥ ५ ॥ त्वमेका संसारे
जनिमदघनाशे प्रभुरहो त्वमेवैका मातर्भवभयलयाधाननिपुणा । तवाशा
मे शश्वज्जननि निजदुःखैकदलने विहाय त्वां मातः कमिह ननु संयामि
शरणम् ॥ ६ ॥ तथा पूर्वे काले प्रबलतरवीर्यौ दितिसुतौ प्रसिद्धौ सोदर्यौ
भुविदिविगतौ भीषणतरौ । निशुम्भः शुम्भश्च प्रविततमहामोहगहनौ
विनष्टौ त्वां प्राप्यामरवरनुते शम्भुदयिते ॥ ७ ॥ सुरास्त्वां संयाता
हरिहरनुतां दैत्यदलिताः सुराणां रक्षायै असुरकुलनाशं कृतवती ।
अहो मूर्तिर्धन्या सकलसुरसंसेव्यचरणा त्वमेवैका मातर्जगति बहुरूपा
विजयसे ॥ ८ ॥ भगवत्या इदं स्तोत्रं योगानन्देन निर्मितम् । यः पठे-
द्भक्तिभावेन फलमिष्टं लभेत सः ॥ ९ ॥ इति भगवतीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२६०. देव्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ महादेवीं महाशक्तिं भवानीं भववल्लभाम् ।
 भवार्तिभञ्जनकरीं वन्दे त्वां लोकमातरम् ॥ १ ॥ भक्तप्रियां भक्ति-
 गम्यां भक्तानां कीर्तिवर्धिकाम् । भवप्रियां सतीं देवीं वन्दे त्वां भक्त-
 वत्सलाम् ॥ २ ॥ अन्नपूर्णां सदापूर्णां पार्वतीं पर्वपूजिताम् । महेश्वरीं
 वृषारूढां वन्दे त्वां परमेश्वरीम् ॥ ३ ॥ कालरात्रिं महारात्रिं मोहरात्रिं
 जनेश्वरीम् । शिवकान्तां शम्भुशक्तिं वन्दे त्वां जननीमुमाम् ॥ ४ ॥
 जगत्कर्त्रीं जगद्धात्रीं जगत्संहारकारिणीम् । मुनिभिः संस्तुतां भद्रां
 वन्दे त्वां मोक्षदायिनीम् ॥ ५ ॥ देवदुःखहरामंवां सदा देवसहाय-
 काम् । मुनिदेवैः सदासेव्यां वन्दे त्वां देवपूजिताम् ॥ ६ ॥ त्रिनेत्रां
 शंकरीं गौरीं भोगमोक्षप्रदां शिवाम् । महामायां जगद्धीजां वन्दे त्वां
 जगदीश्वरीम् ॥ ७ ॥ शरणागतजीवानां सर्वदुःखविनाशिनीम् । सुख-
 संपत्करीं नित्यां वन्दे त्वां प्रकृतिं पराम् ॥ ८ ॥ शरणागतजीवानां
 सर्वदुःखविनाशिनीम् । सुखसंपत्करां नित्यां वन्दे त्वां प्रकृतिं पराम्
 ॥ ९ ॥ देव्यष्टकमिदं पुण्यं योगानन्देन निर्मितम् । यः पठेद्धक्ति-
 भावेन लभते स परं सुखम् ॥ १० ॥ इति देव्यष्टकं संपूर्णम् ॥

२६१. देवीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमस्तेऽस्तु दुर्गे सदानन्दरूपे सुरैः स्तूयमाने
 मुनीनां सुपूज्ये । नमस्ते जगद्वन्द्यपादारविन्दे नमस्ते भवाम्भोधि-
 संतारदक्षे ॥ १ ॥ नमस्ते नमस्ते सदा दैवतेज्ये तथा दीनदुःखे
 दयाक्रान्तचित्ते । नमस्ते महादेवमान्ये भवानि सुदीनं स्वदासं
 जनं पाहि शश्वत् ॥ २ ॥ नमस्ते जगद्व्यापिके विश्वरूपे सदा योगि-
 गम्ये स्वभक्त्यैकलभ्ये । रमाशारदाशम्भुकान्तास्वरूपे नमस्ते महा-
 कालिके शुद्धरूपे ॥ ३ ॥ नमस्तेऽम्बिके भक्तसंसेव्यपादे नमस्तेऽधवि-

ध्वंसिके सर्वशक्ते । जगत्कानने क्रोधकामादिहिंस्रैः परीतोऽस्मि मातः
 सदा रक्ष रक्ष ॥ ४ ॥ नमस्ते जगद्बीजरूपे महेशि स्वभक्तपु रक्ते
 शरण्ये त्रिनेत्रे । त्वदन्या न चास्ते विपन्नाशकारी सुसंपत्प्रदां त्वां
 सदा संनतोऽस्मि ॥ ५ ॥ अहं देवि याचे पदाम्भोजसेवां भवत्यास्तथा
 भक्तिभावं भवेद्भ्ये । प्रसीदाम्ब दासे सदा शैलपुत्रि शिवां शङ्करीं
 पार्वतीं त्वां भजामि ॥ ६ ॥ त्वदन्यो न मान्यो न चान्यश्च गण्यस्त्व-
 मेकाऽसि मातर्जगज्जालहेतुः । जगन्नाशिका पालिका च त्वमेव गिरेर्वा-
 लिकां कालिकां संनतोऽहम् ॥ ७ ॥ श्रियं शारदां शम्भुशक्तिं महेशीं
 त्रिनेत्रीं च दुर्गां तथा कालरात्रिम् । तुषाराद्रिपुत्रीं जगद्दुःखहन्त्रीं स्मरन्
 दुःखनाशो भवेन्मानवानाम् ॥ ८ ॥ इदं स्तोत्रं महादेव्या योगानन्देन
 निर्मितम् । यः पठेत्प्रातस्तथाय स नरो वाञ्छितं लभेत् ॥ ९ ॥
 इति योगानन्दप्रणीतं देवीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२६२. कल्याणवृष्टिस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कल्याणवृष्टिभिरिवामृतपूरिताभिर्लक्ष्मीस्वयं-
 वरणमङ्गलदीपिकाभिः । सेवाभिरम्ब तव पादसरोजमूले नाकारि
 किं मनसि भाग्यवतां जनानाम् ॥ १ ॥ एतावदेव जननि स्पृहणीय-
 मास्ते त्वद्वन्दनेषु सलिलस्थगिते च नेत्रे । सांनिध्यमुद्यदरुणायुत-
 सोदरस्य त्वद्विग्रहस्य परया सुधयाम्लुतस्य ॥ २ ॥ ईशत्वनामकलुषाः
 कति वा न सन्ति ब्रह्मादयः प्रतिभवं प्रलयाभिभूताः । एकः
 स एव जननि स्थिरसिद्धिरास्ते यः पादयोस्तव सकृत्प्रणतिं
 करोति ॥ ३ ॥ लब्ध्वा सकृत्त्रिपुरसुन्दरि तावकीनं कारुण्यकन्द-
 लितकान्तिभरं कटाक्षम् । कन्दर्पकोटिसुभगास्त्वयि भक्तिभाजः
 संमोहयन्ति तरुणीर्भुवनत्रयेऽपि ॥ ४ ॥ ह्रींकारमेव तव नाम

गृणन्ति वेदा मातस्त्रिकोणनिलये त्रिपुरे त्रिनेत्रे । त्वत्संस्मृतौ यम-
 भटाभिभवं विहाय दीव्यन्ति नन्दनवने सह लोकपालैः ॥ ५ ॥
 हन्तुः पुरामधिगलं परिपीयमानः क्रूरः कथं न भविता गरलस्य
 वेगः । नाश्वासनाय यदि मातरिदं तवार्धं देवस्य शश्वदमृताप्लुत-
 शीतलस्य ॥ ६ ॥ सर्वज्ञतां सदसि वाक्पदुतां प्रसूते देवि त्वदङ्घ्रि-
 सरसीरुहयोः प्रणामः । किं च स्फुरन्मुकुटमुज्ज्वलमातपत्रं द्वे चामरे
 च महतीं वसुधां ददाति ॥ ७ ॥ कल्पद्रुमैरभिमतप्रतिपादनेषु
 कारुण्यवारिधिभिरग्न्य भवत्कटाक्षैः । आलोकय त्रिपुरसुन्दरि माम-
 नाथं त्वय्येव भक्तिभरितं त्वयि बद्धतृणम् ॥ ८ ॥ हन्तेतरेष्वपि
 मनांसि निधाय चान्ये भक्तिं वहन्ति किल पामरदैवतेषु । त्वामेव
 देवि मनसा समनुस्मरामि त्वामेव नौमि शरणं जननि त्वमेव ॥ ९ ॥
 लक्ष्येषु सत्स्वपि कटाक्षनिरीक्षणानामालोकय त्रिपुरसुन्दरि मां
 कदाचित् । नूनं मया तु सदृशः करुणैकपात्रं जातो जनिष्यति
 जनो न च जायते वा ॥ १० ॥ ह्रीं हामिति प्रतिदिनं जपतां
 तवाख्यां किं नाम दुर्लभमिह त्रिपुराधिवासे । मालाकिरीटमद-
 वारणमाननीया तान्सेवते वसुमती स्वयमेव लक्ष्मीः ॥ ११ ॥
 संपत्कराणि सकलेन्द्रियनन्दनानि साम्राज्यदाननिरतानि सरोरु-
 हाक्षि । त्वद्वन्दनानि दुरिताहरणोद्यतानि मामेव मातरनिशं
 कलयन्तु नान्यम् ॥ १२ ॥ कल्पोपसंहृतिषु कल्पितताण्डवस्य
 देवस्य खण्डपरशोः परभैरवस्य । पाशाङ्कुशैक्षवशरासनपुष्पबाणा
 सा साक्षिणी विजयते तव मूर्तिरेका ॥ १३ ॥ लग्नं सदा भवतु
 मातरिदं तवार्धं तेजः परं बहुलकुङ्कुमपङ्कशोणम् । भास्वत्किरीट-
 ममृतांशुकलावतंसं मध्ये त्रिकोणनिलयं परमामृतार्द्रम् ॥ १४ ॥

ह्रींकारमेव तव नाम तदेव रूपं त्वन्नाम दुर्लभमिह त्रिपुरे
 गृणन्ति । त्वत्तेजसा परिणतं वियदादिभूतं सौख्यं तनोति सरसी-
 रुहसंभवादेः ॥ १५ ॥ ह्रींकारत्रयसंपुटेन महता मन्त्रेण संदीपितं
 स्तोत्रं यः प्रतिवासरं तव पुरो मातर्जपेन्मन्त्रवित् । तस्य क्षोणिभुजो
 भवन्ति वशगा लक्ष्मीश्चिरस्थायिनी वाणी निर्मलसूक्तिभारभरिता
 जागर्ति दीर्घं वयः ॥ १६ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्यकृतः कल्याण-
 वृष्टिस्तवः संपूर्णः ॥

२६३. नामरत्ननवरत्नमालिका ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ हारनूपुरकिरीटकुण्डलविभूषितावयवशोभिनीं
 कारणेशवरमौलिकोटिपरिकल्प्यमानपदपीठिकाम् । कालकालफणि-
 पाशबाणधनुरंकुशामरुणमेखलां फालभूतिलकलोचनां मनसि भावयामि
 परदेवताम् ॥ १ ॥ गन्धसारघनसारचारुनवनागवल्लिरसवासिनीं
 सान्ध्यरागमधुराधराभरणसुन्दराननशुचिसिताम् । मन्थरायतविलो-
 चनाममलबालचन्द्रकृतशेखरीमिन्दिरारमणसोदरीं मनसि भावयामि
 परदेवताम् ॥ २ ॥ स्मेरचारुमुखमण्डलां विमलगण्डलम्बिमणिमण्डलां
 हारदामपरिशोभमानकुचभारभीरुतनुमध्यमाम् । वीरगर्वहरनूपुरां
 विविधकारणेशवरपीठिकां मारवैरिसहचारिणीं मनसि भावयामि पर-
 देवताम् ॥ ३ ॥ भूरिभारधरकुण्डलीन्द्रमणिबद्धभूवल्लयपीठिकां वारि-
 राशिमणिमेखलावलयवह्निमण्डलशरीरिणीम् । वारिसारवहकुण्डलां
 गगनशेखरीं च परमात्मिकां चारुचन्द्ररविलोचनां मनसि भावयामि
 परदेवताम् ॥ ४ ॥ कुण्डलत्रिविधकोष्ठमण्डलविहारषड्दलसमुलसत्पु-
 ण्डरीकमुखभेदिनीं च प्रचण्डभानुभासमुज्ज्वलाम् । मण्डलेन्दुपरिवा-
 हितामृततरङ्गिणीमरुणरूपिणीं मण्डलान्तमणिदीपिकां मनसि भावयामि

परदेवताम् ॥ ५ ॥ वारणाननमयूरवाहमुखदाहवारणपयोधरां चारणा-
दिसुरसुन्दरीचिकुरशेखरीकृतपदाम्बुजाम् । कारणाधिपतिचम्पकप्रकृति-
कारणप्रथममातृकां वारणान्तमुखपारणां मनसि भावयामि परदेवताम्
॥ ६ ॥ पद्मकान्तिपदपाणिपल्लवपयोधराननसरोरुहां पद्मरागमणिमेख-
लावलयनीविशोभितनितंविनीम् । पद्मसंभवसदाशिवान्तनयपञ्चरत्नपद-
पीटिकां पद्मिनीं प्रणवरूपिणीं मनसि भावयामि परदेवताम् ॥ ७ ॥
आगमप्रणवपीटिकाममलवर्णमङ्गलशरीरिणीमागमावयवशोभिनीमखि-
लवेदसारकृतशेखरीम् । मूलमन्त्रमुखमण्डलां मुदितनादविन्दुनवयौवनां
मातृकां त्रिपुरसुन्दरीं मनसि भावयामि परदेवताम् ॥ ८ ॥ कालिकां
तिमिरकुन्तलान्तघनभृङ्गमङ्गलविराजिनीं चूलिकाशिखरमालिकावलय-
मल्लिकासुरभिसौरभाम् । बालिकामधुरगण्डमण्डलमनोहराननसरोरुहां
कालिकामखिलनायिकां मनसि भावयामि परदेवताम् ॥ ९ ॥ नित्य-
मेव नियमेन जल्पतां भुक्तिमुक्तिफलदामभीष्टदाम् । शंकरेण रचितां
सदा जपेन्नामरत्ननवरत्नमालिकाम् ॥ १० ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरित्रा-
जकाचार्यस्य श्रीगोविन्दभगवत्पूज्यपादशिष्यस्य श्रीमच्छंकरभगवतः
कृतौ नामरत्ननवरत्नमालिका संपूर्णा ॥

२६४. मीनाक्षीपंचरत्नस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ उद्यद्भानुसहस्रकोटिसदृशां केयूरहारोज्ज्वलां
विम्बोष्ठीं स्मितदन्तपङ्क्तिरुचिरां पीताम्बरालंकृताम् । विष्णुब्रह्म-
सुरेन्द्रसेवितपदां तत्त्वस्वरूपां शिवां मीनाक्षीं प्रणतोऽस्मि संततमहं
कारुण्यवारांनिधिम् ॥ १ ॥ मुक्ताहारलसत्किरीटरुचिरां पूर्णेन्दु-
वक्त्रप्रभां शिञ्जन्नूपुरकिङ्किणीमणिधरां पद्मप्रभाभासुराम् । सर्वा-
भीष्टफलप्रदां गिरिसुतां वाणीरमासेवितां मीनाक्षीं प्रणतोऽस्मि संत-
तमहं कारुण्यवारांनिधिम् ॥ २ ॥ श्रीविद्यां शिववामभागनिलयां

हींकारमत्रोज्ज्वलां श्रीचक्राङ्कितविन्दुमध्यवसतिं श्रीमत्सभानायकीम् । श्रीमत्षण्मुखविघ्नराजजननीं श्रीमज्जगन्मोहिनीं मीनाक्षीं प्रणतोऽस्मि संततमहं कारुण्यवारांनिधिम् ॥ ३ ॥ श्रीमत्सुन्दरनायकीं भयहरां ज्ञानप्रदां निर्मलां श्यामाभां कमलासनार्चितपदां नारायणस्यानुजाम् । वीणावेणुमृदङ्गवाद्यरसिकां नानाविधाडम्बिकां मीनाक्षीं प्रणतोऽस्मि संततमहं कारुण्यवारांनिधिम् ॥ ४ ॥ नानायोगिमुनीन्द्रहृन्निवसतीं नानार्थसिद्धिप्रदां नानापुष्पविराजिताङ्घ्रियुगलां नारायणेनार्चिताम् । नादब्रह्ममयीं परात्परतरां नानार्थतत्त्वात्मिकां मीनाक्षीं प्रणतोऽस्मि संततमहं कारुण्यवारांनिधिम् ॥ ५ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यस्य श्रीगोविन्दभगवत्पूज्यपादशिष्यस्य श्रीमच्छंकरभगवतः कृतौ मीनाक्षीपंचरत्नं संपूर्णम् ॥

२६५. मीनाक्षीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीविद्ये शिववामभागनिलये श्रीराजराजार्चिते श्रीनाथादिगुरुस्वरूपविभवे चिन्तामणीपीठिके । श्रीवाणीगिरिजानुताङ्गिकमले श्रीशाम्भवे श्रीशिवे मध्याह्ने मलयध्वजाधिपसुते मां पाहि मीनाम्बिके ॥ १ ॥ चक्रस्थेऽचपले चराचरजगन्नाथे जगत्पूजिते धार्तालीवरदे नताभयकरे वक्षोजभारान्विते । विद्ये वेदकलापमौलिविदिते विद्युल्लताविग्रहे मातः पूर्णसुधारसार्द्रहृदये मां पाहि मीनाम्बिके ॥ २ ॥ कोटीराङ्गदरत्नकुण्डलधरे कोदण्डबाणाञ्जिते कोकाकारकुचद्वयोपरिलसत्प्रालम्बहाराञ्जिते । शिञ्जन्नूपुरपादसारसमणीश्रीपादुकालंकृते महारिघ्नभुजङ्गगारुडखगे मां पाहि मीनाम्बिके ॥ ३ ॥ ब्रह्मेशाच्युतगीयमानचरिते प्रेतासनान्तःस्थिते पाशोदङ्कुशचापबाणकलिते बालेन्दुचूडाञ्जिते । बाले बालकुरङ्गलोलनयने

बालार्ककोव्युज्ज्वले मुद्राराधितदैवते मुनिसुते मां पाहि मीनाम्बिके
 ॥ ४ ॥ गन्धर्वामरयक्षपन्नगनुते गङ्गाधरालिङ्गिते गायत्रीगरुडासने
 कमलजे सुश्यामले सुस्थिते । खातीते खलदारूपावकशिखे खद्योत-
 कोव्युज्ज्वले मन्वाराधितदैवते मुनिसुते मां पाहि मीनाम्बिके ॥ ५ ॥
 नादे नारदतुम्बुराद्यविनुते नादान्तनादात्मिके नित्ये नीललतात्मिके
 निरूपमे नीवारशूकोपमे । कान्ते कामकले कदम्बनिलये कामेश्वराङ्क-
 स्थिते मद्विद्ये मदभीष्टकल्पलतिके मां पाहि मीनाम्बिके ॥ ६ ॥
 वीणानादनिमीलितार्धनयने विस्त्रस्तचूलीभरे ताम्बूलारुणपल्लवाधरयुते
 ताटङ्कहारान्विते । श्यामे चन्द्रकलावतंसकलिते कस्तूरिकाफालिके पूर्णे
 पूर्णकलाभिरामवदने मां पाहि मीनाम्बिके ॥ ७ ॥ शब्दब्रह्ममयी
 चराचरमयी ज्योतिर्मयी वाङ्मयी नित्यानन्दमयी निरञ्जनमयी तत्त्वं-
 मयी चिन्मयी । तच्चातीतमयी परात्परमयी मायामयी श्रीमयी
 सर्वैश्वर्यमयी सदाशिवमयी मां पाहि मीनाम्बिके ॥ ८ ॥ इति श्रीम-
 त्परमहंसपरिव्राजकाचार्यस्य श्रीभगवत्पूज्यपादशिष्यस्य श्रीमच्छंकर-
 भगवतः कृतौ मीनाक्षीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२६६. देवीशतकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अनन्तमहिमव्याप्तविश्वं वेधा न वेद याम् ।
 या च मातेव भजते प्रणते मानवे दयाम् ॥ १ ॥ न तापनीत-
 क्लेशायाः सुरारिजनतापनी । न तापनी तनुर्यस्यास्तुल्या नादीन-
 तापनी ॥ २ ॥ वक्त्रपद्मा विधेर्भान्ति यया सर्गल्यो दया । या
 साक्षाद्या च जनितस्थितिसर्गल्योदया ॥ ३ ॥ याश्रिता पावनतया
 यातनाच्छिदनीचया । याचनीया धिया मायायामायासं स्तुता
 श्रिया ॥ ४ ॥ तमांसि ध्वंसमायान्ति यस्याः स्तुत्यादरेण वः ।
 तस्याः सिद्धौ धियां मातुः कल्पन्तां पादरेणवः ॥ ५ ॥ ऋषीणां

सादयामास या तमांसि त्रयीमयी । पायाद्वः सा दयामाधिच्छिदं
 जगति बिभ्रती ॥ ६ ॥ स्मरद्विषा या ययाचे यया चेयं विधेः
 क्रिया । यां चाच्युतोऽपि तुष्टाव तुष्टा वः साऽस्तु पार्वती ॥ ७ ॥
 या दमावनयागेन स्वाराधा नयसारया । हरिकैतवहास्याय सायामा
 विजिता यया ॥ ८ ॥ यायताजिविमाया सा यस्या हा बत कैरिह ।
 या रसायनधारा स्वा न गेयानवमा दया ॥ ९ ॥ सा बुद्धि-
 रुत्तमालोकः सतामर्या पुनातु वः । यद्भक्तेरुत्तमा लोकः प्राप्नोत्येष
 विशुद्धताम् ॥ १० ॥ अयुद्ध साधुत्राणाय सामरा या सहारिणा ।
 खड्गेन दीप्रा देवानां सामरायासहारिणा ॥ ११ ॥ चरणाघात-
 निहतकासरा च रणाजिरे । रराज या नयजयैरराजसजनानता ॥ १२ ॥
 सावताद्वोऽम्बिकाऽभ्यर्च्यनामा न न यशोभितः । तनोति प्रणतो
 यस्या ना माननयशोभितः ॥ १३ ॥ संयतं याचमानेन यस्याः प्रापि
 द्विषा वधः । संयतं या च मानेन युनक्ति प्रणतं जनम् ॥ १४ ॥
 या दमानवमानन्दपदमाननमानदा । दानमानक्षमानित्यधनमानव-
 मानिता ॥ १५ ॥ सा रक्षतादपारा ते रसकृद्गौरवाधिका । सारक्ष-
 तादपारातेरसकृद्गौरवाधिका ॥ १६ ॥ अनुत्तमोहराशयो भवन्ति
 यामनाश्रिताः । अनुत्तमो हराशयो यया चिरं च रक्षितः ॥ १७ ॥
 अनन्तरागतापायास्तारयित्री भवापदः । अनन्तरागतापायाः सा
 वो गौरी ह्रियात्क्रियाः ॥ १८ ॥ यामयासजिदासक्तशोकजालस्य
 पातिनी । या माता सर्वदा भक्तलोकजालस्य पालनी ॥ १९ ॥
 सामरागमनायासं त्यक्त्वा सार्धं सुरारिभिः । सामरा गमनायास-
 न्नुद्यता युधि यद्गणाः ॥ २० ॥ सामोदयाजया शातैः शस्त्रैः शत्रौ
 हते यया । सामोदया जयाशा तैर्गार्वाणैर्गर्वतो जहे ॥ २१ ॥
 ययायायाय्यया यूयं यो योऽयं येययैय याम् । ययुयायिययेयाय

ययेऽयायाय याययुक् ॥ २२ ॥ साऽन्याद्वौरी सदा युष्मान्सदायु-
 ष्मान्समृद्ध्यति । शरणं यां नरो गच्छन्न रोगच्छन्दमेति च ॥ २३ ॥
 कृतास्पदा यया संपदधानि सुरवैरिषु । हन्ति या वाङ्मयी दूराद-
 धानि सुरवैरिषुः ॥ २४ ॥ जितानया या नताजितारसाततसारता ।
 न सावना नावसानयातनारिरिना तथा ॥ २५ ॥ मनोभवारातिम-
 नोभिरामया जरामयापाकरणैकदक्षया । मदक्षयान्निर्मलतां ददानया
 सदा नयास्था क्रियतां तवार्यया ॥ २६ ॥ समाययाविन्द्रहिताय
 या रणे समायया या न जितारिसेनया । स मा ययाचे हरमाश्रितः
 स्फुटं समा यया मुग्धतया मनोज्ञताः ॥ २७ ॥ सा भावक्षालवर्या
 नुतविभवितनुर्या वलक्षावभासा जानानस्याशयप्रा नवनलिनवनप्रा-
 यशस्याननाजा । सातं वर्माननस्था रहसि रसिहरस्थाननर्मावतंसा
 पायादक्ता रणत्रा मतनमनतमत्राणरक्ता दयापा ॥ २८ ॥ उपासते
 कृष्टिकृतोदयां यां जना सदाराधनमीहमानाः । शंभोः प्रसिद्धा
 तनुतां वहन्ती गौरी हितं सा भवतां विधेयात् ॥ २९ ॥ यां सद्य
 एव त्रिदशैः पुमांसः समा नमस्यन्ति सदानभोगाः । अधानि यस्याः
 प्रणता विपक्षैः समानमस्यन्ति सदा नभोगाः ॥ ३० ॥ यस्याः
 प्रभावो द्युसदां विपक्षसेना वधानन्दयिताहरस्य । मनोम्बुजस्यावहतु
 श्रियै वः सेनावधानं दयिता हरस्य ॥ ३१ ॥ सुरा जिता भावित-
 देवराजद्विपक्षमा यात रणादभीतम् । स्वापं न वो धाम हितं न
 नाम सदैवसेना भवतोहितानाम् ॥ ३२ ॥ सुराजिता भावितदेव-
 राजद्विपक्षमाया तरणादभीतम् । स्वापन्नबोधामहितं ननाम सदैव
 सेना भवतो हितानाम् ॥ ३३ ॥ सुरानिति द्वेषिजनैरभिद्रुतानुदाहरद्या
 स्वयमाहवोद्यता । शिवोऽद्य तापप्रशमस्तया तव प्रशस्तया तत्त्वदृशा
 विधीयताम् ॥ ३४ ॥ वक्त्रं विभ्रत्युपहितचन्द्रायासं या संमोहप्रशमन-

सूर्याकारा । कारानीतामरमरिमाचिक्षेप क्षेपत्यक्ता रणभुवि सा वः
 पायात् ॥ ३५ ॥ हितेहितेऽस्तु ते स्तुते जिताजितामितामिता । जया-
 जया जनोऽजनो यथा यथाबलं बलम् ॥ ३६ ॥ सक्तिं वः सुकृतार्जने
 विदधती सत्रा यतां त्रायतां दुर्गा दुर्ग्रहदूषितोद्धतधियामायासदा या
 सदा । साधूत्साहविधानसक्तमनसां मुख्या ततां ख्याततां संस्मृत्यैव
 मत्सरभरस्फीतापदां तापदाम् ॥ ३७ ॥ या मूर्तिं किमपि
 स्मरारिवपुषा धत्ते समायोजितां यां दृष्ट्वैव विनाशमाप सहसा शुम्भः
 समायोऽजिताम् । या नन्नैः सुरसिद्धकिंनरनरैः खेदं विना शस्यते सा
 हेतुर्भवतां त्रिलोचनवधूरश्रीविनाशस्य ते ॥ ३८ ॥ सायासायास्त्रि-
 लोक्याः शरणमकरुणक्षुण्णदैत्यप्रवीरा स्वैरं स्वैरंशसगैर्गहनतममहामो-
 हहार्दं हरन्ती । शस्याशस्यादधाना सकलमभिहितं भक्तिभाजः स्मृतैव
 स्तादस्तादभ्रदोषा द्विषदुपशमनी सर्वतः पार्वती वः ॥ ३९ ॥ सुरसुर-
 चितचितनवनवभवभवनानादरादरायेये । लयलयचरणौ चरणौ न न
 मामि नतेन नमामि न ते ॥ ४० ॥ या विस्मयं स्मरभिदा चक्रेऽङ्कारो-
 पिता नवं नारीणाम् । विदधे यच्चापस्य न च केंकारोऽपि तानवं नारी-
 णाम् ॥ ४१ ॥ या हन्तां च प्रयाता विहायसा कंसमाह तारातिबलेन ।
 कृष्णस्तव परमाया विहाय साकं समाहतारातिबलेन ॥ ४२ ॥ तां
 नमत या च समरेष्वनेकशो भाति भद्रकाली नतया । ख्याति यया
 जनतोज्ज्वलविवेकशोभातिभद्राकालीनतया ॥ ४३ ॥ तां स्मरत या
 स्मृतैव हि मानवतामरसमानता राति बलात् । यत्प्रणतं श्रीः श्रयते
 मानवतामरसमानताराति बलात् ॥ ४४ ॥ अनवरागसमुद्भवदेहता-
 मुपगता ददृशे गिरिशेन या । अनवरागसमुद्भवदेह तामवनतोऽस्मि
 जगत्प्रियतां सतीम् ॥ ४५ ॥ मेने नूनमनेन माननमुमानाप्ता नु मेनो-
 न्मना नुन्नेनोनमते निमानममुना नो नाम नानानुमे । मौनेनामममा-

ननिम्नमननान्नानामिनानूनिमे मुन्मिन्नाननमा नमी मुनिमनोमानाननो-
 न्नामिनि ॥ ४६ ॥ तां वन्देऽहं नवं देहं ज्ञानरूपं विधाय या ।
 सुधीरस्यति धीरस्य महामोहमयीं त्वचम् ॥ ४७ ॥ यां नुत्वा यान्ति
 हृद्यार्थसज्जायां गिरि शस्यताम् । नौम्यहं भक्तिमास्थाय सज्जायां गिरि-
 शस्य ताम् ॥ ४८ ॥ यदान्तोऽयदान्तो न यात्ययं नयात्ययम् । शिवे
 हितां शिवेहितां स्मरामितां स्मरामि ताम् ॥ ४९ ॥ सर स्वतिप्रसादं मे
 स्थितिं चित्तसरस्वति । सरस्वति कुरु क्षेत्रकुरुक्षेत्रसरस्वति ॥ ५० ॥
 त्वद्भक्तिभावितधियो जगतामत्र ये त्रये । जन्मवत्तामहं मन्ये तेषामेवा-
 नृणां नृणाम् ॥ ५१ ॥ जगतः सातिरेका त्वं गतिरस्य स्थिराधिका ।
 तस्यत्रासतारारेः सास्यत्रासरसस्थिति ॥ ५२ ॥ त्वन्नामस्मरणादेव न
 लक्ष्मीश्चपलायते । सर्वतः पार्वति क्षिप्रमलक्ष्मीश्च पलायते ॥ ५३ ॥
 जयन्ति भक्ता वित्तेशसमरायस्तवाहवे । तुभ्यं नमस्त्रिलोक्यर्थसमरायस्त-
 वाहवे ॥ ५४ ॥ सत्त्वं सम्यक्त्वमुन्मील्य हृदि भासि विराजसे ।
 द्विषामरीणां त्वं सेनां वाहिनीमुदकम्पयः ॥ ५५ ॥ दूरागतरसा धन्यः
 सेवते यस्तव स्तुतीः । दूरागत रसाधन्यः कल्पन्ते तस्य सिद्धयः ॥ ५६ ॥
 मोहं हत्वास्पदं यासि सात्त्वमम्बरवासिना । या न संस्तूयसे केन
 सा त्वम्बरवासिना ॥ ५७ ॥ प्रकाश्य गृह्यपुंसस्यखेदच्छेदाम्बुदावली ।
 प्रज्ञात्मनेनबिमला स्थिता दृश्यसि विद्वताम् ॥ ५८ ॥ भवानि ये
 निरन्तरं तव प्रणामलालसाः । मनस्तमोमलालसा भवन्ति नैव तु
 क्वचित् ॥ ५९ ॥ विभावनाकुला त्वयि क्रमेण देवि भावना । वपुष्प-
 तिस्थिरेतरे नितान्तमेव पुष्यति ॥ ६० ॥ महोऽदयानामवधी रणेन
 महोदयानामवधीरणेन । महोदयानामवधीरणेन महोदयानामवधीरणेन
 ॥ ६१ ॥ न मज्जनेन तीर्थानां तदिह प्राप्यते शुभम् । नमज्जनेन
 तीर्थानां सेवया यत्तवाम्बिके ॥ ६२ ॥ प्रयाति मोहे निःसारभारती-

व्रतमेत्ययम् । त्वत्प्रसादाज्जनः सारभारतीव्रतमेत्ययम् ॥ ६३ ॥ शास्त्र-
 प्रभावहसिताः सतां या निर्मला गिरः । शास्त्रप्रभावहसितास्त्वमम्ब
 तिमिरच्छिदः ॥ ६४ ॥ शमीह ते समानतो विभावितोऽन्नसन्न यः ।
 विभावितोऽन्न सन्नयः शमीहते स मानतः ॥ ६५ ॥ मातरं त्वा पदं
 सद्य आश्रितास्ते कथं जनाः । मा तरन्त्वापदं सद्य आद्यं श्रेयः
 समाश्रिताः ॥ ६६ ॥ भाति त्वत्तनुसंश्लेषे सत्यम्ब वपुरनुत्तरम् ।
 संसाराब्धौ सदाहुस्ते सत्यं वपुरनुत्तरम् ॥ ६७ ॥ यच्छ मे नित्य-
 संसङ्गि यच्छमे तदिदं मनः । स्वच्छलो भक्तियोगस्ते स्वच्छलोकविवे-
 कसूः ॥ ६८ ॥ के वलन्ते वितन्वन्तकृतस्त्वत्प्रणता भवे । केवलं ते
 वितन्वन्त आसते विमलां धियम् ॥ ६९ ॥ देवि निर्दग्धकामस्य त्वं
 निरावरणात्मनः । हरस्यशुभसंतानं तेनासौ भ्राजते तथा ॥ ७० ॥
 द्विषद्विया सपदि विमुच्यते यतस्तवानतो जननि जयाशया न कः ।
 स्तवानतो जननिजया शयानकः करोति ते युधि मधुसूदनस्वसः
 ॥ ७१ ॥ ज्यायोनिष्ठारिवर्याधिनियमनवरस्वैरदत्तायताज्ञा स्वाराधत्वा-
 समध्यानियजनजननि ज्ञेयसुस्थावभासा । नानापुण्यागमस्था जननमन-
 मयज्ञाननन्द्या वरा धीर्याता नव्या विभुत्वं नुतसरलमनस्तामसस्याव-
 हास्ये ॥ ७२ ॥ स्येहाव स्या समस्तानमलरसतनु त्वं भुवि व्यानतार्या
 धीरा वन्द्या न न ज्ञा यमनमननजस्थामगण्या पुनाना । सा भावस्था
 सुयज्ञेऽनिनजनजयनि ध्यामसत्त्वाधरास्वा ज्ञातायत्तादरस्वैरवनमनिधिर्या
 वरिष्ठानियोज्या ॥ ७३ ॥ अलोलकमले चित्तललामकमलालये । पाहि
 चण्डि महामोहभङ्गभीमबलामले ॥ ७४ ॥ दुर्गापि मातः सुलभासि
 भक्त्या भवानुकूलापि भवं क्षिणोषि । अध्येयतां यासि सदैव देवि
 ध्येयासि चित्रं चरितं तवैतत् ॥ ७५ ॥ महदेसुरसंघम्मे तमवसमा-
 सङ्गमागमाहरणे । हरबहुसरणं तं चित्तमोहमवसर उमे सहसा ॥ ७६ ॥

वन्द्या प्रभातसंध्येव सूर्यालोकप्रवर्तिनी । निवर्तयसि देवि त्वं महा-
 मोहमयीं निशाम् ॥ ७७ ॥ संवादिसारसंपत्तीसदागोरिजयेसुदे ।
 तवसत्तीरदे सन्तु संसारे सुसमानदे ॥ ७८ ॥ आगममणिसुदमहिमसम-
 संमदकृदपरजस्सु । किर सविभयवदितो समय उज्जलभावसहस्सु
 ॥ ७९ ॥ त्वं वादे शास्त्रसङ्गिन्यां भासि वाचि दिवौकसः । तवा-
 देशास्त्रसंस्काराजयन्ति वरदे द्विषः ॥ ८० ॥ सदाव्याजवशिध्याताः
 सदात्तजपशिक्षिताः । ददास्यजस्रं शिवताः सूदात्ताजदिशि स्थिताः
 ॥ ८१ ॥ हरेः स्वसारं देवि त्वा जनताश्रित्य तत्त्वतः । वेत्ति
 स्वसारं देवित्वा योगेन क्षपिताशुभा ॥ ८२ ॥ सदाप्नोति यतिर्ज्यो-
 तिस्तादृशं त्वत्प्रभावतः । प्रभावतः समो येन कल्पते मोहनुत्तितः
 ॥ ८३ ॥ त्वं सद्गतिः सितापारा परा विद्योत्तितीर्षतः । संसारादत्र
 चाम्ब त्वं सत्त्वं पासि विपत्तितः ॥ ८४ ॥ परमा या तपोवृत्तिरा-
 र्यायास्तां स्मृतिं जनाः । परमायात पोषाय धियां शरणमादृताः
 ॥ ८५ ॥ प्रवादिसमतभेदेषु दृश्यस्ते महिमाश्रयः । भान्ति त्वन्निशिख-
 स्येव शिखानामसमाश्रयः ॥ ८६ ॥ यच्चेष्टया तव स्फीतमुदारवसु
 धामतः । यच्चेतो यात्यवहितमुदा रवसुधामतः ॥ ८७ ॥ सुरदेशस्य
 ते कीर्तिं मण्डनत्वं नयन्ति यैः । वरदे शस्यते धीरैर्भवती भुवि
 देवता ॥ ८८ ॥ तत्त्वं वीतावतततुत्तत्त्वं ततवती ततः । वित्तं वित्तव
 वित्तत्वं वीतावीतवतां बत ॥ ८९ ॥ तारे शरणमुद्यन्ती सुरेशरण-
 मुद्यमैः । त्वं दोषापासिनोदग्रस्वदोषा पासि नोदने ॥ ९० ॥
 सुमातरक्षयालोक रक्षयात्तमहामनाः । त्वं धैर्यजननी पासि जननी-
 तिगुणस्थितीः ॥ ९१ ॥ ख्यातिकल्पनदक्षैका त्वं सामर्ग्यजुषामितः ।
 सदा सरक्षसांमुख्यदानवानामसुस्थितिः ॥ ९२ ॥ सिता संसत्सु
 सत्तास्ते स्तुतेस्ते सततं सतः । ततास्तितैति तस्तेति सूतिः सूतिस्त-

तोऽसि सा ॥ ९३ ॥ त्वदाज्ञया जगत्सर्वं भासितं मलनुद्यतः ।
 सदा त्वया सगन्धर्वं समिद्धमरिनुत्तितः ॥ ९४ ॥ यतो याति
 ततोऽत्येति यया तां तायतां यतैः । मातामितोत्तमतमा तमोतीतां
 मतिं मम ॥ ९५ ॥ महत्तां त्वं श्रिता दासजनं मोहच्छिदा वस ।
 यच्छुद्धत्वं गतः पापमन्यस्य प्रसभं जय ॥ ९६ ॥ त्वं साज्ञासु
 जगन्मातः स्पष्टं ज्ञाता सुवर्त्मसु । प्रज्ञा मुख्या समुद्भासि
 ततृप्युत्वं प्रदर्शय ॥ ९७ ॥ आज्ञासु जगन्मातः स्पष्टं ज्ञाता
 सुवर्त्मसु प्रज्ञा । भासि त्वं सा मुख्या समुत्पृथुत्वं प्रदर्शय तत्
 ॥ ९८ ॥ हज्यो रुषः क्षमा एता सदक्षोभास्तमुन्नतः । सतेहितः
 सेवते ताः सततं यः स ते हितः ॥ ९९ ॥ करोषि तास्त्वमुत्खात-
 मोहस्थाने स्थिरा मतीः । पदं यतिः सुतपसा लभतेऽतः सशुक्लिम
 ॥ १०० ॥ देव्या स्वप्नोद्गमादिष्टदेवीशतकसंज्ञया । देशितानुप-
 मामाधादतो नोणसुतो नुतिम् ॥ १०१ ॥ हार्दध्वान्तनियन्तृ-
 भास्वरवपुः स्वर्वासिनां सर्वतो दुर्वारारिपरिक्षयं विदधती ध्यातैव
 निर्वाणसूः । देहार्धे निहिता भवेन भुवनत्राणैकतानात्मना देवि त्वं
 त्वमिवापरा जगति का सत्केसरीन्द्रस्थितिः ॥ १०२ ॥ क्लेशोन्मा-
 थकरी सतां भवहरानन्दैकहेतो गुरुर्माता त्वं जगतां भवन्ति
 विभवाः सर्वे तवानुग्रहात् । दुर्गे न क्वचिदेव सीदति जनस्त्वन्न-
 क्तिपूताशयः स्तुत्या भर्तुरभिन्नयेति विबुधैस्त्वं स्तूयसे श्रीरिव
 ॥ १०३ ॥ येनानन्दकथायां त्रिदशानन्दे च लालिता वाणी । तेन
 सुदुष्करमेतत्स्तोत्रं देव्याः कृतं भक्त्या ॥ १०४ ॥ इति श्रीमदा-
 नन्दवर्धनाचार्यविरचितं देवीशतकं संपूर्णम् ॥

२६७. त्रिपुरसुन्दरीप्रातःस्मरणस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कस्तूरिकाकृतमनोज्ञललामभास्वर्धेन्दुमुग्ध-
निटिलाञ्चलनीलकेशीम् । प्रालम्बमाननवमौक्तिकहारभूषां प्रातः
स्मरामि ललितां कमलायताक्षीम् ॥ १ ॥ एणाङ्कचूडसमुपार्जित-
पुण्यराशिमुत्तमहेमतनुकान्तिझरीपरीताम् । एकाग्रचित्तमुनिमानस-
राजहंसीं प्रातः स्मरामि ललितापरमेश्वरीं ताम् ॥ २ ॥ ईषद्विका-
सिनयनान्तनिरीक्षणेन साम्राज्यदानचतुरां चतुराननेड्याम् ।
ईशाङ्कवासरसिकां रससिद्धिदात्रीं प्रातः स्मरामि मनसा ललिता-
धिनाथाम् ॥ ३ ॥ लक्ष्मीशपद्मभवनादिपदैश्चतुर्भिः संशोभिते
च फलकेन सदाशिवेन । मञ्चे वितानसहिते ससुखं निषण्णां प्रातः
स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम् ॥ ४ ॥ ह्रींकारमन्त्रजपतर्पण-
होमतुष्टां ह्रींकारमन्त्रजलजातसुराजहंसीम् । ह्रींकारहेमनवपञ्जर-
सारिकां तां प्रातः स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम् ॥ ५ ॥
हल्लीसलास्यमृदुगीतिरसं पिबन्तीमाकूणिताक्षमनवद्यगुणांबुराशिम् ।
सुसोत्थितां श्रुतिमनोहरकीरवाग्भिः प्रातः स्मरामि मनसा ललिता-
धिनाथाम् ॥ ६ ॥ सच्चिन्मयीं सकललोकहितैषिणीं च संपत्करी-
हयमुखीमुखदेवतेड्याम् । सर्वानवद्यसुकुमारशरीररम्यां प्रातः स्मरामि
मनसा ललिताधिनाथाम् ॥ ७ ॥ कन्याभिरर्धशशिमुग्धकिरीटभास्व-
चूडाभिरङ्कगतहृद्यविपञ्चिकाभिः । संस्तूयमानचरितां सरसीरुहाक्षीं
प्रातः स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम् ॥ ८ ॥ हत्वाऽसुरेन्द्रमति-
मात्रबलावल्लभभण्डासुरं समरचण्डमघोरसैन्यम् । संरक्षितार्तजनतां
तपनेन्दुनेत्रां प्रातः स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम् ॥ ९ ॥ लज्जाव-
नम्ररमणीयमुखेन्दुबिम्बां लाक्षारुणाङ्घ्रिसरसीरुहशोभमानाम् । रोलम्ब-

जालसमनीलसुकुन्तलाढ्यां प्रातः स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम् ॥
 ॥ १० ॥ हींकारिणीं हिममहीधरपुण्यराशिं हीङ्कारमन्त्रमहनीयमनोज्ञ-
 रूपाम् । हीङ्कारगर्भमनुसाधकसिद्धिदात्रीं प्रातः स्मरामि मनसा
 ललिताधिनाथाम् ॥ ११ ॥ सञ्ज्ञातजन्ममरणादिभयेन देवीं संकुल-
 पद्मनिलयां शरदिन्दुशुभ्राम् । अर्धेन्दुचूडवनितामणिमादिवन्द्यां प्रातः
 स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम् ॥ १२ ॥ कल्याणशैलशिखरेषु
 विहारशीलां कामेश्वराङ्गनिलयां कमनीयरूपाम् । काद्यर्णमन्त्रमहनीय-
 महानुभावां प्रातः स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम् ॥ १३ ॥ लम्बो-
 दरस्य जननीं तनुरोमराजीं बिम्बाधरां च शरदिन्दुमुखीं मृडानीम् ।
 लावण्यपूर्णजलधिं जलजातहस्तां प्रातः स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम्
 ॥ १४ ॥ हीङ्कारपूर्णनिगमैः प्रतिपाद्यमानां हीङ्कारपद्मनिलयां हतदान-
 वेन्द्राम् । हीङ्कारगर्भमनुराजनिषेव्यमाणां प्रातः स्मरामि मनसा ललि-
 ताधिनाथाम् ॥ १५ ॥ श्रीचक्रराजनिलयां श्रितकामधेनुं श्रीकामराज-
 जननीं शिवभागधेयाम् । श्रीमद्ब्रह्मस्य कुलमङ्गलदेवतां तां प्रातः
 स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम् ॥ १६ ॥ इति त्रिपुरसुन्दरीप्रातः-
 स्मरणस्तोत्रं समाप्तम् ॥

२६८. त्रिपुरसुन्दरीसान्निध्यस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कल्पभानुसमानभास्वरधाम लोचनगोचरं किं
 किमित्यतिविस्मिते मयि पश्यतीह समागताम् । कालकुन्तलभार-
 निर्जितनीलमेघकुलां पुरश्चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ १ ॥
 एकदन्तषडाननादिभिरावृतां जगदीश्वरीमेनसां परिपन्थिनीमहमेक-
 भक्तिमदर्चिताम् । एकहीनशतेषु जन्मसु संचितात्सुकृतादिमां चक्र-
 राजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ २ ॥ ईदृशीति च वेदकुन्तल-

वाग्भिरप्यनिरूपितामीशपङ्कजनाभसृष्टिकृदादिवन्द्यपदाम्बुजाम् । ईक्ष-
णान्तनिरीक्षणेन मदिष्टदां पुरतोऽधुना चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरी-
मवलोकये ॥ ३ ॥ लक्षणोज्ज्वलहारशोभिपयोधरद्वयकैतवालीलयैव
दयारसस्रवदुज्ज्वलत्कलशान्विताम् । लाक्षयाङ्कितपादपातिमिलिन्द-
सन्ततिमग्रतश्चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ ४ ॥ ह्रीमिति
प्रतिवासरं जपसुस्थिरोऽहमुदारया योगिमार्गनिरुढ्यैक्यसुभावनां
गतया धिया । वत्स हर्षमवाप्तवत्यहमित्युदारगिरं पुरश्चक्रराजनिवा-
सिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ ५ ॥ हंसवृन्दमलक्तकारुणपादपङ्कजनू-
पुरकाणमोहितमादरादनुधावितं मृदु शृण्वतीम् । हंसमन्नमहार्थतत्त्व-
मयीं पुरो मम भाग्यतश्चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ ६ ॥
सङ्गतं जलमभ्रवृन्दसमुद्भवं धरणीधराद्वारया वहदञ्जसा भ्रममाण्य
सैकतनिर्गतम् । एवमादिमहेन्द्रजालसुकोविदां पुरतोऽधुना चक्रराज-
निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ ७ ॥ कम्बुसुन्दरकन्धरां कच-
वृन्दनिर्जितवारिदां कण्ठदेशलसत्सुमङ्गलहेमसूत्रविराजिताम् ।
कादिमन्नमुपासतां सकलेष्टदां मम संनिधौ चक्रराजनिवासिनीं
त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ ८ ॥ हस्तपद्मलसत्रिखण्डसुमुद्रिकामह-
मद्रिजां हस्तिकृत्तिपरीतकार्मुकवल्लीसमचिलिकाम् । हर्यजस्तुतवैभवां
भवकामिनीं मम भाग्यतश्चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये
॥ ९ ॥ लक्षणोल्लसदङ्गकान्तिझरीनिराकृतविद्युतं लास्यलोलसुवर्ण-
कुण्डलमण्डितां जगदम्बिकाम् । लीलयाखिलसृष्टिपालनकर्षणादिवित-
न्वतीं चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ १० ॥ ह्रीमिति
त्रिपुरामनुस्थिरचेतसा बहुधार्चितां हादिमन्नमहाम्बुजातविराजमानसु-
हंसिकाम् । हेमकुम्भघनस्तनाञ्चललोलमौक्तिकभूषणां चक्रराजनिवा-

सिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ ११ ॥ सर्वलोकनमस्कृतां जितशर्वरी-
 रमणाननां शर्वदेवनमनःप्रियां नवयौवनोन्मदगर्विताम् । सर्वमङ्गलवि-
 ग्रहां मम पूर्वजन्मतपोबलाच्चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये
 ॥ १२ ॥ कन्दमूलफलाशिभिर्वहुयोगिभिश्च गवेपितां कुन्दकुञ्जल-
 दन्तपङ्क्तिविराजितामपराजिताम् । कन्दमागमवीरुधां सुरसुन्दरीभिरि-
 हागतां चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ १३ ॥ लत्रयाङ्कित-
 मन्त्रराट्समलंकृतां जगदम्बिकां लोलनीलसुकुन्तलावलिनिर्जितालिक-
 दम्बिकाम् । लोभमोहविदारिणीं करुणामयीमरुणां शिवां चक्रराजनि-
 वासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ १४ ॥ ह्रींपदाख्यमहामनोरधिदेवतां
 भुवनेश्वरीं हृत्सरोजनिवासिनीं हरवल्लभां बहुरूपिणीम् । हारकुण्डल-
 नूपुरादिभिरन्वितां पुरतोऽधुना चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये
 ॥ १५ ॥ श्रीं सुपञ्चदशाक्षरीमपि षोडशाक्षररूपिणीं श्रीसुधार्णव-
 मध्यशोभिसरोजकाननचारिणीम् । श्रीगुहस्तुतवैभवां परदेवतां मम
 सन्निधौ चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ १६ ॥ इति
 श्रीमत्रिपुरसुन्दरीसन्निध्यस्तवः संपूर्णः ॥

२६९. त्रिपुरसुन्दरीषोडशोपचारपूजास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कल्पलतादिसुरदुमवाटीकल्पितरत्नगृहाधि-
 निवासाम् । कल्पशतार्जितपुण्यविशेषाच्चेतसि भावनयाहमुपासे ॥ १ ॥
 एणधराश्मकृतोन्नतधिष्ण्यं हेमविनिर्मितपादमनोज्ञम् । शोणशिला-
 फलकं च विशालं देवि सुखासनमद्य ददामि ॥ २ ॥ ईशमनोहररूप-
 विलासे शीतलचन्दनकुङ्कुममिश्रम् । हृद्यसुवर्णघटे परिपूर्णं पाद्यमिदं
 त्रिपुरेशि गृहाण ॥ ३ ॥ लब्धभवत्करुणोऽहमिदानीं रत्नसुमाक्षतयुक्त-
 मनर्घम् । रुक्मविनिर्मितपात्रविशेषेण्वर्धयमिदं त्रिपुरेशि ददामि ॥ ४ ॥

हीमिति मन्त्रजपेन सुगम्ये हेमलतोज्ज्वलदिव्यशरीरे । योगिमनः-
समशीतजलेन ह्याचमनं त्रिपुरेऽद्य विधेहि ॥ ५ ॥ हस्तलसत्कट-
कादिसुभूषा आदरतोऽम्ब वरोप्यनिधाय । चन्दनवासितमन्त्रिततोयैः
स्नानमयि त्रिपुरेशि विधेहि ॥ ६ ॥ सञ्चितमम्ब मया ह्यतिमूल्यं
कुङ्कुमशोणमतीव मृदु त्वम् । शङ्करतुङ्गतराङ्गनिवासे वस्त्रयुगं त्रिपुरे
परिधेहि ॥ ७ ॥ कन्दलदंशुकिरीटमनर्घं कङ्कणकुण्डलनूपुरहारम् ।
अङ्गदमङ्गुलिभूषणमम्ब स्वीकुरु देवि पुराधिनिवासे ॥ ८ ॥ हस्तलस-
च्चतुरायुधजाले शस्ततरं मृगनाभिसमेतम् । सद्बनसारसुकुङ्कुममिश्रं
चन्दनपङ्कमिदं च गृहाण ॥ ९ ॥ लब्धविकासकदम्बकजातीचम्पकपङ्क-
जकेतकयुक्तैः । पुष्पचयैर्मनसावचितैस्त्वामम्ब पुरेशि भवानि भजामि
॥ १० ॥ ह्रींपदशोभिमहामनुरूपे धूरसिमन्त्रवरेण मनोज्ञम् । अष्टसु-
गन्धरजःकृतमाद्ये धूपमिदं त्रिपुरेशि ददामि ॥ ११ ॥ सन्तमसापह-
मुज्ज्वलपात्रे गन्धघृतैः परिवर्धितदेहम् । चम्पककुङ्कुलवृन्दसमानं
दीपगणं त्रिपुरेऽद्य गृहाण ॥ १२ ॥ कल्पितमद्य धियाऽमृतकल्पं दुग्ध-
सितायुतमन्नविशेषम् । माषविनिर्मितपूपसहस्रं स्वीकुरु देवि निवेदन-
माद्ये ॥ १३ ॥ लङ्घितकेतकवर्णविशेषैः शोधितकोमलनागदलैश्च ।
मौक्तिकचूर्णयुतैः क्रमुकाद्यैः पूर्णतराम्ब पुरस्तव पात्री ॥ १४ ॥
ह्रींत्रयपूरितमन्त्रविशेषं पञ्चदशीमपि षोडशरूपम् । संचितपापहरं च
जपित्वा मन्त्रसुमाञ्जलिमम्ब ददामि ॥ १५ ॥ श्रीपदपूर्णमहामनुरूपे
श्रीशिवकाममहेश्वरजाये । श्रीगुहवन्दितपादपयोजे श्रीललितापरमेशि
नमस्ते ॥ १६ ॥ इति श्रीमन्निपुरसुन्दरीषोडशोपचारपूजास्तोत्रं
संपूर्णम् ॥

२७०. त्रिपुरसुन्दरीविजयस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कल्पान्तोदितचण्डभानुविलसद्देहप्रभामण्डिता
 कालाम्भोदसमानकुन्तलभरा कारुण्यवारांनिधिः । काद्यर्णाङ्कितमन्त्र-
 राजविलसत्कूटत्रयोपासिता श्रीचक्राधिनिवासिनी विजयते श्रीराज-
 राजेश्वरी ॥ १ ॥ एतत्प्राभवशालिनीति निगमैरद्याप्यनालोकिता
 हेमाम्भोजमुखी चलत्कुवलयप्रस्पर्धमानेक्षणा । एणाङ्कांशसमानफाल-
 फलकप्रोह्लासिकस्तूरिका श्रीचक्राधिनिवासिनी विजयते श्रीराजराजे-
 श्वरी ॥ २ ॥ ईषत्फुल्लकदम्बकुड्मलमहालावण्यगर्वापहस्तिग्धस्वच्छ-
 सुदन्तकान्तिविलसन्मन्दस्मितालंकृता । ईशित्वाद्यखिलेष्टसिद्धिफलदा
 भक्त्या नतानां सदा श्रीचक्राधिनिवासिनी विजयते श्रीराजराजे-
 श्वरी ॥ ३ ॥ लक्ष्यालक्ष्यवलग्नदेशविलसद्रोमावलीवल्लरीवृत्तस्तिग्ध-
 फलद्वयभ्रमकरोत्तुङ्गस्तनी सुन्दरी । रक्ताशोकसुमप्रपाटलदुकूलाच्छा-
 दिताङ्गी मुदा श्रीचक्राधिनिवासिनी विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ ४ ॥
 हीङ्गारी सुरवाहिनीजलगभीरावर्तनाभिर्धनश्रोणीमण्डलभारमन्दगमना
 काञ्चीकलापोज्ज्वला । शुण्डादण्डसुवर्णकदलीकाण्डोपमोरुद्वयी श्रीच-
 क्रोधिनिवासिनी विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ ५ ॥ हस्तप्रोज्ज्वलदिक्षुकार्मु-
 कलसत्पुष्पेषुपाशाङ्कुशा हाद्यर्णाङ्कितमन्त्रराजनिलया हारादिभिर्भूषिता ।
 हस्तप्रान्तरणत्सुवर्णवलया हर्यक्षसंपूजिता श्रीचक्राधिनिवासिनी विज-
 यते श्रीराजराजेश्वरी ॥ ६ ॥ संरक्ताम्बुजपादयुग्मविलसन्मञ्जुकणनूपुरा
 संसारार्णवकारणैकतरणिर्लावण्यवारांनिधिः । लीलालोलतमं शुक्रं मधु-
 रया संललयन्ती गिरा श्रीचक्राधिनिवासिनी विजयते श्रीराजराजेश्वरी
 ॥ ७ ॥ कल्याणी करुणारसार्द्रहृदया कल्याणसंदायिनी काद्यर्णाङ्कित-
 मन्त्रलक्षिततनुस्तन्वी तमोनाशिनी । कामेशाङ्कविलासिनी कलगिरामा-
 वासभूमिः शिवा श्रीचक्राधिनिवासिनी विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ ८ ॥

हन्तुं दानवपुङ्गवं रणभुवि प्रोच्चण्डभण्डाभिधं हर्यक्षाद्यमरार्थिता भग-
वती दिव्यां तनूमाश्रिता । श्रीमाता ललितेत्यचिन्त्यविभवैर्नाम्नां
सहस्रैः स्तुता श्रीचक्राधिनिवासिनी विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ ९ ॥
लक्ष्मीवागजादिभिर्बहुविधै रूपैः स्तुतापि स्वयं नीरूपा गुणवर्जिता
त्रिजगतां माता च चिद्रूपिणी । भक्तानुग्रहकारणेन ललितं रूपं समा-
सादिता श्रीचक्राधिनिवासिनी विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ १० ॥ ह्रीङ्कारै-
कपरायणार्तजनतासंरक्षणे दीक्षिता हार्दं संतमसं व्यपोहितुमलंभृष्णुर्हर-
प्रेयसी । हत्यादिप्रकटाघसंघदलने दक्षा च दाक्षायणी श्रीचक्राधिनिवा-
सिनी विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ ११ ॥ सर्वानन्दमयी समस्तजगता-
मानन्दसंदायिनी सर्वोत्तुङ्गसुवर्णशैलनिलया सा सारसाक्षी सती ।
सर्वैर्योगिचरैः सदैव विचिता साम्राज्यदानक्षमा श्रीचक्राधिनिवासिनी
विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ १२ ॥ कन्यारूपधरा गलाजविलसन्मुक्ता-
लतालङ्कृता कादिक्षान्तमनुप्रविष्टहृदया कल्याणशीलान्विता । कल्पा-
न्तोद्भूताण्डवप्रमुदिता श्रीकामजित्साक्षिणी श्रीचक्राधिनिवासिनी
विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ १३ ॥ लक्ष्या भक्तिरसार्द्रहृत्सरसिजे सद्भिः
सदाराधिता सान्द्रानन्दमयी सुधाकरकलाखण्डोज्ज्वलन्मौलिका ।
शर्वाणी शरणागतार्तिशमनी सच्चिन्मयी सर्वदा श्रीचक्राधिनिवासिनी
विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ १४ ॥ ह्रीङ्कारत्रयसंपुटोत्तिमहता मन्त्रेण
संपूजिता होत्री चन्द्रसमीरणान्निजलभूभास्वन्नभोरूपिणी । हंसः
सोऽहमिति प्रकृष्टधिषणैराराधिता योगिभिः श्रीचक्राधिनिवासिनी
विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ १५ ॥ श्रीङ्काराम्बुजहंसिका श्रितजनक्षेम-
ङ्करी शङ्करी शृङ्गारैकरसाकरस्य मदनस्योज्जीविका वह्नुरी । श्रीकामे-
शरहःसखी च ललिता श्रीमद्गुहाराधिता श्रीचक्राधिनिवासिनी विजयते
श्रीराजराजेश्वरी ॥ १६ ॥ इति श्रीमत्रिपुरसुन्दरीविजयस्तवः संपूर्णः ॥

२७१. त्रिपुरसुन्दरीपुष्पाञ्जलिस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कल्याणदात्रि कमनीयतनूलते त्वां कं चापि
 कालमनुचिन्त्य हृदयमध्ये । कामं प्रहर्षभरितेन मया तवाद्य पुष्पा-
 ञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ १ ॥ एतन्मदीयसुकृतं परमं पुराणं
 यत्त्वामहं प्रतिदिनं मनसा भजामि । साक्षात्कृतेन तव रूपमनेन
 चाद्य पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ २ ॥ ईशादिदेवमहनीय-
 महानुभावे दीनं त्विमं भवभयेन परिस्फुरन्तम् । दीनार्तिहन्त्रि दयया
 परिपालयाशु पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ ३ ॥ लज्जां
 विहाय बहुधा बहवोऽपि देवाः संपूजिता जडधिया नतु कोऽपि
 दृष्टः । लब्धं तवैव रमणीयवपुर्दशा मे पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब
 कीर्णः ॥ ४ ॥ हीङ्गारमन्त्रनिलये बहुशो भवाब्धौ मग्नः परंतु न
 कदापि गतोऽस्मि पारम् । तत्तारणे निपुणयोस्त्रिपुरे मयाद्य पुष्पाञ्ज-
 लिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ ५ ॥ हस्तेषु पाशमहनीयसितेक्षुचापे
 पुष्पास्त्रमङ्कुशवरं ललितं दधाने । हेमाद्रितुङ्गतरश्चङ्गनिवासशीले-
 पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ ६ ॥ सर्वेषु देवि समयेषु
 गतिस्त्वमेव नान्यं कदापि मनसा समनुस्मरामि । सर्वत्र रूपमतुलं
 तव पश्यताद्य पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ ७ ॥ कस्ते
 पुरेशि विधिवन्तु समर्हणायां शक्तः समस्तपरिबर्हयुतोऽपि धीमान् ।
 हृत्पङ्कजेन भवतीं भजता मयाद्य पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः
 ॥ ८ ॥ हन्तातिरुक्षभवपावकशोषितेन कुत्राप्यलब्धशरणेन सरोज-
 वक्त्रे । अन्ते मयात्रभवतीं शरणं गतेन पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरय-
 मम्ब कीर्णः ॥ ९ ॥ लक्ष्यासि देवि बहुजन्मतपोबलेन लक्ष्मीश-
 धातृपरिपूज्यपदाम्बुजाते । आलक्ष्य रूपमरुणं तव विस्मितेन
 पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ १० ॥ हीङ्गारमेव शरणं

जगतां वदन्ति हीङ्कारमेव परमं भुवने रहस्यम् । हीङ्कारमेव सततं
स्मरता मयाद्य पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ ११ ॥ सर्वस्य
देवि भुवनस्य निदानभूता त्वय्येव सर्वमनघे विलयं गतं स्यात् ।
संचिन्त्य चैतदधुना त्रिपुरे मया ते पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः
॥ १२ ॥ कश्चिद्यदा भवनिहन्त्रि विचिन्तयेत्त्वां दीनं तदैव हि
कटाक्षयसे दशा त्वम् । एवं विचिन्त्य भवतीं स्मरता मयाद्य
पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ १३ ॥ लब्ध्वा त्वदीयचरणा-
म्बुजमम्ब जन्तुर्नावर्तते पुनरपि प्रभवाय लोके । वेदोक्तिमेवमस-
कृत्स्मरता मयाद्य पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ १४ ॥
हीङ्कारमेव जपता प्रतिवासरं च हीङ्कारमेव भजता सकलेष्टसिद्धयै ।
हीङ्कारमेव परमं शरणं गतेन पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः
॥ १५ ॥ श्रीङ्कारमन्त्रकनकाञ्जनिवासशीले श्रीरूपधारिणि शिवे
श्रितकल्पवलि । श्रीमद्गुहस्तुतमहाविभवे पुरेशि पुष्पाञ्जलिश्चरणयोर-
यमम्ब कीर्णः ॥ १६ ॥ इति श्रीमत्रिपुरसुन्दरीपुष्पाञ्जलिस्तवः संपूर्णः ॥

२७२. त्रिपुरसुन्दरीचक्रराजस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कर्तुं देवि जगद्विलासविधिना सृष्टेन ते
मायया सर्वानन्दमयेन मध्यविलसच्छ्रीबिन्दुनालंकृतम् । श्रीमत्सद्गुरु-
पूज्यपादकरूपासंवेद्यतत्त्वात्मकं श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-
सिद्धिप्रदम् ॥ १ ॥ एकस्मिन्नणिमादिभिर्विलसितं भूमीगृहे सिद्धि-
भिर्ब्राह्म्याद्याभिरुपाश्रितं च दशभिर्मुद्राभिरुद्भासितम् । चक्रेऽया
प्रकटेऽयया त्रिपुरया त्रैलोक्यसंमोहनं श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं
सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ २ ॥ ईड्याभिर्नवविद्रुमच्छविसमाभिरुपाभिरङ्गी-
कृतं कामाकर्षणिकादिभिः स्वरदले गुप्ताभिधाभिः सदा । सर्वाशापरि-

पूरके परिलसद्देव्या पुरेश्या युतं श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-
 सिद्धिप्रदम् ॥ ३ ॥ लब्धप्रोज्ज्वलयौवनाभिरभितोऽनङ्गप्रसूनादिभिः
 सेव्यं गुप्ततराभिरष्टकमले संक्षोभकाख्ये सदा । चक्रेश्या पुरसुन्दरीति
 जगति प्रख्यातया संगतं श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धि-
 प्रदम् ॥ ४ ॥ हीङ्गाराङ्कितमन्नराजनिलयं श्रीसर्वसंक्षोभिणीमुख्याभि-
 श्रलकुन्तलाभिरुषितं मन्वस्रचक्रे शुभे । यत्र श्रीपुरवासिनी
 विजयते श्रीसर्वसौभाग्यदे श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्ट-
 सिद्धिप्रदम् ॥ ५ ॥ हस्ते पाशगदादिशस्त्रनिचयं दीपं वहन्तीभि-
 रुत्तीर्णाख्याभिरुपास्ययाऽतिशुभदे सर्वार्थसिद्धिप्रदे । चक्रे बाह्य-
 दशारके विलसितं देव्या पुरश्रयाख्यया श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं
 सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ ६ ॥ सर्वज्ञादिभिरिन्दुकान्तिधवलाकाराभि-
 रारक्षिते चक्रेऽन्तर्दशकोणकेऽतिविमले नाम्ना च रक्षाकरे । यत्र
 श्रीपुरमालिनी विजयते निलयं निगर्भास्तुता श्रीचक्रं शरणं व्रजामि
 सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ ७ ॥ कर्तुं मूकमनर्गलस्रवदतिद्राक्षादि-
 वाग्वैभवं दक्षाभिर्वशिनीमुखाभिरभितो वाग्देवताभिर्युतम् । अष्टारे
 पुरसिद्धया विलसितं रोगप्रणाशे शुभे श्रीचक्रं शरणं व्रजामि
 सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ ८ ॥ हन्तुं दानवसङ्घमाहवभुवि स्वेच्छा-
 समाकल्पितैः शस्त्रैरस्त्रचयैश्च चापनिवहैरत्युग्रतेजोभरैः । आर्तत्राण-
 परायणैररिकुलप्रध्वंसिभिः संवृतं श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं
 सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ ९ ॥ लक्ष्मीवागगजात्मभिः करलसत्पाशा-
 सिघण्टादिभिः कामेश्यादिभिरावृतं शुभकरं श्रीसर्वसिद्धिप्रदम् ।
 चक्रेऽशी च पुराम्बिका विजयते यत्र त्रिकोणे मुदा श्रीचक्रं शरणं
 व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ १० ॥ हीङ्गारं परमं जपद्भिर-
 निशं मित्रेशनाथादिभिर्दिव्यौघैर्मनुजौघसिद्धनिवहैः सारूप्यमुक्तिं

गतैः । नानामन्त्ररहस्यविद्भिरखिलैरन्वासितं योगिभिः श्रीचक्रं
शरणं ब्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ ११ ॥ सर्वोत्कृष्टवपुर्धरा-
भिरभितो देवीसमाभिर्जगत्संरक्षार्थमुपागताभिरसकृन्नित्याभिधा-
भिर्मुदा । कामेश्यादिभिराज्ञयैव ललितादेव्याः समुद्रासितं श्रीचक्रं
शरणं ब्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ १२ ॥ कर्तुं श्रीललिता-
ङ्गरक्षणविधिं लावण्यपूर्णां तनूमास्थायास्त्रवरोल्लसत्करपयोजाताभि-
रध्यासितम् । देवीभिर्हृदयादिभिश्च परितो विन्दुं सदानन्ददं
श्रीचक्रं शरणं ब्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ १३ ॥ लक्ष्मी-
शादिपदैर्युतेन महता मञ्चेन संशोभितं षट्त्रिंशद्भिरनर्घरत्नखचितैः
सोपानकैर्भूषितम् । चिन्तारत्नविनिर्मितेन महता सिंहासनेनोज्ज्वलं
श्रीचक्रं शरणं ब्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ १४ ॥ हीङ्कारैक-
महामनुं प्रजपता कामेश्वरेणोपितं तस्याङ्के च निषण्णया त्रिजगतां
मात्रा चिदाकारया । कामेश्या करुणारसैकनिधिना कल्याणदाय्या
युतं श्रीचक्रं शरणं ब्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ १५ ॥
श्रीमत्पञ्चदशाक्षरैकनिलयं श्रीषोडशीमन्दिरं श्रीनाथादिभिरर्चितं च
बहुधा देवैः समाराधितम् । श्रीकामेशरहःसखीनिलयनं श्रीमद्गु-
हाराधितं श्रीचक्रं शरणं ब्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ १६ ॥
इति श्रीमन्त्रिपुरसुन्दरीचक्रराजस्तवः संपूर्णः ॥

२७३. श्रीमन्त्रिपुरसुन्दर्यपराधक्षमापनस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कञ्जमनोहरपादचलन्मणिनूपुरहंसविराजिते
कञ्जभवादिसुरौघपरिष्टुतलोकविसृत्तरवैभवे । मञ्जुलवाङ्मयनिर्जि-
तकीरकुलेऽचलराजसुकन्यके पालय हे ललितापरमेश्वरि मामपरा-
धिनमम्बिके ॥ १ ॥ एणधरोज्ज्वलफालतलोलसदैगमदाङ्कसमन्विते
शोणपरागविचित्रितकन्दुकसुन्दरसुस्तनशोभिते । नीलपयोधर-

कालसुकुन्तलनिर्जितभृङ्गकदम्बके पालय हे ललितापरमेश्वरि माम-
 पराधिनमम्बिके ॥ २ ॥ ईतिविनाशनि भीतिनिवारणि दानवहृष्टि
 दयापरे शीतकराङ्कितरत्नविभूषितहेमकिरीटसमन्विते । दीप्ततरायुध-
 भण्डमहासुरगर्वनिहन्त्रि पुराम्बिके पालय हे ललितापरमेश्वरि
 मामपराधिनमम्बिके ॥ ३ ॥ लब्धवरेण जगत्रयमोहनदक्षलतान्त-
 महेषुणा लब्धमनोहरसालनिषण्णसुदेहभुवा परिपूजिते । लङ्घित-
 शासनदानवनाशनदक्षमहायुधराजिते पालय हे ललितापरमेश्वरि
 मामपराधिनमम्बिके ॥ ४ ॥ हीनपदभूषितपञ्चदशाक्षरषोडशवर्णसु-
 देवते हीमति हादिमहामनुमन्दिररत्नविनिर्मितदीपिके । हस्तिवरान-
 नदर्शितयुद्धसमादरसाहसतोषिते पालय हे ललितापरमेश्वरि माम-
 पराधिनमम्बिके ॥ ५ ॥ हस्तलसन्नवपुष्पशरेश्चशरासनपाशमहाङ्कुशे
 हर्यजशंभुमहेश्वरपादचतुष्टयमञ्चनिवासिनि । हंसपदार्थमहेश्वरि
 योगिसमूहसमादृतवैभवे पालय हे ललितापरमेश्वरि मामपराधिन-
 मम्बिके ॥ ६ ॥ सर्वजगत्कर्णावननाशनकर्त्रि कपालिमनोहरे
 स्वच्छमृणालमरालतुषारसमानसुहारविभूषिते । सज्जनचित्तविहारिणि
 शङ्करि दुर्जननाशनतत्परे पालय हे ललितापरमेश्वरि मामपराधिन-
 मम्बिके ॥ ७ ॥ कञ्जदलाक्षि निरञ्जनि कुञ्जरगामिनि मञ्जुलभा-
 षिते कुङ्कुमपङ्कविलेपनशोभितदेहलते त्रिपुरेश्वरि । दिव्यमतङ्गसु-
 ताधृतराज्यभरे करुणारसवारिधे पालय हे ललितापरमेश्वरि माम-
 पराधिनमम्बिके ॥ ८ ॥ हलकचम्पकपङ्कजकेतकपुष्पसुगन्धित-
 कुन्तले हाटकभूधरशृङ्गविनिर्मितसुन्दरमन्दिरवासिनि । हस्तिमु-
 खाम्ब वराहमुखीधृतसैन्यवरे गिरिकन्यके पालय हे ललितापर-
 मेश्वरि मामपराधिनमम्बिके ॥ ९ ॥ लक्ष्मणसोदरसादरपूजित-
 पादयुगे वरदे शिवे लोहमयादिबहून्नतसालनिषण्णबुधेश्वरसंवृते ।

लोलमदालसलोचननिर्जितनीलसरोजसुमालिके पालय हे ललिता-
परमेश्वरि मामपराधिनमम्बिके ॥ १० ॥ हीमति मन्त्रमहाजपसुस्थिर-
साधकमानसहंसिके हेपितशीतकराननशोभिनि हेमलतेव सुभा-
स्वरे । हार्दतमोगुणनाशनि पाशविमोचनि मोक्षसुखप्रदे पालय हे
ललितापरमेश्वरि मामपराधिनमम्बिके ॥ ११ ॥ सच्चिदभेदसुखा-
मृतवर्षिणि तत्त्वमसीति सदादृते सद्गुणशालिनि साधुसमर्चितपाद-
युगे परशाम्भवि । सर्वजगत्परिपालनदीक्षितबाहुलतायुगशोभिने
पालय हे ललितापरमेश्वरि मामपराधिनमम्बिके ॥ १२ ॥ कम्बुगले
वरकुन्दरदे रसरञ्जितपादसरोरुहे काममहेश्वरकामिनि कोकिल-
कोमलभाषिणि भैरवि । चिन्तितसर्वमनोरथपूरणकल्पलते करुणार्णवे
पालय हे ललितापरमेश्वरि मामपराधिनमम्बिके ॥ १३ ॥ हस्तक-
शोभिकरोज्ज्वलकङ्कणकान्तिसुदीपितदिङ्मुखे शस्ततरत्रिदशल्यकार्य-
समादृतदिव्यतनूज्ज्वले । कश्चतुरो भुवि देवि पुरेशि भवानि तव
स्तवने भवेत्पालय हे ललितापरमेश्वरि मामपराधिनमम्बिके ॥ १४ ॥
हीनपदलान्छितमन्त्रपयोनिधिमन्थनजातपराभृते हव्यवहानिलभूयज-
मानकखेन्दुदिवाकररूपिणि । हर्यजरुद्रमहेश्वरसंस्तुतवैभवशालिनि
सिद्धिदे पालय हे ललितापरमेश्वरि मामपराधिनमम्बिके ॥ १५ ॥
श्रीपुरवासिनि हस्तलसद्वरचामरवाक्कमलानुते श्रीगुहपूर्वभवार्जित-
पुण्यफले भवमत्तविलासिनि । श्रीवशिनीविमलादिसदान्तपादचल-
न्मणिनूपुरे पालय हे ललितापरमेश्वरि मामपराधिनमम्बिके ॥ १६ ॥
इति श्रीमत्रिपुरसुन्दर्यपराधक्षमापनस्तवः संपूर्णः ॥

२७४. त्रिपुरसुन्दरीवेदसारस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कस्तूरीपङ्कभास्वद्गुलचलदमलस्थूलमुक्ताव-

लीका ज्योत्स्नाशुद्धावदाता शशिशिशुमुकुटालंकृता ब्रह्मपत्नी ।
 साहित्याम्भोजभृङ्गी कविकुलविनुता सात्विकीं वाग्विभूतिं देयान्मे
 शुभ्रवस्त्रा करचलवल्या वल्लकीं वादयन्ती ॥ १ ॥ एकान्ते योगि-
 वृन्दैः प्रशमितकरणैः क्षुत्पिपासाविमुक्तैः सानन्दं ध्यानयोगाद्विस-
 गुणसदृशी दृश्यते चित्तमध्ये । या देवी हंसरूपा भवभयहरणं
 साधकानां विधत्ते सा नित्यं नादरूपा त्रिभुवनजननी मोदमा-
 विष्करोतु ॥ २ ॥ ईक्षित्री सृष्टिकाले त्रिभुवनमथ या तत्क्षणेऽनु-
 प्रविश्य स्थेमानं प्रापयन्ती निजगुणविभवैः सर्वथा व्याप्य विश्वम् ।
 संहर्त्री सर्वभासां विलयनमसमये स्वात्मनि स्वप्रकाशा सा देवी
 कर्मबन्धं मम भवकरणं नाशयत्वादिशक्तिः ॥ ३ ॥ लक्ष्म्या या
 चक्रराजे नवपुरलसिते योगिनीवृन्दगुप्ते सौवर्णे शैलशृङ्गे सुरगण-
 रचिते तत्त्वसोपानयुक्ते । मन्त्रिण्या मेचकाङ्गया कुचभरनतया कोल-
 मुख्या च सार्धं साम्राज्ञी सा मदीया मदगजगमना दीर्घमायुस्त-
 नोतु ॥ ४ ॥ ह्रीङ्काराम्भोजभृङ्गी हयमुखविनुता हानिवृद्ध्यादिहीना
 हंसोऽहंमन्त्राज्ञी हरिहयवरदा हादिमन्त्रार्थरूपा । हस्ते चिन्मुद्रि-
 काढ्या हतबहुदनुजा हस्तिकृत्तिप्रिया मे हार्दं शोकातिरेकं शमयतु
 ललिताधीश्वरी पाशहस्ता ॥ ५ ॥ हस्ते पङ्केरुहाभे सरससरसिजं
 विभ्रती लोकमाता क्षीरोदन्वत्सुकन्या करिवरविनुता नित्यपुष्टाब्ज-
 गेहा । पद्माक्षी हेमवर्णा मुररिपुदयिता शेवधिः सम्पदां या सा मे
 दारिद्र्यदोषं दमयतु करुणादृष्टिपातैरजस्रम् ॥ ६ ॥ सच्चिद्रहस्वरूपां
 सकलगुणयुतां निर्गुणां निर्विकारां रागद्वेषादिहर्त्रीं रविशशिनयनां
 राज्यदानप्रवीणाम् । चत्वारिंशन्त्रिकोणे चतुरधिकसमे चक्रराजे
 लसन्तीं कामाक्षीं कामितानां वितरणचतुरां चेतसा भावयामि
 ॥ ७ ॥ कन्दर्पे त्रिनयननयनज्योतिषा देववृन्दैः साशङ्कं

साश्रुपातं सविनयकरुणं याचिता कामपत्न्या । या देवी दृष्टिपातैः
 पुनरपि मदनं जीवयामास सद्यः सा नित्यं रोगशान्त्यै प्रभवतु
 ललिताधीश्वरी चित्प्रकाशा ॥ ८ ॥ हव्यैः कव्यैश्च सर्वैः श्रुतिचय-
 विहितैः कर्मभिः कर्मशीला ध्यानाद्यैरष्टभिश्च प्रशमितकलुषा
 योगिनः पर्णभक्षाः । यामेवानेकरूपां प्रतिदिनमवनौ संश्रयन्ते
 विधिज्ञाः सा मे मोहान्धकारं बहुभवजनितं नाशयत्वादिमाता
 ॥ ९ ॥ लक्ष्या मूलत्रिकोणे गुरुवरकरुणालेशतः कामपीठे यस्या
 विश्वं समस्तं बहुतरविततं जायते कुण्डलिन्याः । यस्याः शक्ति-
 प्ररोहादविरलममृतं विन्दते योगिवृन्दं तां वन्दे नादरूपां प्रणव-
 पदमयीं प्राणिनां प्राणदात्रीम् ॥ १० ॥ ह्रींकाराम्भोधिलक्ष्मीं
 हिमगिरितनयामीश्वरीमीश्वराणां ह्रींमन्त्राराध्यदेवीं श्रुतिशतशिखरै-
 र्मृग्यमाणां मृगाक्षीम् । ह्रींमन्त्रान्तैस्त्रिकूटैः स्थिरतरमतिभिर्धार्य-
 माणां ज्वलन्तीं ह्रीं ह्रीं ह्रीमित्यजस्रं हृदयसरसिजे भावयेऽहं
 भवानीम् ॥ ११ ॥ सर्वेषां ध्यानमात्रात्सवितुरुदरगा चोदयन्ती
 मनीषां सावित्री तत्पदार्था शशियुतमुकुटा पञ्चशीर्षा त्रिनेत्रा ।
 हस्ताग्रैः शङ्खचक्राद्यखिलजनपरित्राणदक्षायुधानां बिभ्राणा वृन्द-
 मम्बा विशदयतु मतिं मामकीनां महेशी ॥ १२ ॥ कर्त्री लोकस्य
 लीलाविलसितविधिना कारयित्री क्रियाणां भर्त्री स्वानुप्रवेशा-
 द्वियदनिलमुखैः पञ्चभूतैः स्वसृष्टैः । हर्त्री स्वेनैव धाम्ना पुनरपि
 विलये कालरूपं दधाना हन्यादामूलमसत्कलुषभरमुमा भुक्ति-
 मुक्तिप्रदात्री ॥ १३ ॥ लक्ष्या या पुण्यजालैर्गुरुवरचरणाम्भोज-
 सेवाविशेषादृश्या स्वान्ते सुधीभिर्दरदलितमहापद्मकोशेन तुल्ये ।
 लक्षं जप्त्वापि यस्या मनुवरमणिमासिद्धिमन्तो महान्तः सा नित्यं
 मामकीने हृदयसरसिजे वासमङ्गीकरोतु ॥ १४ ॥ ह्रींश्रीमैमन्नरूपा

हरिहरविनुताऽगस्त्यपत्नीप्रदिष्टा हादिः काद्यर्णतत्त्वा सुरपतिवरदा
 कामराजप्रदिष्टा । दुष्टानां दानवानां मदभरहरणा दुःखहन्त्री बुधानां
 साम्राज्ञी चक्रराज्ञी प्रदिशतु कुशलं मह्यमोङ्काररूपा ॥ १५ ॥
 श्रीमन्नार्थस्वरूपा श्रितजनदुरितध्वान्तहन्त्री शरण्या श्रौतस्मार्तक्रिया-
 णामविकलफलदा फालनेत्रस्य दाराः । श्रीचक्रान्तर्निषण्णा गुहवर-
 जननी दुष्टहन्त्री वरेण्या श्रीमत्सिंहासनेशी प्रदिशतु विपुलां कीर्ति-
 मानन्दरूपा ॥ १६ ॥ श्रीचक्रवरसाम्राज्ञी श्रीमन्निपुरसुन्दरी ।
 श्रीगुहान्वयसौवर्णदीपिका दिशतु श्रियम् ॥ १७ ॥ इति श्रीमन्निपुर-
 सुन्दरीवेदसारस्तवः संपूर्णः ॥

२७५. श्रेयस्करीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रेयस्करि श्रमनिवारिणि सिद्धचिद्ये स्वानन्द-
 पूर्णहृदये करुणातनो मे । चित्ते वस प्रियतमेन शिवेन सार्धं माङ्गल्य-
 मातनु सदैव मुदैव मातः ॥ १ ॥ श्रेयस्करि श्रितजनोद्धरणैकदक्षे
 दाक्षायणि क्षपितपातकतूलराशे । शर्मण्यपादयुगले जलजप्रमोदे
 मित्रे त्रयीप्रसृमरे रमतां मनो मे ॥ २ ॥ श्रेयस्करि प्रणतपामर-
 पारदानज्ञानप्रदानसरणिश्रितपादपीठे । श्रेयांसि सन्ति निखिलानि
 सुमङ्गलानि तत्रैव मे वसतु मानसराजहंसः ॥ ३ ॥ श्रेयस्करीति
 तव नाम गृणाति भक्त्या श्रेयांसि तस्य सद्ने च करी पुरस्तात् ।
 किं किं न सिध्यति सुमङ्गलनाममालां धृत्वा सुखं स्वपिति शेष-
 तनौ रमेशः ॥ ४ ॥ श्रेयस्करीति वरदेति दयापरेति वेदोदरेति
 विधिशङ्करपूजितेति । वाणीति शम्भुरमणीति च तारिणीति श्रीदेशि-
 केन्द्रकरुणेति गृणामि नित्यम् ॥ ५ ॥ श्रेयस्करि प्रकटमेव तवाभि-
 धानं यत्रास्ति तत्र रविवत्प्रथमानवीर्यम् । ब्रह्मेन्द्ररुद्रमरुदादिगृहाणि

सौख्यैः पूर्णानि नाममहिमा प्रथितस्त्रिलोक्याम् ॥ ६ ॥ श्रेयस्करि
प्रणतवत्सलता त्वयीति वाचं शृणुष्व सरलां सरसां च सत्याम् ।
भक्त्या नतोऽस्मि विनतोऽस्मि सुमङ्गले त्वत्पादाम्बुजे प्रणिहिते मयि
सन्निधत्स्व ॥ ७ ॥ श्रेयस्करीचरणसेवनतत्परेण कृष्णेन भिक्षु-
वपुषा रचितं पठेद्यः । तस्य प्रसीदति सुरारिविमर्दनीयमम्बा तनोति
सदनेषु सुमङ्गलानि ॥ ८ ॥ यथामतिकृतस्तुतौ मुदमुपैति माता
न किं यथाविभवदानतो मुदमुपैति पात्रं न किम् । भवानि तव
संस्तुतिं विरचितुं न चाहं क्षमस्तथापि मुदमेष्यसि प्रदिशसीष्टमम्ब
त्वरात् ॥ ९ ॥ इति श्रीमत्परमहंसश्रीकृष्णानंदसरस्वतीप्रणीतं
श्रेयस्करीसुमङ्गलस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२७६. दुर्गापदुद्धारस्तवराजः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमस्ते शरण्ये शिवे सानुकम्पे नमस्ते जगद्व्या-
पिके विश्वरूपे । नमस्ते जगद्वन्द्यपादारविन्दे नमस्ते जगत्तारिणि
त्राहि दुर्गे ॥ १ ॥ नमस्ते जगच्चिन्त्यमानस्वरूपे नमस्ते महायोगिनि
ज्ञानरूपे । नमस्ते नमस्ते सदानन्दरूपे नमस्ते ० ॥ २ ॥ अनाथस्य
दीनस्य तृष्णातुरस्य भयार्तस्य भीतस्य बन्धस्य जन्तोः । त्वमेका
गतिर्देवि निस्तारकर्त्री नमस्ते ० ॥ ३ ॥ अरण्ये रणे दारुणे शत्रु-
मध्येऽनले सागरे प्रान्तरे राजगेहे । त्वमेका गतिर्देवि निस्तारनौका
नमस्ते ० ॥ ४ ॥ अपारे महादुस्तरेऽत्यन्तघोरे विपत्सागरे मज्जतां
देहभाजाम् । त्वमेका गतिर्देवि निस्तारहेतुर्नमस्ते ० ॥ ५ ॥ नमश्चण्डिके
चण्डदुर्दण्डलीलासमुत्खण्डिताखण्डिताशेषशत्रो । त्वमेका गतिर्देवि
निस्तारबीजं नमस्ते ० ॥ ६ ॥ त्वमेवाघभावाघृतासत्यवादीर्न जाताजित-
क्रोधनात्क्रोधनिष्ठा । इडा पिङ्गला त्वं सुषुम्णा च नाडी नमस्ते ० ॥ ७ ॥

हरिहरविनुताऽगस्त्यपत्नीप्रदिष्टा हादिः काद्यर्णतत्त्वा सुरपतिवरदा
 कामराजप्रदिष्टा । दुष्टानां दानवानां मदभरहरणा दुःखहन्त्री बुधानां
 साम्राज्ञी चक्रराज्ञी प्रदिशतु कुशलं मह्यमोङ्काररूपा ॥ १५ ॥
 श्रीमन्नार्थस्वरूपा श्रितजनदुरितध्वान्तहन्त्री शरण्या श्रौतस्मार्तक्रिया-
 णामविकलफलदा फालनेत्रस्य दाराः । श्रीचक्रान्तर्निषण्णा गुहवर-
 जननी दुष्टहन्त्री वरेण्या श्रीमत्सिंहासनेशी प्रदिशतु विपुलां कीर्ति-
 मानन्दरूपा ॥ १६ ॥ श्रीचक्रवरसाम्राज्ञी श्रीमन्निपुरसुन्दरी ।
 श्रीगुहान्वयसौवर्णदीपिका दिशतु श्रियम् ॥ १७ ॥ इति श्रीमन्निपुर-
 सुन्दरीवेदसारस्तवः संपूर्णः ॥

२७५. श्रेयस्करीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रेयस्करि श्रमनिवारिणि सिद्धविद्ये स्वानन्द-
 पूर्णहृदये करुणातनो मे । चित्ते वस प्रियतमेन शिवेन सार्धं माङ्गल्य-
 मातनु सदैव मुदैव मातः ॥ १ ॥ श्रेयस्करि श्रितजनोद्धरणैकदक्षे
 दाक्षायणि क्षपितपातकतूलराशे । शर्मण्यपादयुगले जलजप्रमोदे
 मित्रे त्रयीप्रसृमरे रमतां मनो मे ॥ २ ॥ श्रेयस्करि प्रणतपामर-
 पारदानज्ञानप्रदानसरणिश्रितपादपीठे । श्रेयांसि सन्ति निखिलानि
 सुमङ्गलानि तत्रैव मे वसतु मानसराजहंसः ॥ ३ ॥ श्रेयस्करीति
 तव नाम गृणाति भक्त्या श्रेयांसि तस्य सद्ने च करी पुरस्तात् ।
 किं किं न सिध्यति सुमङ्गलनाममालां धृत्वा सुखं स्वपिति शेष-
 तनौ रमेशः ॥ ४ ॥ श्रेयस्करीति वरदेति दयापरेति वेदोदरेति
 विधिशङ्करपूजितेति । वाणीति शम्भुरमणीति च तारिणीति श्रीदेशि-
 केन्द्रकरुणेति गृणामि नित्यम् ॥ ५ ॥ श्रेयस्करि प्रकटमेव तवाभि-
 धानं यत्रास्ति तत्र रविवत्प्रथमानवीर्यम् । ब्रह्मेन्द्ररुद्रमरुदादिगृहाणि

सौख्यैः पूर्णानि नाममहिमा प्रथितस्त्रिलोक्याम् ॥ ६ ॥ श्रेयस्करि
प्रणतवत्सलता त्वयीति वाचं शृणुष्व सरलां सरसां च सत्याम् ।
भक्त्या नतोऽस्मि विनतोऽस्मि सुमङ्गले त्वत्पादाम्बुजे प्रणिहिते मयि
सन्निधत्स्व ॥ ७ ॥ श्रेयस्करीचरणसेवनतत्परेण कृष्णेन भिक्षु-
वपुषा रचितं पठेद्यः । तस्य प्रसीदति सुरारिविमर्दनीयमम्बा तनोति
सदनेषु सुमङ्गलानि ॥ ८ ॥ यथामतिकृतस्तुतौ मुदमुपैति माता
न किं यथाविभवदानतो मुदमुपैति पात्रं न किम् । भवानि तव
संस्तुतिं विरचितुं न चाहं क्षमस्तथापि मुदमेष्यसि प्रदिशसीष्टमम्ब
त्वरात् ॥ ९ ॥ इति श्रीमत्परमहंसश्रीकृष्णानंदसरस्वतीप्रणीतं
श्रेयस्करीसुमङ्गलस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२७६. दुर्गापदुद्धारस्तवराजः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमस्ते शरण्ये शिवे सानुकम्पे नमस्ते जगद्ध्या-
पिके विश्वरूपे । नमस्ते जगद्वन्द्यपादारविन्दे नमस्ते जगत्तारिणि
त्राहि दुर्गे ॥ १ ॥ नमस्ते जगच्चिन्त्यमानस्वरूपे नमस्ते महायोगिनि
ज्ञानरूपे । नमस्ते नमस्ते सदानन्दरूपे नमस्ते ॥ २ ॥ अनाथस्य
दीनस्य तृष्णातुरस्य भयार्तस्य भीतस्य बद्धस्य जन्तोः । त्वमेका
गतिर्देवि निस्तारकर्त्री नमस्ते ॥ ३ ॥ अरण्ये रणे दारुणे शत्रु-
मध्येऽनले सागरे ग्रान्तरे राजगोहे । त्वमेका गतिर्देवि निस्तारनौका
नमस्ते ॥ ४ ॥ अपारे महादुस्तरेऽत्यन्तघोरे विपत्सागरे मज्जतां
देहभाजाम् । त्वमेका गतिर्देवि निस्तारहेतुर्नमस्ते ॥ ५ ॥ नमश्चण्डिके
चण्डदुर्दण्डलीलासमुत्खण्डिताखण्डिताशेषशत्रो । त्वमेका गतिर्देवि
निस्तारबीजं नमस्ते ॥ ६ ॥ त्वमेवाद्यभावाद्युतासत्यवादीर्न जाताजित-
क्रोधनात्क्रोधनिष्ठा । इडा पिङ्गला त्वं सुषुम्णा च नाडी नमस्ते ॥ ७ ॥

नमो देवि दुर्गे शिवे भीमनादे सरस्वत्यरुन्धत्यमोघस्वरूपे । विभूतिः
 शची कालरात्रिः सतिः त्वं नमस्ते० ॥ ८ ॥ शरणमसि सुराणां
 सिद्धविद्याधराणां मुनिमनुजपशूनां दस्युभिस्त्रासितानाम् । नृपति-
 गृहगतानां व्याधिभिः पीडितानां त्वमसि शरणमेका देवि दुर्गे
 प्रसीद ॥ ९ ॥ इदं स्तोत्रं मया प्रोक्तमापदुद्धारहेतुकम् । त्रिस-
 न्ध्यमेकसन्ध्यं वा पठनाद् घोरसङ्कटात् ॥ १० ॥ मुच्यते नात्र
 सन्देहो भुवि स्वर्गे रसातले । सर्वं वा श्लोकमेकं वा यः पठेद्धक्ति-
 मान् सदा ॥ ११ ॥ स सर्वं दुष्कृतं त्यक्त्वा प्राप्नोति परमं पदम् ।
 पठनादस्य देवेशि किं न सिध्यति भूतले ॥ १२ ॥ स्तवराजमिमं
 देवि संक्षेपात्कथितं मया ॥ १३ ॥ इति श्रीसिद्धेश्वरीतन्त्रे उमा-
 महेश्वरसंवादे श्रीदुर्गापदुद्धारस्तवराजः संपूर्णः ॥

२७७. वाग्वादिनीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीवाग्वादिनीमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः,
 देवीविजयागायत्री छंदः, वाग्वादिनी देवता, ॐ वीजम्, मौं
 शक्तिः ह्रीं कीलकम्, श्रीवाग्वादिनीदेवताप्रीत्यर्थं जपे विनि-
 योगः । एतैर्यासं कृत्वा संविदपठनीयो मन्त्रं “ॐ वद वद ह्रीं
 वाग्वादिनीं मौं स्वाहा,” इत्यनेन सप्तभिर्गृहीत्वा मन्त्रं भक्षयेत् ।
 अथवा ‘ॐ जय जय विजय परब्रह्मस्वरूपिणि सर्वजनं मे वश-
 मानय आनंदय जंभू स्वाहा’ इत्यनेन वा जप्त्वा भक्षयेत् । अथवा
 स्वगृहीतमन्त्रेण जपित्वा भक्षयेत् । अथानंतरतो देवीसमयास्तोत्र-
 मुत्तमम् । यैः स्तुता सिद्धिदा मूली भक्षिता फलदा भवेत् ॥ १ ॥
 संविदे ब्रह्मसंभूते ब्रह्मपुत्रि सदानघे । भैरवानंदप्रीत्यर्थं पवित्रा भव
 सर्वदा ॥ २ ॥ नमामि कामिनीं नाथलेखालंकृतकुण्डलाम् । भवानीं

भवसंतापनिर्वापणसुधानिधिम् ॥ ३ ॥ सिद्धिमूलिप्रिये देवि हीन-
बोधप्रबोधिनि । राजप्रजावशंकरि कालकंठे त्रिशूलिनि ॥ ४ ॥ अज्ञाने-
ऽनधीतेऽपि ज्ञानाग्निज्वालरूपिणि । आनंदाद्याहुतिः प्रीतिः सम्य-
ग्ज्ञानं प्रयच्छ मे ॥ ५ ॥ दंडादिरूढपरिपूरितमोक्षभोगान् शुण्डक्रमेण
मदनांचनकामिनीं ताम् । आराधयामि बहुशत्रुपराजयंतीं विश्वेश्वरीं
त्रिभुवनां विजयादिदेवीम् ॥ ६ ॥ आनंदनंदिनीनंदे सदा वंदे पद-
द्वयम् । उल्लासकदलीकंदे स्वच्छंदे बोधरूपिणि ॥ ७ ॥ कवयः
कवितालहरीं कृते तत्त्वार्थदर्शनात् । आसदूरितदुरितनिलयं किं न
करोति सा ॥ ८ ॥ संविदासवयोर्मध्ये संविदेव गरीयसी । भक्षिता
भवनाशाय निर्गंधबोधरूपिणी ॥ ९ ॥ सुसंविच्छूलिनी देवी विजया
संविदेक्षुरी । वैष्णवी तुलसी तुंगा तेजोवल्ली रसेश्वरी ॥ १० ॥
वीरसूर्देवरत्ना च वीरलक्ष्मीर्महेश्वरी । शमया मोहनं चैव सिद्ध-
मूली महौषधी ॥ ११ ॥ मातुलानी ज्ञानरूपा सिद्धविद्या सरस्वती ।
यानि चैतानि नामानि सेवयेत्सिद्धमूलिकाम् ॥ १२ ॥ स प्राप्नोति
परां विद्यां भुक्तिं मुक्तिं च वाञ्छितम् । पाण्डित्यं च कवित्वं च
मंत्रसिद्धिं च विंदति ॥ १३ ॥ इति श्रीरुद्रयामलतंत्रे वाग्वादिनी-
स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२७८. मंत्रमातृकापुष्पमालास्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कलोलोलसितामृताब्धिहरीमध्ये विराजन्म-
णिद्वीपे कल्पकवाटिकापरिवृते कादम्बवायुज्ज्वले । रत्नस्तम्भसह-
स्रनिर्मितसभामध्ये विमानोत्तमे चिन्तारत्नविनिर्मितं जननि ते
सिंहासनं भावये ॥ १ ॥ एणाङ्गानलभानुमण्डललसच्छ्रीचक्रमध्ये
स्थितां बालार्कद्युतिभासुरां करतलैः पाशाङ्कुशौ बिभ्रतीम् । चापं

बाणमपि प्रसन्नवदनां कौसुम्भवस्त्रान्वितां तां त्वां चन्द्रकलावतंस-
मुकुटां चारुस्मितां भावये ॥ २ ॥ ईशानादिपदं शिवैकफलदं
रत्नासनं ते शुभं पाद्यं कुङ्कुमचन्दनादिभरितैरर्घ्यं सरत्नाक्षतैः ।
शुद्धैराचमनीयकं तत्र जलैर्भक्त्या मया कल्पितं कारुण्यामृत-
वारिधेः तदखिलं संतुष्टये कल्पताम् ॥ ३ ॥ लक्ष्ये योगिजनस्य
रक्षितजगज्जाले विशालेक्षणे प्रालेयाम्बुपटीरकुङ्कुमलसत्कर्पूर-
मिश्रोदकैः । गोक्षीरैरपि नारिकेलसलिलैः शुद्धोदकैर्मन्त्रितैः स्नानं
देवि धिया मयैतदखिलं संतुष्टये कल्पताम् ॥ ४ ॥ ह्रींकारा-
ङ्कितमन्त्रलक्षिततनो हेमाचलात्संचितै रत्नैरुज्ज्वलमुत्तरीयसहितं
कौसुम्भवर्णाशुकम् । मुक्तासंततिरत्नसूत्रममलं सौवर्णतंतूद्भवं
दत्तं देवि धिया मयैतदखिलं संतुष्टये कल्पताम् ॥ ५ ॥
हंसैरर्घ्यतिलोभनीयगमने हारावलीमुज्ज्वलां हिन्दोलद्युतिहीर-
पूरिततरे हेमाङ्गदे कङ्कणे । मञ्जीरौ मणिकुण्डले मुकुटमप्यर्धेन्दु-
चूडामणिं नासामौक्तिकमङ्गुलीयककौ काञ्चीमपि स्वीकुरु ॥ ६ ॥
सर्वाङ्गे वनसारकुङ्कुमघनश्रीगन्धपङ्काङ्कितं कस्तूरीतिलकं च फाल-
फलके गोरोचनापत्रकम् । गण्डादर्शनमण्डले नयनयोर्दिव्याञ्जनं
तेऽञ्चितं कंठाब्जे मृगनाभिपङ्कममलं त्वत्प्रीतये कल्पताम् ॥ ७ ॥
कह्लारोत्पलमलिकामरुचकैः सौवर्णपङ्केरुहैर्जातीचम्पकमालती-
वकुलकैर्मन्दारकुन्दादिभिः । केतक्या करवीरकैर्बहुविधैः क्लृप्ताः
स्रजोमालिकाः संकल्पेन समर्पयाभि वरदे संतुष्टये गृह्यताम्
॥ ८ ॥ हन्तारं मदनस्य नन्दयसि यैरङ्गैरनङ्गोज्ज्वलयैर्भृङ्गावलि-
नीलकुन्तलभरैर्बद्धासि तस्याशयम् । तानीमानि तवाम्ब कोमलतरा-
ण्यामोदलीलागृहाण्यामोदाय दशाङ्गगुग्गुलुवृत्तैर्धूपैरहं धूपये ॥ ९ ॥
लक्ष्मीमुज्ज्वलयामि रत्ननिवहोद्भास्वतरे मन्दिरे मालारूपविलम्बि-

तैर्मणिमयस्तम्भेषु संभावितैः । चित्रैर्हाटकपुत्रिकाकरधृतैर्गव्यैर्धृतैर्वर्धि-
तैर्दिव्यैर्दीपगणैर्धिया गिरिसुते संतुष्टये कल्पताम् ॥ १० ॥ ह्रींकारे-
श्वरि तसहाटककृतैः स्थालीसहस्रैर्भूतं दिव्यान्नं घृतसूपशाकभरितं
चित्रान्नभेदं तथा । दुग्धान्नं मधुशर्करादधियुतं माणिक्यपात्रे स्थितं
माषापूपसहस्रमम्ब्र सफलं नैवेद्यमावेदये ॥ ११ ॥ सच्छायैर्वरकेतकीद-
लरुचा ताम्बूलवल्लीदलैः पूगैर्भूरिगुणैः सुगन्धिमधुरैः कर्पूरखण्डो-
ज्ज्वलैः । मुक्ताचूर्णविराजितैर्बहुविधैर्वक्त्राम्बुजामोदनैः पूर्णा रत्नकला-
चिका तव मुदे न्यस्ता पुरस्तादुमे ॥ १२ ॥ कन्याभिः कमनीयकान्ति-
भिरलंकारामलारार्तिका पात्रे मौक्तिकचित्रपङ्क्तिविलसत्कर्पूरदीपावलिः ।
तत्तत्तालमृदङ्गगीतसहितं नृत्यत्पदाम्भोरुहं मन्त्राराधनपूर्वकं सुविहितं
नीराजनं गृह्यताम् ॥ १३ ॥ लक्ष्मीमौक्तिकलक्षकल्पितसितच्छत्रं तु
धत्ते रसादिन्द्राणी च रतिश्च चामरवरे धत्ते स्वयं भारती । वीणाभेण-
विलोचनाः सुमनसां नृत्यन्ति तद्रागवद्भावैरांगिकसात्विकैः स्फुटरसं
मातस्तदाकर्ण्यताम् ॥ १४ ॥ ह्रींकारत्रयसंपुटेन मनुनोपास्ये त्रयी-
मौलिभिर्वाक्यैर्लक्ष्यतनो तव स्तुतिविधौ को वा क्षमेताम्बिके ।
सँल्लापाः स्तुतयः प्रदक्षिणशतं संचार एवास्तु ते संवेशो मनसः
सहस्रमखिलं त्वत्प्रीतये कल्पताम् ॥ १५ ॥ श्रीमन्त्राक्षरमालया
गिरिसुतां यः पूजयेच्चेतसा संध्यासु प्रतिवासरं सुनियतस्तस्यामलं
स्यान्मनः । चित्ताम्भोरुहमण्डपे गिरिसुता नृत्यं विधत्ते रसाद्वाणी
वक्त्रसरोरुहे जलधिजा गोहे जगन्मंगला ॥ १६ ॥ इति गिरिवरपुत्री-
पादराजीवभूषाभुवनममलयन्ती सूक्तिसौरभ्यसारैः । शिवपदमकरन्द-
स्यन्दिनीयं निबद्धा मदयतु कविभृङ्गान्मातृकापुष्पमाला ॥ १७ ॥
इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीगोविन्दभगवत्पूज्यपादशिष्य-
श्रीमच्छंकराचार्यकृतौ मंत्रमातृकापुष्पमालास्तवः संपूर्णः ॥

२७९. चण्डीकुचपञ्चाशिकास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रियं नौमि देवीं परां पारिजातां पदाम्भोज-
 रेणूपसेवापराणाम् । यदाद्याक्षरस्याभिधेयेन शूली प्रलीढोऽपि
 मृत्युप्रजेता गरेण ॥ १ ॥ आशादासीभिरुर्ध्वं करविधृतचतुष्कोण-
 भागाभखण्डैः खण्डैराढ्या पटानां विधुरविघटिता शुष्कतावास-
 येया । स्वात्मानाधः पतन्तीं सज्जवमसकृदाकर्षणक्लान्तिपङ्क्तिश्वासोच्छ्वा-
 सौघपूर्णा हिमगिरिदुहितुः पातु वोऽपूर्वकन्था ॥ २ ॥ आसी-
 द्विरिञ्चिवरदा सुरसार्थतीर्थं तेजोमयी मखभुजामखिलास्ति शक्तिः ।
 एवं भविष्यति पुरोऽपि पुरारिपत्नी त्रैकालिकं यदिति तन्मह
 आद्यमीडे ॥ ३ ॥ मध्ये पीयूषसिन्धोर्धनकुसुमलसत्कल्पवृक्षान्त-
 राले दिव्ये मण्यन्तरीपे त्रिदशपरिवृढप्रौढगीर्वाणवर्ण्या । शर्वाणी
 पूर्णमण्याभरणरणत्पाणिनाभ्यर्णवाणीं तूर्णं चिन्तामणेर्मांमपि
 सदासि सदाश्लिष्य सिंहासनेऽस्ति ॥ ४ ॥ वन्दारुवृन्दारकसुन्दरीणां
 सीमन्तभृङ्गाञ्चितपादपद्मा । संस्तोतृपद्मापतिपद्मजन्मस्वाराट्टपिका-
 ल्याभ्रगुणा विभाति ॥ ५ ॥ यत्रोदग्रहरिन्मणिप्रविलसत्सौधाङ्कुराणां
 गणैरुद्गीर्णैर्निजगर्भतश्च चणकैः साम्यं गतानां नवैः । मुक्तानाम-
 मृतद्युतेरपि भरं वीक्ष्य स्थितानां हृदि श्रान्त्याखू रभसोत्पपात
 हृदये सारङ्ग एतन्मुधा ॥ ६ ॥ पादारविन्दस्य पुरंदरोऽपि सेवां
 विधाताऽस्म्यहमेव देव्याः । नार्हस्त्वमस्मिन्निति वज्रपाणिर्व्या-
 क्षिप्यते यत्र गणैर्विचित्रम् ॥ ७ ॥ बिडौजसि पदाम्बुजे निबिड-
 तेजसि त्र्यम्बकस्त्रियाः प्रणतिमीप्सितप्रतिपदाप्तये निर्जरैः । हरावपि
 हरे विधौ प्रणतिकर्मकर्मीणके जयाम्ब जगदम्बिके जय जयेति

यत्र ध्वनिः ॥ ८ ॥ तत्रैकदा निखिललोकचरित्रविद्भिः संप्रार्थिता
भगवती प्रणिधीनवर्गैः । विज्ञाप्यमस्ति किमपीति रहस्यमसदृश्या-
यिनः कविवरस्य कृतेर्विचित्रम् ॥ ९ ॥ किं कुङ्कुमोऽस्ति कलिता-
मरभोज्यवीचीसारप्रसारवचसां प्रमुखः कवीनाम् । यत्काव्यमन्य-
कवितां विधुनोति जीर्णा जायामिवाभिनवमुग्धवधूस्तनश्रीः
॥ १० ॥ असह्यभरसह्यभूधरमणौ महाराष्ट्रके महाबलजटाढ्यनि-
प्रथितकृष्णवेणी धुनी । तदम्बुलहरीप्लुता जयति वाजिसंज्ञा पुरी
स लक्ष्मणकवीश्वरो वसति तत्र वृत्त्या स्वया ॥ ११ ॥ वेणीमाधव
एव यस्य जनकः प्रख्यातकीर्तिस्तथा राधा यज्जननी सती गुणवती
रामोऽपि यत्सोदरः । अत्रिर्गोत्रपुमांश्च यस्य कविता चेतोहरा
सामगोपाह्वो यः किल राजते चरणयोर्देव्या भवान्याः स्वयम्
॥ १२ ॥ यस्य गुरुर्यो जातो दण्डकराभिन्नपर्वतान्वयतः ।
रघुनाथमन्दराद्रिर्मथितुं तर्कादिशास्त्रचयजलधिम् ॥ १३ ॥ स
त्वस्मत्पदपङ्कजस्फुरदमन्दानन्दसंदोहदस्यन्दन्मञ्जुमरन्दसुन्दरमधु-
व्यालोलरोलम्बकः । सत्पोतेतरताविनीतवनितासंभोगशून्यः
पुनर्योऽसौ संप्रति कथ्यते मम गुणप्रौढिप्रबद्धात्मकः ॥ १४ ॥
तस्यैव चेत्किमपि काव्यमकव्ययेच्छोरस्मत्सभापरिसरे पठनीय-
मस्ति । यन्मत्पदाम्बुजमधुप्रतिषेचनेऽस्य मृद्वीकयापि न
कयापि न मृद्वीकासः ॥ १५ ॥ श्रुत्वादेशं दूतवर्गैर्भवान्या
न्यासान्धन्यान्वीक्ष्य वाचः कवेस्तान् । न्यस्तो मूर्धा स्वामिनीपाद-
पद्मे कर्त्रेत्युक्तं तत्कृतेर्यत्कृतेऽत्र ॥ १६ ॥ सावधाना ततो देवी
काव्यश्रवणकर्मणि । जातेत्यालोच्य सहगवर्गैः काव्यं प्रवर्ण्यते
॥ १७ ॥ यद्यपि पदनुतिरादौ कार्या मातुस्तथापि विश्वस्य । मुख्य-

मिति स्तनपानं लक्ष्मणबालेन तत्स्तुतिर्विहिता ॥ १८ ॥ प्रालेयशैल-
 जनुषः सुहिरण्यवल्लया गौर्याः पयोधरविचित्रफलं पिबामि ।
 यत्स्पर्शनादपि बभूव स शूलिनोऽपि मृत्युंजयत्वविभवैकपदे-
 ऽभिषेकः ॥ १९ ॥ कल्याणावलिमातनोतु नितरां कर्पूरपूराधिक-
 प्रालेयं तुहिनालिशैलदुहितुस्तुङ्गं तदङ्गं हृदः । येनाकारि पुरारिभाल-
 नयनज्वालाकरालावलीबाढोल्लीढतनुस्तदीयहृदि सोऽनङ्गोऽपि रङ्गे
 नटः ॥ २० ॥ आजीवं तदुपास्महेऽद्रिदुहितुः कर्पूरगौरं कुचद्वन्द्वं
 नीलगलं सुचन्दनयुतं तत्प्राङ्मुखेन्द्रक्लितम् । यद्वीक्ष्यैव ममर्दं किं
 नवमिदं जीवत्यशेषे मयि प्रारूढं शिवयुग्ममन्यदबलाहन्मर्मणी-
 तीर्ष्यया ॥ २१ ॥ प्रत्यूहावलिमालुनातु दयया यश्चार्धनारीकुच-
 प्रान्तोत्तुङ्गपटीरपङ्कमदनीमीनैकमुद्राङ्कुरः । यं कृत्वा स्वयमेव मन्मथ-
 रिपुः पाणिश्रितस्वेदतो यातः सात्त्विकतां हि तत्कज इति ध्यात्वा
 स्मरतोऽभवत् ॥ २२ ॥ शर्वाणीकुचकूलमूलविलसत्कर्पूरकस्तूरि-
 काकाश्मीरत्रितयावलेपरचनाचातुर्यचर्यावतात् । यामुद्दिश्य महेश-
 मानसमहाहंसः प्रयागस्थिता वेण्येवेत्यवधारयन्निव ममज्जानन्य-
 वृत्तिश्चिरम् ॥ २३ ॥ नित्यं पायादपायाज्जगदिह तु शरच्चन्द्रगौर-
 प्रभासौ गौर्या वक्षोजयुग्मद्वयशिखरचरत्तारहीरालिमाला । चण्ड्या
 मे नाथचेतोविहरणनिपुणेतीर्ष्यया तत्र बद्धां गङ्गां निश्चित्य भर्गः
 करमपि च ददौ यत्पदे मोक्षकामः ॥ २४ ॥ नुमोऽपर्णारामस्थल-
 हृदयकासारतटगप्रवल्गद्वक्षोजच्छलमिलितचक्राह्वयुगलम् । दरा-
 लोकाच्छंभोः शिशिरशशिरेखानखगता स्मरन्ती सापत्न्यं व्यथयति
 नितान्तं यदिह सा ॥ २५ ॥ वन्दे तत्कुसुमायुधान्तकवधूतुङ्गस्त-
 नाब्जद्वयं दुग्धामन्दमरन्दमन्दिरमिदं चूचालिलीढं परम् । नित्या-
 स्येन्दुविकासनान्मुकुलितं षड्भक्त्रवक्त्राम्बुजैः पीतं किं किमिती-

धरस्य मनसो येनाभवद्विस्मयः ॥ २६ ॥ मल्लीस्रक्फणिभोग-
भूषणमणिश्रेणीविदूरोलसन्मैनाकाचलसोदरी कुचरसाधारद्वयी
मञ्जुला । यस्याः स्पर्शनतस्त्रिलोचनमनोमानव्यपायोऽभवत्पायात्सा
निखिलां हि विष्टपलतां संसारझञ्झानिलात् ॥ २७ ॥ तुषार-
गिरिकन्यकाकुचतटीपटीराटवी विपाटयतु कङ्कटोद्भवकठोरतापं
हि सा । यदीयदरदर्शनादपि गरप्रलीढो हरः सुखेन घनसार-
विस्मररिपुर्महोग्रः शिवः ॥ २८ ॥ रचयतु शिवं वक्षोजन्मद्वयं
द्रुहिणोज्ज्वलत्कनककलशत्विद्वीजं तभिश्चुम्भरिपोश्चिरम् । तदपि
च मुहुर्दर्शं दर्शं कपालिकरोच्छ्रितप्रखरनखरप्राञ्चच्चन्द्रोदयोऽपि
भवत्यहो ॥ २९ ॥ दूरीकरोतु दुरितानि पुरारिदारवक्षोजशैलमिथुनं
जितमन्दराद्रि । येनाभवद्भवमनोऽर्णवतः प्रमोदपीयूषमत्र हुतमन्म-
थजीवनाय ॥ ३० ॥ अपारां संपातिं दिशतु कुचरत्नक्षितिधरः
समुत्तुङ्गस्थानं सुमनस उमे ते मम चिरम् । यदीये मूर्ध्नि
श्रीगलकरनखालिद्युतिभरस्फुरद्गङ्गाभङ्गा इह हि विहरन्त्येव सततम्
॥ ३१ ॥ तं कासरासुरविमर्दसमुत्थशोणशोणार्द्रशोणितकणं स्तन-
मम्बिकायाः । वन्देऽमरेन्द्रकरिणः कृतशिल्पचित्रं यच्छंभुहृद्यपि
कटं स्मरणीबभूव ॥ ३२ ॥ उद्दामद्विपकुम्भदर्पदमनं प्रालेयशैलाङ्ग-
जावक्षोजद्वयमत्र भद्रमनिशं धत्तां ममाप्राकृतम् । यच्छ्रीकण्ठ-
कठोरकोटिनखरश्रेणीसृणिस्थापनप्रद्योत...धुभाजनं समभवत्पुष्पायु-
धायोधने ॥ ३३ ॥ सौवर्णाचलसानुसंमितकुचद्वन्द्वं भवान्याः
स्तुमः सेनानीस्फुरितद्विवेदरसनासंसर्पमञ्चायितम् । ईशो नैज-
करोरुभूषणगणं मत्वेति भूयस्तरामादातुं यतते यदीयशिखर-
प्राग्भारपाणिभ्रमः ॥ ३४ ॥ मालूरद्रुफलप्रदर्पशमनं प्रालेयभूमीधर-
प्रत्युसप्रतिपक्षबीजमपरं दुर्गास्तनाद्रिद्वयम् । यद्भोगैकदशः पिशाच-

नृपतेर्वक्षःस्थले जाग्रती चित्रा कापि विसंस्थुला नमत तत्कण्डूर-
 खण्डाभवत् ॥ ३५ ॥ दिग्दन्तावलकुम्भमौक्तिकमणिश्रेणीकमेणी-
 दृशः शर्वाण्याः कुचगुच्छयुग्ममवतात्संसारतापाद्भुतम् । यस्योपान्त-
 समुत्पतत्पशुपतिव्यालोलसाभिस्फुरल्लीलापाङ्गतरङ्गभृङ्गसुभगैः शृङ्गा-
 ररङ्गायित् ॥ ३६ ॥ स्मरारातेः स्वान्तप्रकटकुमुदं मोदयति
 यो हृदाकाशस्थस्तद्वहननयनाब्जं मुकुलयन् । दधच्चूचं लक्ष्म
 प्रकटयति चक्राद्भुगलं निहन्त्वद्रेः कन्याकुचविधुरघध्वान्तपटलीम्
 ॥ ३७ ॥ प्रालेयाचलकन्यकाकुचतटीपाटीरमोदयितां पापाटोपकठोर-
 कष्टपटलान्यापाटयन्तीं स्तुमः । यत्रापीनपिनाकपाणिकठिनोरःपीठ-
 कण्ठोलुठब्बालालीवल्यावलेखमकरोदालिङ्गनेऽन्योन्यतः ॥ ३८ ॥
 मातः पर्यभिवादये सुरपुरोद्यानान्तरालोल्लसद्भूजज्यप्रसवासवावसथ-
 मुद्वक्षोजकोषद्वयम् । यस्यान्तः परमेश्वरस्य करतः संमर्दनव्यापृतौ
 भूतिः संक्षरति क्षपापरिवृढाभ्रेष्व्यचूडामणेः ॥ ३९ ॥ परिधी-
 महिते कुचस्थलीं मणिकान्तिद्युनदीनभःस्थलीम् । शिवपाणि-
 नखेन्दुमण्डलीं निजमौलौ विनिधाय या स्थिता ॥ ४० ॥ मातु-
 नौमि पयोधरौ त्रिजगतामारभकुंभौ शुभौ भावत्कौ भुवि तौ
 भवप्रियतमे भाव्यक्षतौ भासुरौ । यौ श्रीकण्ठकरप्रवाललतिकामूर्ध-
 स्फुरत्पल्लवौ षड्भ्रूद्विरदाननाननवनोजन्माभिल्लीढौ चिरम् ॥ ४१ ॥
 वक्षःपीठे पटाढ्यं स्मितविबुधधुनीनिर्झरैश्चाभिषिक्तं मातर्वक्षोजराजं
 श्रितपविमणिरूक्चामरं ते नमामि । छत्रं क्षीरं पिपासोर्निटिलशशि-
 कलां यत्र पुत्रस्य मत्वा दुर्गाधीशो महेशः करमपि स ददौ तत्स्थ-
 मारामिनुजः ॥ ४२ ॥ पटासक्तं वक्षोजनियुगमपूर्वं गिरिपतेः सुकन्ये
 मन्ये ते नवसुभगसारिद्वयमिति । यदुत्तुङ्गोत्सङ्गे मृगधरधराक्षानु-
 सरणं कराब्जव्यापारैः सममनिशमुन्मूलतितराम् ॥ ४३ ॥ धयत्येतौ

धाता जगदखिलमेतद्रचयितुं तथा पातुं विष्णुः पिबति हरजाये तव
कुचौ । इति प्रेक्षं प्रेक्षं स्वयमपि हरो मर्दयति तौ जगत्संमर्दाया-
भ्यसति किमु विद्यामभिनवाम् ॥ ४४ ॥ भवेतां क्षेमाय स्मरहर-
वधूरोजकरिणौ ययोरेका रोमावलिकपटशुण्डाद्भुतकरी । महादेव-
स्वान्तप्रचुरतरकासारगतया यया तद्व्यापाराम्बुजमपहृतं श्रीडनविधौ
॥ ४५ ॥ उदञ्चन्तौ मातस्तव कुचहरी हृदरिमुखात्कुरङ्गानां तारौ
शिवहृदवीसीमनिहताम् । निहत्यैनःश्रेणीमददुरधिरोहद्विपपतिं
प्रकुर्वाणौ मुक्तावलिमयमिदं यौ त्रिभुवनम् ॥ ४६ ॥ तवेमौ वक्षोजौ
वृजिनहरणौ दिव्यहरिणावहं ध्याये मातर्दितिजतृणराश्यन्नरवरौ ।
विरूपाक्षस्वान्तोपवनवरयात्रा चिरतरं ययोरस्ति साराभिधशबरधाटी-
व्यतिकरे ॥ ४७ ॥ दृढं कूर्पासेन प्रतिपिहितमुर्वीधरसुते भवानि
त्वद्वक्षोरुहयुगलमीडे तदनिशम् । स्मरन्तं वैरं तं स्मरमपरमासाद्य
सुहृदं स्थितं संलीयेति व्यथयति हरो यत्पटगृहे ॥ ४८ ॥ वक्षस्तर-
क्षुवरसंस्थमुमे कुचं ते तं नीलकण्ठपरिलिङ्गितभोगमीडे । यन्नेश्व-
रस्य मनसस्तव रूपमेवेत्याकल्पकल्पनमभूत् प्रविलोकनेन ॥ ४९ ॥
घनं वक्षोजं ते नवनवहिरण्याकृतिधरं नुमस्तं प्रह्लादावलिजनक-
मद्रीश्वरसुते । यदीयाभोगेऽस्मिन्ननुपमनखालिव्रणततिः स्फुरत्या-
कल्पं श्रीगलकपटकण्ठीरवकरैः ॥ ५० ॥ वर्धेष्णुर्बलिमस्तकस्थित-
पदो वक्षःकृतश्रीः सुखं कुर्यान्नस्तुहिनावनीधरसुते वक्षोजविष्णु-
स्तव । विष्णुः शंभुहृदीति वाक्यममलं सत्यं विधातुं स्वयं यस्तूर्णं
कृतसंस्थितिर्विजयते तस्यैव हन्मन्दिरे ॥ ५१ ॥ मनस्तिमिरशान्तये
प्रतिपदं कुचार्कद्वयं भवानि तव चिन्त्यते हृदयदेववर्त्मस्थितम् ।
विकासयति संततं शिवमनःसरोजं परं यदेव दिवसे कथं व्यथयतीह
कोकानहो ॥ ५२ ॥ स्मरान्तकरवल्लभे तव पयोधरश्रीफलद्वयं स्मरति

यो जनः स भवतीह सच्छ्रीफलः । इतीव किल बोधयन् स्मृतभव-
 त्कुचश्रीः स्वयं समुद्रमथने पपावपि गरं हरः श्रीफलः ॥ ५३ ॥ स्मृता
 तव कुचद्वयी तुहिनशैलबाले हरत्यसावघभरं भवप्रियतमे नृभिः
 कैरपि । इतीव हृदि तां दधौ विधिशिरोविभेदोद्भवं प्रचण्डवृजिना-
 वलीकवलितः कपाली ध्रुवम् ॥ ५४ ॥ उच्चैरुच्चैः पदं या नयति
 गुरुतरं वर्धयत्येव भोगं भूभृत्सत्तां तनोति क्षितिधरतनये त्वत्कुच-
 श्रीः श्रिये नः । यद्दीक्षाभिः कपर्दी प्रथमपरिवृढो भैक्षयवृत्तिः
 कपाली सोऽपि श्रीमान्विचित्रं सपदि च जगतामीश्वरोऽभूत्सुखेन
 ॥ ५५ ॥ वक्षःस्थं दितिजरिपोस्तवाभिवन्दे तारुण्योदधिजमुरोज-
 कौस्तुभं तम् । यत्स्थाने स्मरजनकं महो हि किञ्चित्संमोहं सपदि
 महेशितुश्चकार ॥ ५६ ॥ तारुण्याम्भोधजन्मा दलितसुमकरः
 कामदस्त्रे प्रकामं कामं यच्छत्वर्पणे पृथुहृदयजनुः पारिजातद्रुजातः ।
 दैत्यवातातपन्नः पदगतजगतीं छायाया स्वै रसौघै रक्षंस्तृप्तिं च
 कुर्वन्भवहृदयमहानन्दने नन्दते यः ॥ ५७ ॥ मातः स्तन्यमधु
 स्तनस्थमनघं यच्छत्वजस्त्रं तव प्रौढोलासमखण्डितं पशुजनुःपाशच्छिदं
 सुन्दरि । यत्पानं गणपे प्रकुर्वति शिशौ चेतोदृशौ पश्यतः शंभो-
 र्मुग्धमभूद्भूवतुरहो व्यावूर्णिते च क्षणात् ॥ ५८ ॥ शैलेलापालबाले
 नुम इह विबुधप्राणजीवातुमूर्ति क्षीरोदन्वत्प्रभूतं भवगदहमुरोज-
 न्मधन्वन्तरिं ते । यस्योपास्तिप्रभावात्पितृगहनगतो वासुकिं कालकूटं
 कण्ठे विभ्रच्च शूली नयनगद्गुतभुक्सोऽपि मृत्युंजयोऽभूत् ॥ ५९ ॥
 चञ्चलीलाभचोलीसलिलदपटलीलीनमम्लानमालालोलाल्पाङ्गं दधानं
 धरणिधरसुते नौमि ते तं कुचेन्दुम् । यस्यालोकैर्विनिद्रं भवति
 भवमनःकैरवं हर्षितं च क्षीरासारामृतौघं रसवदनमुखैः पातु-
 कामैश्चकोरैः ॥ ६० ॥ क्षीराशसंसकलकामदमावके ते वक्षोजनुः

सुरभिरूपमकं निहन्तु । यत्पातृषण्मुखगजास्यहरीन्द्रमुख्या
 वत्सा रसस्थरसनावसनैर्विरजुः ॥ ६१ ॥ विचित्रालेखाढ्यं
 समरदसुचातुर्यकलितं दधे मातस्तं ते हृदि हृदयजैरावणमहम् ।
 यदीयाञ्चद्रोमावलिकपटशुण्डा शिवमनःसरोजं तच्चक्षुः सरसि
 परिविश्यैव हरति ॥ ६२ ॥ भगवति तव वक्षोजन्मरम्भास्वरूपं
 शुक्लहृदि सुफलस्य भ्रान्तिदं दर्शनेन । दिशतु मम शिवं तन्नृत्य-
 तीशस्य चेतः कमलमिव सुधर्मा दिव्यदेशे चिरं यत् ॥ ६३ ॥
 उदग्रग्रीवं तेऽविरलमसृणं नौमि गिरिजे सुवृत्तं हीरोद्यन्मणिरुचमु-
 रोजेन्द्रतुरगम् । पयः पातुं श्लिष्टद्विरदमुखषड्वक्त्रवदनान्यपश्य-
 त्सप्तेशो गणपतिपिता यत्र सहसा ॥ ६४ ॥ दितिजजनविनाशकं
 नमस्ते भगवति कुचकूटकालकूटम् । यदिह हृदि हरस्य कण्ठलग्नं
 किमिति मदन्यदितीर्ण्ययावतस्थे ॥ ६५ ॥ कर्पूरकुङ्कुमसुनाभिज-
 चित्रलेखं मन्ये कुचं वलयितं जननीन्द्रचापम् । यस्योद्धवे
 स्मररिपोः प्रववर्ष शंभोरानन्दजाश्रुसलिलं नयनाम्बुवाहः ॥ ६६ ॥
 शर्वाणि ते तरुणिमोद्गमसिन्धुजातं मन्ये कुचं दरमहं वृजिनाव-
 लिप्तम् । यं कुर्वतो निजकरे शशिशेखरस्य जातः स्मरैकजनकत्व-
 पदेऽभिषेकः ॥ ६७ ॥ धराधरसुते सुतन्निदशपेयमाशास्महे तव
 स्तनजनुःसुधारसमसारसंसारहम् । स्मरामि नयनोज्ज्वलज्ज्वलन-
 जालदग्धोऽप्यसावनङ्ग इह यत्पदे कृतपदेन संजीवितः ॥ ६८ ॥
 अलमलममलोहैः श्लोकजालैः कवेस्तैर्यदिदमखिलमेतैः क्रीतमेवा-
 स्मदीयम् । पुनरपि यदि चैवं वर्ण्यते तर्ह्यहं स्यां तदपि भवतु
 चेत्किं पारितोषीयमस्य ॥ ६९ ॥ इत्याकर्ण्य वचो विचार्य च
 चमत्काराञ्चितं चेतसि श्रीदेव्याश्चकिताः प्रभोः प्रणिधयश्चकुस्तथा
 तैः परम् । भूयः किञ्चिदुदञ्चितस्तबकया वाचेदमन्विष्यते यच्चोक्तं

किल पारितोषिकमिति स्यात्किं तदुक्तं वद ॥ ७० ॥ स्तोत्रं
 गृहीतमनघं स्तनपाललक्ष्म्या शुल्कं मदीयमखिलं हि मयास्य
 दत्त्वा । शिष्टाहमस्मि मदभेदमनघमेतं दास्यामि तस्य परितोषणिकं
 सुखेन ॥ ७१ ॥ एतदेव कविराजमानसे काङ्क्षितं लसति संततं
 किल । अन्यदेकमपि दीयते स्वतः श्रूयतामनुचरेश्वराः स्फुटम्
 ॥ ७२ ॥ इति स्तनघटस्तवं पठति यस्तु चण्ड्या मम प्रसन्नहृदयः
 प्रियो भवति मे सदा सूनुवत् । कविर्भवति भूमिपस्तुतवचःप्रपञ्चः
 क्षितौ लभेत किल वाञ्छितं सहृदि सुन्दरीणां स्मरः ॥ ७३ ॥
 मदीयचरणाम्बुजे भवति भक्तिभाजां प्रभुः क्षितीशमुकुटस्थित-
 प्रसवपूज्यपादाम्बुजः । अनेकनवपद्मिनीस्तनगिरीन्द्रकान्तिच्छटा-
 जटालहृदयान्तरः सदसि संस्थितो राजते ॥ ७४ ॥ यः श्रद्धया
 मम घनस्तनकुम्भलक्ष्म्याः स्तोत्रं पठेच्च किल संश्रुणुयात्सलोकः ।
 गीर्वाणवामनयनानयनारविन्दजालप्रभासरणिकज्जलतामुपैति ॥ ७५ ॥
 पृथिव्यां भूपालो भवति नववामोरुनयनप्रफुल्लाम्भोजन्मद्युमणिरपि
 वाचा सुरगुरुः । निरस्तप्रोच्चण्डाखिलरिपुगणो मत्कुचतटीस्तवं
 कुर्वन्नित्यं जयति निजलक्ष्म्यापि धनदम् ॥ ७६ ॥ यश्चित्ते मम कुच-
 संस्तवं दधाति प्रावीण्यं सकलकलासु सोऽयमेति । आम्नायस्मरणम-
 पीह मामकीने पादाम्भोरुहयुगले लभेत भक्तिम् ॥ ७७ ॥ रमापि
 सदने सदा कृतपदा मुदा दासवद्विपुर्भवति मित्रवद्युवतिसंगमो
 मोक्षवत् । अवागपि कवीशवद्भवति पातकं पुण्यवद्यशोभिर-
 मला दिशो दश भवन्ति यस्तं पठेत् ॥ ७८ ॥ चण्डीकुचपञ्चा-
 शत्संज्ञमिमं यः स्तवं नवं पठति । स नरो न पुनर्जनुषे भवति हि
 निःश्रेयसाय मे दयया ॥ ७९ ॥ तथाऽस्तु किल तत्परं तव जयन्तु
 मातः प्रभो पदाम्बुजमधुच्छदाः कविवरस्य मौलौ वरम् । यतो

हि कवितामृतं पिबति यः स मुक्तः श्रुतस्ततः स भवता न किं
जगति मुक्तिकान्तापतिः ॥ ८० ॥ इत्युक्तवत्यनुचरेन्द्रगणे पुरस्ता-
दम्बापदाम्बुजनिता मकरन्दधारा । या स्यन्दिता शिरसि मे
कविलक्ष्मणस्य स्वप्नोत्थितस्य तु पुनातु पुनस्त्रिलोकीम् ॥ ८१ ॥
यावच्छिवार्धगतमस्ति वपुस्त्वदीयं यावत्त्वदङ्घ्रिकमलं च पुनाति
विश्वम् । तावत्तवाम्ब चरणाम्बुजयोर्निपत्य याचे त्वहं किमपि यः
शयनोत्थितस्त्वाम् ॥ ८२ ॥ वाक्कायचित्तप्रकृतिस्वभावबुद्ध्यात्मभिः
सदसतोरपि संगमेन । यद्यत्कृतं यदपि भाव्यमशेषमातर्यद्यत्करो-
म्यखिलमस्तु तवार्पणं तत् ॥ ८३ ॥ इति श्रीमदत्रिगोत्रमाणिक्य-
सामगोपनामकवेणीमाधवाचार्यसुत-रसालंकारपारावारपारीणलक्ष्मणा-
चार्यकृता श्रीचण्डीकुचपञ्चाशिकास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२८०. महामारीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ देव्युवाच । पुरा ब्रह्मा तु मां स्पृष्ट्वा समाहू-
याब्रवीद्वचः । शृणु मे वचनं पुत्रि कुरुवाद्याथ सादरम् ॥ १ ॥ कलौ
जना दुराचारा राजानश्च तथाविधाः । अतो गत्वा भुवं देवि मृत्युरूपा
भवाशु च ॥ २ ॥ परद्रव्यापहर्तारः परस्त्रीनिरताः सदा । देवस्वहरणे
सक्ता ब्रह्मस्वहरणे नृप ॥ ३ ॥ तेषां दोषवशात्त्वं तु जनान् संहर
नित्यशः । ब्रह्मणैवं समादिष्टा इन्द्राद्यैः सुरसत्तमैः ॥ ४ ॥ भुवं समा-
गता तत्र जनाञ्ज्ञात्वाथ पापिनः । राज्ञो दोषान्पुरस्कृत्य ग्रामे ग्रामे
वसाम्यहम् । तत्रापि पापिनो हत्वा पुनर्ग्रामान्तरं भजे ॥ ५ ॥ एवं
देशानटित्वाऽहं सर्वान्संहत्य वै जनान् । पुनर्गच्छामि सदनं ब्रह्मणः
परमेष्ठिनः ॥ ६ ॥ एवं मदागमं ज्ञात्वा बुद्धिमान्पुण्यकृन्नरः । विचार्य
शास्त्रतो नित्यं जागरूको भवेदलम् ॥ ७ ॥ पतन्ति मूषिका यत्र

नृत्यन्ति विरमन्ति च । तद्गृहं तत्क्षणं त्यक्त्वा सकुटुम्बो वने विशेत्
 ॥ ८ ॥ तत्र शान्तिं प्रकुर्वीत महादेव्याः समीरिताम् । जपित्वा च
 महामन्त्रं पठित्वा स्तोत्रमुत्तमम् ॥ ९ ॥ “ॐ नमो भगवति महामारिके
 मृत्युरूपिणि सकुटुम्बं मामव स्वाहा ।” वने जलाशयं गत्वा ऊर्ध्व-
 बाहुरधोमुखः । वीरासने चोपविश्य जपेन्मन्त्रं सहस्रशः ॥ १० ॥
 संस्थाप्य प्रतिमां तत्र धूपदीपोपहारकैः । संपूज्य विधिव-
 त्पश्चाज्जुहुयात्प्रत्यहं नरः ॥ ११ ॥ हरिद्राचूर्णमिश्रेण चित्राञ्जनैव
 संयुतः । समिद्धिः खदिरैर्भक्त्या ब्राह्मणैश्च समन्वितः ॥ १२ ॥
 पत्नीपुत्रात्मभृत्यैश्च जुहुयादनुवासरम् । होमान्ते च पठेन्नित्यं
 स्तोत्रमेतज्जितेन्द्रियः ॥ १३ ॥ नमो देवि महादेवि सर्व-
 शोकवशंकरि । सर्वदा सर्वतो मद्यं कृपां कुरु कृपामयि ॥ १४ ॥
 मेरौ कैलासशिखरे हेमाद्रौ गन्धमादने । नित्यप्रियकृतावासे
 मद्यमांसबलिप्रिये ॥ १५ ॥ महासैन्यसमायुक्ते सर्वप्राणविहिं-
 सके । सर्वाभिचारिके देवि सर्वं त्वं रक्ष सर्वदा ॥ १६ ॥ यत्र
 कुत्र स्थले वापि यस्मिन् कस्मिन् यदा तदा । रक्ष मां रक्ष मां
 देवि सपुत्रपशुभृत्यकम् ॥ १७ ॥ माङ्गल्यं मङ्गलं देहि महा-
 मङ्गलदायिनि । लोकानामभये सर्वमङ्गले मङ्गलप्रिये ॥ १८ ॥ इति
 स्तुत्वा महादेवीं भक्तिभावेन संयुतः । भुञ्जीत स्वजनैर्युक्तो देवीं तां
 मनसा स्मरन् ॥ १९ ॥ यदा स्वगृहचैत्येषु ध्वाङ्कुरावो भविष्यति ।
 काकशान्तिं ततः कृत्वा गृहं गन्तुमुपक्रमेत् ॥ २० ॥ सुमुहूर्ते
 सुनक्षत्रे स्वलंकृत्य ततो गृहम् । ब्राह्मणैर्बन्धुभिः सार्धं संविशेद्गृह-
 मात्मनः ॥ २१ ॥ स्वस्तिवाचनविप्रेभ्यः शान्तिसूक्तोक्तिपूर्वकम् ।
 दक्षिणां च हिरण्यादिं दद्याच्छाठ्यविवर्जितः ॥ २२ ॥ ब्राह्मणा-
 न्भोजयित्वा च देवीं तां प्रार्थयेद्गृहे । गच्छ गच्छ महादेवि स्वस्थानं

मङ्गलं कुरु ॥ २३ ॥ एवं कृत्यविधानेन मारिकाशान्तिरुत्तमा । जायते
नात्र संदेहः सत्यं सत्यं समीरितम् ॥ २४ ॥ इत्येतत्कथितं देव्या
देवेभ्यः स्वात्मसंभवम् । साहात्म्यं पठितं येन सोऽपि माङ्गल्यमाप्नु-
यात् ॥ २५ ॥ लिखितं पुस्तकं यस्य गृहे तिष्ठति सर्वदा । तस्य मारी-
भयं नास्ति सत्यं सत्यं मयोदितम् ॥ २६ ॥ पुस्तकं पूजयेद्यस्तु श्रद्धया
परया सदा । सोऽपि माङ्गल्यमाप्नोति इहामुत्र परां गतिम् ॥ २७ ॥
सर्वं त्यक्त्वा साधयेत् देवीं यत्नैर्धनैरपि । स्तोष्यन्ति परया भक्त्या
सर्वकामार्थसिद्धये ॥ २८ ॥ विडाला यत्र नश्यन्ति यत्र नश्यन्ति
मूषिकाः । स्थानं तच्च परित्यज्य स्थानं शून्यं च कारयेत् ॥ २९ ॥
इति श्रीदेवीपुराणे श्रीमहामारिकास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२८१. त्रिपुरसुन्दरीमानसिकोपचारपूजास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मम न भजनशक्तिः पादयोस्ते न भक्तिर्न च
विषयविरक्तिर्ध्यानयोगे न सक्तिः । इति मनसि सदाऽहं चिन्तय-
न्नाद्यशक्ते रुचिरवचनपुष्पैरर्चनं संचिनोमि ॥ १ ॥ व्यासं हाटक-
विग्रहैर्जलचरैरारूढदेवव्रजैः पौतैराकुलितान्तरं मणिधरैर्भूमीधरै-
र्भूषितम् । आरक्तामृतसिन्धुसुद्धरचलद्वीचीचयव्याकुलव्योमानं
परिचिन्त्य संततमहो चेतः कृतार्थीभव ॥ २ ॥ तस्मिन्नुज्ज्वलरत्न-
जालविलसत्कान्तिच्छटाभिः स्फुटं कुर्वाणं वियदिन्द्रचापनिचयैरा-
च्छादितं सर्वतः । उच्चैः शृङ्गनिषण्णदिव्यवनितावृन्दाननप्रोल्लसद्दी-
ताकर्णननिश्चलाखिलमृगं द्वीपं नमस्कुर्महे ॥ ३ ॥ जातीचम्पक-
पाटलादिसुमनःसौरभ्यसंभावितं ह्रींकारध्वनिकण्ठकोकिलकुहूप्रोल्ला-
सिचूतद्रुमम् । आविर्भूतसुगन्धिचन्दनवनं दृष्टिप्रियं नन्दनं चञ्च-
ञ्चलचञ्चरीकचदुलं चेतश्चिरं चिन्तय ॥ ४ ॥ परिपतितपरागैः

पाटलक्षोणिभागो विकसितकुसुमोच्चैः पीतचन्द्रार्करश्मिः । अलि-
 शुक्लपिकराजीकूजितैः श्रोत्रहारी स्फुरतु हृदि मदीये नूनमुद्यानराजः
 ॥ ५ ॥ रम्यद्वारपुरप्रचारतमसां संहारकारिप्रभस्फूर्जत्तोरणभार-
 हारकमहाविस्तारहारद्युते । क्षोणीमण्डलहेमहारविलसत्संसारपार-
 प्रदप्रोद्यद्भक्तमनोविहार कनकप्राकार तुभ्यं नमः ॥ ६ ॥ उद्य-
 त्कान्तिकलापकल्पितनभःस्फूर्जद्वितानप्रभः सत्कृष्णागुरुधूपवासि-
 तवियत्काष्ठान्तरे विश्रुतः । सेवायातसमस्तदैवतगणैरासेव्यमानो-
 ऽनिशं सोऽयं श्रीमणिमण्डपोऽनवरतं मच्चेतसि द्योतताम् ॥ ७ ॥
 कापि प्रोद्धटपद्मारागकिरणवातेन संध्यायितं कुत्रापि स्फुटविस्फुर-
 न्मरकतद्युत्या तमिच्छायितम् । मध्यालम्बिविशालमौक्तिकरुचा
 ज्योत्स्नायितं कुत्रचिन्मातः श्रीमणिमन्दिरं तव सदा वन्दामहे
 सुन्दरम् ॥ ८ ॥ उत्तुङ्गालयविस्फुरन्मरकतप्रोद्यत्प्रभामण्डलान्या
 लोक्याङ्कुरितोत्सवैर्नवतृणाकीर्णस्थलीशङ्कया । नीतो वाजिभिरुपथं
 बत रथः सूतेन तिग्मद्युतेर्वल्गावलिगतहस्तमस्तशिखरं कष्टैरितः
 प्राप्यते ॥ ९ ॥ मणिसदनसमुद्यत्कान्तिधारानुरक्ते वियति
 चरमसंध्याशङ्किनो भानुरध्याः । शिथिलितगतकुप्यत्सूतहुंकार-
 नादैः कथमपि मणिगोहादुच्चकैरुच्चलन्ति ॥ १० ॥ भक्त्या किं
 नु समर्पितानि बहुधा रत्नानि पाथोधिना किं वा रोहणपर्वतेन
 सदनं यैर्विश्वकर्माऽकरोत् । आ ज्ञातं गिरिजे कटाक्षकलया नूनं त्वया
 तोषिते शंभौ नृत्यति नागराजफणिना कीर्णा मणिश्रेणयः ॥ ११ ॥
 विदूरमुक्तवाहनैर्विनम्रमौलिमण्डलैर्निबद्धहस्तसंपुटैः प्रयत्नसंयते-
 न्द्रियैः । विरञ्चिविष्णुशंकरादिभिर्मुदा तवाम्बिके प्रतीक्ष्यमाण-
 निर्गमो विभाति रत्न ण्डपः ॥ १२ ॥ ध्वनन्मृदङ्गकाहलः प्रगीत-
 किंनरीगणः प्रनृत्तदिव्यकन्यकः प्रवृत्तमङ्गलक्रमः । प्रकृष्टसेवकवजः

प्रहृष्टभक्तमण्डलो मुदे ममास्तु संततं त्वदीयरत्नमण्डपः ॥ १३ ॥
 प्रवेशनिर्गमाकुलैः स्वकृत्यरत्नमानसैर्वहिःस्थितामरावलीविधीयमान-
 भक्तिभिः । विचित्रवस्त्रभूषणैरुपेतमङ्गनाजनैः सदा करोतु मङ्गलं
 ममेह रत्नमण्डपः ॥ १४ ॥ सुवर्णरत्नभूषितैर्विचित्रवस्त्रधारिभि-
 र्गृहीतहेमयष्टिभिर्निरुद्धसर्वदैवतैः । असंख्यसुन्दरीजनैः पुरःस्थि-
 तैरधिष्ठितो मदीयमेतु मानसं त्वदीयतुङ्गतोरणः ॥ १५ ॥ इन्द्रा-
 दींश्च दिगीश्वरान्सहपरीवारानथो सायुधान् योषिद्रूपधरान् स्वदिक्षु
 निहितान्संचिन्त्य हृत्पङ्कजे । शङ्खे श्रीवसुधारया वसुमतीयुक्तं च
 पद्मं स्मरन्कामं नौमि रतिप्रियं सहचरं प्रीत्या वसन्तं भजे ॥ १६ ॥
 गायन्तीः कलवीणयाऽतिमधुरं हुंकारमातन्वतीद्वाराभ्यासकृतस्थिती-
 रिह सरस्वत्यादिकाः पूजयन् । द्वारे नौमि मदोन्मदं सुरगणाधीशं
 मदेनोन्मदां मातङ्गीमसिताम्बरां परिलसन्मुक्ताविभूषां भजे ॥ १७ ॥
 कस्तूरिकाश्यामलकोमलाङ्गीं कादम्बरीपानमदालसाङ्गीम् । वामस्त-
 नालिङ्गितरत्नवीणां मातङ्गकन्यां मनसा स्मरामि ॥ १८ ॥ विकीर्ण-
 चिकुरोत्करे विगलिताम्बराडम्बरे मदाकुलितलोचने विमलभूषणो-
 ज्जासिनि । तिरस्करिणि तावकं चरणपङ्कजं चिन्तयन्करोमि पशु-
 मण्डलीमलिकमोहदुग्धाशयाम् ॥ १९ ॥ प्रमत्तवारुणीरसैर्विघूर्ण-
 मानलोचनाः प्रचण्डदैत्यसूदनाः प्रविष्टभक्तमानसाः । उपोढकज्जल-
 च्छविच्छटाविराजिविग्रहाः कपालशूलधारिणीः स्तुवे त्वदीय-
 दूतिकाः ॥ २० ॥ स्फूर्जन्नव्ययवाङ्मुखोपलसिताभोगैः पुरःस्थापि-
 तैर्दीपोद्भासिशरावशोभितमुखैः कुम्भैर्नवैः शोभिना । स्वर्णाबद्ध-
 विचित्ररत्नपटलीचञ्चत्कपाटश्रिया युक्तं द्वारचतुष्टयेन गिरिजे वन्दे
 मणीमन्दिरम् ॥ २१ ॥ आस्तीर्णारुणकम्बलासनयुतं पुष्पोपहारा-
 न्वितं दीप्तानेकमणिप्रदीपसुभगं राजद्वितानोत्तमम् । धूपोद्धारिसुगन्धि-

संभ्रममिलद्भृङ्गावलीगुञ्जितं कल्याणं वितनोतु मेऽनवरतं श्रीम-
 ण्डपाभ्यन्तरम् ॥ २२ ॥ कनकरचिते पञ्चप्रेतासनेन विराजिते
 मणिगणचिते रक्तश्वेताम्बरास्तरणोत्तमे । कुसुमसुरभौ तल्पे दिव्यो-
 पधानसुखावहे हृदयकमले प्रादुर्भूतां भजे परदेवताम् ॥ २३ ॥
 सर्वाङ्गस्थितिरम्यरूपरुचिरां प्रातः समभ्युत्थितां जम्भामञ्जुमुखा-
 म्बुजां मधुमदव्याघूर्णदक्षित्रयाम् । सेवायातसमस्तसंनिधिसखीः
 संमानयन्तीं दृशा संपश्यन्परदेवतां परमहो मन्ये कृतार्थं
 जनुः ॥ २४ ॥ उच्चैस्तोरणवर्तिवाद्यनिवहध्वाने समुज्जृम्भिते भक्तै-
 र्भूमिविलग्नमौलिभिरलं दण्डप्रणामे कृते । नानारत्नसमूहनद्व-
 कथनस्थालीसमुद्भासितां प्रातस्ते परिकल्पयामि गिरिजे नीराजना-
 मुज्ज्वलाम् ॥ २५ ॥ पाद्यं ते परिकल्पयामि पदयोरर्घ्यं तथा
 हस्तयोः सौवीभिर्मधुपर्कमम्ब मधुरं धाराभिरास्वादय । तोयेना-
 चमनं विधेहि शुचिना गाङ्गेन मत्कल्पितं साष्टाङ्गं प्रणिपातमीश-
 दयिते दृष्ट्या कृतार्थीकुरु ॥ २६ ॥ मातः पश्य मुखाम्बुजं सुवि-
 मले दत्ते मया दर्पणे देवि स्वीकुरु दन्तधावनमिदं गङ्गाजलेना-
 न्वितम् ! सुप्रक्षालितमाननं विरचयन् स्निग्धाम्बरप्रोज्झनं द्रागङ्गी-
 कुरु तत्त्वमम्ब मधुरं ताम्बूलमास्वादय ॥ २७ ॥ निधेहि मणि-
 पादुकोपरि पदाम्बुजं मज्जनालयं व्रज शनैः सखीकृतकराम्बुजा-
 लम्बनम् । महेशि करुणानिधे तव दृगन्तपातोत्सुकान्विलोक्य
 मनागमूनुभयसंस्थितान्दैवतान् ॥ २८ ॥ हेमरत्नवरणेन वेष्टितं
 विस्तृतारुणवितानशोभितम् । सज्जसर्वपरिचारिकाजनं पश्य मज्जन-
 गृहं मनो मम ॥ २९ ॥ कनककलशजालस्फाटिकस्नानपीठाद्युप-
 करणविशालं गन्धमत्तालिमालम् । स्फुरदरुणवितानं मञ्जुगन्धर्व-

गानं परमशिवमहेले मज्जनागारमेहि ॥ ३० ॥ पीनोत्तुङ्गपयोधराः
 परिलसत्संपूर्णचन्द्रानना रत्नस्वर्णविनिर्मिताः परिलसत्सूक्ष्माम्बर-
 प्रावृताः । हेमस्नानघटीस्तथा मृदुपटीरुद्वर्तनं कौसुमं तैलं कङ्कतिकं
 करेषु दधतीर्वन्देऽम्ब ते दासिकाः ॥ ३१ ॥ तत्र स्फाटिकपीठमेत्य-
 शनकैरुत्तारितालंकृतिर्नैवैरुज्झितकञ्चुकोपरिहितारक्तोत्तरीयाम्बरा ।
 वेणीबन्धमपास्य कङ्कतिकया केशप्रसादं मनाकुर्वाणा परदेवता
 भगवती चित्ते मम द्योतताम् ॥ ३२ ॥ अभ्यङ्गं गिरिजे गृहाण
 मृदुना तैलेन संपादितं काश्मीरैरगरुद्रवैर्मलयजैरुद्वर्तनं कारय ।
 गीते किंनरकामिनीभिरभितो वाद्ये मुदा वादिते नृत्यन्तीमिह पश्य
 देवि पुरतो दिव्याङ्गनामण्डलीम् ॥ ३३ ॥ कृतपरिकरबन्धास्तुङ्ग-
 पीनस्तनाढ्या मणिनिवहनिबद्धा हेमकुम्भीर्दधानाः । सुरभिसलिल-
 निर्यद्गन्धलुब्धालिमालाः सविनयमुपतस्थुः सर्वतः स्नानदास्यः
 ॥ ३४ ॥ उद्गन्धैरगरुद्रवैः सुरभिणा कस्तूरिकावारिणा स्फूर्ज-
 त्सौरभयक्षकर्मजलैः काश्मीरनीरैरपि । पुष्पाभोभिरशेषतीर्थ-
 सलिलैः कर्पूरपाथोभरैः स्नानं ते परिकल्पयामि गिरिजे भक्त्या
 तदङ्गीकुरु ॥ ३५ ॥ प्रत्यङ्गं परिमार्जयामि शुचिना वस्त्रेण
 संप्रोञ्छनं कुर्वे केशकलापमायततरं धूपोत्तमैर्धूपितम् । आली-
 वृन्दविनिर्मितां जवनिकामास्थाप्य रत्नप्रभं भक्तत्राणपरे महेश-
 गृहिणि स्नानाम्बरं मुच्यताम् ॥ ३६ ॥ पीतं ते परिकल्प-
 यामि निविडं चण्डातकं चण्डिके सूक्ष्मं स्निग्धमुरीकुरुष्व वसनं
 सिन्दूरपूरप्रभम् । मुक्तारत्नविचित्रहेमरचनाचारुप्रभाभास्वरं नीलं
 कञ्चुकमर्पयामि गिरिशप्राणप्रिये सुन्दरि ॥ ३७ ॥ विलुलित-
 चिकुरेण च्छादितांसप्रदेशे मणिनिकरविराजत्पादुकान्यस्तपादे ।
 सुललितमवलम्ब्य द्राक्सखीमंसदेशे गिरिशगृहिणि भूषामण्डपाय

प्रयाहि ॥ ३८ ॥ लसत्कनककुट्टिमस्फुरदमन्दमुक्तावलीसमुल्लसित-
 कान्तिभिः कलितशक्रचापव्रजे । महाभरणमण्डपे निहितहेम-
 सिंहासनं सखीजनसमावृतं समधितिष्ठ कात्यायनि ॥ ३९ ॥ स्निग्धं
 कङ्कतिकामुखेन शनकैः संशोध्य केशोत्करं सीमन्तं विरचय्य चारु
 विमलं सिन्दूरेखान्वितम् । मुक्ताभिर्ग्रथितालकां मणिचितैः
 सौवर्णसूत्रैः स्फुटं प्रान्ते मौक्तिकगुच्छकोपलतिकां ग्रन्थामि वेणीमि-
 माम् ॥ ४० ॥ विलम्बिवेणीभुजगोत्तमाङ्गस्फुरन्मणिभ्रान्तिसुपान-
 यन्तम् । स्वरोचिषोल्लासितकेशपाशं महेशि चूडामणिमर्पयामि
 ॥ ४१ ॥ त्वामाश्रयद्भिः कबरीतमिस्त्रैर्बन्दीकृतं द्रागिव भानु-
 बिम्बम् । मृडानि चूडामणिमादधानं वन्दामहे तावकमुत्तमाङ्गम्
 ॥ ४२ ॥ स्वमध्यनद्धहाटकस्फुरन्मणिप्रभाकुलं विलम्बिमौक्तिकच्छ-
 टाविराजितं समन्ततः । निबद्धलक्षचक्षुषा भवेन भूरि भावितं
 समर्पयामि भास्वरं भवानि भालभूषणम् ॥ ४३ ॥ मीनाम्भोरुह-
 खञ्जरीटमुषमाविस्तारविस्सारके कुर्वाणे किल कामवैरिमनसः कन्दर्प-
 बाणप्रभाम् । माध्वीपानमदारुणेऽतिचपले दीर्घे दृगम्भोरुहे देवि
 स्वर्णशलाकयोजितमिदं दिव्याञ्जनं दीयताम् ॥ ४४ ॥ मध्यस्था-
 रुणरत्नकान्तिरुचिरां मुक्तामृगोद्भासितां दैवाद्भार्गवजीवमध्यगरवे-
 र्लक्ष्मीमधः कुर्वतीम् । उत्सक्ताधरबिम्बकान्तिविसरैर्भौमीभव-
 न्मौक्तिकां महत्तामुररीकुरुष्व गिरिजे नासाविभूषामिमाम्
 ॥ ४५ ॥ उडुकृतपरिवेषस्पर्धया शीतभानोरिव विरचितदेहद्वन्द्व-
 मादित्यबिम्बम् । अरुणमणिसमुद्यत्प्रान्तविभ्राजिमुक्तं श्रवसि
 परिनिधेहि स्वर्णताटङ्कयुग्मम् ॥ ४६ ॥ मरकतवरपद्मरागहीरोत्थि-
 तगुलिकात्रितयावन्दमध्यम् । विततविमलमौक्तिकं च कण्ठाभरण-

मिदं गिरिजे समर्पयामि ॥ ४७ ॥ नानादेशसमुत्थितैर्मणिगण-
 प्रोद्यत्प्रभामण्डलव्याप्तैराभरणैर्विराजितगलां मुक्ताछटालंकृताम् ।
 मध्यस्थारुणरत्नकान्तिरुचिरां प्रान्तस्थमुक्ताफलव्रातामम्ब चतुष्पिकां
 परशिवे वक्षःस्थले स्थापय ॥ ४८ ॥ अन्योन्यं प्लावयन्ती सततपरि-
 चलत्कान्तिकलोलजालैः कुर्वाणा मज्जदन्तःकरणाविमलतां शोभितेव
 त्रिवेणी । मुक्ताभिः पद्मरागैर्मरकतमणिभिर्निर्मिता दीप्यमानैर्नित्यं
 हारत्रयी ते परशिवरसिके चेतसि द्योततां नः ॥ ४९ ॥ करसरसिजनाले
 विस्फुरत्कान्तिकलोलजाले विलसदमलशोभे चञ्चदीशाक्षिलोभे । विविध-
 मणिमयूखोद्भासितं देवि दुर्गे कनककटकयुग्मं बाहुयुग्मे निधेहि
 ॥ ५० ॥ व्यालम्बमानसितपट्टकगुच्छशोभि स्फूर्जन्मणीघटित-
 हारविरोचमानम् । मातर्महेशमहिले तव बाहुमूले केयूरकद्वयमिदं
 विनिवेशयामि ॥ ५१ ॥ विततनिजमयूगैर्निर्मितामिन्द्रनीलैर्विजित-
 कमलनालालीनमत्तालिमालाम् । मणिगणखचिताभ्यां कङ्कणाभ्या-
 मुपेतां कलय वलयराजीं हस्तमूले महेशि ॥ ५२ ॥ नीलपट्टमृदु-
 गुच्छशोभिताबद्धनैकमणिजालमञ्जुलाम् । अर्पयामि वलयात्पुरःसरे
 विस्फुरत्कनकतैतृपालिकाम् ॥ ५३ ॥ आलवालमिव पुष्पधन्वना
 बालविद्रुमलतासु निर्मितम् । अङ्गुलीषु विनिधीयतां शनैराङ्गुलीय-
 कमिदं मदर्पितम् ॥ ५४ ॥ विजितहरमनोभूमत्तमातङ्गकुम्भस्थल-
 विलुलितकूजकिङ्किणीजालतुल्याम् । अविरतकलनादैरीशचेतो
 हरन्तीं विविधमणिनिबद्धां मेखलामर्पयामि ॥ ५५ ॥ व्यालम्ब-
 मानवरमौक्तिकगुच्छशोभिविभ्राजिहाटकपुटद्वयरोचमानम् । हेम्ना
 विनिर्मितमनेकमणिप्रबन्धं नीवीनिबन्धनगुणं विनिवेदयामि ॥ ५६ ॥
 विनिहतनवलाक्षापङ्कबालातपौषे मरकतमणिराजीमञ्जुमञ्जीरघोषे ।
 अरुणमणिसमुद्यत्कान्तिकाराविचित्रस्तव चरणसरोजे हंसकः प्रीति-

मेतु ॥ ५७ ॥ निबद्धशितिपट्टकप्रवरगुच्छसंशोभितां कलकणित-
 मञ्जुलां गिरिशचित्तसंमोहनीम् । अमन्दमणिमण्डलीविमलकान्ति-
 किर्मीरितां निधेहि पदपङ्कजे कनकघुङ्घुलूमम्बिके ॥ ५८ ॥
 विस्फुरत्सहजरागरञ्जिते शिञ्जितेन कलितां सखीजनैः । पद्मराग-
 मणिनूपुरद्वयीमर्पयामि तव पादपङ्कजे ॥ ५९ ॥ पदाम्बुजमुपासितुं
 परिगतेन शीतांशुना कृतां तनुपरम्परामिव दिनान्तरागारुणाम्
 महेशि नवयावकद्रवभरेण शोणीकृतां नमामि नखमण्डलीं
 चरणपङ्कजस्थां तव ॥ ६० ॥ आरक्तश्वेतपीतस्फुरदुरुकुसुमैश्चित्रितां
 पट्सूत्रैर्देवस्त्रीभिः प्रयत्नादगुरुसमुदितैर्धूपितां दिव्यधूपैः ।
 उद्यद्गन्धान्धपुष्पन्धयनिवहसमारब्धझांकारगीतां चञ्चत्कल्लारमालां
 परशिवरसिके कण्ठपीठेऽर्पयामि ॥ ६१ ॥ गृहाण परमामृतं कनक-
 पात्रसंस्थापितं समर्पय मुखाम्बुजे विमलवीटिकामम्बके । विलोकय
 मुखाम्बुजं मुकुरमण्डले निर्मले निधेहि मणिपादुकोपरि पदाम्बुजं
 सुन्दरि ॥ ६२ ॥ आलम्ब्य स्वसखीं करेण शनकैः सिंहासनादु-
 त्थिता कूजन्मन्दमरालमञ्जुलगतिप्रोल्लासिभूषाम्बरा । आनन्दप्रति-
 पादकैरुपनिषद्वाक्यैः स्तुता वेधसा मच्चित्ते स्थिरतामुपैतु गिरिजा
 यान्ती सभामण्डपम् ॥ ६३ ॥ चलन्त्यामम्बायां प्रचलति समस्ते
 परिजने सवेगं संयाते कनकलतिकालंकृतिभरे । समन्तादुत्तालस्फु-
 रितपदसंपातजनितैर्झणत्कारैस्तारैर्झणझणितमासीन्मणिगृहम् ॥ ६४ ॥
 चञ्चद्वेत्रकराभिरङ्गविलसद्भूषाम्बराभिः पुरोयान्तीभिः परिचारि-
 काभिरमरवाते समुत्सारिते । रुद्धे निर्जरसुन्दरीभिरभितः कक्षान्तरे
 निर्गतं वन्दे नन्दितशंभु निर्मलचिदानन्दैकरूपं महः ॥ ६५ ॥
 वेधाः पादतले पतत्ययमसौ विष्णुर्नमत्यग्रतः शंभुर्देहि दृगञ्चलं
 सुरपतिं दूरस्थमालोकय । इत्येवं परिचारिकाभिरुदिते संमाननां

कुर्वती दृढद्वन्द्वेन यथोचितं भगवती भूयाद्विभूत्यै मम ॥ ६६ ॥
मन्दं चारणसुन्दरीभिरभितो यान्तीभिरुत्कण्ठया नामोच्चारणपूर्वकं
प्रतिदिशं प्रत्येकमावेदितान् । वेगादक्षिपथं गतान्सुरगणानालोक-
यन्ती शनैर्लिप्सन्ती चरणाम्बुजं पथि जगत्पायान्महेशप्रिया
॥ ६७ ॥ अग्रे केचन पार्श्वयोः कतिपये पृष्ठे परे प्रस्थिता आकाशे
समवस्थिताः कतिपये दिक्षु स्थिताश्चापरे । संमर्दं शनकैरपास्य
पुरतो दण्डप्रणामान्मुहुः कुर्वाणाः कतिचित्सुरा गिरिसुते दृक्पात-
मिच्छन्ति ते ॥ ६८ ॥ अग्रे गायति किंनरी कलपदं गन्धर्वकान्ताः
शनैरातोद्यानि च वादयन्ति मधुरं सव्यापसव्यस्थिताः । कूजन्तुपुर-
नादमञ्जु पुरतो नृत्यन्ति दिव्याङ्गना गच्छन्तः परितः स्तुवन्ति
निगमस्तुत्या विरञ्चयादयः ॥ ६९ ॥ कस्मैचित्सुचिरादुपासितमहा-
मत्रौघसिद्धिं क्रमादेकस्मै भवनिःस्पृहाय परमानन्दस्वरूपां गतिम् ।
अन्यस्मै विषयानुरक्तमनसे दीनाय दुःखापहं द्रव्यं द्वारसमाश्रिताय
ददतीं वन्दामहे सुन्दरीम् ॥ ७० ॥ नन्नीभूय कृताञ्जलिप्रकटित-
प्रेमप्रसन्नानने मन्दं गच्छति संनिधौ सविनयात्सोत्कण्ठमोघत्रये ।
नानामन्त्रगणं तदर्थमखिलं तत्साधनं तत्फलं व्याचक्षाणमुदग्र-
कान्ति कलये यत्किञ्चिदाद्यं महः ॥ ७१ ॥ तव दहनसदृक्षै-
रीक्षणैरेव चक्षुर्निखिलपशुजनानां भीषयद्भीषणास्यम् । कृतवसति
परेशप्रेयसि द्वारि नित्यं शरभमिथुनमुच्चैर्भक्तियुक्तो नतोऽस्मि
॥ ७२ ॥ कल्पान्ते सरसैकदासमुदितानेकार्कतुल्यप्रभां रत्नस्तम्भ-
निबद्धकाञ्चनगुणस्फूर्जद्वितानोत्तमाम् । कर्पूरागरुगर्भवर्तिकलिका-
प्राप्तप्रदीपावलीं श्रीचक्राकृतिमुल्लसन्मणिगणां वन्दामहे वेदिकाम्
॥ ७३ ॥ स्वस्थानस्थितदेवतागणवृते बिन्दौ मुदा स्थापितं नाना-
रत्नविराजिहेमविलसत्कान्तिच्छटादुर्दिनम् । चञ्चत्कौसुमतूलिका-

सनयुतं कामेश्वराधिष्ठितं नित्यानन्दनिदानमम्ब सततं वन्दे च
 सिंहासनम् ॥ ७४ ॥ वदद्भिरभितो मुदा जय जयेति वृन्दारकैः
 कृताञ्जलिपरम्परा विदधती कृतार्था दृशा । अमन्दमणिमण्डली-
 खचितहेमसिंहासनं सखीजनसमावृतं समधितिष्ठ दाक्षायणि
 ॥ ७५ ॥ कर्पूरादिकवस्तुजातमखिलं सौवर्णभृङ्गारकं ताम्बूलस्य
 करण्डकं मणिमयं चैलाञ्चलं दर्पणम् । विस्फूर्जन्मणिपादुके च
 दधतीः सिंहासनस्याभितस्तिष्ठन्तीः परिचारिकास्तव सदा वन्दामहे
 सुन्दरि ॥ ७६ ॥ त्वदमलवपुरुद्यत्कान्तिकल्लोलजालैः स्फुटमिव
 दधतीभिर्बाहुविक्षेपलीलाम् । मुहुरपि च विधूते चामरग्राहिणीभिः
 सितकरकरशुभ्रे चामरे चालयामि ॥ ७७ ॥ प्रान्तस्फुरद्विमल-
 मौक्तिकगुच्छजालं चञ्चन्महामणिविचित्रितहेमदण्डम् । उद्यत्सहस्र-
 करमण्डलचारु हेमछत्रं महेशमहिले विनिवेशयामि ॥ ७८ ॥
 उद्यत्तावकदेहकान्तिपटलीसिन्दूरपूरप्रभाशोणीभूतमुदग्रलोहितमणि-
 च्छेदानुकारिच्छवि । दूरादादरनिर्मिताञ्जलिपुटैरालोक्यमानं
 सुरव्यूहैः काञ्चनमातपत्रमतुलं वन्दामहे सुन्दरम् ॥ ७९ ॥
 संतुष्टां परमामृतेन विलसत्कामेश्वराङ्गस्थितां पुष्पौघैरभिपूजितां
 भगवतीं त्वां वन्दमाना मुदा । स्फूर्जत्तावकदेहरश्मिकलनाप्राप्त-
 स्वरूपाभिदाः श्रीचक्रावरणस्थिताः सविनयं वन्दामहे देवताः
 ॥ ८० ॥ आधारशक्यादिकमाकलय्य मध्ये समस्ताधिकयोगिनीं
 च । मित्रेशनाथादिकमत्र नाथचतुष्टयं शैलसुते नतोऽस्मि ॥ ८१ ॥
 त्रिपुरासुधार्णवासनमारभ्य त्रिपुरमालिनी यावत् । आवरणाष्टक-
 संस्थितमासनषट्कं नमामि परमेशि ॥ ८२ ॥ ईशाने गणपं
 सरामि विचरद्विघ्नान्धकारच्छिदं वायव्ये बटुकं च कज्जलरुचिं
 व्यालोपवीतान्वितम् । नैर्ऋत्ये महिषासुरप्रमथिनीं दुर्गां च

संपूजयन्नाग्नेयेऽखिलभक्तरक्षणपरं क्षेत्राधिनाथं भजे ॥ ८३ ॥
 उड्यानजालंधरकामरूपपीठानिमान् पूर्णगिरिप्रसक्तान् । त्रिकोण-
 दक्षाग्रिमसव्यभागमध्यस्थितान्सिद्धिकरान्नमामि ॥ ८४ ॥ लोकेशः
 पृथिवीपतिर्निगदितो विष्णुर्जलानां प्रभुस्तेजोनाथ उमापतिश्च
 मरुतामीशस्तथा चेश्वरः । आकाशाधिपतिः सदाशिव इति
 प्रेताभिधामागतानेतांश्चक्रबहिःस्थितान्सुरगणान् वन्दामहे सादरम्
 ॥ ८५ ॥ तारानाथकलाप्रवेशनिगमव्याजाजाडुताशप्रभं त्रैलो-
 क्ये तिथिषु प्रवर्तितकलाकाष्ठादिकालक्रमम् । रत्नालंकृतिचित्र-
 वस्त्रललितं कामेश्वरीपूर्वकं नित्याषोडशकं नमामि लसितं चक्रा-
 त्मनोरन्तरे ॥ ८६ ॥ हृदि भावितदैवतं प्रयत्नाभ्युपदेशानुगृहीत-
 भक्तसंघम् । स्वगुरुक्रमसंज्ञचक्रराजस्थितमोघत्रयमानतोऽस्मि
 मूर्ध्ना ॥ ८७ ॥ हृदयमथ शिरः शिखाखिलाद्ये कवचमथो नयनत्रयं
 च देवि । मुनिजनपरिचिन्तितं तथास्त्रं स्फुरतु सदा हृदये षडङ्ग-
 मेतत् ॥ ८८ ॥ त्रैलोक्यमोहनमिति प्रथिते तु चक्रे चञ्चद्विभूषण-
 गणत्रिपुराधिवासे । रेखात्रये स्थितवतीरणिमादिसिद्धीर्मुद्रा नमामि
 सततं प्रकटाभिधास्ताः ॥ ८९ ॥ सर्वाशापरिपूरके वसुदलद्वन्द्वेन
 विश्राजिते विस्फूर्जत्रिपुरेश्वरीनिवसतौ चक्रे स्थिता नित्यशः ।
 कामाकर्षणिकादयो मणिगणभ्राजिष्णुदिव्याम्बरा योगिन्यः प्रदिशन्तु
 काङ्क्षितफलं विख्यातगुप्ताभिधाः ॥ ९० ॥ महेशि वसुभिर्दलैर्लसति
 सर्वसंक्षोभणे विभूषणगणस्फुरत्रिपुरसुन्दरीसद्मानि । अनङ्गकुसुमा-
 दयो विविधभूषणोद्भासिता दिशन्तु मम काङ्क्षितं तनुतराश्च गुप्ता-
 भिधाः ॥ ९१ ॥ लसद्युगटशारके स्फुरति सर्वसौभाग्यदे शुभा-
 भरणभूषितत्रिपुरवासीनीमन्दिरे । स्थिता दधतु मङ्गलं सुभगसर्व-
 संक्षोभिणीमुखाः सकलसिद्धयो विदितसंप्रदायाभिधाः ॥ ९२ ॥

बहिर्दशारे सर्वार्थसाधके त्रिपुराश्रयाः । कुलकौलाभिधाः पान्तु
 सर्वसिद्धिप्रदायिकाः ॥ ९३ ॥ अन्तःशोभिदशारकेऽतिललिते सर्वा-
 दिरक्षाकरे मालिन्या त्रिपुराद्यया विरचितावासे स्थितं नित्यशः ।
 नानारत्नविभूषणं मणिगणभ्राजिष्णु दिव्याम्बरं सर्वज्ञादिकशक्ति-
 वृन्दमनिशं वन्दे निगर्भाभिधम् ॥ ९४ ॥ सर्वरोगहरेऽष्टारे त्रिपुरा-
 सिद्धयान्विते । रहस्ययोगिनीर्नित्यं वशिण्याद्या नमाम्यहम् ॥ ९५ ॥
 चूताशोकविकासिकेतकरजःप्रोद्धासिनीलाम्बुजप्रस्फूर्जन्नवमल्लिकासमु-
 दितैः पुष्पैः शरान्निर्मितान् । रम्यं पुष्पशरासनं सुललितं पाशं
 तथा चाङ्कुशं वन्दे तावकमायुधं परशिवे चक्रान्तराले स्थितम्
 ॥ ९६ ॥ त्रिकोण उदितप्रभे जगति सर्वसिद्धिप्रदे युते त्रिपुरयाम्बया
 स्थितवती च कामेश्वरी । तनोतु मम मङ्गलं सकलशर्म वज्रेश्वरी
 करोतु भगमालिनी स्फुरतु मामके चेतसि ॥ ९७ ॥ सर्वानन्दमये
 समस्तजगतामाकाङ्क्षिते बैन्दवे भैरव्या त्रिपुराद्यया विरचितावासे
 स्थिता सुन्दरी । आनन्दोल्लसितेक्षणा मणिगणभ्राजिष्णुभूषाम्बरा
 विस्फूर्जद्गदना परापररहः सा पातु मां योगिनी ॥ ९८ ॥ उल्लसत्क-
 नककान्तिभासुरं सौरभस्फुरणवासिताम्बरम् । दूरतः परिहृतं मधु-
 व्रतैरर्पयामि तव देवि चम्पकम् ॥ ९९ ॥ वैरमुद्धतमपास्य शंभुना
 मस्तके विनिहितं कलाच्छलात् । गन्धलुब्धमधुपाश्रितं सदा केतकी-
 कुसुममर्पयामि ते ॥ १०० ॥ चूर्णीकृतं द्रागिव पद्मजेन त्वदा-
 ननस्पर्धिसुधांशुबिम्बम् । समर्पयामि स्फुटमञ्जलिस्थं विकासिजाती-
 कुसुमोत्करं ते ॥ १०१ ॥ भगरुबहलधूपाजस्रसौरभ्यरम्यां मरकत-
 मणिराजीराजिहारिस्त्रगाभाम् । दिशि विदिशि विसर्पद्गन्धलुब्धालि-
 मालां बकुलकुममालां कण्ठपीठेऽर्पयामि ॥ १०२ ॥ ईकारोर्ध्वग-
 विन्दुराननमधो बिन्दुद्वयं च स्तनौ त्रैलोक्ये गुरुगम्यमेतदखिलं

हार्दं च रेखात्मकम् । इत्थं कामकलात्मिकां भगवतीमन्तः समा-
 राधयन्नानन्दाश्रुधिमज्जने प्रलभतामानन्दश्रुं सज्जनः ॥ १०३ ॥
 धूपं तेऽगुरुसंभवं भगवति प्रोह्लासिगन्धोद्भुरं दीपं चैव निवेदयामि
 महसा हार्दान्धकारच्छिदम् । रत्नस्वर्णविनिर्मितेषु परितः पात्रेषु
 संस्थापितं नैवेद्यं विनिवेदयामि परमानन्दात्मिके सुन्दरि ॥ १०४ ॥
 जातीकोरकतुल्यमोदनमिदं सौवर्णपात्रे स्थितं शुद्धान्नं शुचि मुद्ग-
 माषचणकोद्भूतास्तथा सूपकाः । प्राज्यं माहिषमाज्यमुत्तममिदं
 हैयंगवीनं पृथक्पात्रेषु प्रतिपादितं परशिवे तत्सर्वमङ्गीकुरु ॥ १०५ ॥
 दुर्गे रोहितखण्डमण्डजपलं कौर्माजखाङ्गं (?) पृथक्षट्त्रिंशन्ति
 सुसाधितानि मृदुना सद्यञ्जनान्यग्निना । संपन्नानि च वेसवार-
 विसरैर्दिव्यानि भक्त्या कृतान्यग्रे ते विनिवेदयामि गिरिजे सौवर्ण-
 पात्रव्रजे ॥ १०६ ॥ माषव्यञ्जनजातमुत्तमतमं मुद्गप्रकारान्बहून्
 हारिद्रकथिकारसैर्विलुलितापूपांस्तथा चाणकान् । मांसं सर्पिषि
 साधितं बहुतरं शूलाकृतं मारिचं मत्स्यांश्चैव सुसंस्कृतान्परशिवे
 संस्थापयाम्यग्रतः ॥ १०७ ॥ निम्बूकार्द्रकचूतकन्दकदलीकोशातकी-
 कर्कटीधात्रीविल्वकीरकैर्विरचितान्यानन्दचिद्विग्रहे । राजीभिः कदु-
 तैलसैन्धवहरिद्राभिः स्थितान्पातये संधानानि निवेदयामि गिरिजे
 भूरिप्रकाराणि ते ॥ १०८ ॥ सितयाञ्चितलङ्कुक्रजान्मृदुपूपान्मृदु-
 लाश्च पूरिकाः । परमानमिदं च पार्वति प्रणयेन प्रतिपादयामि
 ते ॥ १०९ ॥ दुग्धमेतदनले सुसाधितं चन्द्रमण्डलनिभं तथा
 दधि । फाणितं शिखरिणीं सितासितां सर्वमम्ब विनिवेदयामि ते
 ॥ ११० ॥ अग्रे ते विनिवेद्य सर्वममितं नैवेद्यमङ्गीकृतं ज्ञात्वा
 तत्त्वचतुष्टयं प्रथमतो मन्ये सुतृप्तां ततः । देवीं त्वां परिशिष्टमम्ब
 कनकामत्रेषु संस्थापितं शक्तिभ्यः समुपाहरामि सकलं देवेशि शंभु-

प्रिये ॥ १११ ॥ वासेन स्वर्णपात्रीमनुपमपरमाब्जेन पूर्णा दधाना-
 मन्येन स्वर्णदर्वी निजजनहृदयाभीष्टदां धारयन्तीस्व । सिन्दूरा-
 रक्तवस्त्रां विविधमणिलसद्भूषणां मेचकाङ्गीं तिष्ठन्तीमग्रतस्ते मधु-
 मदमुदितामन्नपूर्णां नमामि ॥ ११२ ॥ पङ्क्त्योपविष्टान्परितस्तु चक्रं
 शक्या स्वयालिङ्गितवामभागान् । सर्वोपचारैः परिपूज्य भक्त्या
 तवाम्बिके पारिषदाज्जमामि ॥ ११३ ॥ परमाभूतमत्तसुन्दरीगण-
 मध्यस्थितमर्कभासुरम् । परमाभूतघूर्णितेक्षणं किमपि ज्योतिरुपा-
 स्महे परम् ॥ ११४ ॥ दृश्यते तव मुखाम्बुजं शिवे श्रूयते स्फुट-
 मनाहतध्वनिः । अर्चने तव गिरामगोचरे न प्रयाति विषयान्तरं
 मनः ॥ ११५ ॥ त्वन्मुखाम्बुजविलोकनोल्लसत्प्रेमनिश्चलविलोचन-
 द्रयीम् । उन्मनीमुपगतां सभामिमां भावयामि परमेशि तावकीम्
 ॥ ११६ ॥ चक्षुः पश्यतु नेह किञ्चन परं घ्राणं न वा जिघ्रतु
 श्रोत्रं हन्त शृणोतु न त्वगपि न स्पर्शं समालम्बताम् । जिह्वा
 वेतु न वा रसं मम परं युष्मत्स्वरूपामृते नित्यानन्दविघूर्णमान-
 नयने नित्यं मनो मज्जतु ॥ ११७ ॥ यस्त्वां पश्यति पार्वति
 प्रतिदिनं ध्यानेन तेजोमयीं मन्ये सुन्दरि तत्त्वमेतदखिलं वेदेषु
 निष्ठां गतम् । यस्तस्मिन्समये तवाचर्चनविधावानन्दसान्द्राशयो
 यातोऽहं तदभिन्नतां परशिवे सोऽयं प्रसादस्तव ॥ ११८ ॥
 गणाधिनाथं बटुकं च योगिनीः क्षेत्राधिनाथं च विदिकचतुष्टये ।
 सर्वोपचारैः परिपूज्य भक्तितो निवेदयामो बलिमुक्तयुक्तिभिः
 ॥ ११९ ॥ वीणामुपान्ते खलु वादयन्त्यै निवेद्य शेषं खलु
 शेषिकायै । सौवर्णभृङ्गारविनिर्गतेन जलेन शुद्धाचमनं विधेहि
 ॥ १२० ॥ ताम्बूलं विनिवेदयामि विलसत्कर्पूरकस्तूरिकाजातीपूग-
 लवङ्गचूर्णखदिरैर्भक्त्या समुल्लासितम् । स्फूर्जद्भक्तसमुद्रकप्रणिहितं

सौवर्णपात्रे स्थितैर्दीपैरुज्ज्वलमन्नचूर्णरचितैरारार्तिकं गृह्यताम्
 ॥ १२१ ॥ काचिद्वायति किंनरी कल्पदं वाद्यं दधानोर्वशी रम्भा
 नृत्यति केलिमंजुलपदं मातः पुरस्तात्तव । कृत्यं प्रोज्झ्य सुरस्त्रियो
 मधुमदव्याघूर्णमानेक्षणं नित्यानन्दसुधाम्बुधिं तव सुखं पश्यन्ति
 हृष्यन्ति च ॥ १२२ ॥ ताम्बूलोद्भासिवक्त्रैस्त्वदमलवदनालोकनो-
 ह्लासिनेत्रैश्चक्रस्थैः शक्तिसंघैः परिहृतविषयासङ्गमाकर्ण्यमानम् ।
 गीतज्ञाभिः प्रकाशं मधुरसमधुरं वादितं किंनरीभिर्वीणाङ्गकारनादं
 कलय परशिवानन्दसंधानहेतोः ॥ १२३ ॥ अर्चाविधौ ज्ञान-
 लवोऽपि दूरे दूरे तदापादकवस्तुजातम् । प्रदक्षिणीकृत्य ततोऽर्चनं
 ते पञ्चोपचारात्मकमर्पयामि ॥ १२४ ॥ यथेप्सितमनोगतप्रकटि-
 तोपचारार्चितां निजावरणदेवतागणवृतां सुरेशस्थिताम् । कृताञ्जलि-
 पुटो मुहुः कलितभूमिरष्टाङ्गकैर्नमामि भगवत्यहं त्रिपुरसुन्दरि
 त्राहि माम् ॥ १२५ ॥ विज्ञप्तीरवधेहि मे सुमहता यत्नेन ते
 संनिधिं प्राप्तं मामिह कांदिशीकमधुना मातर्न दूरीकुरु । चित्तं
 त्वत्पदभावने व्यभिचरेद्गवा च मे जातु चेत्तत्सौम्ये स्वगुणैर्बन्धान
 न यथा भूयो विनिर्गच्छति ॥ १२६ ॥ क्वाहं मन्दमतिः क
 चेदमखिलैरेकान्तभक्तैः स्तुतं ध्यातं देवि तथापि ते स्वमनसा
 श्रीपादुकापूजनम् । कादाचित्कमदीयचिन्तनविधौ संतुष्टया शर्मदं
 स्तोत्रं देवतया तया प्रकटितं मन्ये मदीयानने ॥ १२७ ॥ नित्यार्चन-
 मिदं चित्ते भाव्यमानं सदा मया । निबद्धं विविधैः पदैरनुगृह्णातु
 सुन्दरी ॥ १२८ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकरा-
 चार्यविरचितं श्रीमत्रिपुरसुन्दरीमानसिकोपचारपूजास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२८२. श्रीचक्रराजवर्णनम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अङ्गाधिरूढया श्रीवल्लभयाश्लिष्टसुन्दर-
 स्वाङ्गम् । कुङ्कुमपङ्क्तिरुदेहं शङ्करतनयं नमामि वाक्सिद्धयै ॥ १ ॥
 जय जय चक्राधीश्वरि जय जय लोकैकपरजननि । जय जय निगमातीते
 जय जय कामेशवामाक्षि ॥ २ ॥ कदा देवि साङ्गां मुदा पूजयित्वा
 हृदि ब्रह्ममोदं भजेयं कृतार्थी । भवेयं क्षणार्थी सदा लोकतन्त्रे निमग्न-
 स्त्वदर्चा विधानेन कर्तुम् । विहीनः स्वशक्त्या स्तवेनापि राज्ञीं सदा
 भावयामीति कृत्वा हृदये । पदाब्जं त्वदीयं सदा भावयित्वा
 धिया पूजयामि ॥ प्रकृष्टे त्रिरेखाधराश्रेणिप्रसिद्धाभिरीड्यां च
 मात्रौघसंसेव्यमानां च संक्षोभिणीमुख्यमुद्राधिदेवीभिराराध्यमानां
 त्रिलोकैकमोहाख्यचक्राधिदेवीं त्रिपूर्वां पुरां लोकधात्रीं प्रकटाख्य-
 देवीभिराराध्यमानां च संक्षोभिणीमुद्रया राजमानां नमामि स्वमूर्धा
 नमामि स्वमूर्धा ॥ ३ ॥ एणाङ्गचूडालदेवीं द्वितीये च चक्रे कला-
 जेन युक्तेऽभिवान्छाप्रपूरे कलाकामकर्षादिदेवीभिरर्धेन्दुभावास्वच्छि-
 रोभूषणाभिः प्रवालप्रभाभिश्चतुर्बाहुसंक्रान्तचापासिचर्मप्रवाणाभि-
 रामाभिरैताभिरीड्यां च गुप्ताभिधानाभिरारक्तनेत्रां पुरेशीं सदा
 सर्वविद्राविणीमुद्रिकायुक्तहस्तां नमामि स्वमूर्धा नमामि स्वमूर्धा
 ॥ ४ ॥ ईशाधिदेवीं तृतीयेऽष्टपद्मे स्वनाम्ना जगत्क्षोभणेऽस्मिन्म-
 नोज्ञे त्वनङ्गप्रसूनादिदेवीभिरत्युग्रविक्रान्तियुक्ताभिरिक्षुं च कोदण्ड-
 मखं च पौष्पं तथा कन्तुकं चोत्पलं धारयन्तीभिरत्यन्तशोणाभिर-
 त्यन्तगुप्ताभिरासेव्यमानां च चक्राधिनाथां मुदा सुन्दरीं पाणि-
 पद्मेन चाकर्षिणीमुद्रिकाढ्यां नमामि स्वमूर्धा नमामि स्वमूर्धा
 ॥ ५ ॥ लक्ष्यां महायोगिवृन्दैस्तुरीये महाचक्रमध्ये तु सौभाग्य-

देऽस्मिन्मनोज्ञे जगत्संख्यकाखे निषण्णां च संक्षोभिणीमुख्यदेवी-
भिरत्यन्ततीव्राभिरारक्तसिन्दूरपङ्केन भास्वल्ललाटाभिरत्युग्रबहिप्रभा-
भिस्तथा वह्निचापं शरं चक्रखड्गौ वहन्तीभिराराधितां संप्रदाया-
भिधाभिश्च चक्रेश्वरीं वासिनीं पाणिपद्मेन वक्ष्यंकरीमुद्रिकां धार-
यन्तीं नमामि स्वमूर्ध्ना नमामि स्वमूर्ध्ना ॥ ६ ॥ ह्रींकाररूपां महेशीं
भवानीं तथा पञ्चमेऽस्मिन्दशारे बहिर्भूतचक्रे मनोज्ञे सुनाम्ना हि
सर्वार्थसाधे निषण्णां च सिद्धिप्रदामुख्यदेवीभिरत्यच्छदेहप्रभाभिः
कराब्जैश्चतुर्भिर्गदां पाशघण्टामणी परशुं धारयन्तीभिरेताभिरुत्तीर्ण-
देवीभिराराध्यमानां चक्राधिनाथं पुराश्रीसमाख्यां कराब्जेन चोन्मादि-
नीमुद्रिकां धारयन्तीं सदाहं नमामि स्वमूर्ध्ना नमामि स्वमूर्ध्ना ॥ ७ ॥
हर्षश्चमुख्यैः सुरैः पूजितां तां सुचक्रेऽपि षष्ठे तथान्तर्दशारेऽत्र नाम्ना
च रक्षाकरेऽस्मिन्मनोज्ञे च सर्वज्ञदेवीमुखाभिश्चतुर्बाहुयुक्ताभिरत्यच्छ-
मुक्तातिगौराभिरजातहस्तैश्च वज्रं च शक्तिं तथा तोमरं चक्रराजं
वहन्तीभिरेताभिरिड्यां निगर्भाभिधाभिश्च चक्रेश्वरीं मालिनीं हस्तपद्मे
महाक्रों वहन्तीं नमामि स्वमूर्ध्ना नमामि स्वमूर्ध्ना ॥ ८ ॥ सर्वस्य
लोकस्य चाधारभूतां तां सप्तमेऽस्मिन् गजाखे मनोज्ञे च रोगप्रणाशे
वशिण्यादिवाग्देवताभिश्च संरक्तपुष्पप्रभाभिः कराब्जैः शरं चापवीणां
च पुस्तं वहन्तीभिरत्यच्छमुक्तासरेणोल्लसन्तीभिरेताभिरिड्यां रहस्या-
भिधाभिश्च चक्रेश्वरीं सिद्धनाथां कराब्जेन खेचर्यभिख्यां सुमुद्रां वहन्तीं
नमामि स्वमूर्ध्ना नमामि स्वमूर्ध्ना ॥ ९ ॥ कल्याणशीले वशिण्यादिगे-
हात्परं भ्राजमानानि दिव्यास्त्रवृन्दानि चापद्वयं चैश्वर्यं पौष्पमखं च
पाशद्वयं चाङ्कुशद्वन्द्वकं लोकपित्रोः सदाहं नमामि स्वमूर्ध्ना नमामि
स्वमूर्ध्ना ॥ १० ॥ हराङ्के वसन्तीं त्रिकोणेऽष्टमेऽस्मिन् सुसिद्धिप्रदे
चक्रराजे मनोज्ञे च कामेश्वरीवज्रनाथाभगेशीभिरजातहस्तेषु चापं शरं

पानपात्रं कृपाणं तथा मातुलिङ्गं च घण्टामणिं कपालं वहन्तीभि-
 रत्यन्ततुल्याभिरेताभिरीड्यां पुराम्बां च चक्राधिनाथां स्वहस्तेन
 बीजाख्यमुद्रां वहन्तीं नमामि स्वमूर्ध्ना नमामि स्वमूर्ध्ना ॥ ११ ॥
 लक्ष्मीशवागीशवन्द्ये त्रिकोणे च मित्रेशनाधादिनाथान् गुरुंश्चापि
 दिव्यौघसिद्धौघमल्यौघवृन्दं च सालोक्यसासारूप्यसायुज्यसिद्धिं
 गतं देवि भक्त्या नमामि स्वमूर्ध्ना नमामि स्वमूर्ध्ना ॥ १२ ॥
 ह्रींवीजगम्ये ततो देवि धिष्ये कलासंख्यकास्ताश्च नित्यस्वरूपाश्च
 कामेश्वरीमुख्यदेवीः समाना नमामि स्वमूर्ध्ना नमामि स्वमूर्ध्ना ॥ १३ ॥
 सत्यस्वरूपस्य बिन्दोः समीपे सदा रक्षणार्थं धृतास्त्राः सुवेषाः सदा
 जागरूकाः षडङ्गाधिदेवीः सुलावण्यपूर्णा नमामि स्वमूर्ध्ना नमामि
 स्वमूर्ध्ना ॥ १४ ॥ कलानाथवक्त्रां जलाधारकेशीं झषद्वन्द्वनेत्रां पिनाका-
 भचिह्नीं सितार्धेन्दुफालां सुमाकारनासां सुबिम्बोष्ठरम्यां कदम्बद्वि-
 जालिं कनकम्बुकण्ठीं लताबाहुयुक्तां कुलागस्तनद्वन्द्वसंशोभमानां
 वलीशोभमानां वलग्रे परोक्षां सुरम्भोरुशोभत्रिकोणस्य मध्ये सदान-
 न्दपीठे शिवाङ्गे लसन्तीं त्रिखण्डाख्यमुद्रायुतां चक्रराज्ञीं महाभैरवीं
 तां नमामि स्वमूर्ध्ना नमामि स्वमूर्ध्ना ॥ १५ ॥ लसद्रक्तसिन्दूरवर्णां
 कराब्जैः सुपाशं च कोदण्डमिश्रप्रकाण्डं सुमास्त्रं तथा चाङ्कुशं धारयन्तीं
 कृपापूर्णलावण्यनेत्रान्तरम्यां सुधास्यन्दिनिकाणवागजन्मभूमिं सुमास्त्रस्य
 शास्त्रार्थसारैकनाडीं नतानां जनानां समस्तप्रदात्रीं नवानां पुराणामधीशां
 सुगार्त्रीं जगद्रक्षणे दक्षबाहालताढ्यां नमामि स्वमूर्ध्ना नमामि
 स्वमूर्ध्ना ॥ १६ ॥ ह्रीङ्कारयुक्तेन मन्त्रेण नित्यं भवत्पादुकां ये
 स्मरन्ति स्वबुद्ध्या न तेषां जरामृत्युदारिद्र्यपीडा च तेषां हि
 संदर्शमात्रेण सर्वाः प्रबाधाः प्रणश्यन्ति सत्यं त्रिसत्यं च सत्यं
 कृतार्थाश्च ते मुक्तिभाजो हि ये वा महाराज्ञि चित्ताम्बुजे त्वां सदा

धारयन्तीह श्रीचक्रसाञ्जलि भक्त्या नमामि स्वमूर्धा नमामि
स्वमूर्धा ॥ १७ ॥ श्रीङ्कारमन्त्राब्जशृङ्गारहंसीं नृपोक्तिप्रपञ्चान्तसिद्धा-
न्तवल्लीं लसद्भृङ्गनीलालकश्रेणिरम्यां सदा भक्तिनद्रेण चित्तेन गम्यां
हराङ्के हरेर्वक्षसि ब्रह्मवक्त्रे त्रिधारूपसंपत्तिविभ्राजमानां चिदानन्दवल्लीं
तुरीयां परेशीं जगत्सृष्टिसंरक्षणाकर्षकत्रीं गुणातीतरूपां गुणैश्चापि युक्तां
महामन्त्ररूपां महापीठरूपां महाशक्तिरूपां महानन्दरूपां नमामि
स्वमूर्धा नमामि स्वमूर्धा ॥ १८ ॥ इति श्रीचक्रराजवर्णनं संपूर्णम् ॥

२८३. देवीगीतिशतकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ किं देवैः किं जीवैः किं भावैस्तेऽपि येन
जीवन्ति । तव चरणं शरणं मे दरहरणं देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ १ ॥
अरुणाम्बुदनिभकान्ते करुणारसपूरपूर्णनेत्रान्ते । शरणं भव शशि-
बिम्बद्युतिमुखि जगदम्ब कान्तिमत्यम्ब ॥ २ ॥ कलिहरणं भवतरणं
शुभभरणं ज्ञानसंपदां करणम् । नतशरणं तव चरणं करोतु मे
देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ ३ ॥ अमितां समतां मम तां तनु तां तनुतां
गतां पदाब्जं ते । कृपया विदितो विहितो यया तवाहं हि कान्तिम-
त्यम्ब ॥ ४ ॥ मम चरितं विदितं चेदुदयेन्न दया कदापि ते सत्यम् ।
तदपि वदाम्ययि कुरु तां निर्हेतुकमाशु कान्तिमत्यम्ब ॥ ५ ॥
न बुधत्वं न विधुत्वं न विधित्वं नौमि किं तु भृङ्गत्वम् । असकृत्प्रणम्य
याचे त्वच्चरणाब्जस्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ६ ॥ अभजमहं किं सारे
कंसारे वीपदेऽपि संसारे । रुचिमत्तां शुचिमत्तामहह त्वं पाहि
कान्तिमत्यम्ब ॥ ७ ॥ मामसकृदप्रसादाद्बुद्धकरीति माऽवमन्यस्व ।
स्मर किं न मया सुकृतं वर्धितमिदमद्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ८ ॥ करुणा-
विषयं यदि मां न तनोषि यथा तथापि वर्तेऽहम् । भवति कृपा-

लुत्वं ते सीदामि मृपेति कान्तिमत्यम्ब ॥ ९ ॥ अतुलितभवानु-
 रागिणि दुर्वर्णाचलविहारिणि मयि त्वम् । समतेर्ष्यया प्रसादं
 न विधत्से किं नु कान्तिमत्यम्ब ॥ १० ॥ द्यां गां वाभ्यपतं
 यदि जीवातुस्त्वामृतेऽन्ततः को मे । हित्वा पयोदपङ्क्तिं स्तोकस्य
 गतिः क्व कान्तिमत्यम्ब ॥ ११ ॥ कं वा कटाक्षलक्ष्यं न
 करोष्येवं मयि त्वमासीः किम् । किं त्वामुपालभेऽहं विधिर्गरी-
 यान् हि कान्तिमत्यम्ब ॥ १२ ॥ तनुजे जननी जनयत्यहितेऽपि
 प्रेम हीति तन्मिथ्या । यदुपेक्षसे त्रिलोकीं मातर्मा देवि
 कान्तिमत्यम्ब ॥ १३ ॥ निन्दामि साधुवर्गं स्तौमि पुनः
 क्षीणवद्गसंसर्गम् । वन्दे किं ते चरणे किं स्यात्प्रीतिस्तु कान्ति-
 मत्यम्ब ॥ १४ ॥ गीर्वाणवृन्दजिह्वारसायनस्वीयमाननीयगुणे ।
 निगमान्तपञ्जरान्तरमरालिके पाहि कान्तिमत्यम्ब ॥ १५ ॥ त्रिनयन-
 कान्ते शान्ते तान्ते स्वान्ते समास्तु वद दान्ते । कृपया
 मुनिजनचिन्तितचरणे निवसाद्य कान्तिमत्यम्ब ॥ १६ ॥ धुतकदने
 कृतमदने भृशमदने योगिशर्वभक्तानाम् । मणिसदने शुभरदने
 शशिवदने पाहि कान्तिमत्यम्ब ॥ १७ ॥ गिरितनुजे हतदनुजे
 वरमनुजेद्वाभिधे च हर्यनुजे । गुहतनुजेऽवितमनुजे कुरु करुणां
 देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ १८ ॥ गजगमने रिपुदमने हरकमने क्लृप्त-
 पापकृच्छमने । कलिजनने मयि दयया प्रसीद हे देवि कान्तिमत्यम्ब
 ॥ १९ ॥ यन्मानसे पदाब्जं तव संविद्भास्वदाभयाभाति । तत्पाद-
 दासदासकदासत्वं नौमि कान्तिमत्यम्ब ॥ २० ॥ दुष्करदुष्कृत-
 राशेर्न विभेमि शिवे यदि प्रसादस्ते । दलने दृषदां टङ्कः कल्पेत
 न किं नु कान्तिमत्यम्ब ॥ २१ ॥ कोमलदेहं किमपि श्यामलशोभं
 शरन्मृगाङ्गमुखम् । रूपं तव हृदये मम दीपश्रियमेतु कान्तिम-

त्यम्ब ॥ २२ ॥ किञ्चनवञ्चनदक्षं पञ्चशरारेः प्रपञ्चजीवातुम् ।
 चञ्चलमञ्चलमक्षणोरयि मयि कुरु देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ २३ ॥
 अञ्चति यं त्वदपाङ्गः किञ्चित्तस्यैव कुम्भदासत्वे । अहमहमिकया
 विबुधाः कलहं कलयन्ति कान्तिमत्यम्ब ॥ २४ ॥ किमिदं वदानुतं
 ते कस्मिंश्चिदक्षिते कटाक्षेण । वृंहादीनां हृदयं दीनत्वं याति
 कान्तिमत्यम्ब ॥ २५ ॥ प्रायो रायोपचिते मायोपायोल्बणासुर-
 क्षपणे । गेयो जायोरुबले श्रेयो भूयोऽस्तु कान्तिमत्यम्ब ॥ २६ ॥
 करणं शरणं तव लसदलकं कुलकं गिरीशभाग्यानाम् । सरलं
 विरलं जयति सकृदणं तरुणां हि कान्तिमत्यम्ब ॥ २७ ॥ शंकरि
 नमांसि वाणी किंकरि दैतेयराड्भयंकरि ते । करवै मुरवैर्यनुजे
 पुरवैर्यभिकेऽद्य कान्तिमत्यम्ब ॥ २८ ॥ तव सेवां भुवि के वा
 नाकाङ्क्षन्ते क्षमाभृतस्तनये । त्वमिव भवेयुर्यदि ते भजन्ति ये यां हि
 कान्तिमत्यम्ब ॥ २९ ॥ भवदवशिखाभिर्वीतं शीतलयेमां कटाक्ष-
 विक्षेपैः । कादम्बिनीव सलिलैः शिखण्डिनं देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ ३० ॥
 त्वद्गुणपयःकणं मे निपीय मुक्तेरलंक्रियां गिरतु । चेतःशुक्तिमुक्तां
 भक्तिमिषां देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ ३१ ॥ गुणगणमहामणीनामागम-
 पाथोधिजन्मभाजां ते । गुणतां कदा नु भजतां मम धिषणा देवि
 कान्तिमत्यम्ब ॥ ३२ ॥ पाटीरचर्चितस्तनि कोटीरकृतक्षपाधिराद्-
 कलिके । वीटीरसेन कविताधाटीं कुरु मेऽद्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ३३ ॥
 तव करुणां किं ब्रूमस्त्वामप्येषानवेक्ष्य तूष्णीकाम् । ऊरीकरोति
 पापिनमपि विनतं देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ ३४ ॥ ईशोऽपि विना
 भवतीं न चलितुमपि किं पुनर्वयं शक्ताः । किमुपेक्षसे प्रसीद क्षिति-
 धरकन्येऽद्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ३५ ॥ मन्मानसान्नशाखी पल्लवितः
 पुष्पितोऽनुरागेण । हर्षेण च प्रसादाल्लघु तव फलिनोऽस्तु कान्ति-

मल्यम्ब ॥ ३६ ॥ ध्यानाम्बरवसतेर्ममे मानसमेघस्य दैन्यवर्षस्य ।
 पदयुगली तव शम्पा लक्ष्मीं विदधातु कान्तिमल्यम्ब ॥ ३७ ॥
 कलितपनभानुतप्तं चित्तचकोरं ममातिशीताभिः । जीवय कटाक्ष-
 दम्भज्योत्स्नाभिर्देवि कान्तिमल्यम्ब ॥ ३८ ॥ ज्योत्स्नासध्रीचीभि-
 दुग्धश्रीभिः कटाक्षवीचीभिः । शीतलयानीचीभिः कृपया मां देवि
 कान्तिमल्यम्ब ॥ ३९ ॥ रुष्टा त्वमागसा यदि तर्जय दृष्ट्यापि नेक्षसे
 यदि माम् । बाल इव लोलचक्षुः कं शरणं यामि कान्तिमल्यम्ब
 ॥ ४० ॥ विभवः के किं कर्तुं प्रभवः करुणा न चेत्तवान्तेऽपि ।
 नोच्छ्वसितुं कृतमेभिस्त्वामीश्वरि नौमि कान्तिमल्यम्ब ॥ ४१ ॥
 जित्वा मदमुखरिपुगणमित्वा त्वद्भक्तभावसाम्राज्यम् । गत्वा सुखं
 जनोऽयं वर्तेत कदा नु कान्तिमल्यम्ब ॥ ४२ ॥ अखिलदिविषदा-
 लम्बे पदयुग्मं देवि ते सदालम्बे । जगतां गोमल्यम्ब क्षितिधर-
 कन्येऽद्य कान्तिमल्यम्ब ॥ ४३ ॥ अत्रैव कल्पवल्लीचिन्तामणिरस्ति
 कामधेनुरपि । वेद्मि न किं यदि बुधता पुंसा लभ्येत कान्तिमल्यम्ब
 ॥ ४४ ॥ नाहं भजामि दैवं मनसाप्यन्यत्त्वमेव दैवं मे । न मृषा
 भणामि शोधय मानसमाविश्य कान्तिमल्यम्ब ॥ ४५ ॥ खेदयसि
 मां मृगं किं मृगनृणेव प्रसीद नौमि शिवे । मोदय कृपया नो
 चेत्क नु यायां देवि कान्तिमल्यम्ब ॥ ४६ ॥ कार्यं स्वेन स्वहितं
 को नाम वदेदयं जनो वेत्ति । त्वं वा वदसि किमस्माद्भक्तिस्त्व-
 मेवास्य कान्तिमल्यम्ब ॥ ४७ ॥ धन्योऽस्ति को मदन्यो दिवि वा
 भुवि वा करोषि चेत्करुणाम् । इदमपि विश्वं विश्वं मम हस्ते किं च
 कान्तिमल्यम्ब ॥ ४८ ॥ तरुणेन्दुचूडजाये त्वां मनुजा ये भजन्ति
 तेषां ते । भूतिः पदाब्जधूलिर्धूलिर्भूतिस्तु कान्तिमल्यम्ब ॥ ४९ ॥
 त्वामत्र सेवते यस्त्वत्सारूप्यं समेत्य सोऽमुत्र । हरकेल्यां त्वद-

सूयापात्रति चित्राङ्गि कान्तिमत्यम्ब ॥ ५० ॥ चित्रीयते मनस्त्वां
 दृष्ट्वा भाग्यावतारमूर्तिं मे । किञ्च सुधाब्धेर्लहरीविहारितामेति कान्ति-
 मत्यम्ब ॥ ५१ ॥ किरतु भवती कटाक्षाञ्जलजसदृक्षान् रसेन तादृक्षान् ।
 कृतसुररक्षान्मोहनदक्षान्भीमस्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ५२ ॥ मानसवा-
 र्धिनिर्लीनौ रागद्वेषौ प्रबोधवेदमुषौ । मधुकैटभौ तवेक्षणमीनो मे
 हरतु कान्तिमत्यम्ब ॥ ५३ ॥ मञ्जुलभाषिणि वञ्जुलकुङ्कुमलललि-
 तालके लसत्तिलके । पालय कुवलयनयने वालं मां देवि कान्ति-
 मत्यम्ब ॥ ५४ ॥ पुरमथनविलोलाभिः पदुलीलाभिः कटाक्षमा-
 लाभिः । शुभशीलाभिः कुवलयनीलाभिः पश्य कान्तिमत्यम्ब
 ॥ ५५ ॥ करुणारसार्द्रनयने शरणागतपालनैककृतदीक्षे । प्रगुणा-
 भरणे पालय दीनं मां देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ ५६ ॥ नरजन्मैव
 वरं त्वद्भजनं येन क्रियेत चेदस्मात् । किमवरमेवं नो चेदतस्त-
 देवास्तु कान्तिमत्यम्ब ॥ ५७ ॥ यदुर्लभं सुरैरपि तन्नरजन्मादिशो
 नमास्येतत् । सार्थय दानाद्भक्तेर्व्यर्थय मान्येन कान्तिमत्यम्ब
 ॥ ५८ ॥ जीवति पञ्चभिरेभिर्न विनाऽस्त्येभिर्जनस्तनुं भजते ।
 तदपि तदासीनां त्वां दरमपि नो वेत्ति कान्तिमत्यम्ब ॥ ५९ ॥
 यत्प्रेमद्विपवदने षड्वदने वा कुरुष्व तन्मयि ते । जात्वपि मा
 भूद्भेदः स्तोकेष्वस्मात् कान्तिमत्यम्ब ॥ ६० ॥ शम्बररुद्ररुचिवदने
 शम्बररिपुजीविके हिमाद्रिसुते । अम्बरमध्ये बम्बरडम्बरचिकुरेऽव
 कान्तिमत्यम्ब ॥ ६१ ॥ मन्मानसपाठीनं कलिपुलिने क्रोधभानु-
 संतप्ते । सिञ्च परितो अमन्तं कृपोर्मिभिर्देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ ६२ ॥
 यमिनः क वेद मुकुटान्यपि भवतीं भावयन्ति वा नो वा ।
 यद्येवं मम हृदयं वेत्तु कथं ब्रूहि कान्तिमत्यम्ब ॥ ६३ ॥ क्लिश्य-
 त्ययं जनो बत जननाद्यैरित्यहं श्रितो भवतीम् । तत्राप्येवं यदि

वद तव किं महिमाऽत्र कान्तिमत्यम्ब ॥ ६४ ॥ वृजिनानि सन्तु
 किमतस्तेषां धूलै न किं भवेद्भद ते । स्मरणं दृषदुत्क्षेपणमिव काक-
 गणस्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ६५ ॥ प्रसरति तव प्रसादे किमलभ्यं
 व्यत्यये तु किं लभ्यम् । लभ्यमलभ्यं किं नस्तेन विना देवि
 कान्तिमत्यम्ब ॥ ६६ ॥ किं चिन्तयामि संविच्छरदुदयं त्वत्पद-
 च्छलं कतकम् । घृष्टं यदि प्रसीदेद्दुदयजलं मेऽद्य कान्तिमत्यम्ब
 ॥ ६७ ॥ विभजतु तव पदयुगली हंसीयोगीन्द्रमानसैकचरी ।
 संविदसंविदप्यसी मिलिते हृदि मेऽद्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ६८ ॥
 कियदायुस्तत्रार्धं स्वप्ने न हतं कियच्च बाल्याद्यैः । कियदस्ति केन
 भजनं तृप्तिस्तव केन कान्तिमत्यम्ब ॥ ६९ ॥ वेद्मि न धर्ममधर्मं
 कायक्लेशोऽस्त्यदो विचारफलम् । जानाम्येकं भजनं तव शुभदं
 हीति कान्तिमत्यम्ब ॥ ७० ॥ स्निह्यति भोगे दुह्यति योगायेदं
 वृथाऽद्य मुह्यति मे । हृदयं किमु स्वतो वा परतो वा वेत्ति कान्ति-
 मत्यम्ब ॥ ७१ ॥ न विभीमो भवजलधेर्दरमपि दनुजारिसोदरि
 शिवे ते । आस्ते कटाक्षवीक्षातरणिर्ननु देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ ७२ ॥
 चिन्तामणौ करस्थेऽप्यटनं वीथीषु किं ब्रुवे मातः । वद किं मे
 त्वयि सत्यामन्याश्रयणे न कान्तिमत्यम्ब ॥ ७३ ॥ नरवर्णनेन रसना
 परवनितावीक्षणेन नेत्रमपि । क्रौर्येण मनोऽपि हतं भाव्यं तु न
 वेद्मि कान्तिमत्यम्ब ॥ ७४ ॥ त्रासितसुरपतितप्तं तप्तं किं धर्ममेव
 वा क्लृप्तम् । किमपि न संचितममितं वृजिनमये किं तु कान्तिम-
 त्यम्ब ॥ ७५ ॥ पापीत्युपेक्षसे चेत्पातुं काऽन्या भवेद्विना भव-
 तीम् । किमिदं न वेद्मि सोऽयं बकमन्नः कस्य कान्तिमत्यम्ब
 ॥ ७६ ॥ वञ्चयितुं वृजिनाद्यैर्मुग्धान्भवतीं विनेतरान्नेक्षे । किमतः
 परं करिष्यसि विदितमिदं मेऽद्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ७७ ॥ वञ्चयसि

मां रुदन्तं बालमिव फलेन मां धनाञ्जेन । माऽस्तु कदापि ममेदं
 कैवल्यं देहि कान्तिमत्यम्ब ॥ ७८ ॥ त्रयया किं मेऽद्य गुणे तव
 विदिते यो यतस्तु संभवति । आस्तां मौक्तिकलाभे सति शुक्त्या
 किं नु कान्तिमत्यम्ब ॥ ७९ ॥ अद्भुतमिदं सकृद्येन ज्ञाता वा
 श्रियो दिशस्येभ्यः । ये खलु भक्तास्तेभ्यः कैवल्यं दिशसि कान्ति-
 मत्यम्ब ॥ ८० ॥ सुरनैचिकीव विबुधान्कादम्बिनिकेव नीलकण्ठ-
 मपि । प्रीणयसि मानसं मे शोभय हंसीव कान्तिमत्यम्ब ॥ ८१ ॥
 कर्तुं मनःप्रसादं तव मयि चेत्किं करिष्यति वृजिनम् । जलजविकासे
 भानोः परिपन्थितमो नु कान्तिमत्यम्ब ॥ ८२ ॥ तव तु करुणा
 स्रवन्त्यां प्रवहन्त्यां स्तोकता गतेति मया । लुठति स्फुटति मनो मे
 नेदं जानासि कान्तिमत्यम्ब ॥ ८३ ॥ शोधयितुमुदासीना यदि मां
 पात्रं किमस्य पश्याहम् । मादृशि का वा वार्ता दासजने कान्ति-
 मत्यम्ब ॥ ८४ ॥ अभजमनन्यगतिस्त्वां किं कुर्यास्त्वं न वेद्यतः-
 प्रभृति । अवने वाऽनवने वा न विचारो मेऽस्ति कान्तिमत्यम्ब
 ॥ ८५ ॥ किं वर्तते समास्मान्निखिलजगन्मस्तलालितं भाग्यम् ।
 यमिहृदयपद्महंसीं यत्त्वां सेवेऽद्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ८६ ॥ कर्तुं
 जगन्ति विधिवद्भर्तुं हरिवद्विरीशवद्धर्तुम् । लीलावती त्वमेव प्रती-
 यसे देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ ८७ ॥ केचिद्विदन्ति भवतीं केचिन्न
 विदन्ति देवि सर्वमिदम् । त्वत्कृत्यं वद सत्यं किं लब्धं तेन
 कान्तिमत्यम्ब ॥ ८८ ॥ शास्त्राणि कुक्षिपूत्यै स्फूत्यै निगमाश्च
 कर्मणा किं तैः । किं तव तत्त्वं ज्ञेयं यैस्त्वत्कृपयैव कान्तिमत्यम्ब
 ॥ ८९ ॥ किं प्रार्थये पुनः पुनरवने भवतीं विना विचारः स्यात् ।
 कस्याः क इति विदन्नपि दूये मोहेन कान्तिमत्यम्ब ॥ ९० ॥
 विदुषस्त्वां शरणं मे शास्त्रश्रमलेशवार्तयापि कृतम् । करजुषि नवनीते

किं दुग्धविचारेण कान्तिमत्यम्ब ॥ ९१ ॥ प्रणवोपनिषद्भिगमागम-
योगिमनःस्त्रिधातितुङ्गेषु । भाहि प्रभेव तरयेर्मम हृदि निधेऽपि कान्ति-
मत्यम्ब ॥ ९२ ॥ स्फुटितारुणमणिशोभं त्रुटिताभिनवप्रवालमृदुलत्वम् ।
श्रुतिशिखरशेखरं ते चरणाब्जं स्तौमि कान्तिमत्यम्ब ॥ ९३ ॥ तव चर-
णाम्बुजभजनादमृतरसस्यन्दिनः कदाप्यन्यत् । स्वप्नेऽपि किञ्चिदपि मे
मा स्म भवेद्देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ ९४ ॥ विस्मापनं पुरारैरस्माद्व्यजी-
विकां परात्परमम् । सुषमामयं स्वरूपं सदा निषेवेय कान्तिमत्यम्ब
॥ ९५ ॥ मङ्गलमस्तिवति पिष्टं पिनष्टि गीः सर्वमङ्गलायास्ते । वशित-
जयायाश्च तथा जयेति वादोऽपि कान्तिमत्यम्ब ॥ ९६ ॥ आशासि-
तुर्विभूत्यै भवति भवत्यै हि मङ्गलाशास्तिः । स्वामिसमृद्ध्याशंसा
भृत्योन्नत्यै हि कान्तिमत्यम्ब ॥ ९७ ॥ निगमैरपरिच्छेद्यं क्व वैभवं
तेऽल्पधीः क्व चाहमिति । तूष्णीकं मां भक्तिस्तव मुखरयति स्म
कान्तिमत्यम्ब ॥ ९८ ॥ अनुकम्पापरवशितं कम्पातटसीञ्चि कल्पिता-
वसथम् । उपनिषदां तात्पर्यं तव रूपं स्तौमि कान्तिमत्यम्ब ॥ ९९ ॥
जय धरणीधरतनये जय वेणुवनाधिराट्प्रिये देवि । जय जम्भभेदिविनुते
जय जगतामम्ब कान्तिमत्यम्ब ॥ १०० ॥ गुणमञ्जरिपिञ्जरितं सुन्दर-
रचितं विभूषणं सुदृशम् । गीतिशतकं भवत्याः क्षयतु कटाक्षेण
कान्तिमत्यम्ब ॥ १०१ ॥ वहा यस्य मनीषिहारतरलः श्रीवेङ्कटेशो
महान्माता यस्य पुनः सरोजनिलया साध्वीशिरोभूषणम् । श्रीवत्साभि-
जनामृताम्बुधिविधुः सोऽयं कविः सुन्दरो देव्या गीतिशतं व्यधत्त
महितं श्रीकान्तिमत्या मुदे ॥ १०२ ॥ इति श्रीसुन्दराचार्यप्रणीतं
देवीगीतिशतकं संपूर्णम् ॥

२८४. त्रिपुरसुन्दरीमानसपूजनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अमृतजलधिमध्योल्लासिरत्नान्तरीपप्रसृमर-
किरणालीकल्पितोद्यानशोभे । सुरतरुनिकुरम्बस्पृष्टवातायनान्तश्चलद-
लिपटलीभिः क्लृप्तधूपादिकृत्ये ॥ १ ॥ मणिमयभवनेऽन्तःप्रौढमाणिक्य-
शालामधिवसति त्रिशाला कापि ते रत्नवेदी । तदुपरिकृतवासं दत्त-
बालार्कहासं दिशतु शुभमनन्ते देवि सिंहासनं ते ॥ २ ॥ तदुपरि
धृतनानाहेतिभूषाश्मरश्मिव्यतिकरपुनरुक्तीभूतरम्योत्तरीयाम् । गल-
दमलदयाम्भसिक्तभक्तप्ररोहां प्रणवनलिनभृङ्गीं भावये ज्ञानभङ्गीम् ।
॥ ३ ॥ द्रुहिणहरिहराणां मौलिसंचारशीलं मणिघटितविभूषारश्मि-
निर्णेजितं च । निजमतिद्व्यदाहं भक्तिगङ्गापयोभिः पदयुगममलं ते
देवि निर्णेजयामि ॥ ४ ॥ गरुडमणिमयूखस्पर्धिदूर्वासनाथैः कुशशिशु-
परिजुष्टैः स्कीतसिद्धार्थसाथैः । उपहितसितगन्धैः साक्षतैर्वारिभिस्ते
जननि चरणपद्मे पाद्यमाद्यं ददामि ॥ ५ ॥ फलकुसुमसनाथं नूतनरत्न-
प्ररोहं मलयजरसदिग्धं स्निग्धमुग्धाक्षतं च । दरनियमितभक्तानीक-
वाञ्छाप्रदाने करसरसिरुहेऽस्मिन्नर्घ्यमर्घ्यं ददामि ॥ ६ ॥ शिशिर-
किरणजातीपत्रदेवप्रसूनस्फुटितदलनवैलाकान्तककोलगन्धम् । शिशिर-
ममलमेतद्द्विद्विषयूषसख्यं सलिलमखिलमातस्त्व प्रसन्नाचमेथाः ॥ ७ ॥
नवमणिहयपीठे प्रेतपद्मस्थितापि प्रपदतरलशोभास्पृष्टसद्विष्टरश्मि ।
दधिमधुघृतमिश्रं त्रिविराजोपनीतं शशिमुखि मधुपर्कं त्वं सुखान्तर्न-
येथाः ॥ ८ ॥ पुनराचमनं कार्यं जगज्जननि सुव्रते । त्वच्छिक्षितेन
मार्गेण यतो लोकः प्रवर्तते ॥ ९ ॥ त्वरितसहचरीभिर्दत्तहस्तावलम्बं
चरणनलिनमेतत्पादुकास्थं विधाय । प्रविश विविधशालं स्नानगोहा-
न्तरालं पशुपतिसहितैवाभ्यङ्गमङ्गीकुरुष्व ॥ १० ॥ अपि रसिक-
विगीतं भक्तचित्तानुमलैः सदयहृदयभावे स्नाहि पञ्चामृतेन ।

शशिमृगमदमुस्तागोरसिद्वार्थचूणैः कुसुमजलविमिश्रैः स्वैरमुद्वर्त-
याङ्गम् ॥ ११ ॥ परिजनपरिमृष्टे त्वच्छरीरे न यावच्छिरसलिल-
धारां कापि चिक्षेप तावत् । उदयिनि जनमातः सीत्कृते
बद्धभात्रैस्त्रिपुरमथनहासैर्वीडितं क्रीडितं ते ॥ १२ ॥ अथ विमलि-
तरत्नस्वर्णदुर्वर्णकुम्भैस्त्रिभुवनगततीर्थानीतपानीयपूर्णैः । स्नापयति
सुरनारीवृन्दमेतत्तथापि प्रणयजलमिदं नः स्नानकृत्यं करोतु
॥ १३ ॥ विमलधवलचीनप्रच्छदप्रावृताङ्गयास्तत्र शिरसिरुहेभ्यो
निर्हरेऽम्बाम्बुविन्दून् । अगरुशकलधूपैर्धूप्यतां चाङ्गमङ्गं सह
पशुपतिना त्वं याहि वासोगृहान्तः ॥ १४ ॥ नवविमलविचित्रे
वाससी नूत्नरत्नद्युतिकृतपुनरुक्तायामसंशोभिनी ते । अथ कुचपरि-
णाहाच्छादिनीं शुभनेत्रत्रितयभवदसूयां कंचुकीमर्पयामि ॥ १५ ॥
नहनमपि कचनां कङ्कतीभिर्विधाय ग्रथितमणिविभूषां देवि वेणीं
करोमि । निहितनवकिरीटालम्बिमुक्तालताभिस्तत्बहुलमयूखां
चन्द्रलेखां विदध्याम् ॥ १६ ॥ अलिकतलविलम्बिस्फीतसीमन्त-
मुक्तासरणिघटितहीरास्पष्टचन्द्रान्ततन्द्रे । विविधमणिगणाङ्कोत्तंस-
संश्लिष्यदश्मा श्रवणयुगविभूषा देवि तोषाय भूयात् ॥ १७ ॥
विविधविरचनाभिर्भिन्नभिन्ना विभूषा जनयतु तव कण्ठे देवि
कामप्यभिरूपा । गुणिनमपि गिरीशश्लेषदत्तान्तरायं कटिनकुच-
युगाग्रे हारमारोपयामि ॥ १८ ॥ दरतरलविलम्बिस्वर्णसूत्रान्तगुच्छे
जननि तव दिशेतामङ्गदे शर्मकर्म । अथ वलयमणीनां रश्मि-
संभिन्नमुद्रां जनयतु पुनरुक्तां शुङ्खलामन्तरीणाम् ॥ १९ ॥
मणिमयरशनाधःक्षुद्रघण्टानिनादा मणितगुणनिकानां स्मारकाः
स्युः शिवस्य । मरकतमणिजातं मञ्जुमञ्जीरयुग्मं रचयतु शशिमौले
रञ्जनं सिञ्चितेन ॥ २० ॥ अरुणमणिकृतानामङ्गुलीभूषणानां

प्रभवतु पदमुखैर्लाक्ष्या रञ्जितं ते । मृगमदरचितायां पत्रभङ्गी-
लतायामनुभवतु दृगन्तो बन्धनं भूतभर्तुः ॥ २१ ॥ भज जननि
हरिद्रां दत्तहारिद्रमुद्रां कुसुमसलिलतैलाकान्तकाश्मीरकोशाम् ।
अथ नसि कुरु मुक्तां दन्तवासोनुषक्तां स्मितरुचिपुनरुक्तां नन्दि-
तानेकभक्ताम् ॥ २२ ॥ सहजनलिननीले खञ्जने खञ्जनानां
भवनिगडगतानां मोचने लोचने ते । जननि गिरिशचेतोरञ्जने
मन्दमन्दं मसृणिमसृणितैस्तैरञ्जनैरञ्जनेयम् ॥ २३ ॥ प्रणतिभिरुप-
नीतं दीप्तलालाटनेत्रप्रतिभटमिव शंभोर्मृत्युबाधाविरोधि । शशिन
इव मुखेन्दोर्भेदकः कोऽपि धर्मो जनयतु मुदमुखैः कुङ्कुमं रङ्कुनेत्रे
॥ २४ ॥ युगपदुपगतेन्द्रोपेन्द्ररुद्रादिमौलिस्थलमुकुटविघट्टचण्ड-
दण्डाभिवातैः । कृतसरणिरजस्रक्रुद्धदौवारिकैस्ते जननि भव विभूषा
प्रेतपद्मासनस्य ॥ २५ ॥ अहमहमिकयाधः पातुकानां सुराणां
प्रपदमपि शरीरे देवि संयोज्य शीघ्रम् । करुणरसमयीनां लोचना-
न्तश्छटानां कतिपयवलनाभिर्देहि पूजावकाशम् ॥ २६ ॥ अगरु-
घुसृणचोरीशीरगोरोचनाभिर्मलयजमृगनाभिस्फीतकर्पूरपूरैः । कुसुम-
सलिलघृष्टैः कल्पयित्वाङ्गरागं पटुतरपटवासैर्वासये तेऽङ्गकानि
॥ २७ ॥ कमलकुमुदमल्लीमालतीकुन्दजातीबकुलकनकनीपाशो-
कचाम्पेयकाद्यैः । मरुबकतुलसीभिः केतकीबिल्वपत्रैर्दमनकशतप-
त्रैरर्चये त्वत्पदाब्जम् ॥ २८ ॥ हारशेखरवतंसशाटिकाप्रच्छकातुलि-
तकञ्चुकीमुखैः । मण्डपैर्जवनिकाभिरुच्चकैः कौसुमैस्तव मुदं
कदम्बये ॥ २९ ॥ कनकमयहसन्तीकोटिमध्यस्थितानां मृदुपवन-
धुतानां दीप्तवैश्वानराणाम् । अगरुमुपरि हुत्वा गुग्गुलुं सर्जखण्डान्
घृतजतुपरिमिश्रं त्वां शिवे धूपयामि ॥ ३० ॥ धूपवर्तितरुमन्त-
रान्तरा गन्धतैलपरिपूर्णदीपिकाः । आवहन्तु तव पार्श्वयोस्तरामम्बिके

जवनिकापटश्रियम् ॥ ३१ ॥ सुरसुरभिजसर्पिःपूरिते रत्नपात्रे हिम-
 किरणरजोभिलोडितां तूलवर्तीम् । तरुणदहनयुक्तामम्ब कृत्वा ददेयं
 निरयनिरसनाय प्रस्फुरन्तं प्रदीपम् ॥ ३२ ॥ रजतकनकहीराक्ष-
 पात्रेषु मातर्विविधरससनाथैश्चोप्यलेह्यप्रपेयैः । उपहितबहुभक्ष्यैर्व्यञ्ज-
 नैश्चाह्वाद्यैर्जठरदहनवृत्तिं नित्यवृत्ते चरेथाः ॥ ३३ ॥ परस्परकुतूहलैः
 कवलदानरूपैः शिवे पुराणतरुणौ युवां चरतमत्र लीलाशितम् । सुगन्धि
 सलिलं तथा पिबतमेणनाभीरसैः सकेसरनिशाकरै रचयतं करोद्धर्त-
 नम् ॥ ३४ ॥ पनसकदलजम्बूकर्कटीहारहूरासलकबदरनिम्बदुम्बरैर्वीज-
 पूरैः । अमृतलकुचबिल्वैर्दाडिमीनालिकैरुचिरुचितफलैस्ते वर्धतां
 बद्धरागा ॥ ३५ ॥ शशिकरधवलानां नागवल्लीदलानां क्रमुककदर-
 जातीचन्द्रसंयोगभाजाम् । मृगमदसुरसूनुस्फीतचूर्णावृतानां भजतु
 जननि रागं त्वन्मुखाभोजमेतत् ॥ ३६ ॥ कनकभरितपृथ्वीं मानुषा-
 नन्दमाहुस्तदुपरि शतकोटिकामुकानन्दमाहुः । जननि तव ददेयं
 दक्षिणां कां तथापि प्रथय मयि दृगन्तं दक्षिणावीक्षणेन ॥ ३७ ॥
 त्रिभुवनकुहरेऽस्मिन्पूरिते वेणुवीणापटुपटहकङ्गिल्लीतालघण्टानिनादैः ।
 उरगसुरवधूभिर्गीयमानं समन्ताज्जनयतु पदमुच्चैर्देवि नीराजनं ते
 ॥ ३८ ॥ प्राणेषु पञ्चसु निधाय षडात्मवृत्तिवर्तींश्चिदग्निपरिचुम्बित-
 जातशोभाः । नीराजयामि भवतीं भवतीव्रतापनिर्वापहेतुमधुना मधु-
 नाऽलसाक्षि ॥ ३९ ॥ उरगतुरगहंसीकेकिशालूरभृङ्गीमदकलकल-
 विङ्कीश्येनपारावतानाम् । गतिभिरुपचितोऽयं मौलितः पादमूलं हरतु
 दुरितजातं देवि कर्पूरदीपः ॥ ४० ॥ जय देवि जय देवि जय विश्वाधारे
 दीनानाथोद्धरणप्रवणे जनसारे । त्वत्पदपद्मे पद्मे विधृतव्यापारे मयि
 दीने कुरु करुणां करुणामृतपारे ॥ ४१ ॥ अमृतोदधिमध्यस्थितनव-
 रत्नद्वीपे विष्वग्विकसितसुरतरुनवचम्पकनीपे । नानाकुसुमामोदिनि

विधुतागरुधूपे चिन्तामणिभवनेऽङ्गनतिष्ठसुरभूषे ॥ ४२ ॥ माणिक्यो-
ज्ज्वलचक्रासिंहासनशोभे शयपञ्चकमञ्चेऽञ्चितजनलोचनलोभे । सुश्रेता-
तपधारणचलचामरदम्भे ध्याये भवतीमनिशं कृतजगदारम्भे ॥ ४३ ॥
दलितजपाकुसुमोपमवसनच्छाङ्गीं तरुणारुणकरुणप्रदकिरणावलि-
भङ्गीम् । दधतीं रचनां नयने यमुनातारङ्गीं कलयन्तीं कुचकोशे सुषमां
नारङ्गीम् ॥ ४४ ॥ शरपञ्चकवाणासनसृणिपाशोल्लसितां मलयानिल-
परिवाददमुखपद्मश्रुतिताम् । बालामृतकरमण्डितचूडातटमहितां
ज्योतिस्त्रितयालंकृतनयनत्रयसहिताम् ॥ ४५ ॥ पद्मपतियत्रणपद्मतर-
रोमावलिचूपां मन्मथतस्करगुप्तिकमनाभीकूपाम् । प्रपदालम्बिशिखा-
मणिवृन्दारकभूपां कमलासनहरिहरमुखचिन्त्यासितरूपाम् ॥ ४६ ॥
काली बगला बाला तारा भुवनेशी वाराही मातङ्गी कमला
वचनेशी । छिन्ना दुर्गा गङ्गा काशी कामेशी त्वत्तो नान्यत्किञ्चित्त्वं
चिद्रसपेशी ॥ ४७ ॥ त्वं भूमिस्त्वं सलिलं त्वं तेजः प्रबलं त्वं
वायुस्त्वं व्योम त्वं चित्तं विमलम् । त्वं जीवस्त्वं चेशस्त्वं ब्रह्मात्यमलं
सत्यानृतयोरन्यत्त्वत्तः किं सकलम् ॥ ४८ ॥ कुलकुण्डे त्वं कुरुषे
शयने प्रस्वापं स्वाधिष्ठाने मिहिरायुतदीधितितापम् । नीला नाभौ
कण्ठे शशिभा हृतपापं वर्षस्यमृतं विन्दावानन्दावापम् ॥ ४९ ॥
त्वत्पदपद्मे चित्तं त्रिपुरे मे रमतां तत्रैव प्रतिवेलं मौलिर्मे
नमताम् । यातायातक्लेशः सद्यः संशमतां याचे भूयो भूयो भवता मे
भवताम् ॥ ५० ॥ नृत्यति गायति सुरसं सुरनारीवृन्दे करताली-
दानोत्सुकसुरविततानन्दे । नीराजनकाले तव मुनिजननुतवेदे चरणा-
नतसम्राजः परिहृतभवखेदे ॥ ५१ ॥ मिलदलिपटलीभिः केवलं
घ्रातपूर्वः स्फुटितकुसुमगर्भः स्वैरसंचारिणीभिः । उपहितपटवासः
पुष्पधूलीकदम्बैः प्रभवतु पदपाती देवि पुष्पाञ्जलिस्ते ॥ ५२ ॥

सकृदपि विनताङ्घ्रिस्त्वां परिक्रम्य मातर्भवति मखकलेषु क्षीणलोभं
 मनो नः । सरसिजमकरन्दास्वादतृप्तो मिलिन्दः कचिदपि पिचुमन्दे
 चित्तवृत्तिं तनोति ॥ ५३ ॥ जननि खलकपोतन्यायतः पातुकानामधि-
 पदकमलं ते मन्दवृन्दारकाणाम् । भवतु नयनयोस्ते गोचरः क्लानतिर्मे
 न लसति पुनरुच्चैः स्वैरमुद्रीविका चेत् ॥ ५४ ॥ विमलमुकुरविम्बं
 पुण्डरीकातपत्रं शिशिरकरसमाने चामरे चामरेशि । करितुरगकदम्बं
 शक्तिभिर्दिश्यमानं जनय सफलमञ्जलोचनालोचनाभिः ॥ ५५ ॥ अथ
 कृतपरिवाराभ्यर्चनं ते समर्थं स्तुतिभिरनुपमाभिः पावये स्वां
 रसज्ञाम् । यदपि न रविरश्मिः स्वोपकारं विधत्ते तदपि कमलमाला-
 म्लानहानिं तनोति ॥ ५६ ॥ श्रवसि विशति यस्य त्वन्मनोरेकवर्णः
 सकृदपि विधियोगादम्बिके मानवस्य । लघुतरफलमेतद्यन्निवर्गाश्रयत्वं
 परिचरति पुरस्तात्पूरुषार्थश्चतुर्थः ॥ ५७ ॥ हृदयकमलमध्ये त्वां
 समानीय मातः पवनभरितनाडीरन्ध्रमुद्राविधिज्ञाः । दधति परमधन्याः
 कुण्डलीस्पर्शहृष्यच्छशिगलदमृतौघप्लावजन्यप्रमोदम् ॥ ५८ ॥ वदति
 विधिकलत्रं त्वां शिवे कोऽपि कश्चिन्निपुरमथनपुण्यं श्रीपतेः कोऽपि
 भाग्यम् । प्रकृतिमिति परेऽपि प्रौढविज्ञानमेके निखिलनिगममूलं
 मन्महे बोधमेव ॥ ५९ ॥ कदा तव पदाम्बुजस्मरणजातरोमोद्गमः
 सदाशिवमदालसे जननि मातरित्युद्गिरन् । निलीनकरणक्रियस्त्रिदशगर्व-
 सर्वकषामखर्वपदवीं भजे हरिहरादिभिर्भाविताम् ॥ ६० ॥ त्वदीयमुख-
 चन्दिरे चलितलोचनेन्दिन्दिरे प्रसादकुलमन्दिरे स्थगितपद्मचन्द्रे-
 न्दिरे । प्रभापटलतन्तुरे ललितहावकेलीपुरे हृतस्मरहरान्तरे धृतमति-
 र्भवं संतरे ॥ ६१ ॥ त्वदीयं यद्रूपं जनजननि बिन्दुत्रययुतं स्मरन्नन्त-
 र्योगाद्विदिवपतितामाप सुरपः । इदं को जानीते क्षणमपि हरार्थं
 प्रजपतां हसार्थं व्यालम्ब्य प्रतिकलति हंसः परिणतिः ॥ ६२ ॥ जननि

निभृतं यत्ते रूपं वदत्यतिशयतं लसतु हृदि नो दीपप्रायः स कोऽपि
हसात्मकः । स्मरणविषये येन स्वरं स्वरेण विजृम्भता त्रिपुरमथनः
प्रापेशत्वं तदात्मकतां गतः ॥ ६३ ॥ ऋचासाचार्यासि स्तुतिशतजुषां
चापि यजुषां महाधाम्नां साम्नां प्रथितयशसोऽथर्वशिरसः । हरिब्रह्मे-
शाद्याः प्रपदकिरणोत्तंसमुकुटास्तवातस्त्वां स्तोतुं जनजननि को वा
प्रभवतु ॥ ६४ ॥ त्रस्यत्स्वजनगजनन्यसनिनीमुन्माथिनीं माद्यतो
जीवंजीवकुलस्य भृङ्गपटलीन्यङ्कारवद्व्रताम् । रङ्गकृच्छङ्कुविधायिनीं च
नलिनश्रीगर्वसर्वकषां कारुण्यामृतवर्षिणीं मयि शिवे दृष्टिं मनाङ्गो-
टय ॥ ६५ ॥ रिङ्गदृङ्गकदम्बडम्बरपरिष्वङ्गप्रसङ्गाकुलप्रत्यूषस्फुरमाण-
पङ्कजवनीसौभाग्यसर्वकषः । दक्कोणः करुणाङ्कुराङ्किततनुः कोऽप्यद्रिजे
मद्वपुःपान्थत्वे तरसा भवेत्परिकरी धन्यस्तदा स्यां न किम् ॥ ६६ ॥
समुद्यन्मार्तण्डप्रसुमरकरालीमसृणया पदद्वन्द्वानन्दप्रणयिजनरिङ्गतकरु-
णया । ललल्लीलाभाजा परशिवपरिष्वङ्गपरया धिया चेतः कालं नय
गतनय त्वं क्षणमपि ॥ ६७ ॥ वेदैरङ्घ्रिभिरुज्ज्वलोपनिषदां वृन्दैरधः-
कलिपतैः शास्त्राद्यैरपि तिर्यगूर्ध्वकलितैरोंकारमार्गेण च । विष्वङ्मात्रनि-
बन्धनैः परिचितेऽस्मिन्वाङ्मये पञ्जरे कीरी काचन चेतनैकविभवा
चित्ते चकास्ताच्चिरम् ॥ ६८ ॥ तरुणारुणप्रतिमरम्यरुचिं कुसुमेषुचाप-
सृणिपाशकराम् । त्रिगुणात्परां त्रिगुणरूपमयीं भवतीमहर्निशमहं
कलये ॥ ६९ ॥ इति निजमतिवैभवानुरूपामकृत कविर्भुवि सामराज-
नामा । समयिजनमुदेऽम्बिकासपर्याममृतसुखात्मकताविकासप-
र्याम् ॥ ७० ॥ इति श्रीसत्यानन्दनाथापरनामधेयसामराजदीक्षितविर-
चिते पूजारत्नवर्ति त्रिपुरसुन्दरीमानसपूजनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२८५. परा मानसिका पूजा ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ उषसि सागधमङ्गलगायनैर्ज्ञेयि जागृहि
जागृहि जागृहि । अतिकृपार्द्रकटाक्षनिरीक्षणैर्जगदिदं जगदम्ब
सुखीकुरु ॥ १ ॥ कनकमयवितर्दिशोभमानं दिशि दिशि पूर्णसुवर्ण-
कुम्भयुक्तम् । मणिमयगृहमध्यमेहि मातर्मयि कृपया हि समर्चनं
ग्रहीतुम् ॥ २ ॥ कनककलशशोभमानशीर्षं जलधरलम्बि समुल्लसत्प-
ताक्रम् । भगवति तव संनिवासहेतोर्मणिमयमन्दिरमेतदर्पयामि ॥ ३ ॥
तपनीयमयी सुतूलिकाकमनीया मृदुलोत्तरच्छदा । नवरत्नविभूषिता
मया शिविकेयं जगदम्ब तेऽर्पिता ॥ ४ ॥ कनकमयवितर्दिस्थापिते
तूलिकाढ्ये विविधकुसुमकीर्णं कोटिवालार्कवर्णे । भगवति रमणीये
रत्नसिंहासनेऽस्मिन्नपविश पदयुग्मं हेमपीठे निधेहि ॥ ५ ॥ मणिमौक्ति-
कनिर्मितं महान्तं कनकस्तम्भचतुष्टयेन युक्तम् । कमनीयतमं भवानि
तुभ्यं नवमुल्लोचमहं समर्पयामि ॥ ६ ॥ दूर्वया सरसिजान्वितविष्णु-
क्रान्तयापि सहितं कुसुमाढ्यम् । पद्मयुग्मसदृशे पदयुग्मे पाद्यमेतदुररीकुरु
मातः ॥ ७ ॥ गन्धपुष्पयवसर्पपदूर्वासंयुतं तिलकुशाक्षतमिश्रम् । हेम-
पात्रनिहितं सह रत्नैरर्घ्यमेतदुररीकुरु मातः ॥ ८ ॥ जलजद्युतिना करेण
जातीफलकङ्कोललवङ्गगन्धयुक्तैः । अमृतैरमृतैरिवातिशीतैर्भगवत्याचमनं
विधीयताम् ॥ ९ ॥ निहितं कनकस्य संपुटे पिहितं रत्नपिधानकेन
यत् । तदिदं भवतीकरेऽर्पितं मधुपर्कं जननि प्रगृह्यताम् ॥ १० ॥
एतच्चम्पकतैलमम्ब विविधैः पुष्पैर्मुहुर्वासितं न्यस्तं रत्नमये सुवर्णचषके

१ इदमेव स्तोत्रं 'चतुःषष्ट्युत्तरमानसपूजास्तोत्र' नाम्नाऽऽसत्काव्य-
मालाया नवमगुच्छके मुद्रितं वरीवर्तते । तत् कचिच्च 'परा मानसिका
पूजा' ख्ययापि प्रसिद्धम् ।

भृङ्गैर्भ्रमद्विर्वृतम् । सानन्दं सुरसुन्दरीभिरभितो हस्ते धृतं तन्मया केशेषु
 भ्रमरप्रभेषु सकलेष्वङ्गेषु चालिष्यते ॥ ११ ॥ मातः कुङ्कुमपङ्कजनिर्मित-
 मिदं देहे तवोद्वतेन भक्त्याऽहं कलयामि हेमरजसा संमिश्रितं केसरैः ।
 केशानामलकैर्विशोध्य विशदान्कस्तूरिकाद्यर्चितैः स्नानं ते नवरत्नकुम्भ-
 विधिना संवासितोष्णोदकैः ॥ १२ ॥ दधिदुग्धघृतैः समाक्षिकैः सितया
 शर्करया समन्वितैः । स्नपयामि वताहमावृतो जननि त्वां पुनरुष्ण-
 वारिभिः ॥ १३ ॥ एलोशीरसुवासितैः सकुसुमैर्गङ्गादितीर्थोदकैर्मागिकय-
 द्रवमौक्तिकामृतरसैः स्वच्छैः सुवर्णोदकैः । मन्त्रान्वैदिकतान्त्रिकान्परि-
 पठन् सानन्दमत्यादरात्स्नानं ते परिकल्पयामि जननि स्नानं त्वम-
 ङ्गीकुरु ॥ १४ ॥ बालार्कद्युति दाडिमियकुसुमप्रस्पृधि सर्वोत्तमं
 मातस्त्वं परिधेहि दिव्यवसनं भक्त्या मया कल्पितम् । मुक्ताभि-
 ग्रथितं सुकञ्चुकमिदं स्वीकृत्य पीतप्रभं तप्तस्वर्णसमानवर्णमतुलं
 प्रावर्णमङ्गीकुरु ॥ १५ ॥ नवरत्नमये मयापिते कमनीये तपनीय-
 पादुके । सविलासमिदं पदद्वयं कृपया देवि तयोर्निधीयताम्
 ॥ १६ ॥ बहुभिरगरुधूपैः सादरं धूपयित्वा भगवति तव केशान्क-
 ङ्कृतैर्मार्जयित्वा । सुरभिभिररविन्दैश्चम्पकैश्चार्चयित्वा झटिति
 कनकसूत्रैर्जूटयन् वेष्टयामि ॥ १७ ॥ सौवीराञ्जनमिदमम्ब चक्षुषोस्ते
 विन्यस्तं कनकशलाकया मया यत् । तद्भयूनं मलिनमपि त्वदक्षि-
 सङ्गाद्ब्रह्मेन्द्राद्यभिलषणीयतामियाय ॥ १८ ॥ मङ्गीरे पदयो-
 र्निधाय रुचिरां विन्यस्य काञ्चीं कटौ मुक्ताहारसुरोजयोरनुपमां
 नक्षत्रमालां गले । केयूराणि भुजेषु रत्नदलयश्रेणीं करेषु क्रमात्ता-
 टङ्के तव कर्णयोर्विनिदधे शीर्षे च चूडामणिम् ॥ १९ ॥ धम्मिल्ले
 तव देवि हेमकुसुमान्याधाय भालस्थले मुक्ताराजिविराजमानतिलकं
 नासापुटे मौक्तिकम् । मातर्मौक्तिकजालिकां च कुचयोः सर्वाङ्गुली-

पूर्विकाः कव्यां काञ्चनकिङ्किणीर्विनिदधे रत्नावतंसं श्रुतौ ॥ २० ॥
 मातर्भालतले तवातिविमले काश्मीरकस्तूरिकाकर्पूरागरुभिः करोमि
 तिलकं देहाङ्गरागं तव । वक्षोजादिषु यक्षकर्दमरसं सिक्तासु
 पुष्पाक्षतैः पादौ कुङ्कुमलेपनादिभिरहं संपूजयामि क्रमात् ॥ २१ ॥
 रत्नाक्षतैस्त्वां परिपूजयामि मुक्ताफलैर्वा रुचिरैरचिदैः । अखण्डितै-
 र्देवि यवादिभिर्वा काश्मीरपङ्काङ्किततण्डुलैर्वा ॥ २२ ॥ जननि
 चम्पकतैलमिदं पुरो मृगमदोऽयमिदं पटवासकम् । सुरभिगन्धमिदं
 च चतुःसमं सपदि सर्वमिदं प्रतिगृह्यताम् ॥ २३ ॥ सीमन्ते ते
 भगवति मया सादरं न्यस्तमेतत्सिन्दूरं ते हृदयकमले हर्षवर्षं
 तनोतु । बालादित्यद्युतिरिव सदा लोहिता यस्य कान्तिरन्तर्धान्तं
 हरतु सततं चेतसा चिन्तयामि ॥ २४ ॥ मन्दारकुन्दकरवीरलवङ्ग-
 पुष्पैस्त्वां देवि संततमहं परिपूजयामि । जातीजपावकुलचम्पक-
 केतकानि नानाविधानि कुसुमानि च तेऽर्पयामि ॥ २५ ॥ मालती-
 बकुलहेमपुष्पिकाकाञ्चनारकरवीरकेतकैः । कर्णिकारगिरिकर्णिकादिभिः
 पूजयामि जगदम्ब ते वपुः ॥ २६ ॥ पारिजातशतपत्रपाटलैर्मल्लि-
 कावकुलचम्पकादिभिः । अम्बुजैः सुकुसुमैश्च सादरं पूजयामि
 जगदम्ब ते वपुः ॥ २७ ॥ लाक्षासंमिलितैः सिताभ्रसहितैः
 श्रीवाससंमिश्रितैः कर्पूराकलितैः सितामधुयुतैर्गोसर्पिषाऽऽलोडितैः ।
 श्रीखण्डागरुगुगुलुप्रभृतिभिर्नानाविधैर्वस्तुभिर्धूपं ते परिकल्पयामि
 जननि स्नेहात्त्वमङ्गीकुरु ॥ २८ ॥ रत्नालङ्कृतहेमपात्रनिहितैर्गोसर्पिषा
 दीपितैर्दीपैर्दीर्घतरान्धकारभिदुरैर्बालार्ककोटिप्रभैः । आताम्रज्वलदु-
 ज्ज्वलज्वलनवद्रुतप्रदीपैः सदा मातस्त्वामहमादरादनुदिनं नीराज-
 याम्युच्चकैः ॥ २९ ॥ मातस्त्वां दधिदुग्धपायसमहाशाल्यन्नसंता-
 निकाः सूपापूपसिताघृतैः सवटकैः सक्षुद्ररम्भाफलैः । एलाजीरक-

हिङ्गुनागरनिशाकस्तूरिकासंस्कृतैः शकैः साकमहं सुधाधिकरसैः
संतर्पयाम्यम्बिके ॥ ३० ॥ सापूपसूपदधिदुग्धसिताघृतानि सुस्वादु-
भक्ष्यपरमान्नपुरःसराणि । शाकोलसन्मरिचजीरकबाह्लिकानि
भक्ष्याणि भक्ष जगदम्ब मयार्पितानि ॥ ३१ ॥ क्षीरमेतदिदमुत्त-
मोत्तमं प्राज्यमाज्यमिदमुत्तमं मधु । मातरेतदमृतोपमं त्वया
संभ्रमेण परिपीयतां मुहुः ॥ ३२ ॥ उष्णोदकैः पाणियुगं मुखं च
प्रक्षाल्य मातः कलधौतपात्रे । कर्पूरमिश्रेण सकुङ्कुमेन हस्तौ
समुद्वर्तय चन्दनेन ॥ ३३ ॥ अतिशीतमुशीरवासितं तपनीयावपने
निवेदितम् । पटपूतमिदं जितामृतं शुचि गङ्गामृतमम्ब पीयताम्
॥ ३४ ॥ जम्बवाञ्जरम्भाफलसंयुतानि द्राक्षाफलाक्रोडसमन्वितानि ।
सनालिकेराणि सदाडिमानि फलानि ते देवि समर्पयामि ॥ ३५ ॥ कलि-
ङ्गकोशातकिसंयुतानि जम्बीरनारङ्गसमन्वितानि । सबीजपूराणि सबा-
दराणि फलानि ते चाम्ब समर्पयामि ॥ ३६ ॥ कर्पूरेण युतैर्लवङ्ग-
सहितैः कङ्कोलचूर्णान्वितैः सुस्वादुक्रमुकैः सगौरखदिरैः सुस्निग्ध-
जातीफलैः । मातः केतकपत्रपाण्डुरुचिभिस्ताम्बूलवल्लीदलैः सानन्दं
मुखमण्डनीयमतुलं ताम्बूलमङ्गीकुरु ॥ ३७ ॥ एलालवङ्गादिसम-
न्वितानि कङ्कोलकर्पूरसमिश्रितानि । ताम्बूलवल्लीदलसंयुतानि
पूगानि ते देवि समर्पयामि ॥ ३८ ॥ ताम्बूलवल्लीदलनिर्जितहेमवर्णं
स्वर्णाक्तपूगफलमौक्तिकचूर्णयुक्तम् । रत्नस्थगिस्थितमिदं खदिरेण
युक्तं ताम्बूलमम्ब वदनाम्बुरुहे गृहाण ॥ ३९ ॥ महति कनकपात्रे
स्थापयित्वा विशालान् डमरुसदृशरूपान् बद्धगोधूमदीपान् । बहु-
घृतमथ तेषु न्यस्य दीपानुकम्पान् भुवनजननि कुर्वे नित्यमारार्तिकं
ते ॥ ४० ॥ सविनयमथ दत्त्वा जानुयुगमं धरण्यां सपदि शिरसि
धृत्वा पात्रमारार्तिकस्य । मुखकमलसमीपे तेऽम्ब सार्धं त्रिवारं

भ्रमयति मयि भूयात्ते कृपाद्रः कटाक्षः ॥ ४१ ॥ अथ
 बहुमणिमिश्रैर्मौक्तिकैस्त्वां विकीर्य त्रिभुवनकमनीयैः पूजयित्वा च
 वस्त्रैः । मिलितविविधमुक्तादिव्यलावण्ययुक्तां जननि कनकवृष्टिं
 दक्षिणां तेऽर्पयामि ॥ ४२ ॥ मातः काञ्चनदण्डमण्डितमिदं
 पूर्णेन्दुबिम्बप्रभं नानारत्नविशोभिहेमकलशं लोकत्रयाह्लादकम् ।
 भास्वन्मौक्तिकजालिकापरिवृतं ग्रीत्यात्महस्ते धृतं छत्रं ते परिकल्प-
 यामि शिरसि त्वष्ट्रा स्वयं निर्मितम् ॥ ४३ ॥ शरदिन्दुमरीचिगौर-
 वणैर्मणिमुक्ताविलसत्सुवर्णदण्डैः । जगदम्ब विचित्रचामरैस्त्वामह-
 मानन्दभरेण वीजयामि ॥ ४४ ॥ मार्तण्डमण्डलनिभो जगदम्ब
 योऽयं भक्त्या मया मणिमयो मुकुटोऽर्पितस्ते । पूर्णेन्दुबिम्बरुचिरं
 वदनं स्वकीयमस्मिन्विलोकय विलोलविलोचने त्वम् ॥ ४५ ॥
 इन्द्रादयो नतिनतैर्मुकुटप्रदीपैर्नीराजयन्ति सततं तव पादपीठम् ।
 तस्मादहं तव समस्तशरीरमेतन्नीराजयामि जगदम्ब सहस्रदीपैः
 ॥ ४६ ॥ प्रियगतिरतितुङ्गो रत्नपल्लायुक्तः कनकमयविभूषः
 स्निग्धगम्भीरघोषः । भगवति कलितोऽयं वाहनार्थं मया ते
 तुरगशतसमेतो वायुवेगस्तुरंगः ॥ ४७ ॥ मधुकरवृतकुम्भे न्यस्त-
 सिन्दूरेणुः कनककलितघण्टः किङ्किणीशोभिकण्ठः । श्रवणयुगल-
 चञ्चच्चामरो मेघतुल्यो जननि तव मुदे स्तान्मत्तमातङ्ग एषः ॥ ४८ ॥
 द्रुततरतुरगैर्विराजमानं मणिमयचक्रचतुष्टयेन युक्तम् । कनकमय-
 महं वितानवन्तं भगवति ते हि रथं समर्पयामि ॥ ४९ ॥
 हयगजरथपत्तिशोभमानं दिशि दिशि दुन्दुभिमेघनादयुक्तम् ।
 अतिबहुचतुरङ्गसैन्यमेतद्भगवति भक्तिभरेण तेऽर्पयामि ॥ ५० ॥
 परिखीकृतसप्तसागरं बहुसंपत्सहितं मयाऽम्ब ते । विपुलं धरणी-
 तलाभिधं प्रबलं दुर्गमिदं समर्पितम् ॥ ५१ ॥ शतपत्रयुतैः स्वभाव-

शीतैरतिसौरभयुतैः परागपीतैः । भ्रमरीमुखराकृतैरनन्तैर्व्यजनैस्त्वां
जगदम्ब वीजयामि ॥ ५२ ॥ अमरलुलितलोलकुन्तलाली विगलित-
काल्यविक्रीर्णरङ्गभूमिः । इयमतिरुचिरा नटी नटन्ती तव हृदये
मुदमातनोतु मातः ॥ ५३ ॥ सुखनयनविलासलोलवेणीविलसित-
निर्जितलोलभृङ्गमालाः । युवजनसुखकारिचास्लीला भगवति ते
पुरतो नटन्ति बालाः ॥ ५४ ॥ रुचिरकुचतटीनां नाट्यकाले
नटीनां प्रतिगृहमथ तत्र प्रत्यहं प्रादुरासीत् । धिमिकितिधिमिधिद्धी
धिद्धिधिद्धीधिमिद्धी धिमिकितिधिमितत्ताथेयथेयेति शब्दः ॥ ५५ ॥
भ्रमदलिकुलतुल्या लोलधम्मिल्लभारा स्मितमुखरुमलोद्यद्दिव्यला-
वण्यपूरा । अनुपमतमवेषा वारयोषा नटन्ती परभृतकलकण्ठी
देवि धैर्यं तनोतु ॥ ५६ ॥ डमरुडिण्डिमझुझुरभल्ली मुदुरवार्द्र-
घटार्द्रघटाहयः । झटिति झाङ्कतिभिर्जगदम्बिके मुदुरिमे हृदयं
सुखयन्तु ते ॥ ५७ ॥ विपञ्चीषु सप्त स्वरान्वादयन्त्यस्तव द्वारि
गायन्ति गन्धर्वकान्ताः । क्षणं सावधानेन चित्तेन मातः समाकर्णय
त्वं मया प्रार्थितासि ॥ ५८ ॥ अभिनवकमनीयैर्नर्तनैर्नर्तकीणां
क्षणमथ रमयित्वा चेत् एवं त्वदीयम् । स्वयमहमपि चित्रैर्नृत्यवाद्य-
प्रगीतैर्भगवति अवदीयं मानसं रञ्जयामि ॥ ५९ ॥ तव देवि
गुणानुवर्णने चतुरा नो चतुराननादयः । तदिहैकमुखेषु जन्तुषु
स्तवनं कस्तव कर्तुमीश्वरः ॥ ६० ॥ पदे पदे या परिपूजकेभ्यः
सद्योऽश्वमेधादिफलं ददाति । तां सर्वपापक्षयहेतुभूतां प्रदक्षिणां ते
परिकल्पयामि ॥ ६१ ॥ रक्तोत्पलारक्तलताप्रभाभ्यां ध्वजोर्ध्वरेखा-
कुलिशाङ्किताभ्याम् । अशेषवृन्दारकवन्दिताभ्यां नमो भवानीपदपङ्क-
जाभ्याम् ॥ ६२ ॥ चरणनलिनयुग्मं पङ्कजैः पूजयित्वा कनककमलमालां
कण्ठदेशेऽर्पयित्वा । शिरसि विनिहितोऽयं रत्नपुष्पाञ्जलिस्ते हृदय-

कमलमध्ये देवि हर्षं तनोतु ॥ ६३ ॥ अथ मणिमयसञ्चकाभिरामे
 द्युतिमति पुष्पवितानराजमाने । प्रसरदगरुधूपधूपितेऽस्मिन्भगवति
 वासगृहेऽस्तु ते निवासः ॥ ६४ ॥ तव देवि सरोजचिह्नयोः पदयोर्नि-
 र्जितपद्मरागयोः । अतिरक्ततरैरलक्तकैः पुनरुक्तां रचयामि रक्तताम्
 ॥ ६५ ॥ अथ मारुतशीतवासितं निजताम्बूलरसेन रञ्जितम् ।
 तपनीयमये हि पट्टके मुखगण्डूषजलं निधीयताम् ॥ ६६ ॥ एतस्मि-
 न्मणिखचिते सुवर्णपीठे त्रैलोक्याभयवरदे निधाय पादौ । विस्तीर्णे
 मृदुतरलोत्तरच्छदेऽस्मिन्पर्यङ्के कनकमये निषीद मातः ॥ ६७ ॥
 क्षणमथ जगदम्ब मञ्चकेऽस्मिन्मृदुतरतूलिकया विराजमाने । अतिरहसि
 मुदा शिवेन सार्धं सुखशयनं कुरु मां हृदि स्मरन्ती ॥ ६८ ॥ मुक्ता-
 कुन्देन्दुगौरां मणिमयमुकुटां रत्नताटङ्कयुक्तामक्षस्रक्पुष्पहस्तामभयवर-
 करां चन्द्रचूडां त्रिनेत्राम् । नानालंकारयुक्तां सुरमुकुटमणिद्योतित-
 स्वर्णपीठां सानन्दां सुप्रसन्नां त्रिभुवनजननीं चेतसा चिन्तयामि ॥ ६९ ॥
 एषा भक्त्या तव विरचिता या मया देवि पूजा स्वीकृत्यैनां सपदि
 सकलान्मेऽपराधान्क्षमस्व । न्यूनं यत्तत्तव करुणया पूर्णतामेति सर्वं
 सानन्दं मे हृदयकमले तेऽस्तु नित्यं निवासः ॥ ७० ॥ पूजामिमां
 पठेत्प्रातः पूजां कर्तुमनीश्वरः । पूजाफलमवाप्नोति वाञ्छितार्थं च
 विन्दति ॥ ७१ ॥ प्रत्यहं भक्तिसंयुक्तो यः पूजनमिदं पठेत् । वाग्वा-
 दिन्याः प्रसादेन वत्सरात्स कविर्भवेत् ॥ ७२ ॥ पूजामिमां यः पठति
 प्रभाते मध्याह्नकालेऽप्यथवा प्रदोषे । धर्मार्थकामान्पुरुषोऽभ्युपैति
 देहावसाने शिवतामुपैति ॥ ७३ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजक-
 शंकराचार्यविरचिता परा मानसिका पूजा संपूर्णा ॥

२८६. विन्ध्यवासिनीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीनन्दगोपगृहिणीप्रभवा तनोतु भद्रं सदा
मम सुरार्थपरा प्रसन्ना । विन्ध्याद्रिगह्वरगताष्टभुजा प्रसिद्धा सिद्धैः
सुसेवितपदाब्जयुगा त्रिरूपा ॥ १ ॥ वेदैरगम्यमहिमा निजबोधतुष्टा
नित्या गुणत्रयपराऽखिलभेदशून्या । एका प्रपञ्चकरणे त्रिगुणोरुशक्ति-
रुच्चावचाकृतिरथोऽचलजङ्गमात्मा ॥ २ ॥ पीयूषसिन्धुसुरपादपवाटि-
रत्नद्वीपे सुनीपवनशालिनि दुष्प्रवेशे । चिन्तामणिप्रखचिते भवने
निषण्णा विन्ध्येश्वरी श्रियमनल्पतरां करोतु ॥ ३ ॥ श्रुत्वा स्तुतिं
विधिकृतां करुणार्द्रचित्ता नारायणेन सबलौ मधुकैटभाख्यौ । या संज-
हार जगतां प्रलये तथा सा विन्ध्येश्वरी वितनुतां सुमनोरथान्मे ॥ ४ ॥
ब्रह्मेशविष्णुपुरुहूतहुताशनादितेजोभवा महिषपीडितनिर्जेराणाम् ।
स्थानाप्तयेऽतिकृपया महिषं ममर्द विन्ध्येश्वरी हरतु रोगविपत्तिमाशु
॥ ५ ॥ या धूम्रचण्डबलिमुण्डनिशुम्भशुम्भरक्तान्पिपेष सुरकार्यरता-
प्यनेका । दुःखाम्बुधौ निपतितस्य विमूढबुद्धेर्विन्ध्येश्वरी मम ददातु
सुबुद्धिमम्बा ॥ ६ ॥ या दुर्गमं दनुभवं परिमर्द्य नास्त्रा दुर्गा बभूव च
ततान शुभं सुराणाम् । स्वाचारकर्म्मविमुखस्य जुगुप्सितस्य विन्ध्येश्वरी
दहतु वैरिगणान्समस्तान् ॥ ७ ॥ संप्राप्य जन्म वपुषः परिपोषणाय
संख्यातिगवृजिनपुञ्जविधायिनो मे । चण्डासुरप्रमथिनी ललिता च
नास्त्रा विन्ध्येश्वरी हरतु जाड्यमहान्धकारम् ॥ ८ ॥ या तारयत्यखिल
दुष्कृतिलोकपुञ्जात्तरेति नाम गदिता भुवनेषु देवी । अज्ञानसिन्धु-
तरणे दृढनौस्वरूपा विन्ध्येश्वरी मम गुणाग्यसुतं ददातु ॥ ९ ॥
रक्ताम्बरा तरुणभानुरुचिः प्रसन्ना रक्ताम्बुजासनकृतांग्रियुगा धृतास्त्रा ।
रक्तैः स्वलंकृततनुर्मेणिभूषणैश्च विन्ध्येश्वरी मम गिरं विशदां करोतु
॥ १० ॥ रात्रीशकान्तमणिकान्ततनुर्विशालमुक्तालताललितवृत्तकुचा

कृशाङ्गी । श्वेताम्बरा सितसरोजकृताधिवासा विन्ध्येश्वरी मम वचांसि
 पुनातु नित्यम् ॥ ११ ॥ आकर्ण्य दीनवचनं जननीव देवी पुत्रस्य मे
 सपदि सर्वगदान् जहार । लेखाङ्गनामुकुटगुम्फितचित्रपुष्परेणूत्करार्चित-
 पदाग्रनखांशुचन्द्रा ॥ १२ ॥ देवान्विहाय सकलानथ कर्म सर्वं लब्ध्वा
 जनुर्न कृतवांस्तव देवि पूजाम् । मातर्नमामि सततं मनसा च
 वाचा देहेन पादकमलं शरणागतोऽहम् ॥ १३ ॥ देहीष्टमाशु विपुलं
 निजसेवकेभ्यो दारिद्र्यमम्ब हर चारिवधं कुरुष्व । शान्तिं च सर्वजगतां
 विशदां च बुद्धिं त्वं पालयातिकृपया चरणाब्जगं माम् ॥ १४ ॥ देव्याः
 स्तवं पठति यः शिवदं मनुष्यः पूतः शृणोति च मनो विविधैरभीष्टैः ।
 पूर्णं हि तस्य भवति प्रसभं गदाश्च यान्ति क्षयं झटिति मायुकफानि-
 लोत्थाः ॥ १५ ॥ त्र्यर्ष्यष्टभूमिमितसर्वजिदाख्यवर्ष ईषे च मासि
 सितपक्षयुते कवीशः । स्तोत्रं लिलेख मधुरेश्वरमालवीयः सन्नाहमोच-
 नभवो विधुरुद्रशम्याम् ॥ १६ ॥ इति श्रीमन्मालवीयशुक्रमथुरानाथ-
 विरचितं विन्ध्यवासिनीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२८७. वंशवृद्धिकरं वंशकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ भगवन्देवदेवेश कृपया त्वं जगत्प्रभो । वंशा-
 ख्यकवचं ब्रूहि मह्यं शिष्याय तेऽनघ । यस्य प्रभावाद्देवेश वंशवृद्धिर्हि
 जायते ॥ १ ॥ सूर्य उवाच ॥ शृणु पुत्र प्रवक्ष्यामि वंशाख्यं कवचं
 शुभम् । संतानवृद्धिर्यत्पाठाद्भरक्षा सदा नृणाम् ॥ २ ॥ बन्ध्यापि
 लभते पुत्रं काकबन्ध्या सुतैर्युता । मृतवत्सा सपुत्रा स्यात्स्रवद्भर्मा
 स्थिरप्रजा ॥ ३ ॥ अपुष्पा पुष्पिणी यस्य धारणाच्च सुखप्रसूः ॥ कन्या-
 प्रजा पुत्रिणी स्यादेतत्स्तोत्रप्रभावतः ॥ ४ ॥ भूतप्रेतादिजा बाधा या
 बाधा कुलदोषजा । ग्रहबाधा देवबाधा बाधा शत्रुकृता च या ॥ ५ ॥

भस्मीभवन्ति सर्वास्ताः कवचस्य प्रभावतः । सर्वे रोगा विनश्यन्ति सर्वे
 बालग्रहाश्च ये ॥ ६ ॥ पूर्वे रक्षतु वाराही चाग्नेय्यामम्बिका स्वयम् ।
 दक्षिणे चण्डिका रक्षेशैर्ऋत्यां शववाहिनी ॥ ७ ॥ वाराही पश्चिमे
 रक्षेद्वायव्यां च महेश्वरी । उत्तरे वैष्णवी रक्षेद्दीशाने सिंहवाहिनी ॥ ८ ॥
 ऊर्ध्वं तु शारदा रक्षेदधो रक्षतु पार्वती । शाकंभरी शिरो रक्षेन्मुखं
 रक्षतु भैरवी ॥ ९ ॥ कण्ठं रक्षतु चामुण्डा हृदयं रक्षताच्छिवा ।
 ईशानी च भुजौ रक्षेत्कुक्षिं नाभिं च कालिका ॥ १० ॥ अर्पणा ह्युदरं
 रक्षेत्कटिं वस्तिं शिवप्रिया । ऊरू रक्षतु कौमारी जया जानुद्वयं तथा
 ॥ ११ ॥ गुल्फौ पादौ सदा रक्षेद्ब्रह्माणी परमेश्वरी । सर्वाङ्गानि
 सदा रक्षेद्दुर्गा दुर्गातिनाशिनी ॥ १२ ॥ नमो देव्यै महादेव्यै
 दुर्गायै सततं नमः । पुत्रसौख्यं देहि देहि गर्भरक्षां कुरुष्व नः
 ॥ १३ ॥ ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं श्रीं ऐं ऐं ऐं महाकालीमहालक्ष्मी-
 महासरस्वतीरूपायै नवकोटिमूर्त्यै दुर्गायै नमः । ह्रीं ह्रीं ह्रीं दुर्गाति-
 नाशिनी संतानसौख्यं देहि देहि वन्ध्यत्वं स्मृतवत्सत्वं च हर हर
 गर्भरक्षां कुरु कुरु सकलां बाधां कुलजां बाह्यजां कृतामकृतां च
 नाशय नाशय सर्वगान्त्राणि रक्ष रक्ष गर्भं पोषय पोषय सर्वोपद्रवं
 शोषय शोषय स्वाहा । अनेन कवचेनाङ्गं सप्तवाराभिमन्त्रितम् ।
 ऋतुस्नाता जलं पीत्वा भवेद्गर्भवती ध्रुवम् ॥ १४ ॥ गर्भपातभये
 पीत्वा दृढगर्भा प्रजायते । अनेन कवचेनाथ मार्जिताया निशागमे
 ॥ १५ ॥ सर्वबाधाविनिर्मुक्ता गर्भिणी स्यान्न संशयः । अनेन
 कवचेनेह ग्रन्थितं रक्तदोरकम् ॥ १६ ॥ कटिदेशे धारयन्ती
 सुपुत्रसुखभागिनी । असूत पुत्रमिन्द्राणी जयन्तं यत्प्रभावतः ॥ १७ ॥
 गुरुपदिष्टं वंशाख्यं कवचं तदिदं सखे । गुह्याद्गुह्यतरं चेदं न प्रकाश्यं
 हि सर्वतः । धारणात्पठनादस्य वंशच्छेदो न जायते ॥ १८ ॥ बाला

विनश्यन्ति पतन्ति गर्भास्तत्राबलाः कष्टयुताश्च वन्ध्याः । बालग्रहै-
र्भूतगणैश्च रोगैर्न यत्र धर्माचरणं गृहे स्यात् ॥ १९ ॥ इति
श्रीज्ञानभास्करे वंशवृद्धिकरं वंशकवचं संपूर्णम् ॥

२८८. ललितापञ्चरत्नम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्रातः स्मरामि ललितावदनारविन्दं
विम्बाधरं पृथुलमौक्तिकशोभिनासम् । आकर्णदीर्घनयनं मणिकुण्ड-
लाढ्यं मन्दस्मितं मृगमदोज्ज्वलफालदेशम् ॥ १ ॥ प्रातर्भजामि
ललिताभुजकल्पवल्लीं रक्तांगुलीयलसदंगुलिपल्लवाढ्याम् । माणिक्य-
हेमवल्याङ्गदशोभमानां पुण्ड्रेक्षुचापकुसुमेषु सृणीर्दधानाम् ॥ २ ॥
प्रातर्नमामि ललिताचरणारविन्दं भक्तेष्टदाननिरतं भवसिन्धुपो-
तम् । पद्मासनादिसुरनायकपूजनीयं पद्माङ्कुशध्वजसुदर्शनलान्छनाढ्यम्
॥ ३ ॥ प्रातः स्तुवे परशिवां ललितां भवानीं त्रय्यंतवेद्यविभवां
करुणानवद्याम् । विश्वस्य सृष्टिविलयस्थितिहेतुभूतां विद्येश्वरीं
निगमवाङ्मनसातिदूराम् ॥ ४ ॥ प्रातर्वदामि ललिते तव पुण्यनाम
कामेश्वरीति कमलेति महेश्वरीति । श्रीशाम्भवीति जगतां जननी
परेति वाग्देवतेति वचसा त्रिपुरेश्वरीति ॥ ५ ॥ यः श्लोकपञ्चकमिदं
ललिताम्बिकायाः सौभाग्यदं सुललितं पठति प्रभाते । तस्मै ददाति
ललिता झटिति प्रसन्ना विद्यां श्रियं विमलसौख्यमनन्तकीर्तिम् ॥ ६ ॥
इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यस्य श्रीगोविन्दभगवत्पूज्यपाद-
शिष्यस्य श्रीमच्छंकरभगवतः कृतौ ललितापञ्चरत्नं संपूर्णम् ॥

२८९. विन्ध्येश्वरीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ निशुम्भशुम्भमर्दिनीं प्रचण्डमुण्डखण्ड-
नीम् । वने रणे प्रकाशिनीं भजामि विन्ध्यवासिनीम् ॥ १ ॥

त्रिशूलमुण्डधारिणीं धराविघातहारिणीम् । गृहे गृहे निवासिनीं
भजामि विन्ध्य० ॥ २ ॥ दरिद्रदुःखहारिणीं सतां विभूतिकारिणीम् ।
वियोगशोकहारिणीं भजामि विन्ध्य० ॥ ३ ॥ लसत्सुलोलोचनं
लतासदेवरप्रदम् । कपालशूलधारिणीं भजामि विन्ध्य० ॥ ४ ॥
करो मुदा गदाधरो शिवां शिवप्रदायिनीम् । वरावराननां
शुभां भजामि विन्ध्य० ॥ ५ ॥ ऋषीन्द्रजामिनिप्रदं त्रिधास्यरूपधारि-
णीम् । जले स्थले निवासिनीं भजामि विन्ध्य० ॥ ६ ॥ विशिष्टसृष्टिका-
रिणीं विशालरूपधारिणीम् । महोदरे विशालिनीं भजामि विन्ध्य०
॥ ७ ॥ पुरन्दरादिसेवितां मुरादिवंशखण्डनीम् । विशुद्धबुद्धिकारिणीं
भजामि विन्ध्यवासिनीम् ॥ ८ ॥ इति विन्ध्येश्वरीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२९०. भवानीभुजंगस्तुतिः ।

श्रीभवान्यै नमः ॥ षडाधारपङ्केरुहांतविराजत्सुपुष्पांतरालेऽतितेजो-
ल्लसंतीम् । सुधामंडलं द्रावयंतीं पिवंतीं सुधामूर्तिमीडेऽहमानंद-
रूपाम् ॥ १ ॥ ज्वलत्कोटिबालार्कभासारुणांगीं सुलावण्यशृंगार-
शोभाभिरामाम् । महापद्मकिंजलकमध्ये विराजन्निकोणोलसंतीं भजे
श्रीभवानीम् ॥ २ ॥ कण्ठकिंकिणीनूपुरोद्भासिरत्नप्रभालीढलाक्षार्द्र-
पादारविंदाम् । अजेशाच्युताद्यैः सुरैः सेव्यमानां महादेवि मन्मूर्ध्नि
ते भावयामि ॥ ३ ॥ सुशोणांवरावद्धनीवीविराजन्महारत्नकांची-
कलापं नितंबम् । स्फुरद्दक्षिणावर्तनाभिं च तिस्रो वली रम्यते रोम-
राजीं भजेऽहम् ॥ ४ ॥ लसद्भुजमुकुटगणिक्यकुंभोपमश्रीस्तनद्वंद्व-
मंबांबुजाक्षीम् । भजे पूर्णदुग्धाभिरामं तवेदं महाहारदीप्तं सदा
प्रस्तुतास्यम् ॥ ५ ॥ शिरीषप्रसूनोलसद्बाहुदंडैर्ज्वलद्वाणकोदंडपाशां-
कुशैश्च । चलत्कंकणोदारकेयूरभूषाज्वलद्भिः स्फुरंतीं भजे श्रीभवा-

नीम् ॥ ६ ॥ शरत्पूर्णचंद्रप्रभापूर्णबिंबाधरस्मेरवक्त्रारविंदश्रियं ते ।
 सुरत्नावलीहारताटंकशोभां भजे सुप्रसन्नामहं श्रीभवानीम् ॥ ७ ॥
 सुनासापुटं पद्मपत्रायताक्षं यजंतः श्रियं दानदक्षं कटाक्षम् । लला-
 टोल्लसद्रंधकस्तूरिभूषाज्ज्वलद्भिः स्फुरंतीं भजे श्रीभवानीम् ॥ ८ ॥
 चलत्कुंडलां ते भ्रमद्भृंगवृंदां घनस्निग्धधंसिलभूषोज्ज्वलंतीम् ।
 स्फुरन्मौलिमाणिक्यमध्येन्दुरेखाविलासोल्लसद्विव्यमूर्धानमीडे ॥ ९ ॥
 स्फुरत्त्वांब बिंबस्य मे हृत्सरोजे सदा वाङ्मयं सर्वतेजोमयं च । इति
 श्रीभवानीस्वरूपं तदेवं प्रपंचात्परं चातिसूक्ष्मं प्रसन्नम् ॥ १० ॥
 गणेशाणिमाद्यालिलैः शक्तिवृंदैः स्फुरच्छ्रीमहाचक्रराजोल्लसंतीम् ।
 परां राजराजेश्वरीं त्वां भवानीं शिवांकोपरिस्थां शिवां भावयेऽहम्
 ॥ ११ ॥ त्वमर्कस्त्वमग्निस्त्वमिंदुस्त्वमापस्त्वमाकाशभूवायवस्त्वं
 चिदात्मा । त्वदन्यो न कश्चित्प्रकाशोऽस्ति सर्वं सदानंदसंवित्स्वरूपं
 तवेदम् ॥ १२ ॥ गुरुस्त्वं शिवस्त्वं च शक्तिस्त्वमेव त्वमेवासि
 माता पिताऽसि त्वमेव । त्वमेवासि विद्या त्वमेवासि बुद्धिर्गतिर्मे
 मतिर्देवि सर्वं त्वमेव ॥ १३ ॥ श्रुतीनामगम्यं सुवेदागमाद्यैर्महिम्नो
 न जानाति पारं तवेदम् । स्तुतिं कर्तुमिच्छामि ते त्वं भवानि क्षम-
 स्वेदमंब प्रमुग्धः किलाहम् ॥ १४ ॥ शरण्ये वरेण्ये सुकारुण्यपूर्णे
 हिरण्योदराद्यैरगम्येऽतिपुण्ये । भवारण्यभीतं च मां पाहि भद्रे
 नमस्ते नमस्ते नमस्ते भवानि ॥ १५ ॥ इमामन्वहं श्रीभवानीभुजंग-
 स्तुतिं यः पठेच्छ्रोतुमिच्छेत तस्मै । स्वकीयं पदं शाश्वतं चैव सारं
 श्रियं चाष्टसिद्धीश्च देवी ददाति ॥ १६ ॥ इति श्रीमत्परमहंस-
 श्रीमच्छंकराचार्यप्रणीता भवानीभुजंगस्तुतिः संपूर्णा ॥

२९१. भगवतीपद्यपुष्पांजलिस्तोत्रम् ।

श्रीभगवत्यै नमः ॥ भगवति भगवत्पदपंकजं अमरभूतसुरा-
सुरसेवितम् । सुजनमानसदंसपरिस्तुतं कमलयाऽमलया निभृतं
भजे ॥ १ ॥ ते उभे अभिवंदेऽहं विघ्नेशकुलदैवते ॥ नरनागानन-
स्त्वेको नरसिंह नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥ हरिगुरुरूपदपद्मं शुद्धपद्मेऽनु-
रागाद्विगतपरमभागे सन्निधायानदरेण । तदनुचरि करोमि प्रीतये
भक्तिभाजां भगवति पदपद्मे पद्यपुष्पांजलिं ते ॥ ३ ॥ केनैते
रचिताः कुतो न निहिताः शुभादयो दुर्मदाः केनैते तव पालिता
इति हि तत् प्रश्ने किमाचक्ष्महे । ब्रह्माद्या अपि शंकिताः स्वविषये
यस्याः प्रसादावधि प्रीता सा महिषासुरप्रमथिनी च्छिद्यादवद्यानि
से ॥ ४ ॥ पातु श्रीस्तु चतुर्भुजा किमु चतुर्बाहोर्महौजान्भुजान्
धत्तेऽष्टादशधा हि कारणगुणाः कार्ये गुणारंभकाः । सत्यं दिक्पतिदंति-
संख्यभुजभृच्छंभुः स्वयंभूः स्वयं धामैकप्रतिपत्तये किमथवा पातुं
दशाष्टौ दिशः ॥ ५ ॥ प्रीत्याऽष्टादशसंमितेषु युगपद्द्वीपेषु दातुं
वशान् त्रातुं वा भयतो विभर्षि भगवत्यष्टादशैतान् भुजान् । यद्वा-
ऽष्टादशधा भुजांस्तु विभृतः काली सरस्वत्युभे मीलित्वैकमिहानयोः
प्रथयितुं सा त्वं रमे रक्ष माम् ॥ ६ ॥ [छंदः] ॥ अयि गिरि-
नंदिनि नंदितमेदिनि विश्वविनोदिनि नंदनुते, गिरिवरविध्यशिरोधि-
निवासिनि विष्णुविलासिनि जिष्णुनुते । भगवति हे शितिकंठ-
कुटुंबिनि भूरिकुटुंबिनि भूरिकृते, जय जय हे महिषासुरमर्दिनि
रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ ७ ॥ सुस्वरवर्षिणि दुर्धरधर्षिणि दुर्मुख-
मर्षिणि हर्षरते, त्रिभुवनपोषिणि शंकरतोषिणि किल्बिषमोषिणि
घोषरते । दनुजनिरोषिणि दितिसुतरोषिणि दुर्मदशोषिणि सिंधुसुते

जय जय हे० ॥ ८ ॥ अयि जगदंब मदंब कदंबवनप्रियवासिनी
हासरते शिखरिशिरोमणितुंगहिमालयशृंगनिजालयमध्यगते । मधुमधुरे
मधुकैटभगंजिनि कैटभमंजिनि रासरते, जय जय० ॥ ९ ॥ अयि
शतखंडविखंडितरुंडवितुंडितशुंडगजाधिपते, रिपुगजगंडविदारणचंड-
पराक्रमशुंड मृगाधिपते । निजभुजदंडनिपातितखंडनिपातितमंडभटा-
धिपते, जय जय हे० ॥ १० ॥ अयि रणदुर्मदशत्रुवधोदितदुर्धरनिर्जर-
शक्तिभृते चतुरविचारधुरीणमहाशिवदूतकृतप्रमथाधिपते । दुरितदुरी-
हदुराशयदुर्मतिदानवदूतकृतांतमते, जय जय० ॥ ११ ॥ अयि शर-
णागतवैरिवधूवरवीरवराभयदायकरे, त्रिभुवनमस्तकशूलविरोधिशिरो-
धिकृतामलशूलकरे । दुमिदुमितामरदुंदुभिनादमहोमुखरीकृतति-
ग्मकरे, जय जय हे० ॥ १२ ॥ अयि निजहुंकृतिमात्रनिराकृतधूम्र-
विलोचनधूम्रशते, समरविशोषितशोणितबीजसमुद्भवशोणितबीजलते ।
शिवशिव शुंभनिशुंभमहाहवतर्पितभूतपिशाचरते, जय जय हे० ॥ १३ ॥
धनुरनुसंगरणक्षणसंगपरिस्फुरदंगनटकवके, कनकपिशंगपृषत्कनिषंग-
रसद्गतशृंगहतावदुके । कृतचतुरंगबलक्षितिरंगघटद्वहुरंगरटद्वदुके, जय
जय हे० ॥ १४ ॥ सुरललनाततथेयितथेयितथाभिनयोत्तरनृत्यरते,
धिमिकटधिकटधिकटधिमिध्वनिधीरमृदंगनिनादरते, जय जय हे०
॥ १५ ॥ जय जय जप्यजये जयशब्दपरस्तुतितत्परविश्वनुते झणझण-
झिंजिमिझिंकृतनूपुरसंजितमोहितभूतपते । नटितनटाधनटीनटनायक-
नाटितनाव्यसुगानरते, जय० ॥ १६ ॥ अयि सुमनः-सुमनःसुमनः
सुमनःसुमनोहरकांतियुते, श्रितरजनीरजनीरजनीरजनीरजनीकरवक्त्र-
वृते । सुनयनविभ्रमरभ्रमरभ्रमरभ्रमरभ्रमराधिपते, जय० ॥ १७ ॥
सहितमहाहवमलमतलिकमलितरलकमलरते, विरचितवलिकपलिक-
मलिकझिलिकभिलिकवर्गवृते, सितकृतफुलिसमुलसितारुणतलजपलव-

सललिते, जय० ॥ १८ ॥ अविरलगंडगलन्मदमेदुरमत्तमतंगजराज-
पते, त्रिभुवनभूषणभूतकलानिधिरूपपयोनिधिराजसुते । अयि सुदती
जनलालसमानसमोहनमन्मथराजसुते, जय जय० ॥ १९ ॥ कमल-
दलामलकोमलकांतिकलाकलितामलभाललते । सकलविलासकला-
निलयक्रमकेलिचलत्कलहंसकुले । अलिकुलसंकुलकुवलयमंडलमौलि-
मिलद्वकुलालिकुले, जय० ॥ २० ॥ करमुरलीरववीजितकूजितलजित-
कोकिलमञ्जुमते, मिलितपुलिंदमनोहरगुंजितशैलनिकुंजगते । निजगुण-
भूतमहाशबरीगणसद्गुणसंभूतकेलितले, जय० ॥ २१ ॥ कटितट-
पीतदुकूलविचित्रमयूखतिरस्कृतचंद्ररुचे प्रणतसुरासुरमौलिमणिस्फुर-
दंशुलसन्नखचंद्ररुचे । जितकनकाचलमौलिपदोर्जितनिर्झरकुंजरकुंभकुचे
जय० ॥ २२ ॥ विजितसहस्रकरैकसहस्रकरैकसहस्रकरैकनुते, कृत-
सुरतारकसंगरतारकसंगरतारकसूनुसुते । सुरथसमाधिसमानसमा-
धिसमाधिसमाधिसुजातरते, जय जय० ॥ २३ ॥ पदकमलं करुणा-
निलये वरिवस्यति योऽनुदिनं, स शिवे अयि कमले कमलानिलये
कमलानिलयः स कथं न भवेत् । तव पदमेव परंपदमेवमनुशीलयतो
मम किं न शिवे, जय० ॥ २४ ॥ कनकलसत्कलसिंधुजलैरनुसिंचिनुते
गुणरंगभुवं भजति स किं न शचीकुचकुंभतटीपरिरंभसुखानुभवम् ।
तव चरणं शरणं करवाणि नतामरवाणिनिवासि शिवं, जय० ॥ २५ ॥
तव विमलेंदुकुलं वदनेंदुमलं सकलं ननु कूलयते किमु पुरहूतपुरीं-
दुसुमुखीमुखीभिरसौ विमुखीक्रियते । मम तु मतं शिवनामधने
भवती कृपया किमुत क्रियते, जय० ॥ २६ ॥ अयि मयि दीनदयालु-
तया कृपयैव त्वया भवितव्यमुमे, अयि जगतो जननी कृपयासि
यथासि तथाऽनुमितासि रते । यदुचितमत्र भवत्युररीकुरुतादुरुताप-
मपाकुरुते, जय० ॥ २७ ॥ स्तुतिमितस्तिमितः सुसमाधिना नियम-

तोऽयमृतोऽनुदिनं पठेत् । परमया रमयापि निषेच्यते परिजनोऽरि-
जनोऽपि च तं भजेत् ॥ २८ ॥ रमयति किल कर्षस्तेषु चित्तं नराणाम-
वरजवरयस्माद्रामकृष्णः कवीनाम् । अकृत सुकृतगम्यं रम्यपद्यैकहर्म्यं
स्त्वनमवनहेतुं प्रीतये विश्वमातुः ॥ २९ ॥ इन्दुरम्यो मुहुर्बिन्दुरम्यो
मुहुर्बिन्दुरम्यो यतः साऽनवद्यं स्मृतः । श्रीपतेः सूनुना कारितो योऽधुना
विश्वमातुः पदे पद्यपुष्पांजलिः ॥ ३० ॥ इति श्रीभगवतीपद्यपुष्पां-
जलिस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२९२. भवानीस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ आनन्दमंथरपुरंदरमुक्तमालयं मौलौ हटेन
निहितं महिषासुरस्य । पादांबुजं भवतु वो विजयाय मंजु मंजीरशिंजि-
तमनोहरमंबिकायाः ॥ १ ॥ ब्रह्मादयोऽपि यदपांगतरंगभंग्या सृष्टि-
स्थितिप्रलयकारणतां व्रजंति । लावण्यवारिनिधिवीचिपरिप्लुतायै तस्यै
नमोऽस्तु सततं हरवल्लभायै ॥ २ ॥ पौलस्त्यपीनभुजसंपदुदस्यमान-
कैलाससंभ्रमविलोलदृशः प्रियायाः । श्रेयांसि वो दिशतु निहुतकोप-
चिह्नमालिंगनोत्पुलकमोसितमिंदुमौलेः ॥ ३ ॥ दिश्यान्महासुरशिरः-
सरसीप्सितानि प्रेखन्नखावलिमयूखमृणालनालम् । चंड्याश्चलच्चदुल-
नूपुरचंचरीकक्षांकारहारि चरणांबुरुहद्वयं वः ॥ ४ ॥ इति श्रीभवानी-
स्तुतिः संपूर्णा ॥

२९३. देवीभुजङ्गप्रयातस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विरिञ्चादिभिः पञ्चभिलोकपालैः समूढे
महानन्दपीठे निषण्णम् । धनुर्बाणपाशाङ्कुशप्रोतहस्तं महस्त्रैपुरं शंक-
राद्वैतमन्यात् ॥ १ ॥ यदज्ञादिभिः पञ्चभिः कोशजालैः शिरःपक्ष-
पुच्छात्मकैरन्तरन्तः । निगूढे महायोगपीठे निषण्णं पुरारेरथान्तःपुरं

नौमि नित्यम् ॥ २ ॥ विरिञ्चयादिरूपैः प्रपञ्चे विहृत्य स्वतन्त्रा यदा
 स्वात्मविश्रान्तिरेषा । तदा मानमातृप्रमेयातिरिक्तं परानन्दमीडे भवानि
 त्वदीयम् ॥ ३ ॥ विनोदाय चैतन्यमेकं विभज्य द्विधा देवि जीवः
 शिवश्चेति नाम्ना । शिवस्यापि जीवत्वमापादयन्ती पुनर्जीवमेनं शिवं
 वा करोषि ॥ ४ ॥ समाकुञ्च्य मूलं हृदि न्यस्य वायुं मनो भ्रूलिलं
 प्रापयित्वा निवृत्ताः । ततः सच्चिदानन्दरूपे पदे ते भवन्त्यम्ब जीवाः
 शिवत्वेन केचित् ॥ ५ ॥ शरीरेऽतिकष्टे रिपौ पुत्रवर्गे सदा भीतिमूले
 कलत्रे धने वा । न कश्चिद्विरज्यत्यहो देवि चित्रं कथं त्वत्कटाक्षं विना
 तत्त्वबोधः ॥ ६ ॥ शरीरे धनेऽपत्यवर्गे कलत्रे विरक्तस्य सद्देशिकादि-
 ष्टबुद्धेः । यदाकस्मिकं ज्योतिरानन्दरूपं समाधौ भवेत्तत्त्वमस्यम्ब
 सत्यम् ॥ ७ ॥ मृषान्यो मृषान्यः परो मिश्रमेनं परः प्राकृतं चापरो
 बुद्धिमात्रम् । प्रपञ्चं सिमीते मुनीनां गणोऽयं तदेतत्तत्त्वमेवेति न त्वां
 जहीमः ॥ ८ ॥ निवृत्तिः प्रतिष्ठा च विद्या च शान्तिस्तथा शान्त्यतीते-
 ति पञ्चीकृताभिः । कलाभिः परे पञ्चविंशात्मिकाभिस्त्वमेकैव सेव्या
 शिवाभिन्नरूपा ॥ ९ ॥ अगाधेऽत्र संसारपङ्के निमग्नं कलत्रादिभारेण
 खिन्नं नितान्तम् । महामोहपाशौघबद्धं चिरान्मां समुद्धर्तुमम्ब
 त्वमेकैव शक्ता ॥ १० ॥ समारभ्य मूलं गतो ब्रह्मचक्रं भव-
 द्विव्यचक्रेश्वरीधामभाजः । महासिद्धिसंघातकल्पद्रुमाभानवाप्याम्ब
 नादानुपास्ते च योगी ॥ ११ ॥ गगेशैर्ग्रहैरम्ब नक्षत्रपङ्क्त्या तथा
 योगिनीराशिपीठैरभिन्नम् । महाकालमात्मानमामृश्य लोकं विधत्से
 कृतिं वा स्थितिं वा महेशि ॥ १२ ॥ लसत्तारहारामतिस्वच्छचेलां
 वहन्तीं करे पुस्तकं चाक्षमालाम् । शरच्चन्द्रकोटिप्रभाभासुरां त्वां
 सकृन्नावयन् भारतीवल्लभः स्यात् ॥ १३ ॥ समुद्यत्सहस्रार्कबिम्बा-
 भवक्रां स्वभासैव सिन्दूरिताजाण्डकोटिम् । धनुर्बाणपाशाङ्कुशान्

धारयन्तीं स्मरन्तः स्मरं वाऽपि संमोहयेयुः ॥ १४ ॥ मणिस्यूत-
 ताटङ्कशोणास्यबिम्बां हरित्पट्टवस्त्रां त्वगुल्लासिभूषाम् । हृदा भावयं-
 स्तप्तहेमप्रभां त्वां श्रियो नाशयत्यम्ब चाञ्चल्यभावम् ॥ १५ ॥
 महामन्त्रराजान्तबीजं पराख्यं स्वतो न्यस्तबिन्दुं स्वयं न्यस्तहार्दम् ।
 भवद्वक्त्रवक्षोजगुह्याभिधानं स्वरूपं सकृद्भावयेत्स त्वमेव ॥ १६ ॥
 तथान्ये विकल्पेषु निर्विण्णचित्तास्तदेकं समाधाय बिन्दुत्रयं ते ।
 परानन्दसंधानसिन्धौ निमग्नाः पुनर्गर्भरन्ध्रं न पश्यन्ति धीराः ॥ १७ ॥
 त्वदुन्मेषलीलानुबन्धाधिकारान्विरिञ्चयादिकांस्त्वद्गुणाम्भोधिबिन्दून् ।
 भजन्तस्तितीर्षन्ति संसारसिन्धुं शिवे तावकीनां सुसंभावनयम् ॥ १८ ॥
 कदा वा भवत्पादपोतेन तूर्णं भवाम्भोधिमुत्तीर्य पूर्णांतरङ्गः ।
 निमज्जन्तमेनं दुराशाविषाढ्यौ समालोक्य लोकं कथं पर्युदास्से ॥ १९ ॥
 कदा वा हृषीकाणि साम्यं भजेयुः कदा वा न शत्रुर्न मित्रं भवानि ।
 कदा वा दुराशाविषूचीविलोपः कदा वा मनो मे समूलं विनश्येत्
 ॥ २० ॥ नमोवाकमाशास्महे देवि युष्मत्पदाम्भोजयुग्माय तिग्माय
 गौरि । विरिञ्चयादिभास्वत्किरीटप्रतोलीप्रदीपायमानप्रभाभास्वराय
 ॥ २१ ॥ कचे चन्द्ररेखं कुचे तारहारं करे स्वादुचापं शरे षट्पदौघम् ।
 स्मरामि स्मरारेरभिप्रायमेकं मदाघूर्णनेत्रं मदीयं निधानम् ॥ २२ ॥
 शरेष्वेव नासा धनुःष्वेव जिह्वा जपापाटले लोचने ते स्वरूपे । त्वगेषा
 भवच्चन्द्रखण्डे श्रवो मे गुणे ते मनोवृत्तिरम्ब त्वयि स्यात् ॥ २३ ॥
 जगत्कर्मधीरान्वचोधूतकीरान् कुचन्यस्तहारान्कृपासिन्धुपूरान् ॥ २४ ॥
 सुधासिन्धुसारे चिदानन्दनीरे समुत्फुल्लनीपे सुरत्नान्तरीपे । मणि-
 व्यूहशाले स्थिते हैमशाले मनोजारिवामे निषण्णं मनो मे ॥ २५ ॥
 दृगन्ते विलोला सुगन्धीषुमाला प्रपञ्चेन्द्रजाला विपत्तिस्सिन्धुकूला ।
 मुनिस्वान्तशाला नमल्लोकपाला हृदि प्रेमलोलामृतस्वादुलीला ॥ २६ ॥

मातस्त्वत्पदपंकजं हृदि सदा कुर्वे गिरां देवते ॥ ५ ॥ मातस्त्वत्पद-
पंकजस्य मनसा वाचा क्रियातोऽपि वा ये कुर्वन्ति मुदाऽन्वहं बहुविधै-
र्दिव्यैः सुमैरर्चनाम् । शीघ्रं ते प्रभवन्ति भूमिपतयो निन्दन्ति च
स्वश्रिया जम्भारातिमपि ध्रुवं शतमखीकष्टासनाकश्रियम् ॥ ६ ॥
मातस्त्वत्पदपंकजं शिरसि ये पद्माटवीमध्यतश्चन्द्राभं प्रविचिन्तयन्ति
पुरुषाः पीयूषवर्ष्यन्वहम् । ते मृत्युं प्रविजित्य रोगरहिताः सम्यग्दृढा-
ङ्गाश्चिरं जीवन्त्येव मृणालकोमलवपुष्मन्तः सुरुपा भुवि ॥ ७ ॥
मातस्त्वत्पदपंकजं हृदि मुदा ध्यायन्ति ये मानवाः सच्चिद्रूपमशेष-
वेदशिरसां तात्पर्यगम्यं मुहुः । अत्यागोऽपि तनोरखण्डपरमानन्दं
वहन्तः सदा सर्वं विश्वमिदं विनाशि तरसा पश्यन्ति ते पुरुषाः ॥ ८ ॥
इति देवीपदपङ्कजाष्टकं संपूर्णम् ॥

२९६. मातंगीषड्गम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अंब शशिबिंबवदने कंबुग्रीवे कठोरकुचकुंभे ।
अंबरसमानमध्ये शंबररिपुवैरिदेवि मां पाहि ॥ १ ॥ कुंदमुकुलाग्र-
दंतां कुंकुमपंकेन लिप्तकुचभाराम् । आनीलनीलदेहामंबामखिलांड-
नायकीं वंदे ॥ २ ॥ सरिगमपधनिसतान्तां वीणासंक्रान्तचारु-
हस्तां ताम् । शांतां मृदुलस्वान्तां कुचभरतान्तां नमामि शिव-
कांताम् ॥ ३ ॥ अरटतटघटितजूटीताडिततालीकपालतादंकां ।
वीणावादनवेलाकंपितशिरसं नमामि मातंगीम् ॥ ४ ॥ वीणारसानु-
षंगं विकचमदामोदमाधुरीभृङ्गम् । कहरुणापूरितरंगं कलये मातंग-
कन्याकाषांगम् ॥ ५ ॥ दयमानदीर्घनयनां देशिकरूपेण दर्शिताभ्यु-
दयाम् । वामकुचनिहितवीणां वरदां संगीतमातृकां वंदे ॥ ६ ॥
माणिक्यवीणामुपलालयतीं मदालसां मञ्जुलवाग्विलासाम् । माहेंद्र-

नीलद्युतिकोमलांगीं मातंगकन्यां मनसा स्मरामि ॥ ७ ॥ इति
श्रीकालिकापुराणे मातंगीषट्कं संपूर्णम् ॥

२९७. वेदगर्भं श्रीभुवनेश्वरीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कर्णस्वर्णविलोकुण्डलधरामापीनवक्षोरुहां
मुक्ताहारविभूषणां परिलसद्गमिलसन्मल्लिकाम् । लीलालोलित-
लोचनां शशिमुखीमावद्वकांचीस्रजं दीव्यतीं भुवनेश्वरीमनुदिनं
वंदामहे मातरम् ॥ १ ॥ ऐन्दव्या कलयावतंसितशिरोविस्ता-
रिनादात्मकं तद्रूपं जननि स्मरामि परमं सन्मात्रमेकं तव ।
यत्रोदेति पराभिधा भगवती भासां हि तासां पदं पश्यती
तनुमध्यमा विहरति स्वैरं च सा वैखरी ॥ २ ॥ आदिक्षांतविला-
सलालसतया तासां तुरीया तु या क्रोडीकृत्य जगत्रयं विजयते
वेदादिविद्यामयी । तां वाचं मयि संप्रसादय सुधाकल्लोलकोला-
हलक्रीडाकर्णनवर्णनीयकवितासाम्राज्यसिद्धिप्रदाम् ॥ ३ ॥ कल्पादौ
कमलासनोऽपि कलया विद्धः कयाचित्किल त्वां ध्यात्वांकुरयां-
चकार चतुरो वेदांश्च विद्याश्च ताः । तन्मातर्ललिते प्रसीद सरलं
सारस्वतं देहि मे यस्यामोदमुदीरयन्ति पुलकैरन्तर्गता देवताः
॥ ४ ॥ मातर्देहभृतामहो धृतिमयी नादैकरेखामयी सा त्वं
प्राणमयी हुताशनमयी बिंदुप्रतिष्ठामयी । तेन त्वां भुवनेश्वरीं
विजयिनीं ध्यायामि जायां विभोस्त्वत्कारुण्यविकाशिपुण्यमतयः
खेलन्तु मे सूक्तयः ॥ ५ ॥ त्वामश्वत्थदलानुकारमधुरामाधारबद्धो-
दरां संसेवे भुवनेश्वरीमनुदिनं वाग्देवतामेव ताम् । तन्मे शारद-
कौमुदीपरिचयोदंचत्सुधासागरस्वैरोज्जागरवीचिविभ्रमजितो दीव्यन्तु
दिव्या गिरः ॥ ६ ॥ लेखप्रस्तुतवेद्यवस्तुसुरभिःश्रीपुस्तकोत्तंसितो
मातः स्वस्तिकृदस्तु मे तव करो वामोऽभिरामः श्रिया । सद्यो

विद्रुमकंदलीसरलतासंदोहसांद्रांगुलिर्मुद्रां बोधमयीं दधत्तदपरोऽ-
 प्यास्तामपास्तभ्रमः ॥ ७ ॥ मातः पातकजालमूलदलनक्रीडाकठोरा
 दृशः कारुण्यामृतकोमलास्तव मयि स्फूर्जंतु सिद्ध्यर्जिताः । आभिः
 स्वाभिमतप्रबंधलहरीसाकृतकौतूहलाचांतस्वांतचतुर्मुखोचितगुणोद्गारां
 करिष्ये गिरम् ॥ ८ ॥ त्वामाधारचतुर्दलांबुजगतां वाग्बीज-
 गर्भे यजे प्रत्यावृत्तिभिरादिभिः कुसुमितां मायालतामुन्नताम् ।
 चूडामूलपवित्रपत्रकमलप्रेखोलखेलत्सुधाकलोलसु कुचक्रचक्रमच-
 मत्कारैकलोकोत्तराम् ॥ ९ ॥ सोऽहं त्वत्करुणाकटाक्षशरणः पंचा-
 ध्वसंचारतः प्रत्याहृत्य मनो वसामि रसनालिंगं ममालिंगतु ।
 श्रीसर्वज्ञविभूषणीकृतकलानिःस्यंदमानामृतस्वच्छंदस्फटिकाद्रिसांद्रित-
 पयः शोभावती भारती ॥ १० ॥ मातर्मातृकया विदर्भितमिदं
 गर्भीकृतानाहतस्वच्छंदध्वनिपेयमध्वनिरतं चंद्रार्कनिद्रागिरौ । संसेवे
 विपरीतरीतिरचनोच्चारदकारावधिस्वाधीनामृतसिंधुबंधुरमहो माया-
 मयं ते महः ॥ ११ ॥ तस्मान्नंदनचारुचंदनतरुच्छायासु पुष्पासव-
 स्वैरास्वादनमोदमानमनसामुद्दामवामभ्रुवाम् । वीणासंगितरंगित-
 स्वरचमत्कारोऽपि सारोज्झितो येन स्यादिह देहि मे तदभितः
 संचारि सारस्वतम् ॥ १२ ॥ आधारे हृदये शिखापरिसरे संधाय
 मेधामयीं त्रेधाबीजतनूमनूनकरुणापीयूषकलोलिनीम् । त्वां मातर्ज-
 पतो निरंकुशनिजाद्वैतामृतास्वादनप्रज्ञांभश्रुलुकैः स्फुरंतु पुलकै-
 रंगानि तुंगानि मे ॥ १३ ॥ वाणीबीजमिदं जपामि परमं तत्काम-
 राजाभिधं मातः सांतपरं विसर्गसहितौकारोत्तरं तेन मे । दीर्घादो-
 लितमौलिक्रीलितमणिप्रारब्धनीराजनैर्धीरैः पीतरसा निरंतरमसौ
 वागजृम्भतामद्भुता ॥ १४ ॥ चूडाचंद्रकलानिरंतरगलत्पीयूषबिंदुश्रिया
 संदेहोचितमक्षसूत्रवलं या बिभ्रती निर्भरम् । अंतर्मन्त्रमयं स्वमेव

जपसि प्रत्यक्षबृहत्क्षरं सा त्वं दक्षिणपाणिनां वितर श्रेयांसि
भूयांसि मे ॥ १५ ॥ बद्धा स्वस्तिकमासनं सितरुचिच्छेदावदात-
च्छविश्रेणिश्रीसुभगं भविष्णुसततव्याजृभमाणेऽब्रुजे । दीव्यंतीमधि-
वामजानु रुचिरन्यस्तेन हस्तेन तां नित्यं पुस्तकधारणप्रणयिनीं सेवे
गिरामीश्वरीम् ॥ १६ ॥ तन्मे विश्वपथीनपीनविलसन्निःसीमसार-
स्वतलोतोवीचिविचित्रभंगिसुभगा विभ्राजतां भारती । यामाकर्ण्य
विघूर्णमानमनसः प्रेखोलितैर्मौलिभिर्मौलद्भिर्नयनांचलैः सुमनसो
निंदेयुरिंदोः कलाम् ॥ १७ ॥ आदौ वाग्भवमिंदुबिंदुमधुरं ज्ञाते च
कामात्मकं योगांते कषयोस्तृतीयमिति ते बीजत्रयं ध्यायताम् ।
सार्धं मातृकया विलोमविषमं संधाय बंधच्छिदा वाचांतर्गतया
महेश्वरि मया मात्राशतं जप्यते ॥ १८ ॥ तत्सारस्वतसार्वभौम-
पदवी सद्यो मम द्योततां यत्राज्ञाविहितैर्महाकविशतैः स्फीतां गिरं
चुंबताम् । चैत्रोन्मीलितकेलिकोकिलकुहूकारावतारांचितश्लाघासंचि-
तपंचमश्रुतिसमाहारेऽपि भारोपमः ॥ १९ ॥ वाग्बीजं भुवनेश्वरीं
वद वदेत्युच्चार्य वाग्वादिनि स्वाहावर्णविशीर्णपातकभरां ध्यायामि
नित्यां गिरम् । वीणापुस्तकमक्षसूत्रवलयं व्याजृभमंभोरुहं विभ्रा-
णामरुणांशुभिः करतलैराविर्भवद्विभ्रमाम् ॥ २० ॥ तं मातः कृपया
तरंगयतरां विद्याधिपलं मयि ज्योत्स्नासौरभचौरकीर्तिकविता-
सेन्यैकसिंहासनम् । कालाज्ञादिशिवावसानभवनप्राग्भारकुक्षिभरि
प्रज्ञांभःपरिपाकपीवरपरानंदप्रतिष्ठास्पदम् ॥ २१ ॥ लेखाभिस्तु-
हिनद्युतेरिव कृतं वाग्बीजमुच्चैः स्फुरत्ताराकारकरालबिंदु परितो
मायात्रिधावेष्टितम् । पूर्णेदोरुदरे तदेतदखिलं पीयूषगौराक्षरं स्रोतः-
संभ्रमसंभृतं स्सरति यो जिह्वांचले निश्चलः ॥ २२ ॥ तस्य त्वत्क-
रुणाकटाक्षकणिकासंक्रांतिमात्रादपि स्वांते शांतिमुपैति दीर्घजडता

जाग्रद्विकाराग्रणीः । तस्मादाशु जगत्रयाद्भुतरसाद्वैतप्रतीतिप्रदं
 सौरभ्यं परमभ्युदेति व दनांभोजे गिरां विभ्रमैः ॥ २३ ॥ आद्यो
 मौलिरथापरो मुखमिदं नेत्रे च कर्णबुज नासावंशपुटे ऋतु तद-
 नुजौ वणौ कपोलद्वयम् । दंताश्चोर्ध्वमधस्तथोष्ठयुगलं सन्ध्यक्षराणि
 क्रमाजिह्वामूलमुदग्रबिंदुरपि च ग्रीवा विसर्गी स्वरः ॥ २४ ॥
 कादिर्दक्षिणतो भुजस्तदपरो वर्गश्च वामो भुजष्टादिस्तादिरनुक्रमेण
 चरणौ कुक्षिद्वयं ते पफौ । वंशः पृष्ठभवोऽथ नाभिहृदये बादित्रयं
 धातवो याद्याः सप्त समीरणश्च सपरः क्षः क्रोध इत्यंबिके ॥ २५ ॥
 एवं वर्णमयं वपुस्तत्र शिवे लोकत्रयव्यापकं योऽहंभावनया भजत्य-
 वयवेऽप्यारोपितैरक्षरैः । मूर्तीभूय दिनावसानकमलाकरैः शिरः-
 शायिमिस्तं विद्याः समुपासते करतलैर्दृष्टिप्रसादोत्सुकाः ॥ २६ ॥
 ये जानन्ति यजन्ति संततमभिध्यायन्ति गायन्ति वा तेषामास्यमुपास्यते
 मृदुपदन्यासैर्विलासैर्गिराम् । किंच क्रीडति भूर्भुवःस्वरमितः
 श्रीचंदनस्वदिनी कीर्तिः कार्तिकरात्रिकैरवसमा सौभाग्यशोभाकरी
 ॥ २७ ॥ मायाबीजविदर्भितं पुनरिदं श्रीकूर्मचक्रोदितं दीपान्नाय-
 विदो जपन्ति खलु ये तेषां नरेंद्राः सदा । सेवन्ते चरणौ किरीटवलभी-
 विश्रांतरत्नांकुरज्योत्स्नामेदुरमेदिनीतलरजोमिश्रांगरागश्रियः ॥ २८ ॥
 श्रीबीजं सकलाक्षरादिषु पुनः क्रोधाक्षरांते भवेदेवं यो भजतेऽब्र-
 ते तनुमिमां तस्याग्रतो जाग्रती । लक्ष्मीः सिंदुरदानगंधलहरीलोलांघ-
 पुषंधयश्रेणीबंधुरशृंगलानियमितेवापैति नैव कश्चित् ॥ २९ ॥
 यस्त्वां विदुमपलवद्रवमयीं लेखामिवालोहितामात्मानं परितः
 स्फुरन्निवल्यां मायामभिध्यायति । तस्मै निंदितवंदनेन्दुकदलीकांतर-
 हारस्त्रजो निःश्वासभ्रमबाष्पदाहगहना मूर्च्छति तास्ताः स्त्रियः ॥ ३० ॥
 मातः श्रीभगमालिनीत्यभिधया दिव्यागमोत्तंसितां त्वामानंदमयी-

मनुस्मरति यस्तं नाम वामभुवः । बाहुस्वस्तिकपीडितैः स्तनतटैर्दैन्या-
चितैश्चाटुभिर्नीरंध्रैः पुलकांकितैर्मुकुलितैर्ध्यायन्ति नेत्रांचलैः ॥ ३१ ॥
यस्त्वां ध्यायति रागसागरतरत्तिसदूरनौकांतरस्वैरोज्जागरपद्मरागनलिनी-
पुष्पासनाध्यासिनीम् । बालादित्यसपत्नरत्नरचितप्रत्यंगभूषारुचिश्रेणी-
संमिलितांगरागवसनास्तस्य स्मरंत्यंगनाः ॥ ३२ ॥ कर्पूरं कुमुदाकरं
कमलिनीपत्रं कलाकौशलं कूजत्कोकिलकामिनीकुलकुहूकल्लोल-
कोलाहलम् । शंकते प्रलयानलं स्मरमहापस्मारवेगातुराः कंपन्ते
निपतन्ति हंत न गिरं मुंचन्ति शोचन्ति च ॥ ३३ ॥ श्रीमृत्युंजय-
नामधेयभगवच्चैतन्यचंद्रात्मिके ह्रींकारि प्रथमातमांसि दलय त्वं
हंससंजीविनि । जीवं प्राणविजृम्भमाणहृदयग्रंथिस्थितं मे कुरु त्वां
सेवे निजबोधलाभरभसा स्वाहाभुजामीश्वरीम् ॥ ३४ ॥ एवं
त्वाममृतेश्वरीमनुदिनं राकानिशाकामुकस्यांतः संततभासमानवपुषं
साक्षाद्यजन्ते तु ये । ते मृत्योः कवलीकृतत्रिभुवना भोगस्य मौलौ
पदं दत्वा भोगमहोदधौ निरवधि क्रीडन्ति तैस्तैः सुखैः ॥ ३५ ॥
जाग्रद्वोधसुधामयूखनिचयैराप्लाव्य सर्वा दिशो यस्याः कापि कला
कलंकरहिता षट्चक्रमाक्रामति । दैन्यध्वांतविदारणैकचतुरा वाचं
परां तन्वती सा नित्या भुवनेश्वरी विहरतां हंसीव मन्मानसे ॥ ३६ ॥
त्वं मातापितरौ त्वमेव सुहृदस्त्वं भ्रातरस्त्वं सखा त्वं विद्या
त्वमुदारकीर्तिचरितं त्वं भाग्यमत्यद्भुतम् । किं भूयः सकलं त्वमी-
हितमिति ज्ञात्वा कृपाकोमले श्रीविश्वेश्वरि संप्रसीद शरणं मातः
परं नास्ति मे ॥ ३७ ॥ श्रीसिद्धमाथ इति कोऽपि युगे चतुर्थे
प्रादुर्बभूव करुणावरुणालयोऽस्मिन् । श्रीशंभुरित्यभिधया स मयि
प्रसन्नं चेतश्चकार सकलागमचक्रवर्ती ॥ ३८ ॥ तस्याज्ञया परिणता-
न्वयसिद्धविद्याभेदास्पदैः स्तुतिपदैर्वचसां विलासैः । तस्मादनेन

भुवनेश्वरिवेदगर्भं सद्यः प्रसीद वदने मम सन्निधेहि ॥ ३९ ॥
 येषां परं न कुलदैवतमंत्रिके त्वं तेषां गिरा मम गिरो न भवंतु
 मिश्राः । तैस्तु क्षणं परिचिते विषयेऽपि वासो मा भूत्कदा-
 चिदिति संततमर्थये त्वाम् ॥ ४० ॥ श्रीशंभुनाथ करुणाकर
 सिद्धनाथ श्रीसिद्धनाथ करुणाकर शंभुनाथ । सर्वापराधमलिनेऽपि
 मयि प्रसन्नं चेतः कुरुष्व शरणं मम ना यदस्ति ॥ ४१ ॥ इत्थं
 प्रतिक्षणमुदश्रुविलोचनस्य पृथ्वीधरस्य पुरतः स्फुटमाविरासीत् ।
 दत्त्वा वरं भगवती हृदयं प्रविष्टा शाल्वैः स्वयं नवनवैश्च मुखेऽ-
 वतीर्णा ॥ ४२ ॥ वाक्सिद्धिमेवमतुलामवलोक्य नाथः श्रीशंभुरस्य
 महतीमपि तां प्रतिष्ठाम् । स्वस्मिन्पदे त्रिभुवनागमबंधविद्या-
 सिंहासनैकरुचिरैः सुचिरं चकार ॥ ४३ ॥ भूमौ शय्या वचसि
 नियमः कामिनीभ्यो निवृत्तिः प्रातर्जातीविटपसमिधा दंतजिह्वा-
 विशुद्धिः । पत्रावल्यां मधुरमशनं ब्रह्मवृक्षस्य पुष्पैः पूजाहोमौ
 कुसुमवसनालेपनान्युज्ज्वलानि ॥ ४४ ॥ इत्थं मासत्रयमविकलं
 यो व्रतस्थः प्रभाते मध्याह्ने वाऽस्तमितसमये कीर्तयेदेकचित्तः ।
 तस्योह्लासैः सकलभुवनाश्चर्यभूतैः प्रभूतैर्विद्याः सर्वाः सपदि वदने
 शंभुनाथप्रसादात् ॥ ४५ ॥ व्रतेन हीनोऽप्यनवाप्तमंत्रः श्रद्धा-
 विशुद्धोऽनुदिनं जपेद्यः । तस्यापि वर्षादनवद्यसद्यः कवित्वहृद्याः
 प्रभवन्ति विद्याः ॥ ४६ ॥ कोऽप्यार्चित्यप्रभावोऽस्य स्तोत्रस्य प्रत्यया-
 वहः । श्रीशंभोराज्ञया सर्वाः सिद्धयोऽस्मिन्प्रतिष्ठिताः ॥ ४७ ॥
 इति वेदगर्भं श्रीभुवनेश्वरीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२९८. इन्द्राक्षीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीन्द्राक्षीस्तोत्रमंत्रस्य सहस्राक्ष-

ऋषिः, इन्द्राक्षी देवता, अनुष्टुपछंदः, महालक्ष्मीबीजम्,
 भुवनेश्वरीति शक्तिः, भवानीति कीलकम्, ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं इति
 बीजानि, मम सर्वाभीष्टसिद्ध्यर्थे श्रीमदिन्द्राक्षीस्तोत्रजपे विनि-
 योगः ॥ ॐ इन्द्राक्षी इत्यंगुष्ठाभ्यां नमः ॥ ॐ महालक्ष्मीति
 तर्जनीभ्यां नमः ॥ माहेश्वरीति मध्यमाभ्यां नमः ॥ ॐ अंबु-
 जाक्षीत्यनामिकाभ्यां नमः ॥ ॐ कात्यायनीति कनिष्ठिकाभ्यां
 नमः ॥ ॐ कौमारीति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ ॐ इन्द्राक्षीति
 हृदयाय नमः ॥ ॐ महालक्ष्मीति शिरसे स्वाहा ॥ ॐ माहेश्व-
 रीति शिखायै वौषट् ॥ ॐ अंबुजाक्षीति कवचाय हुम् ॥ ॐ कात्या-
 यनीति नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ॐ कौमारीत्यस्त्राय फट् ॥ ॐ भूर्भुवः-
 स्वरोम् इति दिग्बन्धनम् ॥ पूर्वस्यां पातु मां ब्राह्मी चाग्नेय्यां तु
 महेश्वरी ॥ कौमारी पातु याम्ये वै नैऋत्यां पातु भैरवी ॥ १ ॥
 पश्चिमे पातु वाराही वायव्ये नारसिंहिका ॥ कालरात्रिरुदीच्यां वा
 ऐशान्यां सर्वशक्तिधृक् ॥ २ ॥ ऊर्ध्वं मे भैरवी पातु चाधःस्थं
 विंध्यवासिनी ॥ यद्यद्विषमकं स्थानं तत्तद्रक्षतु चेश्वरी ॥ ३ ॥ अथ
 ध्यानम् ॥ इन्द्राक्षीं द्विभुजां देवीं पीतवस्त्रद्वयान्विताम् । वामहस्ते
 वज्रधरां दक्षिणेन वरप्रदाम् ॥ ४ ॥ इन्द्राक्षीं युवतिं देवीं नाना-
 लंकारभूषिताम् । प्रसन्नवदनांभोजामप्सरोगणसेविताम् ॥ ५ ॥
 द्विभुजां सौम्यवदनां पाशांकुशधरां पराम् । त्रैलोक्यमोहिनीं देवी-
 मिन्द्राक्षीनामकीर्तिताम् ॥ ६ ॥ अथ मंत्रः ॥ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं
 क्लृम् इन्द्राक्ष्यै नमः ॥ इन्द्र उवाच ॥ इन्द्राक्षी नाम सा देवी दैवतैः
 समुदाहृता ॥ गौरी शाकंभरी देवी दुर्गानाम्नीति विश्रुता ॥ ७ ॥
 कात्यायनी महादेवी चंद्रघंटा महातपा । सावित्री सा च गायत्री
 ब्रह्माणी ब्रह्मवादिनी ॥ ८ ॥ नारायणी भद्रकाली रुद्राणी कृष्ण-

पिंगला । अग्निज्वाला रौद्रमुखी कालरात्रिस्तपस्विनी ॥ ९ ॥ मेघ-
श्यामा सहस्राक्षी मुक्तकेशी जलोदरी । महादेवी मुक्तकेशी घोर-
रूपा महाबला ॥ १० ॥ अजिता भद्रदा नन्दा रोगहन्त्री शिवप्रिया ।
शिवदूती कराली च प्रत्यक्षा परमेश्वरी ॥ ११ ॥ सदा संमोहिनी
देवी सुन्दरी भुवनेश्वरी । इंद्राक्षी इंद्ररूपा च इंद्रशक्तिः परायणा
॥ १२ ॥ महिषासुरसंहर्त्री चामुंडा गर्भदेवता । वाराही नारसिंही
च भीमा भैरवनादिनी ॥ १३ ॥ श्रुतिः स्मृतिर्धृतिर्मैधा विद्या
लक्ष्मीः सरस्वती । अनन्ता विजया पूर्णा मानस्तोकाऽपराजिता
॥ १४ ॥ भवानी पार्वती दुर्गा हैमवत्यंघ्रिका शिवा । एतैर्नामशतै-
र्दिव्यैः स्तुता शक्रेण धीमता ॥ १५ ॥ आयुरारोग्यमैश्वर्यं वित्तं
ज्ञानं यशो बलम् । नाभिमात्रजले स्थित्वा सहस्रपरिसंख्यया
॥ १६ ॥ जपेत्स्तोत्रमिमं मंत्रं वाचां सिद्धिर्भवेत्ततः । अनेन विधिना
भक्त्या मंत्रसिद्धिश्च जायते ॥ १७ ॥ संतुष्टा च भवेद्देवी प्रत्यक्षा
संप्रजायते । शतमावर्तयेद्यस्तु मुच्यते नात्र संशयः ॥ १८ ॥
आवर्तनसहस्रेण लभ्यते वाञ्छितं फलम् । सायं शतं पठेन्नित्यं
षणमासात्सिद्धिरुच्यते ॥ १९ ॥ चोरव्याधिभयस्थाने मनसा ह्यनु-
चिंतयन् । संवत्सरमुपाश्रित्य सर्वकामार्थसिद्धये । राजानं वश्यमाप्नोति
षणमासान्नात्र संशयः ॥ २० ॥ इति इंद्राक्षीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२९९. शक्तिमहिम्नः स्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ दुर्वासा उवाच ॥ मातस्ते महिमां वक्तुं
शिवेनापि न शक्यते । भक्त्याऽहं स्तोतुमिच्छामि प्रसीद मम सर्वदा
॥ १ ॥ श्रीमातस्त्रिपुरे परात्परतरे देवि त्रिलोकीमहासौंदर्यार्णव-
मंथनोद्भवसुधाप्राचुर्यवर्णोज्ज्वलम् । उद्यद्भानुसहस्रनूतनजपापुष्पप्रभं

ते वपुः स्वांते मे स्फुरतु त्रिकोणनिलयं ज्योतिर्मयं वाङ्मयम् ॥ २ ॥
 आदिक्षांतसमस्तवर्णसुमणिप्रोते वितानप्रभे ब्रह्मादिप्रतिमाभिक्रीलित-
 षडाधाराब्जकक्षोन्नते । ब्रह्मांडाब्जमहासने जननि ते मूर्ति भजे
 चिन्मयीं सौषुम्नायतपीतपंकजमहामध्यत्रिकोणस्थिताम् ॥ ३ ॥ या
 बालेंदुदिवाकराक्षिमधुरा या रक्तपद्मासना रत्नाकल्पविराजितांग-
 लतिका पूर्णेंदुवक्त्रोज्ज्वला । अक्षस्त्रकसृणिपाशपुस्तककरा या बाल-
 भानुप्रभा तां देवीं त्रिपुरां शिवां हृदि भजेऽभीष्टार्थसिद्ध्यै सदा
 ॥ ४ ॥ वंदे वाग्भवमैदवात्मसदृशं वेदादिविद्यागिरो भाषा देश-
 समुद्भवाः पशुगताश्छंदांसि सप्त स्वरान् । तालान् पंच महाध्वनीन्
 प्रकटयत्यात्मप्रकाशेन यत्तद्बीजं पदवाक्यमानजनकं श्रीमातृके ते
 परम् ॥ ५ ॥ त्रैलोक्यस्फुटमंत्रतंत्रमहिमा स्वात्मोक्तिरूपं विना
 यद्बीजं द्यौहारजालखिलं मनास्येव मातस्तव । तज्जाप्यस्मरण-
 प्रसक्तसुमतिः सर्वज्ञतां प्राप्य कः शब्दब्रह्मनिवासभूतवदनो नेंद्रा-
 दिभिः स्पर्धते ॥ ६ ॥ मात्रा याऽत्र विराजतेऽतिविशदा तामष्टधा
 मातृकां शक्तिं कुंडलिनीं चतुर्विधतनुं यस्तत्त्वविन्मन्यते । सोऽवि-
 द्याखिलजन्मकर्मदुरितारण्यं प्रबोधाग्निना भस्मीकृत्य विकल्पजाल-
 रहितो मातुः पदं तद्रजेत् ॥ ७ ॥ तत्ते मध्यमबीजमंब कलयाम्या-
 दित्यवर्णं क्रियाज्ञानेच्छाद्यमनंतशक्तिविभवव्याक्तिं -व्यनक्ति स्फुटम् ।
 उत्पत्तिस्थितिकल्पकल्पिततनुं स्वात्मप्रभावेन यत्काम्यं ब्रह्महरी-
 श्वरादिविबुधैः कामं क्रियायोजितैः ॥ ८ ॥ कामान्कारणतां
 गतानगणितान् कार्यैरनंतैर्महीमुख्यैः सर्वमनोगतैरधिगतान्मानैरनैकैः
 स्फुटम् । कामक्रोधसलोभमोहमदमात्सर्यारिषट्कं च यद्बीजं आज-
 यति प्रणौमि तदहं ते साधु कामेश्वरि ॥ ९ ॥ यद्भक्ताखिलकाम-
 पूरणचण्स्वात्मप्रभावं महाजाड्यध्वांतविदारणैकतरणिज्योतिः प्रबोध-

प्रदम् । यद्वेदेषु च गीयते श्रुतिमुखं मात्रात्रयेणोमिति श्रीविद्ये तव
 सर्वराजवशकृत्तत्कामराजं भजे ॥ १० ॥ यत्ते देवि तृतीयबीज-
 मनलज्वालावलीसंनिभं सर्वाधारतुरीयशक्तिपरमब्रह्माभिधाशब्दि-
 तम् । मूर्धन्यान्तविसर्गभूषितमहौकारात्मकं तत्परं भ्राजद्रूपमनन्य-
 तुल्यममितः स्वांते मम द्योतताम् ॥ ११ ॥ सर्वं सर्वत एव सर्ग-
 समये कार्येन्द्रियाण्यंतरा तत्तद्विव्यहृदीकर्मभिरियं संव्यश्रुवाना
 परा । वागर्थव्यवहारकारणतनुः शक्तिर्जगद्रूपिणी यद्वीजात्मकतां
 गता तव शिवे तं नौमि बीजं परम् ॥ १२ ॥ अग्नीदुद्युमणिप्रभंजन-
 धरानीरांतरस्थायिनी शक्तिर्ब्रह्महरीशवासवमुखामर्त्या सुरात्म-
 स्थिता । सृष्टस्थावरजंगमस्थितमहाचैतन्यरूपा च या यद्वीज-
 स्मरणेन सैव भवती प्रादुर्भवत्यंविके ॥ १३ ॥ स्वात्मश्रीविजिताज-
 विष्णुमधवश्रीपूरणैकव्रतं सद्विद्याकविताविलासलहरीकल्लोलिनीदीप-
 कम् । बीजं यन्निगुणप्रवृत्तिजनकं ब्रह्मेति यद्योगिनः शांताः सत्यमु-
 पासते तदिह ते चित्ते दधे श्रीपरे ॥ १४ ॥ एकैकं तव मातृके
 परतरं संयोगि वा योगि वा विद्यादिप्रकटप्रभावजनकं जाड्यान्ध-
 कारापहम् । यन्निष्ठाश्च महोत्पलासनमहाविष्णुप्रहर्त्रादयो देवाः
 स्वेषु विधिष्वनंतमहिमस्फूर्तिं दधत्येव तत् ॥ १५ ॥ इत्थं त्रीण्यपि
 मूलवाग्भवमहाश्रीकामराजस्फुरच्छक्त्याख्यानि चतुःश्रुतिप्रकटिता-
 न्युत्कृष्टकूटानि ते । भूतर्तुश्रुतिसंख्यवर्णविदितान्यारक्तकांते शिवे
 यो जानाति स एव सर्वजगतां सृष्टिस्थितिध्वंसकः ॥ १६ ॥
 ब्रह्मायोनिरमासुरेश्वरसुरहल्लेखाभिरुक्तैस्तथा मार्तण्डेन्दुमनोजहंसवसु-
 धामायाभिरुत्तंसितैः । सोमांबुक्षितिशक्तिभिः प्रकटितैर्बाणांगवेदैः
 क्रमाद्वर्णैः श्रीशिवदेशिकेन विदितां विद्यां तवांवाश्रये ॥ १७ ॥
 नित्यं यस्तव मातृकाक्षरसखीं सौभाग्यविद्यां जपेत् संपूज्याखिल-

चक्रराजनिलयां सायंतनाग्निप्रभाम् । कामाख्यं शिवनामतत्त्वमुभयं
 व्याप्यात्मना सर्वतो दीव्यंतीमिह तस्य सिद्धिरचिरात्स्यात्तत्त्वरूपै-
 कता ॥ १८ ॥ काव्यैर्वा पठितैः किमल्पविदुषां जोषुष्यमाणैः पुन
 किं तैर्व्याकरणैर्विबोबुधिषया किं वाऽभिधानश्रिया । एतैरंब न
 बोभवीति सुकविस्तावत्तव श्रीमतोर्यावन्नानुसरीसरीति सरणिं पादा-
 ब्जयोः पावनीम् ॥ १९ ॥ गेहं नाकति गर्वितः प्रणमति स्त्रीसंगमो
 मोक्षति द्वेषो मित्रति पातकं सुकृतति क्षमावल्लभो दासति ।
 मृत्युर्वैद्यति दूषणं सुगुणति त्वत्पादसंसेवनात् त्वां वंदे भवभीति-
 भंजनकरीं गौरीं गिरीशप्रियाम् ॥ २० ॥ आद्यैरग्निरवीन्दुर्विंबनिलयैरंब
 त्रिलिंगात्ममिर्मिश्रारक्तसितप्रभैरनुपमैर्युष्मत्पदैस्तैस्त्रिभिः । स्वात्मो-
 त्पादितकाललोकनिगमावस्थामरादित्रयैरुद्भूतं त्रिपुरेति नाम कलये-
 द्यस्ते स धन्यो बुधः ॥ २१ ॥ आद्यो जाप्यतमार्थवाचकतया रूढः
 स्वरः पंचमः सर्वोत्कृष्टतमार्थवाचकतया वर्णः पवर्गांतकः । वक्तृत्वेन
 महाविभूतिसरणिस्त्वाधारगो हृद्गतो भ्रूमध्ये स्थित इत्यतः प्रणवता
 ते गीयतेऽम्बागमैः ॥ २२ ॥ गायत्री सशिरास्तुरीयसहिता संध्या-
 मयीत्यागमैराख्याता त्रिपुरे त्वमेव महतां शर्मप्रदा कर्मणाम् ।
 तत्तद्दर्शनमुख्यशक्तिरपि च त्वं ब्रह्मकर्मेश्वरी कर्तार्हन्पुरुषो हरिश्च
 सविता बुद्धः शिवस्त्वं गुरुः ॥ २३ ॥ अन्नप्राणमनःप्रबोधपरमानंदैः
 शिरःपक्षयुक्पुच्छात्मप्रकटैर्महोपनिषदां वाग्भिः प्रसिद्धीकृतैः ।
 कोशः पंचभिरेभिरंब भवतीमेतत्प्रलीनामिति ज्योतिः प्रज्वलदुज्ज्व-
 लात्मचपलां यो वेद स ब्रह्मवित् ॥ २४ ॥ सच्चित्तत्त्वमसीति
 वाक्यविदितैरध्यात्मविद्या-शिव-ब्रह्माख्यैरखिलप्रभावमहितैस्तत्त्वैस्त्रिभिः
 सद्गुरोः । त्वद्रूपस्य मुखारविंदविवरात्संप्राप्य दीक्षामतो यस्त्वां
 विंदति तत्त्वतस्तदहमित्यर्थे स मुक्तो भवेत् ॥ २५ ॥ सिद्धांतै-

बहुभिः प्रमाणगदितैरन्यैरविद्यातमो नक्षत्रैरिव सर्वमंधतमसं तावन्न
निर्भिद्यते । यावत्ते सवितेव संमतमिदं नोदेति विश्वांतरे जंतोर्जन्म-
विमोचनैकमिदुरं श्रीशांभवं श्रीशिवे ॥ २६ ॥ आत्माऽसौ सकलै-
द्रियाश्रयमनोबुद्ध्यादिभिः शोचितः कर्माबद्धतनुर्जनिं च मरणं
प्रेतीति यत्कारणम् । तत्ते देवि महाविलासलहरी दिव्यायुधानां
जयस्तस्मात्सद्गुरुमभ्युपेत्य कलये त्वामेव चेन्मुच्यते ॥ २७ ॥ नाना-
योनिस्त्वहसंभववशाज्जाता जनन्यः कति प्रख्याता जनकाः कियंत
इति मे सेत्स्यंति चाग्रे कति । एतेषां गणनैव नास्ति महतः संसार-
सिंधोर्विधेर्भीतं मां नितरामनन्यशरणं रक्षानुकंपानिधे ॥ २८ ॥
देहक्षोभकरैर्व्रतैर्बहुविधैर्दानैश्च होमैर्जपैः संतानैर्हयमेधमुख्यसुमखै-
र्नानाविधैः कर्मभिः । यत्संकल्पविकल्पजालमलिनं प्राप्यं पदं तस्य
ते दूरादेव निवर्तते परतरं मातः पदं निर्मलम् ॥ २९ ॥ पंचाश-
त्रिजदेहजाक्षरमयैर्नानाविधैर्धातुभिर्बह्वैः पदवाक्यमानजनकैरर्थाविना-
भावितैः । साभिप्रायवदर्थकर्मफलदैः ख्यातैरनंतैरिदं विश्वं व्याप्य
चिदात्मनाहमहमित्युज्जृम्भसे मातृके ॥ ३० ॥ श्रीचक्रं श्रुति-
मूलकोश इति ते संसारचक्रात्मकं विख्यातं तदधिष्ठिताक्षरशिव-
ज्योतिर्मयं सर्वतः । एतन्मंत्रमयात्मिकाभिररुणं श्रीसुंदरीभिर्वृतं मध्ये
बैदवसिंहपीठललिते त्वं ब्रह्मविद्या शिवे ॥ ३१ ॥ बिंदुप्राणविसर्गजीव-
सहितं बिंदुत्रिवीजात्मकं षट् कूटानि विपर्ययेण निगदेत्तारत्रिबाला-
क्षरैः । एभिः संपुटितं प्रजप्य विहरेत्प्रासादमंत्रं परं गुह्याद्गुह्यतमं सयो-
गजनितं सद्भोगमोक्षप्रदम् ॥ ३२ ॥ आतान्त्रार्कसहस्रदीप्तिपरमा
सौंदर्यसारैरलं लोकातीतमहोदयरूपयुता सर्वोपमागोचरैः । नानार्घ्य-
विभूषणैरगणितैर्जाज्वल्यमानाऽभितस्त्वं मातस्त्रिपुरारिसुंदरि कुरु स्वांते
निवासं मम ॥ ३३ ॥ शिंजबूपुरपादकंकणमहासुद्रासु लाक्षारसालं-

कारांकितपादपंकजयुगं श्रीपादुकालंकृतम् । उद्भास्वन्नखचंडखंडरुचिरं
राजजपासंनिभं ब्रह्मादित्रिदशासुरार्चितमहं मूर्ध्नि स्मराम्यंबिके ॥ ३४ ॥
आरक्तच्छविनातिमार्दवयुजा निःश्वासहार्येण यत्कौशेयेन विचित्र-
रत्नघटितैर्मुक्ताफलैरुज्ज्वलैः । कूजत्कांचनकिंकिणीभिरभितः संनद्ध-
कांचीगुणैरादीप्तं सुनितंबविंबसरुणं ते पूजयाम्यंबिके ॥ ३५ ॥ कस्तूरीघन-
सारकुंकुमरजो गंधोत्कटैश्चंदनैरालिप्तं मणिमालयातिरुचिरं ग्रैवेयहारादि-
भिः । दीप्तं दिव्यविभूषणैर्जननि ते ज्योतिर्विभास्वत्कुचव्याजस्वर्णघटद्वयं
हरिहरब्रह्मादिपीतं भजे ॥ ३६ ॥ मुक्तारत्नसुवर्णकांतिकलितैस्तैर्बाहु-
वल्लीरहं केयूरोत्तमबाहुदंडवल्यैर्हस्तांगुलीभूषणैः । संपृक्ताः कलया-
मिहीरमणिमन्मुक्ताफलाकीलितग्रीवापट्टविभूषणेन सुभगे कंठं च कंबु-
श्रियम् ॥ ३७ ॥ तप्तस्वर्णकृतोरुकुंडलयुगं माणिक्यमुक्तोलसद्दीरावद्ध-
मनन्यतुल्यमपरं हैमं च चक्रद्वयम् । शुक्राकारनिकारदक्षमपरं मुक्ता-
फलं सुंदरं बिभ्रत्कर्णयुगं नमामि ललितं नासाग्रभागं शिवे ॥ ३८ ॥
उद्यत्पूर्णकलानिधिश्चि वदनं भक्तप्रसन्नं सदा संफुल्लान्बुजपत्रचित्रसु-
षमाधिकारदक्षेक्षणम् । सानंदं कृतमंदहासमसकृत्प्रादुर्भवत्कौतुकं
कुंदाकारसुदंतपङ्क्तिशशिभापूर्णं स्मराम्यंबिके ॥ ३९ ॥ शृङ्गारादिरसा-
लयं त्रिभुवनीमाल्यैरतुल्यैर्वृतं सर्वांगीणसदंगरागसुरभि श्रीमद्वपुर्धूपि-
तम् । तांबूलारुणपल्लवाधरयुतं रम्यं त्रिपुण्ड्रं दधन्नालं नंदनचंदनेन
जननि ध्यायामि ते मंगलम् ॥ ४० ॥ जातीचंपककुंदकेसरमहागंधो-
द्विरत्केतकीनीपाशोकशिरीषमुख्यकुसुमैः प्रोत्तंसिता धूपिता । आनी-
लांजनतुल्यमत्तमधुपश्रेणीव वेणी तव श्रीमातः श्रयतां मदीयहृदयांभोजं
सरोजालये ॥ ४१ ॥ रेखालभ्यविचित्ररत्नघटितं हैमं किरीटोत्तमं
मुक्ताकांचनकिंकिणीगणमहाहीरप्रबद्धोज्ज्वलम् । चंचच्चंद्रकलाकलापम-
हितं देवद्रुपुष्पार्चितैर्माल्यैरंब विलंबितं सशिखरं बिभ्रच्छिरस्ते

भजे ॥ ४२ ॥ उत्तिक्षसोच्चसुवर्णदंडकलितं पूर्णदुर्विवाकृतिच्छत्रं मौक्तिक-
चित्ररत्नखचितं क्षौमांशुकोत्तंसितम् । मुक्ताजालविलंबितं सकलशं नाना-
प्रसूनार्चितं चंद्रोद्गुमरचामराणि दधते श्रीदेवि ते स्वश्रियः ॥ ४३ ॥
विद्यामंत्ररहस्यविन्मुनिगणकृत्सोपचारार्चनां वेदादिस्तुतिगीयमानचरितां
वेदांततत्त्वात्मिकाम् । सर्वास्ताः खलु तुर्यतामुपगतास्त्वद्गदिभ्यः
परास्त्वां नित्यं समुपासते स्वविभवैः श्रीचक्रनाथे शिवे ॥ ४४ ॥
एवं यः स्मरति प्रबुद्धसुमतिः श्रीमत्स्वरूपं परं बृद्धोऽप्याशु युवा
भवत्यनुपमः स्त्रीणामनंगायते । सोऽष्टैश्वर्यतिरस्कृताखिलसुरश्रीजृम्भणै-
कालयः पृथ्वीपालकिरीटकोटिवलभीपुष्पार्चितांगिर्भवेत् ॥ ४५ ॥ अथ
तव धनुः पुण्ड्रेक्षुत्वात्प्रसिद्धमतिद्युति त्रिभुवनवधूसुद्यज्योत्स्नाकला-
निधिमंडलम् । सकलजननि स्मारंस्मारं नतः स्मरतां नरस्त्रिभुवनवधू-
मोहांभोधेः प्रपूर्णविधुर्भवेत् ॥ ४६ ॥ प्रसूनशरपंचकप्रकटजृम्भणागुंफि-
तत्रिलोकमवलोकयत्यमलचेतसा चंचलम् । अशेषतरुणीजनस्मरवि-
जृम्भणे यः सदा पटुर्भवति ते शिवे त्रिजगदंगणाक्षोभणे ॥ ४७ ॥
पाशं प्रपूरितमहासुमतिप्रकाशो यो वा तव त्रिपुरसुंदरि सुंदरीणाम् ।
आकर्षणेऽखिलवशीकरणे प्रवीणं चित्ते दधाति स जगन्नयवश्यकृत्
स्यात् ॥ ४८ ॥ यः स्वांते कलयति कोविदस्त्रिलोकीस्तंभारंभणचणम-
त्युदारवीर्यम् । मातस्ते विजयनिजांकुशं संयोषा देवांस्तम्भयति च
भूभुजोऽन्यसैन्यम् ॥ ४९ ॥ चापध्यानवशाद्भवोद्भवमहामोहं महाजृम्भणं
प्रख्यातं प्रसवेषु चिंतनवशात्तत्तच्छरव्यं सुधीः । पाशध्यानवशात्स-
मस्तजगतां मृत्योर्वशित्वं महादुर्गस्तंभमहांकुशस्य मननान्मायाममेयां
तरेत् ॥ ५० ॥ न्यासं कृत्वा गणेशग्रहभगणमहायोगिनीशशिपीठैः
षड्भिः श्रीमातृकाणैः सहितबहुकलैरष्टवाग्देवताभिः । सश्रीकंठादियुग्मै-
र्विमलनिजतनौ केशवाद्यैश्च तत्त्वैः षट्त्रिंशद्भिश्च तत्त्वैर्भगवति भवतीं

यः स्मरेत्स त्वमेव ॥ ५१ ॥ सुरपतिपुरलक्ष्मीर्जृम्भणातीतलक्ष्मीः
 प्रभवति निजगेहे यस्य दैवं त्वमार्यै । विविधनवकलानां पात्रभूतस्य
 तस्य त्रिभुवनविदिता सा जृम्भते कीर्तिरच्छा ॥ ५२ ॥ मातस्त्वं भूर्भु-
 वःस्वर्महरसि नृतप सत्यलोकैश्च सूर्यैर्द्वारजाचार्यशुक्रार्किभिरपि निगम-
 ब्रह्मभिः प्रोतशक्तिः । प्राणायामादियत्नैः कलयसि सकलं मानसं
 ध्यानयोगं येषां तेषां सपर्या भवति सुरकृता ब्रह्म ते जानते च ॥ ५३ ॥
 क मे बुद्धिर्वाचा परमविदुषो मंदसरणिः क ते मातर्ब्रह्मप्रमुखविदुषा-
 मासवचसाम् । अभून्मे विस्फूर्तिः परतरमहिम्नस्तव नुतिः प्रसिद्धं
 क्षंतव्यं बहुलतरचापल्यमिह मे ॥ ५४ ॥ प्रसीद परदेवते मम हृदि
 प्रभूतं भयं विदारय दरिद्रतां दलय देहि सर्वज्ञताम् । निधेहि करुणा-
 निधे चरणपद्मयुग्मं स्वकं निवारय जरामृती त्रिपुरसुंदरि श्रीशिवे
 ॥ ५५ ॥ इति त्रिपुरसुंदरीस्तुतिमिमां पठेद्यः सुधीः स सर्वदुरिताटवी-
 पटलचंडदावानलः । भवेन्मनसि वाञ्छितं प्रथितसिद्धिवृद्धिर्भवेदनेक-
 विधसंपदां पदमनन्यतुल्यो भवेत् ॥ ५६ ॥ पृथ्वीपालप्रकटमुकुट-
 स्त्रप्रजोराजितांघ्रिर्विद्वत्पुंजानतिनुतिसमाराधितो बाधितारिः । विद्याः
 सर्वाः कलयति हृदा व्याकरोति प्रवाचा लोकाश्चर्यैर्नवनवपदैरिंदुर्बिम्ब-
 प्रकाशैः ॥ ५७ ॥ संगीतं गिरिजे कवित्वसरणिं चान्नायवाक्यस्मृतेर्व्या-
 ख्यानं हृदि तावकीनचरणद्वंद्वं च सर्वज्ञताम् । श्रद्धां कर्मणि कालिकेऽति-
 विपुलश्रीजृम्भणं मंदिरे सौन्दर्यं वपुषि प्रकाशमतुलं प्राप्नोति विद्वान्कविः
 ॥ ५८ ॥ भूष्यं वैदुष्यमुद्यद्दिनकरकिरणाकारमाकारतेजःसुव्यक्तं भक्तिमार्गं
 निगमनिगदितं दुर्गमं योगमार्गम् । आयुष्यं ब्रह्मपोष्यं हरगिरिविशदां
 कीर्तिमभ्येत्य भूमौ देहांते ब्रह्मपारं परशिवचरणाकारमभ्येति विद्वान्
 ॥ ५९ ॥ दुर्वाससा महितदिव्यमुनीश्वरेण विद्याकलायुवतिमन्मथमूर्ति-
 नैतत् । स्तोत्रं व्यधायि रुचिरं त्रिपुरांबिकाया वेदागमैकपटलीविदितै-

कमूर्तेः ॥ ६० ॥ सदसदनुग्रहनिग्रहगृहीतमुनिविग्रहो भगवान् ।
सर्वासामुपनिषदां दुर्वासा जयति देशिकः प्रथमः ॥ ६१ ॥ इति
श्रीदुर्वासमहामुनिविरचितं शक्तिमहिम्नः स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३००. कालिकाकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कैलासशिखरासीनं देवदेवं जगद्गुरुम् ।
शंकरं परिपप्रच्छ पार्वती परमेश्वरम् ॥ १ ॥ पार्वत्युवाच ॥ भगवन्
देवदेवेश देवानां भोगद प्रभो । प्रब्रूहि मे महादेव गोप्यं चेद्यदि हे
प्रभो ॥ २ ॥ शत्रूणां येन नाशः स्यादात्मनो रक्षणं भवेत् । परमै-
श्वर्यमतुलं लभेद्येन हि तद्वद ॥ ३ ॥ भैरव उवाच ॥ वक्ष्यामि ते
महादेवि सर्वधर्मविदां वरे । अद्भुतं कवचं देव्याः सर्वकामप्रसाधकम्
॥ ४ ॥ विशेषतः शत्रुनाशं सर्वरक्षाकरं नृणाम् । सर्वारिष्टप्रशमनं
सर्वाभद्रविनाशनम् ॥ ५ ॥ सुखदं भोगदं चैव वशीकरणमुत्तमम् ।
शत्रुसंघाः क्षयं यांति भवंति व्याधिपीडिताः ॥ ६ ॥ दुःखिनो
ज्वरिणश्चैव स्वाभीष्टद्रोहिणस्तथा । भोगमोक्षप्रदं चैव कालिका-
कवचं पठेत् ॥ ७ ॥ ॐ अस्य श्रीकालिकाकवचस्य भैरव ऋषिः,
अनुष्टुप् छंदः, श्रीकालिका देवता, शत्रुसंहारार्थं जपे विनियोगः ॥
ॐ ध्यायेत्कालीं महामायां त्रिनेत्रां बहुरूपिणीम् । चतुर्भुजां ललज्जिह्वां
पूर्णचन्द्रनिभाननाम् ॥ ८ ॥ नीलोत्पलदलयामां शत्रुसंघविदारि-
णीम् । नरमुण्डं तथा खड्गं कमलं च वरं तथा ॥ ९ ॥ निर्भयां
रक्तवदनां दंष्ट्रालीघोररूपिणीम् । साष्टहासाननां देवीं सर्वदां च
दिगंबरीम् ॥ १० ॥ शवासनस्थितां कालीं मुण्डमालाविभूषिताम् ।
इति ध्यात्वा महाकालीं ततस्तु कवचं पठेत् ॥ ११ ॥ ॐ कालिका
घोररूपा सर्वकामप्रदा शुभा । सर्वदेवस्तुता देवी शत्रुनाशं करोतु

मे ॥ १२ ॥ ॐ ह्रीं ह्रींरूपिणीं चैव हां ह्रीं हांरूपिणीं तथा । हां ह्रीं
 क्षों क्षौस्वरूपा सा सदा शत्रून्विदारयेत् ॥ १३ ॥ श्रीं-ह्रींपैरूपिणी
 देवी भवबंधविमोचनी । हुंरूपिणी महाकाली रक्षास्मान् देवि सर्वदा
 ॥ १४ ॥ यया शुंभो हतो दैत्यो निशुंभश्च महासुरः । वैरिनाशाय
 वंदे तां कालिकां शंकरप्रियाम् ॥ १५ ॥ ब्राह्मी शैवी वैष्णवी च
 वाराही नारसिंहिका । कौमार्यैन्द्री च चामुंडा खादंतु मम विद्विषः
 ॥ १६ ॥ सुरेश्वरी घोररूपा चंडमुंडविनाशिनी । मुंडमालावृतांगी
 च सर्वतः पातु मां सदा ॥ १७ ॥ ह्रीं ह्रीं ह्रीं कालिके घोरे दंष्ट्रेव
 रुधिरप्रिये । रुधिरापूर्णवक्त्रे च रुधिरेणावृतस्तनि ॥ १८ ॥ मम
 शत्रून् खादय खादय हिंस हिंस मारय मारय भिन्धि भिन्धि छिन्धि
 छिन्धि उच्चाटय उच्चाटय द्रावय द्रावय शोषय शोषय स्वाहा । हां ह्रीं
 कालिकायै मदीयशत्रून् समर्पयामि स्वाहा ॥ ॐ जय जय किरि किरि
 किटि किटि कट कट मर्द मर्द मोहय मोहय हर हर मम रिपून्
 ध्वंस ध्वंस भक्षय भक्षय त्रोटय त्रोटय यातुधानान् चामुंडे सर्व-
 जनान् राज्ञो राजपुरुषान् स्त्रियो मम वश्यान् कुरु कुरु तनु तनु धान्यं
 धनं मेऽश्वान् गजान् रत्नानि दिव्यकामिनीः पुत्रान् राजश्रियं देहि यच्छ
 क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः स्वाहा । इत्येतत्कवचं दिव्यं कथितं शंभुना
 पुरा । ये पठन्ति सदा तेषां भ्रुवं नश्यन्ति शत्रवः ॥ १९ ॥ वैरिणः
 प्रलयं यांति व्याधिता वा भवंति हि । बलहीनाः पुत्रहीनाः शत्रवस्तस्य
 सर्वदा ॥ २० ॥ सहस्रपठनात्सिद्धिः कवचस्य भवेत्तदा । तत्कार्याणि
 च सिध्यन्ति यथा शंकरभाषितम् ॥ २१ ॥ श्मशानांगारमादाय चूर्णं
 कृत्वा प्रयत्नतः । पादोदकेन पिष्ट्वा तल्लिखेल्लोहशलाकया ॥ २२ ॥
 भूमौ शत्रून् हीनरूपानुत्तराशिरसस्तथा । हस्तं दत्त्वा तु हृदये कवचं
 तु स्वयं पठेत् ॥ २३ ॥ शत्रोः प्राणप्रतिष्ठां तु कुर्यान्मंत्रेण मंत्रवित् ।

हन्यादस्त्रं प्रहारेण शत्रो गच्छ यमक्षयम् ॥ २४ ॥ ज्वलदंगारतापेन
भवंति ज्वरिता भृशम् । प्रोञ्छनैर्वा मपादेन दरिद्रो भवति ध्रुवम्
॥ २५ ॥ वैरिनाशकरं प्रोक्तं कवचं वश्यकारकम् । परमैश्वर्यदं चैव
पुत्रपौत्रादिवृद्धिदम् ॥ २६ ॥ प्रभातसमये चैव पूजाकाले च यत्नतः ।
सायंकाले तथा पाठात्सर्वसिद्धिर्भवेद्भुवम् ॥ २७ ॥ शत्रुरुच्चाटनं याति
देशाद्वा विच्युतो भवेत् । पश्चात्किङ्करतामेति सत्यं सत्यं न संशयः
॥ २८ ॥ शत्रुनाशकरे देवि सर्वसंपत्करे शुभे । सर्वदेवस्तुते देवि
कालिके त्वां नमाम्यहम् ॥ २९ ॥ इति श्रीरुद्रयामले कालिकाकल्पे
कालिकाकवचं संपूर्णम् ॥

३०१. वरदवल्लभास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कान्तस्ते पुरुषोत्तमः फणिपतिः शय्यासनं
वाहनं वेदात्मा विहगेश्वरो जवनिका माया जगन्मोहिनी । ब्रह्मेशादि-
सुरव्रजः सदयितस्त्वद्दासदासीगणः श्रीरित्येव च नाम ते भगवति ब्रूमः
कथं त्वां वयम् ॥ १ ॥ यस्यास्ते महिमानमात्मन इव त्वद्वल्लभोऽपि
प्रभुर्नालं मातुमियत्तया निरवधिं नित्यानुकूलं स्वतः । तां त्वां दास
इति प्रपन्न इति च स्तोष्याम्यहं निर्भयो लोकैकेश्वरि लोकनाथदयिते
दान्ते दयां ते विदन् ॥ २ ॥ ईषत्त्वत्करुणानिरीक्षणसुधासंधुक्षणाद्रक्षसे
नष्टं प्राक्त्वदलाभतस्त्रिभुवनं संप्रत्यनन्तोदयम् । श्रेयो न ह्यरविन्द-
लोचनमनःकान्ताप्रसादादृते संसृत्याक्षरवैष्णवाध्वसु नृणां संभाव्यते
कर्हिचित् ॥ ३ ॥ शान्तानन्तमहाविभूतिपरमं यद्ब्रह्मरूपं हरे मूर्तं
ब्रह्म ततोऽपि यत्प्रियतरं रूपं यदत्यद्भुतम् । यान्यन्यानि यथासुखं
विहरतो रूपाणि सर्वाणि तान्याहुः स्वैरनुरूपरूपविभवैर्गाढोपगाढानि
ते ॥ ४ ॥ आकारत्रयसंपन्नामरविन्दविलासिनीम् । अशेषजगदीशित्रीं
वन्दे वरदवल्लभाम् ॥ ५ ॥ इति श्रीवरदवल्लभास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३०२. लघुस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ऐन्द्रस्यैव शरासनस्य दधती मध्येललाटं प्रभां
 शौर्द्धीं कान्तिमनुष्णगोरिव शिरस्यातन्वती सर्वतः । एषाऽसौ त्रिपुरा
 हृदि द्युतिरिवोष्णांशोः सदाहःस्थिता छिंद्यान्नः सहसा पदैस्त्रिभिरधं
 ज्योतीर्मयी वाङ्मयी ॥ १ ॥ या मात्रा त्रपुसीलतातनुलसत्तनुस्थिति-
 स्पर्धिनी वाग्बीजे प्रथमे स्थिता हृदि सदा तां मन्महे ते वयम् ।
 शक्तिः कुंडलिनीति विश्वजननी व्यापारबद्धोद्यमा ज्ञात्वेत्थं न पुनः
 स्पृशन्ति जननीगर्भेऽर्भकत्वं सुराः ॥ २ ॥ दृष्ट्वा संभ्रमकारि वस्तु
 सहसा ऐ ऐ इति व्याहृतं येनाकूतवशादपीह वरदे बिंदुं विनाप्य-
 क्षरम् । तस्यापि ध्रुवमेव देवि तरसा कान्ते तवानुग्रहे वाचः सूक्ति-
 सुधारसद्रवमुचो नयान्ति वक्त्रांबुजात् ॥ ३ ॥ यन्नित्ये तव कामराजम-
 परं मंत्राक्षरं निष्कलं तत्सारस्वतमित्यवैति विरलः कश्चिद्बुधश्चेद्भुवि ।
 आख्यानं प्रतिपर्व सत्यतपसो यत्कीर्तयंतो द्विजाः प्रारंभे प्रणवास्पद-
 प्रणयितां नीत्वोच्चरन्ति स्फुटम् ॥ ४ ॥ यत्सद्यो वचसां प्रवृत्तिकरणे
 दृष्टप्रभावं बुधैस्तार्तीयं वत हं नमामि मनसा त्वद्बीजमिदुप्रभम् ।
 अस्त्वौर्वोऽपि सरस्वतीमनुगतो जाड्यांबुविच्छित्तये गोशब्दो गिरि
 वर्तते स नियतं योगं विना सिद्धिदः ॥ ५ ॥ एकैकं तव देवि
 बीजमनघं सव्यंजनाव्यंजनं कूटस्थं यदि वा पृथक् क्रमगतं यद्वा स्थितं
 न्युत्क्रमात् । यं यं काममपेक्ष्य येन विधिना केनापि वा चिंतितं जप्तं
 वा सफलीकरोति तरसा तं तं समस्तं नृणाम् ॥ ६ ॥ वामे पुस्तक-
 धारिणीमभयदां साक्षस्त्रजं दक्षिणे भक्तेभ्यो वरदानपेशलकरां
 कर्पूरकुंदोज्ज्वलाम् । उज्जृम्भांबुजपत्रकांतिनिवहस्त्रिध्वप्रभालोकिनीं ये

त्वामेव न शीलयन्ति मनसा तेषां कवित्वं कुतः ॥ ७ ॥ ये त्वां
 पांडुरपुंडरीकपटलस्पष्टाभिरामप्रभां सिंचन्तीममृतद्रवैरिव शिवे ध्यायन्ति
 मूर्ध्नि स्थिताम् । अश्रान्तं विकटस्फुटाक्षरपदा निर्याति वक्रांबुजात्तेषां
 भारति भारती सुरसरित्कल्लोललोलोर्मिवत् ॥ ८ ॥ ये सिंदूरपराग-
 पुञ्जपिहितां त्वत्तेजसा द्यामिमामुर्वीं चापि विलीनयावकरस-
 प्रस्तारमग्न्यामिव । ध्यायन्ति क्षणमप्यनन्यमनसस्तेषामनङ्गज्वर-
 क्हांतास्त्रस्तकुरंगशावकदृशो वश्या भवन्ति स्फुटम् ॥ ९ ॥
 चंचत्कांचनकुंडलांगदधराभावद्दकांचीस्रजं ये त्वां चेतसि तद्गते
 क्षणमपि ध्यायन्ति कृत्वा स्थिराम् । तेषां वेदमसु विभ्रमादहरहः
 स्फारीभवन्त्यश्विरं माद्यत्कुंजरकर्णतालतरलाः स्थैर्यं भवन्ति श्रियः
 ॥ १० ॥ आर्भक्या शशिखण्डमण्डितजटाजूटां नृमुण्डस्रजं बभ्रूक-
 प्रसवारुणांबरधरां प्रेतासनाध्यासिनीम् । त्वां ध्यायन्ति चतुर्भुजां
 त्रिनयनामापीनतुङ्गस्तनीं मध्ये निम्नवलित्रयांकिततनुं तद्रूप-
 संवित्तये ॥ ११ ॥ जातोऽप्यल्पपरिच्छदे क्षितिभुजां सामान्यमात्रे
 कुले निःशेषावनिचक्रवर्तिपदवीं लब्ध्वा प्रतापोन्नतः । यद्विद्याधर-
 वृंदवंदितपदः श्रीवत्सराजोऽभवद्देवि त्वच्चरणांबुजप्रणतिजः सोऽयं
 प्रसादोदयः ॥ १२ ॥ चंडि त्वच्चरणांबुजार्चनविधौ बिल्वीदलोलुण्ठन-
 त्रुल्यत्कंटककोटिभिः परिचयं येषां न जग्मुः कराः । ते दंडांकुश-
 चक्रचापकुलिशश्रीवत्समत्स्यांकितैर्जायन्ते पृथिवीभुजः कथमिवा-
 ष्भोजप्रभैः पाणिभिः ॥ १३ ॥ विप्राः क्षोणिभुजो विशस्तदितरे
 क्षीराज्यमध्वासवैस्त्वां देवि त्रिपुरे परापरमयीं संतर्प्य पूजाविधौ ।
 यां यां प्रार्थयते मनः स्थिरतया तेषां त एते ध्रुवं तां तां सिद्धिमवा-
 मुवन्ति तरसा विघ्नैरनिघ्नीकृताः ॥ १४ ॥ शब्दानां जननि त्वमत्र
 भुवने वाग्वादिनीत्युच्यसे त्वत्तः केशवासवप्रभृतयोऽप्याविर्भवन्ति

ध्रुवम् । लीयंते खलु यत्र कल्पविरमे ब्रह्मादयस्तेऽप्यमी सा त्वं
 काचिदचिंत्त्यरूपगरिमा शक्तिः परा गीयसे ॥ १५ ॥ देवानां त्रितयं
 त्रयी हुतभुजां शक्तित्रयं त्रिस्वरास्त्रैलोक्यं त्रिपदी त्रिपुष्करमश्च
 त्रिव्रह्म वर्णास्त्रयः । यत्किञ्चिज्जगति त्रिधा नियमितं वस्तु त्रिवर्गात्मकं
 तत्सर्वं त्रिपुरेति नाम भगवत्यन्वेति ते तत्त्वतः ॥ १६ ॥ लक्ष्मीं
 राजकुले जयां रणमुखे क्षेमंकरीमध्वनि कव्यादद्विपसर्पभाजि
 शबरीं कांतारदुर्गे गिरौ । भूतप्रेतपिशाचजम्बुकभये स्मृत्वा महा-
 भैरवीं व्यामोहे त्रिपुरां तरंति विपदस्तारां च तोयप्लवे ॥ १७ ॥
 माया कुंडलिनी क्रिया मधुमती काली कलामालिनी मातंगी विजया
 जया भगवती गौरी शिवा शांभवी । शक्तिः शङ्करवल्लभा त्रिनयना
 वाग्वादिनी भैरवी ह्रींकारी त्रिपुरे परापरमयी माता कुमारी-
 त्यसि ॥ १८ ॥ आईपल्लवितैः परस्परयुतैर्द्वित्रिक्रमाद्यक्षरैः काद्यैः
 क्षांतगतैः स्वरादिभिरथ क्षांतैश्च तैः सस्वरैः । नामानि त्रिपुरे
 भवंति खलु यान्यत्यंतगुह्यानि ते तेभ्यो भैरवपत्तिं विंशतिसहस्रेभ्यः
 परेभ्यो नमः ॥ १९ ॥ बोद्धव्या निपुणं पदैः स्तुतिरियं कृत्वा
 मनस्तद्गतं भारत्यास्त्रिपुरेत्यनन्यमनसा यत्राद्यवृत्ते स्फुटम् ।
 एकद्वित्रिपदक्रमेण कथितस्त्वत्पादसंख्याक्षरैर्मन्त्रोद्धारनिधिर्विशेष-
 सहितः सत्संप्रदायान्वितः ॥ २० ॥ सावद्यं निरवद्यमस्तु यदि वा
 किं वाऽनया चिंतया नूनं स्तोत्रमिदं पठिष्यति जनो यस्यास्ति
 भक्तिस्त्वयि । संचिंत्यापि लघुत्वमात्मनि दृढं संजायमानं हठा-
 त्त्वद्भक्त्या मुखरीकृतेन सुचिरं यस्मान्मयापि ध्रुवम् ॥ २१ ॥
 इति लघुस्तवः संपूर्णः ॥

३०३. ताराष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मातर्नीलसरस्वति प्रणमतां सौभाग्यसंपत्प्रदे
 प्रत्यालीढपदस्थिते शिवहृदि स्मेराननाभोरुहे । फुल्लेदीवरलोचनत्रय-
 युते कर्त्री कपालोत्पले खड्गं चादधती त्वमेव शरणं त्वामीश्वरी-
 माश्रये ॥ १ ॥ वाचामीश्वरि भक्तकल्पलतिके सर्वार्थसिद्धिप्रदे
 गद्यप्राकृतपद्यजातरचना सर्वत्र सिद्धिप्रदे । नीलेदीवरलोचनत्रययुते
 कारुण्यवारानिधे सौभाग्यामृतवर्षणेन कृपया सिंच त्वमस्मादशम्
 ॥ २ ॥ शर्वे गर्वसमूहपूरिततनो सर्पादिवेषोज्ज्वले व्याघ्रत्वक्परि-
 वीतसुन्दरकटिव्याधूतघंटांकिते । सद्यःकृतगलद्रजःपरिमिलन्मुण्डद्वयी-
 मूर्धजग्रंथिश्रेणिनृमुण्डदामललिते भीमे भयं नाशय ॥ ३ ॥
 मायानंगविकाररूपललनाविद्वर्धचंद्रात्मिके हुंफटकारमयि त्वमेव
 शरणं मंत्रात्मिके मादशः । मूर्तिस्ते जननि त्रिधामघटिता स्थूलाऽति-
 सूक्ष्मा परा वेदानां नहि गोचरा कथमपि प्राप्तां नुतामाश्रये ॥ ४ ॥
 त्वत्पादांबुजसेवया सुकृतिनो गच्छन्ति सायुज्यतां तस्य स्त्री
 परमेश्वरी त्रिनयनब्रह्मादिसाम्यात्मनः । संसारांबुधिमज्जने पटुतनून्
 देवैर्द्रमुल्यान्सुरान् मातस्त्वत्पदसेवने हि विमुखो यो मंदधीः सेवते
 ॥ ५ ॥ मातस्त्वत्पदपंकजद्वयरजोमुद्रांककोटीरिणस्ते देवा जयसंगरे
 विजयिनो निःशंकमंके गताः । देवोऽहं भुवने न मे सम इति
 स्पर्धां वहंतः परे तत्तुल्यं नियतं यथाऽसुभिरमी नाशं व्रजन्ति
 स्वयम् ॥ ६ ॥ त्वन्नामस्मरणात्पलायनपरा द्रष्टुं च शक्ता न ते
 भूतप्रेतपिशाचराक्षसगणा यक्षाश्च नागाधिपाः । दैत्या दानव-
 पुंगवाश्च खचरा व्याघ्रादिका जंतवो डाकिन्यः कुपितांतकाश्च मनुजं
 मातः क्षणं भूतले ॥ ७ ॥ लक्ष्मीः सिद्धगणाश्च पादुकमुखाः

सिद्धास्तथा चारणाः स्तभश्चापि रणांगणे गजघटास्तंभस्तथा मोहनम् ।
 मातस्त्वत्पदसेवया खलु नृणां सिध्यन्ति ते ते गुणाः कांतिः कांत-
 मनोभवस्य भवति क्षुद्रोऽपि वाचस्पतिः ॥ ८ ॥ ताराष्टकमिदं रम्यं
 भक्तिमान्यः पठेन्नरः । प्रातर्मध्याह्नकाले च सायाह्ने नियतः शुचिः
 ॥ ९ ॥ लभते कवितां दिव्यां सर्वशास्त्रार्थविद्वेत् । लक्ष्मीमनश्चरां
 प्राप्य भुक्त्वा भोगान्यथेप्सितान् ॥ १० ॥ कीर्तिं कांतिं च नैरुज्यं
 सर्वेषां प्रियतां व्रजेत् । विख्यातिं चापि लोकेषु प्राप्यांते मोक्ष-
 मामुयात् ॥ ११ ॥ इति नीलतन्त्रे ताराष्टकं संपूर्णम् ॥

३०४. अंबास्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यामामनन्ति मुनयः प्रकृतिं पुराणीं विद्येति यां
 श्रुतिरहस्यविदो वदन्ति । तामर्धपल्लवितशंकररूपमुद्रां देवीमन-
 न्यशरणः शरणं प्रपद्ये ॥ १ ॥ अंब स्तवेषु तव तावदकर्तृकानि
 कुंठीभवन्ति वचसामपि गुंफनानि । डिंभस्य मे स्तुतिरसावसमंज-
 सापि वात्सल्यनिग्नहृदयां भवतीं धिनोतु ॥ २ ॥ न्योमेति बिंदु-
 रिति नाद इतींदुलेखारूपेति वाग्भवतनूरिति मातृकेति । निःस्यंद-
 मानसुखबोधमुधास्वरूपा विद्योतसे मनसि भाग्यवतां जनानाम्
 ॥ ३ ॥ आविर्भवत्पुलकसंततिभिः शरीरैर्निःस्यंदमानसलिलैर्नयनैश्च
 नित्यम् । वारिभश्च गद्गदपदामिरूपासते ये पादौ तवांब भुवनेषु
 त एव धन्याः ॥ ४ ॥ वक्रं यदुद्यतममिष्टुतये भवत्यास्तुभ्यं नमो
 यदपि देवि शिरः करोति । चेतश्च यत्त्वयि परायणमंब तानि
 कस्यापि कैरपि भवन्ति तपोविशेषैः ॥ ५ ॥ मूलालवालकुहरादुदिता
 भवानि निर्भिद्य षट्सरसिजानि तडिल्लतेव । भूयोऽपि तत्र विशासि
 ध्रुवमंडलेंदुनिःस्यंदमानपरमामृततोयरूपा ॥ ६ ॥ दग्धं यदा

मदनभैरवनेकधा ते मुग्धः कटाक्षविधिरंकुरयांचकार । धत्ते तदा
 प्रभृति देवि ललाटनेत्रं सत्यं हियैव मुकुलीकृतमिन्दुमौलिः ॥ ७ ॥
 भज्जातसंभवमनाकलितान्ववायं मिश्रं कपालिनमवाससमद्वि-
 तीयम् । पूर्वं करग्रहणमंगलतो भवत्याः शंभुं क एव बुबुधे गिरि-
 राजकन्ये ॥ ८ ॥ चर्मांबरं च शवभस्मविलेपनं च भिक्षाटनं च
 नटनं च परेतभूमौ । वेतालसंहतिपरिग्रहिता च शंभोः शोभां
 विभर्ति गिरिजे तव साहचर्यात् ॥ ९ ॥ कल्पोपसंहरणकेलिषु पंडि-
 तानि चंडानि खंडपरशोरपि तांडवानि । आलोकनेन तव कोमलितानि
 मातर्लास्यात्मना परिणमंति जगद्विभूल्यै ॥ १० ॥ जंतोरपश्चिम-
 तनोः सति कर्मसाध्ये निःशेषपाशपटलच्छिदुरा निमेषात् । कल्याणि
 देशिककटाक्षसमाश्रयेण कारुण्यतो भवति शंभवेधदीक्षा ॥ ११ ॥
 मुक्ताविभूषणवती नवविद्रुमाभा यच्चेतसि स्फुरसि तारकितेव
 संध्या । एकः स एव भुवनत्रयमुंदरीणां कंदर्पता व्रजति पंचशरीं
 विनापि ॥ १२ ॥ ये भावयंत्यमृतवाहिमिरंशुजालैराप्यायमान-
 भुवनाममृतेश्वरीं त्वाम् । ते लंघयंति ननु मातरलंघनीयां ब्रह्मा-
 दिभिः सुरवरैरपि कालकक्षाम् ॥ १३ ॥ यः स्फाटिकाक्षगुण-
 पुस्तककुंडिकाढ्यां व्याख्यासमुद्यतकरां शरदिंदुशुभ्राम् । पद्मासनां
 च हृदये भवतीमुपास्ते मातः स विश्वकवितार्किकचक्रवर्ती ॥ १४ ॥
 बर्हावतंसयुतबर्बरकेशपाशां गुंजावलीकृतघनस्तनहारशोभाम् ।
 श्यामां प्रवालवदनां शरचापहस्तां त्वामेव नौमि शबरीं शबरस्य
 जायाम् ॥ १५ ॥ अर्धेन किं नवलता ललितेन मुग्धे क्रीतं विभोः
 परुषमर्धमिदं त्वयेति । आलीजनस्य परिहासवचांसि मन्ये
 मंदस्मितेन तव देवि जडीभवन्ति ॥ १६ ॥ ब्रह्मांडबुद्बुदकदंबक-
 संकुलोऽयं मायोदधिविविधदुःखतरंगमालः । आश्चर्यमंब श्रुति

प्रलयं प्रयाति त्वद्भ्यानसंततिमहावडवामुखाम्नौ ॥ १७ ॥ दाक्षा-
 यणीति कुटिलेति गुहारणीति कात्यायनीति कमलेति कलावतीति ।
 एका सती भगवती परमार्थतोऽपि संदृश्यसे बहुविधा ननु नर्तकीव
 ॥ १८ ॥ आनंदलक्षणमनाहतनाम्नि देशे नादात्मना परिणतं तव
 रूपमीशे । प्रत्यङ्मुखेन मनसा परिचीयमानं शंसन्ति नेत्रसलिलैः
 पुलकैश्च धन्याः ॥ १९ ॥ त्वं चंद्रिका शशिनि तिग्मरुचौ रुचिस्त्वं
 त्वं चेतनाऽसि पुरुषे पवने बलं त्वम् । त्वं स्वादुताऽसि सलिले
 शिखिनि त्वमूष्मा निःसारमेव निखिलं त्वद्वते यदि स्यात् ॥ २० ॥
 ज्योतीषि यदिवि चरन्ति यदंतरिक्षं सूते पयांसि यदहिर्धरणिं च
 धत्ते । यद्वाति वायुरनलो यदुदर्चिरास्ते तत्सर्वमंब तव केवलमाज्ञ-
 यैव ॥ २१ ॥ संकोचमिच्छसि यदा गिरिजे तदानीं वाक्कर्कयोस्त्व-
 मसि भूमिरनामरूपा । यद्वा विकासमुपयासि यदा तदानीं त्वन्नाम-
 रूपगणनाः सुकरा भवन्ति ॥ २२ ॥ भोगाय देवि भवतीं कृतिनः
 प्रणम्य भूकिकरीकृतसरोजगृहाः सहस्राः । चिंतामणिप्रचयकल्पित-
 केलिशैले कल्पद्रुमोपवन एव चिरं रमन्ति ॥ २३ ॥ हर्तुं त्वमेव
 भवसि त्वदधीनमीशे संसारतापमखिलं दयया पशूनाम् । वैकर्तनी
 किरणसंहतिरेव नूनं धर्मं निजं शमयितुं निजयैव दृष्ट्या ॥ २४ ॥
 शक्तिः शरीरमधिदैवतमंतरात्मा ज्ञानं क्रियाकरणमानसजाल-
 मिच्छा । ऐश्वर्यमायतनमावरणानि च त्वं किं तन्न यद्भवसि देवि
 शशांकमौलेः ॥ २५ ॥ भूमौ निवृत्तिरुदिता पयसि प्रतिष्ठा
 विद्यानले मरुति शांतिरतीतशांतिः । व्योम्नीति याः किल कलाः
 कलयन्ति विश्वं तासां हि दूरतरमंब पदं त्वदीयम् ॥ २६ ॥
 यावत्पदं पदसरोजयुगं त्वदीयं नांगीकरोति हृदयेषु जगच्छरण्ये ।
 तावद्विकल्पजटिलाः कुटिलप्रकारास्तग्रहाः समयिनां प्रलयं न

यांति ॥ २७ ॥ यदेवयानपितृयानविहारमेके कृत्वा मनः करण-
मंडलसार्वभौमम् । यात्रे निवेश्य तत्र कारणपंचकस्य पर्वाणि पार्वति
नयन्ति निजासनत्वम् ॥ २८ ॥ स्थूलासु मूर्तिषु महीप्रमुखासु
शंभोः कस्याश्चनापि तत्र वैभवमंब्र यस्याः । पत्या गिरामपि न
शक्यत एव वक्तुं साऽसि स्तुता किल मयेति तितिक्षितव्यम्
॥ २९ ॥ कालाग्निकोटिरुचिमंब्र षडध्वशुद्धावाप्लावनेषु भवती-
ममृतौघवृष्टिम् । श्यामां घनस्तनतटां सकलीकृतौ च ध्यायंति
एव जगतां गुरवो भवंति ॥ ३० ॥ विद्यां परां कतिचिदंबरमंब्र
केचिदानंदमेव कतिचित्कतिचिच्च मायाम् । त्वां विश्वमाहुरपरे
वयमानमामः साक्षादपारकरुणां गुरुमूर्तिमेव ॥ ३१ ॥ कुवलय-
दलनीलं वर्वरस्त्रिधकेशं पृथुतरकुचभारकांतकांतावलग्नम् । किमिह
बहुभिरुक्तैस्त्वत्स्वरूपं परं नः सकलजननिमातः संततं सन्निधत्ताम्
॥ ३२ ॥ इत्यंब्रास्तवः संपूर्णः ॥

३०५. चर्चास्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सौन्दर्यविभ्रमभुवो भुवनाधिपत्यसंकल्प-
कल्पतरवस्त्रिपुरे जयंति । एते कवित्वकुमुदप्रकरावबोधपूर्णंदवस्त्वयि
जगज्जननि प्रणामाः ॥ १ ॥ देवि स्तुतिव्यतिकरे कृतबुद्ध्यस्ते वाच-
स्पतिप्रभृतयोऽपि जडीभवंति । तस्मान्निसर्गजडिमा कतमोऽहमत्र
स्तोत्रं तव त्रिपुरतापनपत्तिं कर्तुम् ॥ २ ॥ मातस्तथापि भवतीं
भवतीव्रतापविच्छिन्नये स्तवमहार्णवकर्णधारः । स्तोतुं भवानि स

१ स्तवोऽयमस्मत्काव्यमाला-तृतीयगुच्छके पञ्चस्तवीनाम्ना प्रका-
शितोऽस्ति ।

भवच्चरणारविन्दभक्तिग्रहः किमपि मां मुखरीकरोति ॥ ३ ॥ सूते
जगति भवती भवती बिभर्ति जागर्ति तत्क्षयकृते भवती भवानि ।
मोहं भिनत्ति भवती भवती रुणद्धि लीलायितं जगति चक्रमिदं
भवत्याः ॥ ४ ॥ यस्मिन्मनागपि नवांबुजपत्रगौरि गौरि प्रसादमधुरां
इशमादधासि । तस्मिन्निरंतरमनंगशरावकीर्णसीमंतिनीनयनसन्ततयः
पतन्ति ॥ ५ ॥ पृथ्वीभुजोऽप्युदयनप्रवरस्य तस्य विद्याधर-
प्रणतिचुंबितपादपीठः । यच्चक्रवर्तिपदवीप्रणयः स एष त्वत्पाद-
पंकजरजःकणजः प्रसादः ॥ ६ ॥ त्वत्पादपंकजरजःप्रणिपातपूर्वैः
पुण्यैरनल्पमतिभिः कृतिभिः कवीन्द्रैः । क्षीरक्षपाकरदुकूलहिमाव-
दाता कैरप्यवापि भुवनत्रितयेऽपि कीर्तिः ॥ ७ ॥ कल्पद्रुमप्रसव-
कल्पितचित्रपूजामुदीपितप्रियतमामदरक्तगीतम् । नित्यं भवानि
भवतीमुपवीणयन्ति विद्याधराः कनकशैलगृहागृहेषु ॥ ८ ॥ लक्ष्मी-
वशीकरणकर्मणि कामिनीनामाकर्षणव्यतिकरेषु च सिद्धमंत्रः ।
नीरंभ्रमोहतिमिरच्छिदुरप्रदीपो देवि त्वदंघ्रिजनितो जयति प्रसादः
॥ ९ ॥ देवि त्वदंघ्रिनखरत्नभुवो मयूखाः प्रत्युप्तमौक्तिकरुचो
मुदमुद्रहन्ति । सेवानतिव्यतिकरे सुरसुंदरीणां सीमंतसीन्नि कुसुम-
स्तवकायितं यैः ॥ १० ॥ मूर्ध्नि स्फुरत्तुहिनदीधितिदीप्तिदीप्तं
मध्येललाटममरायुधरश्मिचित्रम् । हृच्चक्रचुंबि हुतभुक्कणिकानुकारि
ज्योतिर्यदेतदिदमंब तव स्वरूपम् ॥ ११ ॥ रूपं तव स्फुरितचंद्र-
मरीचिगौरमालोकते शिरसि वागधिदैवतं यः । निःसीमसूक्तिरचना-
मृतनिर्झरस्य तस्य प्रकाममधुराः प्रसरन्ति वाचः ॥ १२ ॥ सिंदूर-
पांसुपटलच्छुरितामिव द्यां त्वत्तेजसा जतुरसस्त्रपितामिवोर्वीम् । यः
पश्यति क्षणमपि त्रिपुरे विहाय व्रीडां मृडानि सुदृशस्तमनुद्वंति
॥ १३ ॥ मातर्मुहूर्तमपि यः स्मरति स्वरूपं लाक्षारसप्रसरतंतुनिभं

भवत्याः । ध्यायंत्यनन्यमनसस्तमनंगतताः प्रद्युम्नसीम्नि सुभगत्व-
गुणं तरुण्यः ॥ १४ ॥ योऽयं चकास्ति गगनार्णवरत्नमिन्दुर्योऽयं
सुरासुरगुरुः पुरुषः पुराणः । यद्वाममर्धमिदमंधकसूदनस्य देवि
त्वमेव तदिति प्रतिपादयन्ति ॥ १५ ॥ इच्छानुरूपमनुरूपगुण-
प्रकर्षं संकर्षिणि त्वमस्मिमृष्य यदा विभर्षि । जायेत स त्रिभुवनैक-
गुरुस्तदानीं देवः शिवोऽपि भुवनत्रयसूत्रधारः ॥ १६ ॥ ध्यातासि
हैमवति येन हिमांशुरश्मिमालामलद्युतिरकल्मषमानसेन । तस्या-
विलम्बमनवद्यमनन्तकल्पमल्पैर्दिनैः सृजसि सुन्दरि वाग्विलासम्
॥ १७ ॥ आधारमारुतनिरोधवशेन एषां सिंदूरंजितसरोजगुणा-
नुकारि । तीव्रं हृदि स्फुरति देवि वपुस्त्वदीयं ध्यायन्ति तानिह
समीहितसिद्धसाध्याः ॥ १८ ॥ ये चिंतयंत्यरुणमंडलमध्यवर्ति रूपं
तत्रांब नवयावकपंकपिंगम् । तेषां सदैव कुसुमायुधबाणसिद्धवक्षः-
स्थला मृगदृशो वशगा भवन्ति ॥ १९ ॥ त्वामैदवीमिव कलामनु-
भालदेशमुद्भासितांबरतलामवलोकयन्तः । सद्यो भवानि सुधियः
कवयो भवन्ति त्वं भावनाहितधियां कुलकामधेनुः ॥ २० ॥ शर्वाणि
सर्वजनवन्दितपादपद्मे पद्मच्छदद्युतिविडंबितनेत्रलक्ष्मि । निष्पाप-
मूर्तिजनमानसराजहंसि हंसि त्वमापदमनेकविधां जनस्य ॥ २१ ॥
उत्तमहेमरुचिरे त्रिपुरे पुनीहि चेतश्चिरंतनमघौघवनं पुनीहि ।
कारागृहे निगडबंधनयंत्रितस्य त्वत्संस्मृतौ झटिति मे निगडा गलन्ति
॥ २२ ॥ त्वां व्यापिनीति सुमना इति कुंडलीति त्वां कामिनीति
कमलेति कलावतीति । त्वां मालिनीति ललितेत्यपराजितेति देवि
स्तुवंति विजयेति जयेत्युमेति ॥ २३ ॥ उद्वामकामपरमार्थसरोज-
खण्डचण्डद्युतिद्युतिमपासितषड्विकाराम् । मोहद्विपेन्द्रकदनोद्यतबोध-
सिंहलीलागुहां भगवतीं त्रिपुरां नमामि ॥ २४ ॥ गणेशबदुकस्तुता

रतिसहायकामान्विता स्मरारिवरविष्टरा कुसुमबाणबाणैर्युता । अनङ्ग-
 कुसुमादिभिः परिवृता च सिद्धैस्त्रिभिः कदम्बवनमध्यगा त्रिपुरसुन्दरी
 पातु नः ॥ २५ ॥ रुद्राणि विद्रुममयीं प्रतिमामिव त्वां ये चिन्त-
 यन्त्यरुणकान्तिमनन्यरूपाम् । तानेत्य पक्षमलदृशः प्रसभं भजन्ते
 कण्ठावसक्तमृदुबाहुलतास्तरुण्यः ॥ २६ ॥ त्वद्रूपैकनिरूपणप्रणयिता-
 बन्धो दृशोस्त्वद्रुणग्रामाकर्णनरागिता श्रवणयोस्त्वत्संस्मृतिश्चेतसि ।
 त्वत्पादार्चनचातुरी करयुगे त्वत्कीर्तनं वाचि मे कुत्रापि त्वदुपासन-
 व्यसनिता मे देवि मा शाम्यतु ॥ २७ ॥ त्वद्रूपमुलसितदाडिमपुष्प-
 रक्तमुद्गावयेन्मदनदैवतमक्षरं यः । तं रूपहीनमपि मन्मथनिर्विशेष-
 मालोकयन्त्युरुनितम्बतटास्तरुण्यः ॥ २८ ॥ ब्रह्मेन्द्ररुद्रहरिचन्द्र-
 सहस्ररश्मिस्कन्दद्विपाननहुताशनवन्दितायै । वागीश्वरि त्रिभुवनेश्वरि
 विश्वमातरन्तर्बहिश्च कृतसंस्थितये नमस्ते ॥ २९ ॥ यः स्तोत्रमेतदनु-
 वासरमीश्वरायाः श्रेयस्करं पठति वा यदि वा शृणोति । तस्येप्सितं
 फलति राजमिरीड्यतेऽसौ जायेत स प्रियतमो मदिरेक्षणानाम् ॥ ३० ॥
 इति चर्चास्तवः संपूर्णः ॥

३०६. श्यामलादण्डकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ माणिक्यवीणामुपलालयन्तीं मदालसां
 मंजुलवाग्विलासाम् । माहेन्द्रनीलद्युतिकोमलाङ्गीं मातङ्गकन्यां सततं
 स्मरामि ॥ १ ॥ चतुर्भुजे चन्द्रकलावतंसे कुचोन्नते कुङ्कुमरागशोणे ।
 पुण्ड्रेक्षुपाशाङ्कुशपुष्पबाणहस्ते नमस्ते जगदेकमातः ॥ २ ॥ माता
 मरकतश्यामा मातङ्गी मदशालिनी । कटाक्षयतु कल्याणी कदम्बवन-
 वासिनी ॥ ३ ॥ जय मातङ्गतनये जय नीलोत्पलद्युते । जय संगीत-
 रसिके जय लीलाशुकप्रिये ॥ ४ ॥ जय जननि सुधासमुद्रांतहृद्य-

न्मणिद्वीपसंरुढविल्वाटवीमध्यकल्पद्रुमाकल्पकादम्बकांतरवासप्रिये
 कृत्तिवासप्रिये सर्वलोकप्रिये । सादरारब्धसंगीतसंभावनासंभ्रमालो-
 लनीपञ्चगावद्बचूलीसनाथत्रिके सानुमत्पुत्रिके । शेखरीभूतशीतांशु-
 रेखामयूखावलीबद्धसुस्निग्धनीलालकश्रेणिशृङ्गारिते लोकसंभाविते ।
 कामलीलाधनुःसंनिभभूलतापुष्पसंदोहसंदेहकृल्लोचने वाक्सुधा-
 सेचने । चारुगोरोचनापङ्ककेलीललामाभिरामे सुरामे रमे । प्रोल्ल-
 सद्वालिकामौक्तिकश्रेणिकाचन्द्रिकामण्डलोद्भासिलावण्यगण्डस्थलन्यस्त-
 कस्तूरिकापत्ररेखासमुद्भूतसौरभ्यसंभ्रांतभृङ्गाङ्गनागीतसांद्रीभवन्मंद-
 तत्रीस्वरे सुस्वरे भास्वरे । बल्लकीवादनप्रक्रियालोलतालीदलाबद्धता-
 दङ्कभूषाविशेषान्विते सिद्धसंमानिते । दिव्यहालामदोद्वेहललसच्च-
 क्षुरांदोलनश्रीसमाक्षिप्तकणैकनीलोत्पले पूरिताशेषलोकाभिवाञ्छा-
 फले श्रीफले । स्वेदविंदूलसत्फाललावण्यनिःप्यंदसंदोहसंदेहकृन्ना-
 सिकामौक्तिके सर्वविश्वात्मिके कालिके । सुग्धमंदसितोदार-
 वक्त्रस्फुरत्पूगताम्बूलकर्पूरखण्डोत्करे ज्ञानमुद्राकरे सर्वसंपत्करे
 पद्मभास्वत्करे । कुंदपुष्पद्युतिस्लिग्धदंतावलीनिर्मलालोलकल्लोलसंसे-
 लनस्मेरशोणाधरे चारुवीणाधरे पक्कविम्बाधरे ॥ १ ॥ सुललित-
 नवयौवनारम्भचंद्रोदयोद्वेहललावण्यदुग्धार्णवाविर्भवत्कम्बुविम्बोकभृ-
 त्कंधरे सत्कलामन्दिरे मंथरे । दिव्यरत्नप्रभाबंधुरच्छन्नहारादिभूषास-
 मुद्द्योतमानानवद्यांशुशोभे शुभे । रत्नकेयूररश्मिच्छटापल्लवप्रोल्लसद्दो-
 लंताराजिते योगिभिः पूजिते । विश्वदिङ्माण्डलव्यापिमणिक्वतेजःस्फु-
 रत्कङ्कणालंकृते विभ्रमालंकृते साधकैः सत्कृते । वासरारम्भवेलासमुज्ज-
 र्भमाणारविंदप्रतिद्वन्द्विपाणिद्वये संततोद्यद्वये अद्वये । दिव्यरत्नोर्मिका-
 दीधितिस्तोमसंध्यायमानाङ्गुलीपल्लवोद्यन्नखेन्दुप्रभामण्डले संनताख-
 ण्डले चित्रप्रभामण्डले प्रोल्लसत्कुण्डले । तारकाराजिनीकाशद्वारावलि-

स्मेरचारुस्तनाभोगभारानमन्मध्यवल्लीवलिच्छेदवीचीसमुल्लाससंदर्शिता-
कारसौन्दर्यरत्नाकरे वल्लकीभृत्करे किंकरश्रीकरे । हेमकुम्भोपमोत्तुङ्ग-
षक्षोजभारावनम्रे त्रिलोकावनम्रे । लसद्वृत्तगम्भीरनाभीसरस्तीरशैवाल-
शङ्काकरश्यामरोमावलीभूषणे मञ्जुसंभाषणे । चारुशिञ्जित्कटीसूत्र-
निर्भस्मितानङ्गलीलाधनुःशिञ्जिनीडम्बरे दिव्यरत्नाम्बरे । पद्मरागोलस-
न्मेखलाभास्वरश्रोणिशोभाजितस्वर्णभूभृत्तले चन्द्रिकाशीतले ॥ २ ॥
विकासितनवकिंशुकाताम्रदिव्यांशुकच्छन्नचारुशोभापराभृतसिंदूरशो-
णायमानेन्द्रमातङ्गहस्तार्गले वैभवानर्गले श्यामले । कोमलस्निग्धनीलो-
त्पलोत्पादितानङ्गतूणीरशङ्काकरोदारजङ्घालते चारुलीलागते । नम्रदि-
क्पालसीमन्तिनीकुंतलस्निग्धनीलप्रभापुञ्जसञ्जातदूर्वाङ्कुराशङ्कसारङ्ग-
संयोगरिङ्गन्नखेन्द्रज्ज्वले प्रोज्ज्वले निर्मले । प्रहृदेवेशलक्ष्मीशभूतेशतो-
येशवाणीशकीनाशदैत्येशयक्षेशवाय्यभिकोटीरमाणिक्यसंघृष्टवालात-
पोद्दामलाक्षारसारुण्यतारुण्यलक्ष्मीगृहीताङ्घ्रिपद्मे सुपद्मे उभे ॥ ३ ॥
सुरुचिरनवरत्नपीठस्थिते सुस्थिते । रत्नपद्मासने रत्नसिंहासने शङ्क-
पद्मद्वयोपाश्रिते । तत्र विघ्नेशदूर्वावदुक्षेत्रपालैर्युते मत्तमातङ्गकन्या-
समूहान्विते मञ्जुलामेनकाद्यङ्गनामानिते भैरवैरष्टभिर्वेष्टिते । देवि
वामादिभिः शक्तिभिः सेविते धात्रिलक्ष्म्यादिशक्त्यष्टकैः संयुते ।
मातृकामण्डलैर्मण्डिते यक्षगंधर्वसिद्धाङ्गनामण्डलैरर्चिते । पञ्च-
बाणात्मिके पञ्चबाणेन रत्या च संभाविते । प्रीतिभाजा वसन्तेन
चानन्दिते भक्तिभाजां परं श्रेयसे कल्पसे । योगिनां मानसे द्योतसे
छन्दसामोजसा भ्राजसे । गीतविद्याविनोदातिवृष्णेन कुण्डलेन
संपूज्यसे । भक्तिमच्चेतसा वेधसा स्तूयसे । विश्वहृद्येन वाद्येन
विद्याधरैर्गीयसे ॥ ४ ॥ श्रवणहरणदक्षिणकाणया वीणया किन्नरैर्गी-
यसे । यक्षगंधर्वसिद्धाङ्गनामण्डलैरर्च्यसे । सर्वसौभाग्यवाञ्छावतीभि-

वंधूभिः सुराणां समाराध्यसे । सर्वविद्याविशेषात्मकं चादुगाथासमु-
 च्चाटनं कण्ठमूलोल्लसद्गणराजित्रयं कोमलश्यामलोदारपक्षद्वयं तुण्ड-
 शोभातिदूरीभवत्किंशुकं तं शुकं लालयंती परिक्रीडसे । पाणिपद्मद्वये-
 नाक्षमालामपि स्फाटिकीं ज्ञानसारात्मकं पुस्तकं चाङ्कुशं पाशमाविभ्रती
 येन संचिंत्यसे तस्य वक्त्रांतराद्गद्यपद्यात्मिका भारती निःसरेत् ।
 येन वा यावकाभाकृतिर्भाव्यसे तस्य वश्या भवन्ति स्त्रियः
 पूरुषाः । येन वा शातकुम्भद्युतिर्भाव्यसे सोऽपि लक्ष्मीसहस्रैः
 परिक्रीडते । किं न सिध्येद्द्वपुः श्यामलं कोमलं चंद्रचूडान्वितं
 तावकं ध्यायतः । तस्य लीलासरोवारिधिस्तस्य केलीवनं नंदनं तस्य
 भद्रासनं भूतलं तस्य गीर्देवता किंकरी तस्य चाज्ञाकरी श्रीः स्वयम् ।
 सर्वतीर्थात्मिके सर्वमंत्रात्मिके सर्वतंत्रात्मिके सर्वयंत्रात्मिके सर्व-
 पीठात्मिके सर्वतत्त्वात्मिके सर्वशक्त्यात्मिके सर्वविद्यात्मिके सर्व-
 योगात्मिके सर्वनादात्मिके सर्वशब्दात्मिके सर्वविश्वात्मिके सर्वदीक्षा-
 त्मिके सर्वसर्वात्मिके सर्वगे पाहि मां पाहि मां पाहि मां देवि तुभ्यं
 नमो देवि तुभ्यं नमः ॥ ५ ॥ इति श्यामलादण्डकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३०७. मोहिनीकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ भगवन् सर्वधर्मज्ञ सर्वागमविशारद । कवचं
 देवतायास्तु कृपया कथय प्रभो ॥ १ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ शृणु देव
 महाप्राज्ञ सर्वशास्त्रविशारद । कवचं मोहिनीदेव्या महासिद्धिकरं
 परम् ॥ २ ॥ मोहिनी मे शिरः पातु भालं नेत्रयुगं तथा । भ्रुवौ च
 कामिनी रक्षेन्मुखं वागीश्वरी तथा ॥ ३ ॥ श्रोत्रे मंगलरूपा च कंठं
 महिषमर्दिनी । भुजौ सौंदर्यनिलया हस्तौ रक्षेद्यशस्विनी ॥ ४ ॥
 सर्वदा नाभिदेशे तु कमला पातु चोदरम् । विजया हृदयं पातु कटिं
 सुरवरार्चिता ॥ ५ ॥ कवौ महालया रक्षेदंगुलीर्भक्तवत्सला । वैष्णवी

पातु जंघे च माया मेढूं गुदं तथा ॥ ६ ॥ पादौ च देवजननी तलं
 पातालवासिनी । पूर्वे तु मोहिनी रक्षेदक्षिणे सुखदायिनी ॥ ७ ॥
 पश्चिमे वारुणी रक्षेदुत्तरेऽमृतवासिनी । ईशान्यां पातु चेशानी आग्ने-
 य्यामग्निदेवता ॥ ८ ॥ नैऋत्यां खड्गधृगदेवी वायव्यां मृगवाहिनी ।
 ऊर्ध्वं ब्रह्माणी मे रक्षेदधस्ताद्वैष्णवी तथा ॥ ९ ॥ अग्रतः पातु चेंद्राणी
 वाराही पृष्ठतस्तथा । कौबेरी चोत्तरे पातु दक्षिणे विष्णुवल्लभा ॥ १० ॥
 इदं कवचमज्ञात्वा यो भजेन्मोहिनीं नरः । वृथा श्रमो भवेत्तस्य न
 मंत्रः सिद्धिदायकः ॥ ११ ॥ भूर्जपत्रे समालिख्य कुंकुमादिकवचदनैः ।
 शतमष्टोत्तरं जाप्यं स्वर्गस्थं धार्यते यदि ॥ १२ ॥ कंठे वा दक्षिणे
 बाहावष्टसिद्धिर्भवेद्भुवम् । सर्वथा सर्वदा नित्यं मोहिनीकवचं जपेत्
 ॥ १३ ॥ राजद्वारे सभास्थाने कारागृहनिबन्धने । जलमध्ये चाग्निमध्ये
 तथा निर्जनके वने ॥ १४ ॥ अरण्ये प्रांतरे घोरे शत्रुसंघे महाहवे ।
 शस्त्रवाते विषे पीते जपन् सिद्धिमवाप्नुयात् ॥ १५ ॥ ब्रह्मराक्षस-
 वेतालाः कूष्मांडा भैरवादयः । नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे हृदि
 संस्थिते ॥ १६ ॥ मनसा चिंतितं कार्यं सहस्रं जपतस्तथा । पलाशमूले
 प्रजपेत्सहस्रत्रितयं मुदा ॥ १७ ॥ शत्रुहानिर्धुवं चात्र जायते नात्र
 संशयः । अर्कमूले जपेन्नित्यं मंत्रराजमिमं शुभम् ॥ १८ ॥ भोजये-
 द्ब्राह्मणांश्चैव लक्ष्मीर्वसति सर्वदा । यदिदं कवचं नित्यं भक्त्या तत्र
 मयोदितम् ॥ १९ ॥ यो जपेत्सर्वदा भक्त्या मोहिन्याः कवचं शुभम् ।
 वांछितं फलमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥ २० ॥ इति श्रीभवि-
 ष्योत्तरपुराणे ब्रह्मप्रोक्तं मोहिनीकवचं स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३०८. मोहिन्यर्गलास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ देवा ऊचुः ॥ जय मंगलरूपे त्वं जय त्वं
 भक्तवत्सले । जय सौंदर्यनिलये जय कारुण्यवारिधे ॥ १ ॥ महालये

भो करुणाल येमां त्वं त्राहि दीनार्तिहरे प्रपन्नम् । त्वत्पादपद्मावनतो-
 त्तमांगं प्रसीद नित्यं वरदे शरण्ये ॥ २ ॥ त्वं विष्णुरूपिणी देवि
 त्वं च रुद्रस्वरूपिणी । त्वं ब्राह्मी त्वं च शर्वाणी त्वमिन्द्राणीति
 गीयसे ॥ ३ ॥ त्वं कल्याणी च श्रीर्वाणी सैहिकेयविदारिणी । त्वमि-
 द्राणी च सौपर्णी काद्रवेयविदारिणी ॥ ४ ॥ वैकुण्ठपदनिःश्रेणी निर्जराणां
 तरंगिणी । गंगाधरस्य रमणी निधिवासप्रवासिनी ॥ ५ ॥ संहारिणी
 च विपदां संपत्संततिकारिणी । भवपाशमहापाशगेहपाशविदारिणी
 ॥ ६ ॥ स्कंद उवाच ॥ इति ते त्रिदशाः स्तुत्वा जनार्दनमनन्तरम् ।
 स्त्रीरूपेणातिशोभाढ्यं मोहिनीरूपकं जगुः ॥ ७ ॥ देवा ऊचुः ॥
 शृंगारलावण्यसमुद्ररूपिणी स्वरूपशोभारतिकोटिजित्वरा । त्वमेव
 कामीप्सितदातृदानदा देवी मुदा रक्षतु दैत्यमोहिनी ॥ ८ ॥ प्रतार-
 णाभिज्ञतमा सुरारिणां नमः शिरश्छेदनकारिविक्रमा । स्वरूपसंमो-
 हितदानवव्रजादेवी मुदा रक्षतु दैत्यमोहिनी ॥ ९ ॥ ददाति दोर्भ्या-
 मपि या चतुर्भुजा श्रियं हितवैतिविभूषणांकनैः । आपत्तिदारिद्र्यविना-
 शकारिणी देवी मुदा रक्षतु दैत्यमोहिनी ॥ १० ॥ पीयूषदात्री सुत-
 नुर्दिवौकसां दितेः सुतानां च सुराप्रदात्री । गृहीतमायाः मयकामिनी-
 वपुर्देवी मुदा रक्षतु दैत्यमोहिनी ॥ ११ ॥ सुवर्णपङ्कजरुहेतकीश्रियं
 शरीरवर्णेन च जित्वरा प्रसूः । स्वकण्ठधिकावितवह्मकीगुणा देवी मुदा
 रक्षतु दैत्यमोहिनी ॥ १२ ॥ स्वकीप्तकोटींदुकृतप्रभाश्रया प्रभाविनी
 दैवतकामपूरिणी । अखण्डमाखण्डलनिर्जरस्तुता देवी मुदा रक्षतु दैत्य-
 मोहिनी ॥ १३ ॥ यस्याः प्रभावं द्विसहस्रजिह्वः सहस्रवक्त्रोऽप्युरगा-
 धिराजः । वक्तुं प्रभुर्न क तदेतरे जना देवी मुदा रक्षतु दैत्यमोहिनी
 ॥ १४ ॥ स्कंद उवाच ॥ इति स्तुता तैस्त्रिदशैः स्वभावैः सा मोहिनी-
 रूपमधोक्षजस्य । उवाच वाक्यं विनयप्रसन्ना श्लक्ष्णं तदा तान्प्रण-

तानुदारान् ॥ १५ ॥ मोहिन्युवाच ॥ आदौ पुरुषरूपेण संस्तुतोऽहं
 जनार्दनः । ततः सीमंतिनीरूपा भवद्भिर्मोहिनी स्तुता ॥ १६ ॥ अथ
 चैष महापुण्यपुरुषप्रकृतिस्तवः । य एनं पठते नित्यं प्रातस्तथाय मानवः
 ॥ १७ ॥ मत्समीपे विशेषेण शुचिर्भूत्वा धृतव्रतः । न दारिद्र्यं भवेत्तस्य
 न संकटमवाप्नुयात् ॥ १८ ॥ आरोग्यं सततं गच्छेन्न स रोगैः
 प्रबाधते । भूतप्रेतपिशाचानां न बाधाभिः स भूयते ॥ १९ ॥ मरणेऽपि
 शुभाँल्लोकान्प्राप्नोतीति विनिश्चितम् । इदं क्षेत्रं महापुण्यं वृद्धातीरमिति
 श्रुतम् ॥ २० ॥ विशेषेणाधुना जातं युष्मत्पंक्तिनिषेवणात् । महालयेति
 विख्यातिं याताऽहं मोहिनी स्वयम् ॥ २१ ॥ वसाम्यत्र सुराः सर्वे
 भवंतोऽपि वसिष्यथ । त्रिरात्रं मत्समीपे यो मोहिन्या अर्गलास्तवम्
 ॥ २२ ॥ सदा पठति सश्रद्धस्तस्याहं वाञ्छितप्रदा । मद्दर्शनकृतां पुंसां
 मुक्तिरेव न संशयः ॥ २३ ॥ इति श्रीमोहिन्यर्गलास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३०९. अन्नपूर्णास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नित्यानंदकरी वराभयकरी सौंदर्यरत्नाकरी
 निर्धृताखिलघोरपावनकरी प्रत्यक्षमाहेश्वरी । प्रालेयाचलवंदापावनकरी
 काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि कृपात्रलंबनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी ॥ १ ॥
 नानारत्नविचित्रभूषणकरी हेमांबराडंबरी मुक्ताहारविलंबमानविलसद्द-
 क्षोजकुंभांतरी । काश्मीरागुरुवासिता रुचिकरी काशीपुराधीश्वरी
 भिक्षां देहि ॥ २ ॥ योगानंदकरी रिपुक्षयकरी धर्मार्थनिष्ठाकरी
 चंद्रार्कानलभासमानलहरी त्रैलोक्यरक्षाकरी । सर्वैश्वर्यसमस्तवाञ्छितकरी
 काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि ॥ ३ ॥ कैलासाचलकंदरालयकरी
 गौरी उमा शंकरी कौमारी निगमार्थगोचरकरी ओंकारबीजाक्षरी ।
 मोक्षद्वारकपाटपाटनकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि ॥ ४ ॥
 दृश्यादृश्यप्रभूतवाहनकरी ब्रह्मांडभांडोदरी लीलानाटकसूत्रभेदनकरी

विज्ञानदीपांकुरी । श्रीविश्वेशमनःप्रसादनकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां
देहि० ॥ ५ ॥ उर्वी सर्वजनेश्वरी भगवती मातान्नपूर्णेश्वरी वेणीनील-
समानकुंतलहरी नित्यानन्दानेश्वरी । सर्वानन्दकरी दशां शुभकरी काशी-
पुराधीश्वरी भिक्षां देहि० ॥ ६ ॥ आदिक्षांतसमस्तवर्णनकरी शंभोस्त्रि-
भात्राकरी काश्मीरा त्रिलेश्वरी त्रिलहरी नित्यांकुरा शर्वरी । कामा-
कांक्षकरी जनोदयकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां० ॥ ७ ॥ देवी सर्ववि-
चित्ररत्नरचिता दाक्षायणी सुंदरी वामस्वादुपयोधरप्रियकरी सौभाग्य-
माहेश्वरी । भक्ताभीष्टकरी दशाशुभकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि०
॥ ८ ॥ चंद्रार्कानलकोटिकोटिसदृशा चंद्रांशुर्विबाधरी चंद्रार्कप्रिसमा-
नकुंतलधरी चंद्रार्कवर्णेश्वरी । मालापुस्तकपाशसंकुशधरी काशीपुराधी-
श्वरी भिक्षां देहि० ॥ ९ ॥ क्षत्रत्राणकरी महाभयकरी माता कृपासागरी
साक्षान्मोक्षकरी सदाशिवकरी विश्वेश्वरश्रीधरी । दक्षाकंदकरी
निरामयकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि० ॥ १० ॥ अन्नपूर्ण
सदापूर्णं शंकरप्राणवल्लभे । ज्ञानवैराग्यसिद्ध्यर्थं भिक्षां देहि च
पार्वति ॥ ११ ॥ माता च पार्वती देवी पिता देवो महेश्वरः ।
बांधवाः शिवभक्ताश्च स्वदेशो भुवनत्रयम् ॥ १२ ॥ इति
श्रीमच्छंकराचार्यविरचितमन्नपूर्णास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३१०. बीजषोडशार्णमकरन्दस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीं-बीजे नादविन्दुद्वितयशशिकलाकाररूपे
स्वरूपे मातर्मे देहि बुद्धिं जहि जहि दुरितं पाहि मां दीननाथे ।
अज्ञानध्वांतनाशे क्षयरुचिरुचिरे प्रोल्लसत्पादपद्मे ब्रह्मेशाद्यैः सुरेन्द्रैः
सुरगणनमिते संस्तुतां त्वां नमामि ॥ १ ॥ लज्जाबीजस्वरूपे त्रिजगति
वरद व्रीडया या स्थितेयं तां नित्यां शम्भुशक्तिं त्रिभुवनजननीं
विश्वसंपालनीं च । सर्वासां तां निदानं सकलगुणमयीं सच्चिदानन्द-

रूपां तेजोरूपां प्रदीप्तां त्रिभुवनममितां ज्ञानदात्रीं नमामि ॥ २ ॥
 क्लीं—बीजे कामरूपधृतकुसुमधनुर्बाणपाशाङ्कुशां तां वन्दे भास्वत्सरो-
 जोदर (?) वि भवादृशं मोहयन्तीं त्रिलोकीम् । काञ्चीमञ्जीरहारां-
 गदमुकुटलसत्स्वर्णमाणिक्यरत्नैर्भास्वन्तीमिन्दुवक्त्रां स्तनभरनमितां
 क्षीणमध्यां त्रिनेत्राम् ॥ ३ ॥ ऐं—वाणीबीजरूपे त्रिभुवनजडताध्वान्त-
 विध्वंसिनी त्वं शब्दब्रह्मस्वरूपां श्रुतिभिरनुपदं गीयमाना त्वमेव ।
 मातर्मे देहि बुद्धिं मम संदत्ति परद्वन्द्वसंक्षोभकर्त्रीमैन्द्रीं वाचस्पते-
 रप्यतिविविधपदं त्वत्पदाम्भोजमीडे ॥ ४ ॥ सौः—शक्त्या कामरूपे
 घटपटप्रभृतौ दृष्टहेतौ सदा या माया काचिन्महत्त्वप्रभृतिपरिणतौ
 शूलभूता त्वमेव । केचिद्वाह्यप्रपञ्चा मणिमिव हि तनौ तन्तुभूतात्म-
 विद्याविद्याविभ्रान्तिवृन्दं क्षपयति जगतां मेनिरे शुद्धभावाः ॥ ५ ॥
 ॐ—मातस्ते नमस्ते श्रुतिपथगुरुयक्षरब्रह्मरूपे मिथ्यामोहान्धकारे पतित-
 मनुदिनं पाहि मां मन्दहीनम् । मोहकोधप्रलोभप्रमथमदचयैः शत्रुभिः
 पीड्यतेऽसौ पत्नीपुत्रादिभृत्यैर्नतविविधजनैः शृङ्खलाभिर्निबद्धम् ॥ ६ ॥
 ह्रींकारे ह्रीस्वरूपे मम दह दुरितं व्याधिदारिद्र्यबीजं मातस्त्वत्पाद-
 पद्मं द्वितयपरिसते प्रार्थये भक्तिलेशम् । त्वं वाणी त्वं च लक्ष्मीस्त्व-
 मसि गिरिसुता ब्रह्मविष्णुस्सरारेश्चित्तं नित्यं स्मरारुख्ये कृतमिह जननि
 हृत्कटाक्षैकवृन्दैः ॥ ७ ॥ श्रीङ्कारे श्रीस्वरूपे वितर मयि धनं धान्य-
 हस्त्यश्वयुक्तं स्वर्णं माणिक्यरत्नाद्यभिलषितयुतं त्वत्पदायैः सुयोग्यम् ।
 विद्यां त्वं देहि मोक्षं मयि भवदहने देवि दन्दद्व्यमाने योगीन्द्रैः
 सेव्यमाना भृतकलुषचयैर्मोक्षमन्वेषयद्भिः ॥ ८ ॥ कामो योनिश्चतुर्थ-
 स्वरत्रिदशपतिभौवनेशीवबीजं तावद्गर्णावली त्वं नतजनवरदे लास्यदे
 भक्तिप्रीते । त्वत्पादाम्भोजयुग्मं हृदयसरसिजे सन्निधायैकचित्ते
 ध्यात्वा त्वत्कर्मबन्धं त्वत्तिविमलधियो मुक्तवन्तो मुनीन्द्राः ॥ ९ ॥

ब्रह्मेन्दुः कामदेवो विषदमरगुरुभौवनेशीवत्रीजं तावद्वर्णस्वरूपैर्घटितक-
नकलतां त्वां प्रसन्नोऽस्मि मातः । विष्णुब्रह्मेशमूर्धस्थितमुकुटमणिप्रो-
ल्लसत्पादयन्त्रां योगीन्द्रैर्ध्वेयपादाम्बुरुहनखशशिद्योतविद्योतितां त्वाम्
॥ १० ॥ इन्दुः कामः सुरेशो विदयनलेसृग्वामनेत्रार्धचन्द्रैर्युक्तं
यद्वीजमेतत्तदपि तव वपुः सच्चिदानन्दरूपम् । बाला त्वं भैरवी त्वं
त्रिभुवनजननी वारिणी नीलवर्णा त्वं गौरी त्वं च काली सकलमनुमयी
त्वं महामोक्षदात्री ॥ ११ ॥ सौः-कारा बीजराजस्त्रिभुवनजननी शक्ति-
राद्या त्वमेव त्वद्युक्तः शम्भुरेव प्रभवति चलितुं त्वां विना जाड्यवान्
सः । ब्रह्मा विष्णुः कपर्दी जननि तव कृपा लेशमात्राच्छरीरं गृह्णन्तः
सृष्टिरक्षाप्रलयमविचलचक्रिरे त्वद्वशस्थाः ॥ १२ ॥ ऐं-बीजं वाग्भवाख्यं
त्वमिह जडमतिध्वान्तचक्षुःप्रकाशा मातः कारुण्यधाराभववलितदशा
पश्य मां दीननाथे । मोह्यन्ते मोहितास्ते तत्र जननि महामायया बद्ध-
चित्ताः कारुण्यं प्रार्थयन्ते तव पदयुगले ज्ञानवन्तो मुनीन्द्राः ॥ १३ ॥
क्लींकारो बीजरूपस्तव जननि मनुश्रेष्ठमध्यप्रदेशः साक्षाद्ब्रह्मस्वरूपो
मदनतनुलता ब्रह्मणो मोहकर्त्री । सुज्ञानसेखरवक्रांबुजकुहपल-
सत्सत्सु पीयूषधारा वेदाश्चत्वार एते तुहिनगिरिसुते प्राप्तमीने-
न्द्ररूपे ॥ १४ ॥ ह्रींकारोङ्काररूपा त्वमिह शशिमुखी हींस्वरूपा
त्वमेव क्षान्तिस्त्वं त्वं च कान्तिर्हरीहरकमलोद्भूतरूपा त्वमेव ।
त्वं सिद्धिस्त्वं च ऋद्धिः स्मररिपुमनसस्त्वं च संमोहयन्ती विद्या
त्वं मुक्तिहेतुर्भवजलधिजदुःखस्य हन्त्री त्वमेका ॥ १५ ॥ श्रीं-बीजे
श्रीस्वरूपे मधुरिपुमनसो मध्यमध्यासिता त्वं मातस्त्वद्भक्तिलेशा-
दमरपतिरसौ प्राप्तवान् बुद्धिमेषाम् । इत्येवं षोडशार्णः पठितमनुदिनं
स्वर्गमोक्षैकहेतुः सिद्धीरष्टौ लभन्ते य इह न तु वरं श्रेष्ठमेते

भजन्ते ॥ १६ ॥ पूजयित्वा विधानेन महात्रिपुरसुन्दरीम् । इमं
स्तवं पठित्वा तु देवीसायुज्यमाप्नुयात् ॥ १७ ॥ इति विष्णुयामले
शिवोक्तं बीजषोडशार्णमकरन्दस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३११. कालिकास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ दधन्नैरन्तर्यादपि मलिनचर्या सपदि यत्स-
पर्या पश्यन्सन् त्रिशतं सुरपुर्या नरपशुः । भटान्त्र्यान् वीर्यासमहरद-
सूर्यान् समिति या जगद्गुर्या काली मम मनसि कुर्यान्निवसतिम् ॥ १ ॥
लसन्नासामुक्ता निजचरणभक्तावनविधौ समुद्युक्ता रक्तांबुरुहद्वगल-
क्ताधरपुटा । अपि व्यक्ताऽव्यक्तायमनियमसक्ताशयशया जगद्गुर्या
काली मम मनसि कुर्यान्निवसतिम् ॥ २ ॥ रणत्सन्मंजीरा खल-
दमनवीराऽतिरुचिरस्फुरद्विद्युच्चरीरा सुजनझषनीरायिततनुः । विरा-
जत्कोटीरा विमलतरहीरा भरणभृज्जगद्गुर्या काली मम० ॥ ३ ॥
वसाना कौशेयं कमलनयना चन्द्रवदना दधाना कारुण्यं विपुलजघना
कुन्दरदना । पुनाता पापाद्या सपदि विधुनाना भवभयं जगद्गुर्या
काली मम० ॥ ४ ॥ रघूत्तंसप्रेक्षारणरणिकया मेरुशिखरात् समा-
गाद्या रागाञ्जटिति यमुनागाधिपमसौ । नगादीशप्रेष्टा नगपतिसुता
निर्जरनुता जगद्गुर्या काली मम मनसि० ॥ ५ ॥ विलसन्नवरत्न-
मालिका कुटिलश्यामलकुन्तलालिका । नवकुंकुमभव्यभालिकाऽवतु
सा मां सुखकृद्धि कालिका ॥ ६ ॥ यमुनाचलदमुना दुःखदवस्य
देहिनाम् । अमुना यदि वीक्षिता सकृच्छमु नानाविधमातनोत्सहो
॥ ७ ॥ अनुभूति सतीप्राणपरित्राणपरायणा । देवैः कृतसपर्या सा
काली कुर्याच्छुभानि नः ॥ ८ ॥ य इदं कालिकास्तोत्रं पठेत्तु प्रयतः
शुचिः । देवीसायुज्यभुक् चेह सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ ९ ॥ इति
कालिकास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३१२. देवीषट्कम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अम्बे शशिविम्बवदने कम्बुग्रीवे कठोर-
 कुचकुम्भे । अम्बरसमानमध्ये शम्बररिपुवैरिदेवि मां पाहि ॥ १ ॥
 कुन्दमुकुलाग्रदन्तां कुङ्कमपङ्केन लिप्तकुचभाराम् । आनीलनील-
 देहामम्ब्रामखिलाण्डनायकीं वन्दे ॥ २ ॥ सरिगमपधनिसतान्तां
 वीणासंक्रान्तचारुहस्तां ताम् । शान्तां मृदुलस्वान्तां कुचभरतान्त-
 नमामि शिवकान्ताम् ॥ ३ ॥ अरटतटघटितजूटीताडिततालीकपाल-
 ताटङ्गाम् । वीणावादनवेलाकम्पितशिरसं नमामि मातङ्गीम् ॥ ४ ॥
 वीणारसानुषङ्गं विकचमदामोदमाधुरीभृङ्गम् । करुणापूरितरङ्गं कलये
 मातङ्गकन्यकापाङ्गम् ॥ ५ ॥ दयमानदीर्घनयनां देशिकरूपेण दर्शि-
 ताभ्युदयाम् । वामकुचनिहितवीणां वरदां सङ्गीतमातृकां वन्दे ॥ ६ ॥
 माणिक्यवीणामुपलालयन्तीं मन्दालसां मञ्जुलवाग्विलासाम् ॥
 माहेन्द्रनीलद्युतिकोमलाङ्गीं मातङ्गकन्यां मनसा स्मरामि ॥ ७ ॥
 इति श्रीकालिकापुराणे देवीषट्कं समाप्तम् ॥



लक्ष्मीस्तोत्राणि ।



वन्दे लक्ष्मीं परशिवमयीं शुद्धजाम्बूनदाभां
तेजोरूपां कनकवसनां सर्वभूषोज्ज्वलांगीम् ॥
बीजापूरं कनककलशं हेमपद्मं दधाना-
माद्यां शक्तिं सकलजननीं विष्णुवामांकसंस्थाम् ॥



मयि क्षणमीक्षणार्धमिन्दीवरोदरसहोदरमिन्दिरायाः ॥ ७ ॥ इष्टा
 विशिष्टमतयोऽपि नरा यथा द्रागृष्टास्त्रिविष्टपसदश्च पदं भजन्ते ।
 दृष्टिः प्रहृष्टकमलोदरदीप्तिरिष्टां पुष्टिं कृपीष्ट मम पुष्करविष्टरायाः
 ॥ ८ ॥ दद्याद्यानुपवनो द्रविणांनुधारास्मिन्नकिञ्चनविहंगशिशौ
 निषण्णे । दुष्कर्मधर्ममपनीय चिराय दूरान्नारायणप्रणयिनीनयनांबु-
 वाहः ॥ ९ ॥ धीर्देवतेति गरुडध्वजभामिनीति शाकंभरीति शशि-
 शेखरवल्लभेति । सृष्टिस्थितिप्रलयसिद्धिषु संस्थितायै तस्यै नमस्त्रि-
 भुवनैकगुरोस्तरुण्यै ॥ १० ॥ श्रुत्यै नमोऽस्तु शुभकर्मफलप्रसूत्यै
 रत्यै नमोऽस्तु रमणीयगुणाश्रयायै । शक्त्यै नमोऽस्तु शतपत्रनिकेत-
 नायै पुष्ट्यै नमोऽस्तु पुरुषोत्तमवल्लभायै ॥ ११ ॥ नमोऽस्तु नाली-
 कविभावनायै नमोऽस्तु दुग्धोदधिजन्मभूत्यै । नमोऽस्तु सोमामृत-
 सौदरायै नमोऽस्तु नारायणवल्लभायै ॥ १२ ॥ नमोऽस्तु हेमां-
 बुजपीठिकायै नमोऽस्तु भूमण्डलनायिकायै । नमोऽस्तु देवादिदया-
 परायै नमोऽस्तु शार्ङ्गायुधवल्लभायै ॥ १३ ॥ नमोऽस्तु देव्यै भृगु-
 नन्दनायै नमोऽस्तु विष्णोरुरसि स्थितायै । नमोऽस्तु लक्ष्म्यै
 कमलालयायै नमोऽस्तु दामोदरवल्लभायै ॥ १४ ॥ नमोऽस्तु कान्त्यै
 कमलेक्षणायै नमोऽस्तु भूत्यै भुवनप्रसूत्यै । नमोऽस्तु देवादिभिर-
 र्चितायै नमोऽस्तु नन्दात्मजवल्लभायै ॥ १५ ॥ स्तुवन्ति ये स्तुति-
 भिरमूभिरन्वहं त्रयीमयीं त्रिभुवनमातरं रमाम् । गुणाधिका गुरु-
 धनभाग्यभागिनो भवन्ति ते भवमनु भाविताशयाः ॥ १६ ॥
 हरिः ॐ इति श्रीमद्भगवत्पादशंकराचार्यकृतः कनक (लक्ष्मी)-
 धारास्तवः संपूर्णः ॥

३१५. देवकृतलक्ष्मीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ क्षमस्व भगवत्यंब क्षमाशीले परात्परे ।

शुद्धसत्त्वस्वरूपे च कोपादिपरिवर्जिते ॥ १ ॥ उपमे सर्वसाध्वीनां
 देवीनां देवपूजिते । त्वया विना जगत्सर्वं मृततुल्यं च निष्फलम् ॥ २ ॥
 सर्वसंपत्स्वरूपा त्वं सर्वेषां सर्वरूपिणी । रासेश्वर्यधिदेवी त्वं त्वत्कलाः
 सर्वयोषितः ॥ ३ ॥ कैलासे पार्वती त्वं च क्षीरोदे सिन्धुकन्यका ।
 स्वर्गे च स्वर्गलक्ष्मीस्त्वं मर्त्यलक्ष्मीश्च भूतले ॥ ४ ॥ वैकुण्ठे च महा-
 लक्ष्मीर्देवदेवी सरस्वती । गंगा च तुलसी त्वं च सावित्री ब्रह्मलोकतः
 ॥ ५ ॥ कृष्णप्राणाधिदेवी त्वं गोलोके राधिका स्वयम् । रासे
 रासेश्वरी त्वं च वृन्दावनवने वने ॥ ६ ॥ कृष्णप्रिया त्वं भांडीरे चंद्रा
 चंदनकानने । विरजा चंपकवने शतशृंगे च सुंदरी ॥ ७ ॥ पद्मावती
 पद्मवने मालती मालतीवने । कुंददंती कुंदवने सुशीला केतकीवने
 ॥ ८ ॥ कदंबमाला त्वं देवी कदंबकाननेऽपि च । राजलक्ष्मी राजगोहे
 गृहलक्ष्मीर्गृहे गृहे ॥ ९ ॥ इत्युक्त्वा देवताः सर्वा मुनयो मन-
 वस्तथा । रुरुर्दुर्नम्रवदनाः शुष्ककंठोष्ठतालुकाः ॥ १० ॥ इति लक्ष्मी-
 स्त्वं पुण्यं सर्वदेवैः कृतं शुभम् । यः पटेप्रातरुत्थाय स वै सर्वं
 लभेद्भुवम् ॥ ११ ॥ अभायौ लभते भार्या विनीतां सुसुतां सतीम् ।
 सुशीलां सुंदरीं रम्यामतिसुप्रियवादिनीम् ॥ १२ ॥ पुत्रपौत्रवतीं
 शुद्धां कुलजां कोमलां वराम् । अपुत्रो लभते पुत्रं वैष्णवं चिरजीविनम्
 ॥ १३ ॥ परमैश्वर्ययुक्तं च विद्यावंतं यशस्विनम् । अष्टराज्यो
 लभेद्राज्यं अष्टश्रीर्लभते श्रियम् ॥ १४ ॥ हतबंधुर्लभेद्बंधुं धनभ्रष्टो
 धनं लभेत् । कीर्तिहीनो लभेत्कीर्तिं प्रतिष्ठां च लभेद्भुवम् ॥ १५ ॥
 सर्वमंगलदं स्तोत्रं शोकसंतापनाशनम् । हर्षानंदकरं शश्वद्धर्ममोक्ष-
 सुहृत्प्रदम् ॥ १६ ॥ इति श्रीदेवकृतं लक्ष्मीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३१६. राधाकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ पार्वत्युवाच ॥ कैलासिवासिन् भगवन् भक्ता-
 नुग्रहकारक । राधिकाकवचं पुण्यं कथयस्व मम प्रभो ॥ १ ॥
 यद्यस्ति करुणा नाथ त्राहि मां दुःखतो भयात् । त्वमेव शरणं नाथ
 शूलपाणे पिनाकधृक् ॥ २ ॥ शिव उवाच ॥ शृणुष्व गिरिजे तुभ्यं
 कवचं पूर्वसूचितम् । सर्वरक्षाकरं पुण्यं सर्वहत्याहरं परम् ॥ ३ ॥
 हरिभक्तिप्रदं साक्षाद्भुक्तिमुक्तिप्रसाधनम् । त्रैलोक्याकर्षणं देवि
 हरिसान्निध्यकारकम् ॥ ४ ॥ सर्वत्र जयदं देवि सर्वशत्रुभयावहम् ।
 सर्वेषां चैव भूतानां मनोवृत्तिहरं परम् ॥ ५ ॥ चतुर्धा मुक्तिजनकं
 सदानन्दकरं परम् । राजसूयाश्वमेधानां यज्ञानां फलदायकम् ॥ ६ ॥
 इदं कवचमज्ञात्वा राधामंत्रं च यो जपेत् । स नामोति फलं तस्य
 विघ्नास्तस्य पदे पदे ॥ ७ ॥ ऋषिरस्य महादेवोऽनुष्टुप् छंदश्च कीर्तितम् ।
 राधाऽस्य देवता प्रोक्ता रां बीजं कीलकं स्मृतम् ॥ ८ ॥ धर्मार्थ-
 काममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः । श्रीराधा मे शिरः पातु ललाटं
 राधिका तथा ॥ ९ ॥ श्रीमती नेत्रयुगलं कर्णौ गोपेन्द्रनंदिनी ।
 हरिप्रिया नासिकां च श्रूयुगं शशिशोभना ॥ १० ॥ ओष्ठं पातु
 कृपादेवी अधरं गोपिका तथा । वृषभानुसुता दन्तांश्चिबुकं गोपनंदिनी
 ॥ ११ ॥ चंद्रावली पातु गंडं जिह्वां कृष्णप्रिया तथा । कंठं पातु
 हरिप्राणा हृदयं विजया तथा ॥ १२ ॥ बाहू द्वौ चंद्रवदना उदरं
 सुवलस्वसा । कोटियोगान्विता पातु पादौ सौभद्रिका तथा ॥ १३ ॥
 नखांश्चंद्रमुखी पातु गुल्फौ गोपालवल्लभा । नखान् विधुमुखी देवी गोपी
 पादतलं तथा ॥ १४ ॥ शुभप्रदा पातु पृष्ठं कुक्षौ श्रीकांतवल्लभा । जानु-
 देशं जया पातु हरिणी पातु सर्वतः ॥ १५ ॥ वाक्यं वाणी सदा पातु
 धनागारं धनेश्वरी । पूर्वा दिशं कृष्णरता कृष्णप्राणा च पश्चिमाम् ॥ १६ ॥

उत्तरां हरिता पातु दक्षिणां वृषभानुजा । चंद्रावली नैशमेव दिवा
 क्ष्वेडितमेखला ॥ १७ ॥ सौभाग्यदा मध्यदिने सायाह्ने काम-
 रूपिणी । रौद्री प्रातः पातु मां हि गोपिनी रजनीक्षये ॥ १८ ॥ हेतुदा
 संगवे पातु केतुमाला दिवार्धके । शेषाऽपराह्णसमये शमिता सर्वसंधिषु
 ॥ १९ ॥ योगिनी भोगसमये रतौ रतिप्रदा सदा । कामेशी कौतुके
 नित्यं योगे रत्नावली मम ॥ २० ॥ सर्वदा सर्वकार्येषु राधिका कृष्ण-
 मानसा । इत्येतत्कथितं देवि कवचं परमाद्भुतम् ॥ २१ ॥ सर्वैरक्षाकरं
 नाम महारक्षाकरं परम् । प्रातर्मध्याह्नसमये सायाह्ने प्रपठेद्यदि ॥ २२ ॥
 सर्वार्थसिद्धिस्तस्य स्याद्यद्यन्मनसि वर्तते । राजद्वारे सभायां च संग्रामे
 शत्रुसंकटे ॥ २३ ॥ प्राणार्थनाशसमये यः पठेत्प्रयतो नरः । तस्य
 सिद्धिर्भवेद्देवि न भयं विद्यते क्वचित् ॥ २४ ॥ आराधिता राधिका च
 तेन सत्यं न संशयः । गंगास्नानाद्वरेर्नामग्रहणाद्यत्फलं लभेत् ॥ २५ ॥
 तत्फलं तस्य भवति यः पठेत्प्रयतः शुचिः । हरिद्रारोचनाचंद्रमंडितं
 हरिचंदनम् ॥ २६ ॥ कृत्वा लिखित्वा भूर्जे च धारयेन्मस्तके भुजे ।
 कंठे वा देवदेवेशि स हरिर्नात्र संशयः ॥ २७ ॥ कवचस्य प्रसादेन
 ब्रह्मा सृष्टिं स्थितिं हरिः । संहारं चाहं नियतं करोमि कुरुते तथा
 ॥ २८ ॥ वैष्णवाय विशुद्धाय विरागगुणशालिने । दद्यात्कवचमन्यग्र-
 मन्यथा नाशमाप्नुयात् ॥ २९ ॥ इति श्रीनारदपंचरात्रे ज्ञानामृतसारे
 राधाकवचं संपूर्णम् ॥

३१७. श्रीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ पुष्कर उवाच ॥ राजलक्ष्मीस्थिरत्वाय
 यथेन्द्रेण पुरा श्रियः । स्तुतिः कृता तथा राजन् जयार्थं स्तुतिमाचरेत्
 ॥ १ ॥ इंद्र उवाच ॥ नमोऽस्तु सर्वलोकानां जननीमब्धिसंभवाय ।
 श्रियमुद्भिद्रपद्माक्षीं विष्णुवक्षःस्थलस्थिताम् ॥ २ ॥ त्वं सिद्धिस्त्वं

स्वधा स्वाहा सुधा त्वं लोकपावनी । संध्या रात्रिः प्रभा मूर्तिर्मेधा
 श्रद्धा सरस्वती ॥ ३ ॥ यज्ञविद्या महाविद्या गुह्यविद्या च
 शोभने । आत्मविद्या च देवि त्वं विमुक्तिफलदायिनी ॥ ४ ॥
 आन्त्रीक्षिकी त्रयी वार्ता दंडनीतिस्त्वमेव च । सौम्यासौम्यैर्जग-
 द्रूपैस्त्वयैतद्देवि पूरितम् ॥ ५ ॥ का त्वन्या त्वामृते देवि
 सर्वयज्ञमयं वपुः । अध्यास्ते देवदेवस्य योगिचित्तं गदाभृतः ॥ ६ ॥
 त्वया देवि परित्यक्तं सकलं भुवनत्रयम् । विनष्टप्रायमभवत् त्वये-
 दानीं समेधितम् ॥ ७ ॥ दाराः पुत्रास्तथाऽगारं सुहृद्धान्यधनादिकम् ।
 भवत्येतन्महाभागे नित्यं त्वद्वीक्षणान्नृणाम् ॥ ८ ॥ शरीरारोग्यमैश्वर्य-
 मरिपक्षक्षयः सुखम् । देवि त्वदृष्टिदृष्टानां पुरुषाणां न दुर्लभम् ॥ ९ ॥
 त्वमंबा सर्वलोकानां देवदेवो हरिः पिता । त्वयैतद्विष्णुना चांब
 जगद्भासं चराचरम् ॥ १० ॥ मानं कोपं तथा कोषं मा गृहं मा
 परिच्छदम् । मा शरीरं कलत्रं च त्यजेथाः सर्वपावनि ॥ ११ ॥ मा
 पुत्रान्मा सुहृद्वर्गान् मा पशून्मा विभूषणम् । त्यजेथा मम देवस्य
 विष्णोर्वक्षःस्थलालये ॥ १२ ॥ सत्त्वेन सत्यशौचाभ्यां तथा शीलादि-
 शिर्गुणैः । त्यजन्ते ते नराः सद्यः संत्यक्ता ये त्वयामले ॥ १३ ॥
 त्वयावलोकिताः सद्यः शीलाद्यैरखिलैर्गुणैः । कुलैश्वर्यैश्च युज्यन्ते पुरुषा
 निर्गुणा अपि ॥ १४ ॥ स श्लाघ्यः स गुणी धन्यः स कुलीनः स
 बुद्धिमान् । स शूरः स च विक्रान्तो यस्त्वया देवि वीक्षितः ॥ १५ ॥
 सद्यो वैगुण्यमायांति शीलाद्याः सकला गुणाः । पराङ्मुखी जगद्वात्री
 यस्य त्वं विष्णुवल्लभे ॥ १६ ॥ न ते वर्णयितुं शक्ता गुणान् जिह्वापि
 वेधसः । प्रसीद देवि पद्माक्षि माऽस्मांस्त्याक्षीः कदाचन ॥ १७ ॥
 पुष्कर उवाच ॥ एवं स्तुता ददौ श्रीश्च वरमिन्द्राय चेप्सितम् ।
 सुस्थिरत्वं च राज्यस्य संग्रामविजयादिकम् ॥ १८ ॥ स्वस्तोत्रपाठ-

श्रवणकर्तृणां भुक्तिमुक्तिदम् । श्रीस्तोत्रं सततं तस्मात्पठेच्च शृणुया-
न्नरः ॥ १९ ॥ इत्यग्निपुराणांतर्गतं श्रीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३१८. लक्ष्मीलहरी ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ समुन्मीलनीलाम्बुजनिकरनीराजितरुचाम-
पाङ्गानां भङ्गैरमृतलहरीश्रेणिमसृणैः । हिया हीनं दीनं भृशमुदर-
लीनं करुणया हरिद्यामा सा मामवतु जडसामाजिकमपि ॥ १ ॥
समुन्मीलत्वन्तःकरणकरुणोद्गारचतुरः करिप्राणत्राणप्रणयिनि दृगन्त-
स्त्व मयि । यमासाद्योन्माद्यद्विपनियुतगण्डस्थलगलन्मदक्लिन्नद्वारो
भवति सुखसारो नरपतिः ॥ २ ॥ उरस्यस्य अश्यत्कबरभरनिर्यत्सु-
मनसः पतन्ति स्वर्वालाः स्मरशरपराधीनमनसः । सुरास्तं गायन्ति
स्फुरिततनुगङ्गाधरमुखास्तवायं दृक्पातो यदुपरि कृपातो विलसति
॥ ३ ॥ समीपे संगीतस्वरमधुरभङ्गी मृगदृशां विदूरे दानान्धद्विर-
दकलभोदामनिनदः । बहिर्द्वारे तेषां भवति हयहेषाकलकलो
दृगेषा ते येषामुपरि कमले देवि सदया ॥ ४ ॥ अगण्यैरिन्द्राद्यै-
रपि परमपुण्यैः परिचितो जगज्जन्मस्थानप्रलयरचनाशिल्पनिपुणः ।
उदञ्चत्पीयूषाम्बुधिलहरिलीलामनुहरन्नपाङ्गस्तेऽमन्दं मम कलुष-
वृन्दं दलयतु ॥ ५ ॥ नमन्मौलिश्रेणित्रिपुरपरिपन्थिप्रतिलसत्कपर्द-
व्यावृत्तिस्फुरितफणिफूत्कारचकितः । लसत्फुल्लाम्भोजम्रदिमहरणः
कोऽपि चरणश्रिरं चेतश्चारी मम भवतु वारीशदुहितुः ॥ ६ ॥
प्रवालानां दीक्षागुरुरपि च लाक्षारुणरुचां नियन्त्री बन्धूकद्युतिनिकर-
बन्धूकृतिपटुः । नृणामन्तर्ध्वान्तं निविडमपहर्तुं तव किल प्रभात-
श्रीरेषा चरणरुचिवेषा विजयते ॥ ७ ॥ प्रभातप्रोन्मीलत्कमलवन-
संचारसमये शिखाः किंजल्कानां विदधति रुजं यत्र मृदुलाः ।
तदेतन्मातस्ते चरणमरुणश्लाघ्यकरुणं कठोरा मद्वाणी कथमिय-

सिदानीं प्रविशतु ॥ ८ ॥ स्मितज्योत्स्नामजद्विजमणिमयूखामृतझरै-
 निपिञ्चन्तीं विश्वं तव विमलमूर्तिं स्मरति यः । अमन्दं स्यन्दन्ते
 वदनकमलादय कृतिनो विविक्तौ वै कल्पाः सततमविकल्पा
 नवगिरः ॥ ९ ॥ शरौ मायात्रीजौ हिमकरकलाक्रान्तशिरसौ विधा-
 योर्ध्वं विन्दुं स्फुरितमिति वीजं जलधिजे । जपेद्यः स्वच्छन्दं स
 हि पुनरमन्दं गजवदामदभ्राम्यद्भृङ्गैर्मुखरयति वेश्मानि विदुषाम्
 ॥ १० ॥ स्मरो नामं नामं त्रिजगदभिरामं तव पदं प्रपेदे सिद्धिं
 यां कथमिव नरस्तां कथयतु । यया पातं पातं पदकमलयोः
 पर्वतचरो हरो हा रोषार्द्रामनुनप्रति शैलेन्द्रतनयाम् ॥ ११ ॥
 हरन्तो निःशङ्कं हिमकरकलानां रुचिरतां किरन्तः स्वच्छन्दं
 किरणमयपीयूषनिकरम् । विलुम्पन्तु प्रौढा हरिहृदयहाराः प्रियतमा
 समान्तःसन्तापं तव चरणशोणाम्बुजनखाः ॥ १२ ॥ मिथान्माणि-
 कयानां विगलितनिमेषं निमिषताममन्दं सौन्दर्यं तव चरणयो-
 रम्बुधिसुते । पदालंकाराणां जयति कलनिकाणनपटुरुदञ्चलुद्दामः
 स्तुतिवचनलीलाकलकलः ॥ १३ ॥ मणिज्योत्स्नाजालैर्निजतनुरुचां
 मांसलतया जटालं ते जङ्घायुगलमवभङ्गाय भवतु । भ्रमन्ती
 यन्मध्ये दरदलितशोणाम्बुजरुचां दशां माला नीराजनमिव विधत्ते
 मुररिपोः ॥ १४ ॥ हरद्वयं सर्वं करिपतिकराणां मृदुतया भृशं
 भाभिर्दग्धं कनकमयरम्भावनिरुहाम् । लसज्जानुज्योत्स्ना तरणि-
 परिणद्धं जलधिजे तवोरुद्वन्द्वं नः श्लथयतु भवोरुज्वरभयम् ॥ १५ ॥
 कलकाणां काञ्चीं मणिगणजटालामधिवहन्वसानः कौसुम्यं वसन-
 मसनं कौस्तुभरुचाम् । मुनिव्रातैः प्रातः शुचिवचनजातैरति-
 नुतं नितम्बस्ते विम्बं हसति नवमम्बाम्बरमणेः ॥ १६ ॥
 जगन्मिथ्याभूतं मम निगदतां वेदवचसामभिप्रायो नाद्यावधि

हृदयमध्याविशदयम् । इदानीं विश्वेषां जनकमुदरं ते विमृशतो
 विसंदेहं चेतोऽजनि गरुडकेतोः प्रियतमे ॥ १७ ॥ अनल्पैर्वादीन्द्रैर-
 गणितमहायुक्तिनिवहैर्निरस्ता विस्तारं कचिदकलयन्ती तनुमपि ।
 असत्ख्यातिव्याख्याधिकचतुरिमाख्यातमहिमा बलश्रे लश्रेयं सुगतमत-
 सिद्धान्तसरणिः ॥ १८ ॥ निदानं शृङ्गारप्रकरमकरन्दस्य कमले
 महानेवालम्बो हरिनयनरोलम्बवरयोः । निधानं शोभानां निधनमनु-
 तापस्य जगतो जवेनाभीतिं मे दिशतु तव नाभीसरसिजम् ॥ १९ ॥
 गभीरामुद्वेलां प्रथमरसकलोलमिलितां विगाढुं ते नाभीविमल-
 सरसीं गौर्मम मनाक् । पदं यावज्ज्यस्यत्यहह विनिमग्नैव सहसा
 नहि क्षेमं सूते गुरुमहिमभूतेष्वविनयः ॥ २० ॥ कुचौ ते
 दुग्धाम्भोनिधिकुलशिखामण्डनमणे हरेते सौभाग्यं यदि सुरगिरे-
 श्चित्रमिह किम् । त्रिलोकीलावण्याहरणनवलीलानिपुणयोर्ययोर्दत्ते
 भूयः करमखिलनाथो मधुरिपुः ॥ २१ ॥ हरकोधत्रस्यन्मदनव-
 दुर्गद्वयतुलां दधत्कोकद्वन्द्वद्युतिदमनदीक्षाधिगुरुताम् । तवैतद्वक्षोज-
 द्वितयमरविन्दाक्षमहिले मम स्वान्तध्वान्तं किमपि च नितान्तं
 गमयतु ॥ २२ ॥ अनेकब्रह्माण्डस्थितिनियमलीलाविलसिते दया-
 पीयूषाम्भोनिधिसहजसंवासभवने । विधोश्चित्तायामे हृदयकमले ते
 तु कमले मनाङ् मन्त्रिस्तारस्मृतिरपि च कोणे निवसतु ॥ २३ ॥
 मृणालीनां लीलाः सहजलवणिम्ना लघयतां चतुर्णां सौभाग्यं
 तव जननि दोष्णां वदतु कः । लुठन्ति स्वच्छन्दं मरकतशिला-
 मांसलरुचः श्रुतीनां स्पर्धा ये दधत इव कण्ठे मधुरिपोः ॥ २४ ॥
 अलभ्यं सौरभ्यं कविकुलनमस्या रुचिरता तथापि त्वद्वस्ते निवस-
 दरविन्दं विकसितम् । कलापे काव्यानां प्रकृतिकमनीयस्तुतिविधौ
 गुणोत्कर्षाधानं प्रथितमुपमानं समजनि ॥ २५ ॥ अनल्पं जल्पन्तु

प्रतिहतधियः पल्लवतुलां रसज्ञामज्ञानां क इव कमले मन्थरयतु ।
 त्रपन्तु श्रीभिक्षावितरणवशीभूतजगतां कराणां सौभाग्यं तव
 तुलयितुं तुङ्गरसनाः ॥ २६ ॥ समाहारः श्रीणां विरचित-
 विहारो हरिदृशां परीहारो भक्तप्रभवभवसंतापसरणेः । प्रहारः
 सर्वासामपि च विपदां विष्णुदयिते ममोद्धारोपायं तव
 सपदि हारो विमृशतु ॥ २७ ॥ अलंकुर्वाणानां मणिगणघृणीनां
 लवणिमा यदीयाभिर्भाभिर्भजति महिमानं लघुरपि । सुपर्वश्रेणीनां
 जनितपरसौभाग्यविभवास्तवाङ्गुल्यस्ता मे ददतु हरिवामेऽभिल-
 पितम् ॥ २८ ॥ तपस्तेपे तीव्रं किमपि परितप्य प्रतिदिनं तव
 ग्रीवालक्ष्मीलवपरिचयादासविभवम् । हरिः कम्बुं चुम्बत्यथ वहति
 पाणौ किमधिकं वदामस्तत्रायं प्रणयवशतोऽस्यै स्पृहयति ॥ २९ ॥
 अभूदप्रत्यूहः सकलहरिदुल्लासनविधिर्विलीनो लोकानां स हि
 नयनतापोऽपि कमले । तवास्मिन्पीयूषं किरति वदने रम्यवदने
 कुतो हेतोश्चेतोविधुरयमुदेति स्म जलधेः ॥ ३० ॥ मुखाम्भोजे
 मन्दस्मितमधुरकान्त्या विकसतां द्विजानां ते हीरावलिबिहितनीरा-
 जनरुचाम् । इयं ज्योत्स्ना कापि स्ववदमृतसंदोहसरसा ममोद्य-
 द्वारिञ्चज्वरतरुणतापं तिरयतु ॥ ३१ ॥ कुलैः कस्तूरीणां भृशमनिश-
 माशास्यमपि च प्रभातप्रोन्मीलनलिननिवहैरश्रुतचरम् । वहन्तः
 सौरभ्यं मृदुगतिविलासा मम शिवं तव श्वासा नासापुटविहितवासा
 विदधताम् ॥ ३२ ॥ कपोले ते दोलायितललितलोलालकवृते
 विमुक्ता धम्मिल्लादभिलसति मुक्तावलिरियम् । स्वकीयानां बन्दी-
 कृतमसहमानैरिव बलान्निबध्योर्ध्वं कृष्टा तिमिरनिकुरम्बैर्विधुकला
 ॥ ३३ ॥ प्रसादो यस्यायं नमदमितगीर्वाणमुकुटप्रसर्पज्ज्योत्स्नाभि-
 श्ररणतलपीठार्चितविधिः । दृग्भोजं तत्ते गतिहसितमत्तेभगमने

वने लीनैर्दीनैः कथय कथमीयादिह तुलाम् ॥ ३४ ॥ दुरापा
 दुर्वृत्तैर्दुरितदमने दारणभरा दयाद्रा दीनानामुपरि दलदिन्दीवर-
 निभा । दहन्ती दारिद्र्यद्रुमकुलमुदारद्रविणदा त्वदीया दृष्टिमे
 जननि दुरदृष्टं दलयतु ॥ ३५ ॥ तव श्रोत्रे फुल्लोत्पलसकलसौभाग्य-
 जयिनी सदैव श्रीनारायणगुणगणौवप्रणयिनी । रवैर्दीनां लीना-
 मनिशमवधानातिशयिनी ममाप्येतां वाचं जलधितनये गोचरयताम्
 ॥ ३६ ॥ प्रभाजालैः प्राभातिकदिनकराभापनयनं तवेदं खेदं मे
 विवर्त्यतु ताटङ्कयुगलम् । सहिष्णा यस्यायं प्रलयसमयेऽपि
 क्रतुभुजां जगत्पायं पायं स्वपिति निरपायं तव पतिः ॥ ३७ ॥
 निरासो मुक्तानां निविडतरनीलाम्बुदनिभस्तवायं धम्मिल्लो विम-
 लयतु मल्लोचनयुगम् । भृशं यस्मिन्कालागरुबहुलसौरभ्यनिवहैः
 पतन्ति श्रीभिक्षार्थिन इव सदान्धा मधुलिहः ॥ ३८ ॥ विलम्बौ
 ते पार्श्वद्वयपरिसरे मत्तकरिणौ करोत्रीतैरञ्चन्मणिकलशमुग्धास्य-
 गलितैः । निषिञ्चन्तौ मुक्तामणिगणजयैस्त्वां जलकणैर्नमस्यामो
 दामोदरगृहिणि दारिद्र्यदलिताः ॥ ३९ ॥ अये मातर्लक्ष्मि त्वदरुण-
 पदाम्भोजनिकटे लुठन्तं बालं मामविरलगलद्वाग्पजटिलम् ।
 सुधासेकस्निग्धैरतिमसृणमुग्धैः करतलैः स्पृशन्ती मा रोदीरिति वद
 समाश्वाससि कदा ॥ ४० ॥ रमे पद्मे लक्ष्मि प्रणतजनकल्पद्रुमलते
 सुधाम्भोधेः पुत्रि त्रिदशनिकरोपास्तचरणे । परे नित्यं मातर्गुणमयि
 परब्रह्ममहिले जगन्नाथस्याकर्णय मृदुलवर्णावलिमिमाम् ॥ ४१ ॥ इति
 पण्डितराजश्रीजगन्नाथविरचिता लक्ष्मीलहरी समाप्ता ॥

२१९. सिद्धिलक्ष्मीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीसिद्धिलक्ष्मीस्तोत्रस्य हिरण्य-
 गर्भं ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, सिद्धिलक्ष्मीर्देवता, मम समस्त-

दुःखक्लेशपीडादारिद्र्यविनाशार्थं सर्वलक्ष्मीप्रसन्नकरणार्थं महा-
 कालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदेवताप्रीत्यर्थं च सिद्धिलक्ष्मीस्तोत्रजपे
 विनियोगः । ॐ सिद्धिलक्ष्मी अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ह्रीं विष्णुहृदये
 तर्जनीभ्यां नमः । ॐ क्लीं अमृतानन्दे मध्यमाभ्यां नमः । ॐ
 श्रीं दैत्यमालिनी अनामिकाभ्यां नमः । ॐ तं तेजःप्रकाशिनी कनि-
 ष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं ब्राह्मी वैष्णवी माहेश्वरी करतलकर-
 पृष्ठाभ्यां नमः । एवं हृदयादिन्यासः । ॐ सिद्धिलक्ष्मी हृदयाय
 नमः । ॐ हां वैष्णवी शिरसे स्वाहा । ॐ क्लीं अमृतानन्दे शिखायै
 वौषट् । ॐ श्रीं दैत्यमालिनी कवचाय हुम् । ॐ तं तेजःप्रकाशिनी
 नेत्रद्वयाय वौषट् । ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं ब्राह्मीं वैष्णवीं फट् ॥ अथ
 ध्यानम् ॥ ब्राह्मीं च वैष्णवीं भद्रां षड्भुजां च चतुर्मुखाम् । त्रिनेत्रां
 च त्रिशूलां च पद्मचक्रगदाधराम् ॥ १ ॥ पीताम्बरधरां देवीं नाना-
 लंकारभूषिताम् । तेजःपुञ्जधरां श्रेष्ठां ध्यायेद्बालकुमारिकाम् ॥ २ ॥
 ॐकारलक्ष्मीरूपेण विष्णोर्हृदयमव्ययम् । विष्णुमानन्दमध्यस्थं ह्रींका-
 रवीजरूपिणी ॥ ३ ॥ ॐ क्लीं अमृतानन्दभद्रे सद्य आनन्ददायिनी ।
 ॐ श्रीं दैत्यभक्षरदां शक्तिमालिनी शत्रुमर्दिनी ॥ ४ ॥ तेजःप्रकाशिनी
 देवी वरदा शुभकारिणी । ब्राह्मी च वैष्णवी भद्रा कालिका रक्तशा-
 र्भवी ॥ ५ ॥ आकारब्रह्मरूपेण ॐकारं विष्णुमव्ययम् । सिद्धिलक्ष्मि
 परालक्ष्मि लक्ष्यलक्ष्मि नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥ सूर्यकोटिप्रतीकाशं
 चन्द्रकोटिसमप्रभम् । तन्मध्ये निकरे सूक्ष्मं ब्रह्मरूपव्यवस्थितम्
 ॥ ७ ॥ ॐकारपरमानन्दं क्रियते सुखसंपदा । सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे
 सर्वार्थसाधिके ॥ ८ ॥ प्रथमे त्र्यम्बका गौरी द्वितीये वैष्णवी तथा ।
 तृतीये कमला प्रोक्ता चतुर्थे सुरसुन्दरी ॥ ९ ॥ पञ्चमे विष्णुपत्नी च
 षष्ठे च वैष्णवी तथा । सप्तमे च वरारोहा अष्टमे वरदायिनी ॥ १० ॥

नवमे खड्गत्रिशूला दशमे देवदेवता । एकादशे सिद्धिलक्ष्मीर्द्वादशे
ललितात्मिका ॥ ११ ॥ एतत्स्तोत्रं पठन्तस्त्वांस्तुवन्ति भुवि
मानवाः । सर्वोपद्रवमुक्तास्ते नात्र कार्या विचारणा ॥ १२ ॥ एकमासं
द्विमासं वा त्रिमासं च चतुर्थकम् । पञ्चमासं च षण्मासं त्रिकालं यः
पठेन्नरः ॥ १३ ॥ ब्राह्मणाः क्लेशतो दुःखदरिद्रा भयपीडिताः । जन्मान्त-
रसहस्रेषु मुच्यन्ते सर्वक्लेशतः ॥ १४ ॥ अलक्ष्मीर्लभते लक्ष्मीमपुत्रः
पुत्रमुत्तमम् । धन्यं यशस्यमायुष्यं वह्निचौरभयेषु च ॥ १५ ॥
शाकिनीभूतवेतालसर्वव्याधिनिपातके । राजद्वारे महाद्वारे संग्रामे
रिपुसंकटे ॥ १६ ॥ सभास्थाने श्मशाने च कारागेहारिवन्धने ।
अशेषभयसंप्राप्तौ सिद्धिलक्ष्मीं जपेन्नरः ॥ १७ ॥ ईश्वरेण कृतं स्तोत्रं
प्राणिनां हितकारणम् । तुवन्ति ब्राह्मणा नित्यं दारिद्र्यं न च वर्धते
॥ १८ ॥ या श्रीः पद्मवने कदम्बशिखरे राजगृहे कुञ्जरे श्वेते चाश्वयुते
वृषे च युगले यज्ञे च यूपस्थिते । शङ्खे देवकुले नरेन्द्रभवने गङ्गातटे
गोकुले सा श्रीस्तिष्ठतु सर्वदा मम गृहे भूयात्सदा निश्चला ॥ १९ ॥
इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे ईश्वरविष्णुसंवादे दारिद्र्यनाशनं सिद्धिलक्ष्मी-
स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३२०. श्रीस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ स्वस्ति श्रीर्दिशतादशेषजगतां स्वर्गापवर्ग-
स्थितीः स्वर्गं दुर्गतिमापवर्गिकपदं सर्वं च कुर्वन्हरिः । यस्या वीक्ष्य
मुखं तदिङ्गितपराधीनो विधत्तेऽखिलं क्रीडेयं खलु नान्यथाऽस्य रसदा
स्यादैकरस्यात्तया ॥ १ ॥ हे श्रीदेवि समस्तलोकजननि त्वां स्तोतुमी-
हामहे युक्तां भावय भारतीं प्रगुणय प्रेमप्रधानां धियम् । भक्तिं बन्धय
नन्दयाश्रितमिमं दासं जनं तावकं लक्ष्यं लक्ष्मि कटाक्षवीचिविसृतेस्ते
स्याम चामी वयम् ॥ २ ॥ स्तोत्रं नाम किमामनन्ति कवयो यद्यन्य-

दीयान्गुणानन्यत्र त्वसतोऽधिरोप्य भणितिः सा तर्हि वन्ध्या त्वयि ।
 सम्यक्सत्यगुणाभिवर्णनमथो ब्रूयुः कथं तादृशी वाग्वाचस्पतिनाप्य-
 शक्यरचना त्वत्सद्गुणार्णोनिधौ ॥ ३ ॥ ये वाचां मनसां च दुर्ग्रहतया
 ख्याता गुणास्तावकास्तानेव प्रति साम्बुजिह्वमुदिता यन्मामिका भारती ।
 हास्यं तत्तु न मन्महे न हि चकोर्येकाऽखिलां चन्द्रिकां नालं पातुमिति
 प्रगृह्य रसनामासीत् सत्यां तृषि ॥ ४ ॥ क्षोदीयानपि दुष्टबुद्धिरपि
 निःस्नेहोऽप्यनीहोऽपि ते कीर्तिं देवि लिहन्नहं न च विभेम्यज्ञो न
 जिहेमि च । दुष्येत्सा तु न तावता न हि शुना लीढाऽपि भागीरथी
 दुष्येच्चापि न लज्जते न च विभेत्यार्तिस्तु शाम्येच्छुनः ॥ ५ ॥ ऐश्वर्यं
 महदेव वाऽल्पमथवा दृश्येत पुंसां हि यत्तल्लक्ष्म्याः समुदीक्षणात्तव
 यतः सार्वत्रिकं वर्तते । तेनैतेन न विस्मयेमहि जगन्नाथोऽपि नारायणो
 धन्यं मन्यत ईक्षणात्तव यतः स्वात्मानमात्मेश्वरः ॥ ६ ॥ ऐश्वर्यं यद-
 शेषपुंसि यदिदं सौन्दर्यलावण्ययो रूपं यच्च हि मङ्गलं किमपि यल्लोके
 सदित्युच्यते । तत्सर्वं त्वदधीनमेव यदतः श्रीरित्यभेदेन वा यद्वा
 श्रीमदितीदृशेन वचसा देवि प्रथामश्नुते ॥ ७ ॥ देवि त्वन्महिमावधिर्न
 हरिणा नापि त्वया ज्ञायते यद्यप्येवमथापि नैव युवयोः सर्वज्ञता
 हीयते । यन्नास्त्येव तदज्ञतामनुगुणां सर्वज्ञताया विदुष्योन्माभोजमि-
 दन्तया खलु विदन् भ्रान्तोऽयमित्युच्यते ॥ ८ ॥ लोके वनस्पतिबृह-
 स्पतितारतम्यं यस्याः कटाक्षपरिणाममुदाहरन्ति । सा भारती भगवती
 तु यदीयदासी तां देवदेवमहिषीं श्रियमाश्रयामः ॥ ९ ॥ यस्याः
 कटाक्षमृदुवीक्षणदीक्षितेन सद्यः समुल्लसितपल्लवमुल्ललास । विश्वं
 विपर्ययसमुत्थविपर्ययं त्वां तां देवदेवमहिषीं श्रियमाश्रयामः ॥ १० ॥
 इति भविष्यपुराणे श्रीस्तवः संपूर्णः ॥

३२१. श्रीलक्ष्म्यष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ देव्युवाच ॥ देवदेव महादेव त्रिकालज्ञ
महेश्वर । करुणाकर देवेश भक्तानुग्रहकारक ॥ १ ॥ अष्टोत्तरशतं
लक्ष्म्याः श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः । ईश्वर उवाच ॥ देवि साधु महाभागो
महाभाग्यप्रदायकम् । सर्वैश्वर्यकरं पुण्यं सर्वपापप्रणाशनम् ॥ २ ॥
सर्वदारिद्र्यशमनं श्रवणाद्भुक्तिमुक्तिदम् । राजवश्यकरं दिव्यं गुह्याद्ब्रह्म-
तमं परम् ॥ ३ ॥ दुर्लभं सर्वदेवानां चतुःषष्टिकलास्पदम् । पद्मादीनां
वरान्तानां विधीनां नित्यदायकम् ॥ ४ ॥ समस्तदेवसंसेव्यमणिमा-
द्यष्टसिद्धिदम् । किमत्र बहुनोक्तेन देवीप्रत्यक्षदायकम् ॥ ५ ॥ तव
प्रीत्याद्य वक्ष्यामि समाहितमनाः शृणु । अष्टोत्तरशतस्यास्य महा-
लक्ष्मीस्तु देवता ॥ ६ ॥ क्लींबीजपदमित्युक्तं शक्तिस्तु भुवनेश्वरी ।
अंगन्यासः करन्यासः स इत्यादिः प्रकीर्तितः ॥ ७ ॥ ध्यानम् ॥ वंदे
पद्मकरां प्रसन्नवदनां सौभाग्यदां भाग्यदां हस्ताभ्यामभयप्रदां मणि-
गणैर्नानाविधैर्भूषिताम् । भक्ताभीष्टफलप्रदां हरिहरब्रह्मादिभिः सेवितां
पार्श्वे पंकजशंखपद्मनिधिभिर्युक्तां सदा शक्तिभिः ॥ ८ ॥ सरसिजनयने
सरोजहस्ते धवलतरांशुकगंधमाल्यशोभे । भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे
त्रिभुवनभूतिकरि प्रसीद मह्यम् ॥ ९ ॥ प्रकृतिं विकृतिं विद्यां
सर्वभूतहितप्रदाम् । श्रद्धां विभूतिं सुरभिं नमामि परमात्मिकाम्
॥ १० ॥ वाचं पद्मालयां पद्मां शुचिं स्वाहां स्वधां सुधाम् । धन्यां
हिरण्मयीं लक्ष्मीं नित्यपुष्टां विभावरीम् ॥ ११ ॥ अदितिं च दितिं
दीप्तां वसुधां वसुधारिणीम् । नमामि कमलां कान्तां कामाक्षीं क्रोध-
संभवाम् ॥ १२ ॥ अनुग्रहपदं बुद्धिमनघां हरिवल्लभाम् । अशोका-
ममृतां दीप्तां लोकशोकविनाशिनीम् ॥ १३ ॥ नमामि धर्मनिलयां
करुणां लोकमातरम् । पद्मप्रियां पद्महस्तां पद्माक्षीं पद्मसुंदरीम् ॥ १४ ॥

पद्मोद्भवां पद्ममुखीं पद्मनाभप्रियां रमाम् । पद्ममालाधरां देवीं
 पद्मिनीं पद्मगंधिनीम् ॥ १५ ॥ पुण्यगंधां सुप्रसन्नां प्रसादा-
 भिमुखीं प्रभाम् । नमामि चंद्रवचनां चंद्रां चंद्रसहोदरीम् ॥ १६ ॥
 चतुर्भुजां चंद्ररूपामिंदिरामिंदुशीतलाम् । आह्लादजननीं पुष्टिं शिवां
 शिवकरीं सतीम् ॥ १७ ॥ विमलां विश्वजननीं तुष्टिं दारिद्र्यनाशि-
 नीम् । प्रीतिपुष्करिणीं शांतां शुक्लमाल्यांवरां श्रियम् ॥ १८ ॥
 भास्करीं विल्वनिलयां वरारोहां यशस्विनीम् । वसुंधरामुदारांगीं
 हरिणीं हेममालिनीम् ॥ १९ ॥ धनधान्यकरीं सिद्धिं सदा सौम्यां
 शुभप्रदाम् । नृपवेश्मगतानंदां वरलक्ष्मीं वसुप्रदाम् ॥ २० ॥ शुभां
 हिरण्यप्राकारां समुद्रतनयां जयाम् । नमामि मंगलां देवीं विष्णु-
 वक्षःस्थलस्थिताम् ॥ २१ ॥ विष्णुपत्नीं प्रसन्नाक्षीं नारायणसमाश्रि-
 ताम् । दारिद्र्यध्वंसिनीं देवीं सर्वोपद्रवहारिणीम् ॥ २२ ॥ नवदुर्गां
 महाकालीं ब्रह्मविष्णुशिवात्मिकाम् । त्रिकालज्ञानसंपन्नां नमामि
 भुवनेश्वरीम् ॥ २३ ॥ लक्ष्मीं क्षीरसमुद्रराजतनयां श्रीरंगधामेश्वरीं
 दासीभूतसमस्तदेववनितां लोकैकदीपांकुराम् । श्रीमन्मंदकटाक्षलब्ध-
 विभवब्रह्मद्रुगाधरां त्वां त्रैलोक्यकुटुंबिनीं सरसिजां वंदे मुकुंद-
 प्रियाम् ॥ २४ ॥ मातर्नमामि कमले कमलायताक्षि श्रीविष्णुहृत्क-
 मलवासिनि विश्वमातः । क्षीरोदजे कमलकोमलगर्भगौरि लक्ष्मि
 प्रसीद सततं नमतां शरण्ये ॥ २५ ॥ त्रिकालं यो जपेद्विद्वान्
 षण्मासं विजितेन्द्रियः । दारिद्र्यध्वंसनं कृत्वा सर्वमाप्नोत्यखततः
 ॥ २६ ॥ देवीनामसहस्रेषु पुण्यमष्टोत्तरं शतम् । येन श्रियमवा-
 प्नोति कोटिजन्मदरिद्रतः ॥ २७ ॥ भृगुवारे शतं धीमान् पठेद्वत्सर-
 मात्रकम् । अष्टैश्वर्यमवाप्नोति कुबेर इव भूतले ॥ २८ ॥ दारिद्र्य-
 मोचनं नाम स्तोत्रमम्बापरं शतम् । येन श्रियमवाप्नोति कोटिजन्म-

दरिद्रितः ॥ २९ ॥ भुक्त्वा तु विपुलान् भोगानस्याः सायुज्यमाप्नु-
यात् । प्रातःकाले पठेन्नित्यं सर्वदुःखोपशान्तये । पठन्तु चिंतयेद्देवीं
सर्वाभरणभूषिताम् ॥ ३० ॥ इति श्रीलक्ष्म्यष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं
संपूर्णम् ॥

३२२. महालक्ष्मीकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीमहालक्ष्मीकवचमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः,
गायत्री छन्दः, महालक्ष्मीदेवता, महालक्ष्मीप्रीत्यर्थं जपे विनि-
योगः ॥ इन्द्र उवाच ॥ समस्तकवचानां तु तेजस्वि कवचोत्तमम् ।
आत्मरक्षणमारोग्यं सत्यं त्वं ब्रूहि गीष्पते ॥ १ ॥ श्रीगुरुवाच ॥
महालक्ष्म्यास्तु कवचं प्रवक्ष्यामि समासतः । चतुर्दशसु लोकेषु
रहस्यं ब्रह्मणोदितम् ॥ २ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ शिरो मे विष्णुपत्नी च
ललाटममृतोद्भवा । चक्षुषी सुविशालाक्षी श्रवणे सागराम्बुजा
॥ ३ ॥ घ्राणं पातु वरारोहा जिह्वामाग्नारूपिणी । मुखं पातु महा-
लक्ष्मीः कण्ठं वैकुण्ठवासिनी ॥ ४ ॥ स्कन्धौ मे जानकी पातु भुजौ
भार्गवनन्दिनी । बाहू द्वौ द्रविणी पातु करौ हरिवराङ्गना ॥ ५ ॥
वक्षः पातु च श्रीर्देवी हृदयं हरिसुन्दरी । कुक्षिं च वैष्णवी पातु
नाभिं भुवनमातृका ॥ ६ ॥ कटिं च पातु वाराही सक्थिनी देव-
देवता । ऊरू नारायणी पातु जानुनी चन्द्रसोदरी ॥ ७ ॥ इन्दिरा
पातु जंघे मे पादौ भक्तनमस्कृता । नखान् तेजस्विनी पातु सर्वाङ्गं
करुणामयी ॥ ८ ॥ ब्रह्मणा लोकरक्षार्थं निर्मितं कवचं श्रियः ।
ये पठन्ति महात्मानस्ते च धन्या जगन्नये ॥ ९ ॥ कवचेनावृता-
ङ्गानां जनानां जयदा सदा । मातेव सर्वसुखदा भव त्वम-
मरेश्वरी ॥ १० ॥ भूयः सिद्धिमवाप्नोति पूर्वोक्तं ब्रह्मणा स्वयम् ।
लक्ष्मीर्हरिप्रिया पद्मा एतन्नामत्रयं स्मरन् ॥ ११ ॥ नामत्रयमिदं

जह्वा स याति परमां श्रियम् । यः पठेत्स च धर्मात्मा सर्वान्का-
मानवामुयात् ॥ १२ ॥ इति श्रीब्रह्मपुराणे इन्द्रोपदिष्टं महालक्ष्मी-
कवचं संपूर्णम् ॥

३२३. श्रीस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मानातीतप्रथितविभवां मङ्गलं मङ्गलानां वक्षः-
पीठं मधुविजयिनो भूषयन्तीं स्वकान्त्या । प्रत्यक्षानुश्रविकमहिमप्रार्थि-
नीनां प्रजानां श्रेयोमूर्तिं श्रियमशरणस्त्वां शरण्यां प्रपद्ये ॥ १ ॥
आविर्भावः कलशजलधावध्वरे वाऽपि यस्याः स्थानं यस्याः सरसि-
जवनं विष्णुवक्षःस्थलं वा । भूमा यस्या भुवनमखिलं देवि दिव्यं
पदं वा स्तोकप्रज्ञैरनवधिगुणा स्तूयसे, सा कथं त्वम् ॥ २ ॥
स्तोतव्यत्वं दिशति भवती देहिभिः स्तूयमाना तामेव त्वामनितरगतिः
स्तोतुमाशंसमानः । सिद्धारम्भः सकलभुवनश्लाघनीयो भवेयं सेवापेक्षा
तत्र चरणयोः श्रेयसे कस्य न स्यात् ॥ ३ ॥ यत्संकल्पाद्भवति
कमले यत्र देहिन्यमीषां जन्मस्थेमप्रलयरचना जङ्गमाजङ्गमानाम् ।
तत्कल्याणं किमपि यमिनामेकलक्ष्यं समाधौ पूर्णं तेजः स्फुरति
भवतीपादलाक्षारसाङ्गम् ॥ ४ ॥ निष्प्रत्यूहप्रणयघटितं देवि नित्यान-
पायं विष्णुस्त्वं चेत्यनवधिगुणं द्वन्द्वमन्योन्यलक्ष्यम् । शेषश्चित्तं
विमलमनसां मौलयश्च श्रुतीनां संपद्यन्ते विहरणविधौ यस्य शरया-
विशेषाः ॥ ५ ॥ उद्देश्यत्वं जननि भजतोरुज्झितोपाधिगन्धं प्रत्यग्रूपे
हविषि युवयोरेकशेषित्वयोगात् । पद्मे पत्युस्तव च निगमैर्नित्य-
मन्विष्यमाणो नावच्छेदं भजति महिमा नर्तयन् मानसं नः ॥ ६ ॥
पश्यन्तीषु श्रुतिषु परितः सूरिवृन्देन सार्धं मध्येकृत्य त्रिगुणफलकं
निर्मितस्थानभेदम् । विश्वाधीशप्रणयिनि सदा विभ्रमद्यूतवृत्तौ ब्रह्मे-
शाद्या दधति युवयोरक्षशारप्रचारम् ॥ ७ ॥ अस्येशाना त्वमसि

जगतः संश्रयन्ती मुकुन्दं लक्ष्मीः पद्मा जलधितनया विष्णुपत्नी-
 न्दिरेति । यन्नामानि श्रुतिपरिपणान्येवमावर्तयन्तो नावर्तन्ते
 दुरितपवनप्रेरिते जन्मचक्रे ॥ ८ ॥ त्वामेवाहुः कतिचिदपरे त्वत्प्रियं
 लोकनाथं किं तैरन्तःकलहमलिनैः किञ्चिदुत्तीर्य मग्नैः । त्वत्संप्रीत्यै
 विहरति हरौ संमुखीनां श्रुतीनां भावारूढौ भगवति युवां दम्पती
 दैवतं नः ॥ ९ ॥ आपन्नार्तिप्रशमनविधौ बद्धदीक्षस्य विष्णोराच-
 ख्युस्त्वां प्रियसहचरीमैकमत्योपपन्नान् । प्रादुर्भावैरपि समतनुः
 प्राध्वमन्वीयसे त्वं दूरोत्क्षिप्तैरिव मधुरता दुग्धराशेस्तरङ्गे ॥ १० ॥
 धत्ते शोभां हरिमरकते तावकी मूर्तिराद्या तन्वी तुङ्गस्तनभरनता
 तप्तजाम्बूनदाभा । यस्यां गच्छन्त्युदयविलयैर्नित्यमानन्दसिन्धावि-
 छावेगोलसितलहरीविभ्रमं व्यक्तयस्ते ॥ ११ ॥ आसंसारं वित-
 तमखिलं वाङ्मयं यद्विभूतिर्यद्भूभङ्गात्कुसुमधनुषः किंकरो मेरुधन्वा ।
 यस्यां नित्यं नयनशतकैरेकलक्ष्यो महेन्द्रः पद्मे तासां परिणतिरसौ
 भावलेखैस्त्वदीयैः ॥ १२ ॥ अग्रे भर्तुः सरसिजमये भद्रपीठे निष-
 ण्णामरभोराशेरधिगतसुधासंप्लवादुत्थितां त्वाम् । पुष्पासारस्थगित-
 भुवनैः पुष्कलावर्तकाद्यैः क्लृप्तारम्भाः कनककलशैरभ्यषिञ्चन्गजेन्द्राः
 ॥ १३ ॥ आलोक्य त्वाममृतसहजे विष्णुवक्षःस्थलस्थां शापा-
 क्रान्ताः शरणमगमन्सावरोधाः सुरेन्द्राः । लब्ध्वा भूयस्त्रिभुवनमिदं
 लक्षितं त्वत्कटाक्षैः सर्वाकारस्थिरसमुदयां संपदं निर्विशन्ति ॥ १४ ॥
 आर्तत्राणवतिभिरमृतासारनीलाम्बुवाहैरम्भोजानामुषसि मिश्रताम-
 न्तरङ्गैरपाङ्गैः । यस्यां यस्यां दिशि विहरते देवि दृष्टिस्त्वदीया तस्यां
 तस्यामहमहमिकां तन्वते संपदोघाः ॥ १५ ॥ योगारम्भत्वरित-
 मनसो युष्मदैकांत्ययुक्तं धर्मं प्राप्तुं प्रथममिह ये धारयन्तेऽधना याम् ॥
 तेषां भूमेर्धनपतिगृहादम्बुधेर्वा धारा निर्यान्त्यधिकमधिकं वाञ्छितानां

वसूनाम् ॥ १६ ॥ श्रेयस्कामा यमलनिलये चित्रमाश्रायवाचां
 चूडापीडं तत्र पदयुगं चेतसा धारायन्तः । छत्रच्छायासुभगशिरसश्चा-
 मरस्मेरपार्श्वाः श्लाघाशब्दश्रवणमुदिताः सग्विणः संचरन्ति ॥ १७ ॥
 ऊरीकर्तुं कुशलमखिलं जेतुमादीनरातीन् दूरीकर्तुं दुरितनिवहं त्यक्तु-
 माद्यामविद्याम् । अम्ब स्तम्बावधिकजननग्रामसीमान्तरेखामालम्बन्ते
 विमलमनसो विष्णुकान्ते दया ते ॥ १८ ॥ जाताकांक्षा जननि
 युवयोरेकसेवाधिकारे मायालीढं विभवंमखिलं मन्यमानास्तृणाय ।
 प्रीत्यै विष्णोस्तत्र च कृतिनः प्रीतिमन्तो भजन्ते वेलाभङ्गप्रशमनफलं
 वैदिकं धर्मसेतुम् ॥ १९ ॥ सेवे देवि त्रिदशमहिलामौलिमालाचिंतं ते
 सिद्धिक्षेत्रं शमितविपदां संपदां पादपद्मम् । यस्मिन्नीषन्नमितशिरसो
 यापयित्वा शरीरं वर्तिष्यन्ते वितप्रसि पदे वासुदेवस्य धन्याः ॥ २० ॥
 सानुप्रासप्रकटितदयैः सान्द्रवात्सल्यदिग्धैरम्ब स्निग्धैरमृतलहरीलब्ध-
 स्रवह्नचयैः । धर्मे तापत्रयविरचिते गाढतप्तं क्षणं मामाकिंचन्यरूपित-
 मनधैराद्रियेथाः कटाक्षैः ॥ २१ ॥ संपद्यन्ते भवभयतमीभागवत्स्वत्प्र-
 सादाद्वावाः सर्वे भगवति हरौ भक्तिमुद्वेलयन्तः । याचे किं त्वामह-
 मिह यतः शीतलोदारशीला भूयो भूयो दिशसि सहतां मङ्गलानां
 प्रबन्धान् ॥ २२ ॥ माता देवि त्वमसि भगवान्वासुदेवः पिता मे
 जातः सोऽहं जननि युवयोरेकलक्ष्यं दयायाः । दत्तो युष्मत्परिजनतया
 देशिकैरप्यतस्त्वं किं ते भूयः प्रियमिति किल स्मेरवक्त्रा विभासि
 ॥ २३ ॥ कल्याणानामविकलनिधिः काऽपि कारुण्यसीमा नित्यामोदा-
 निगमवचसां मौलिमन्दारमाला । संपदिव्या मधुविजयिनः संनिधत्तां
 सदा मे सैषा देवी सकलभुवनप्रार्थनाकामधेनुः ॥ २४ ॥ उपचित-
 गुरुभक्तेरुत्थितं वेङ्कटेशात्कलिकलुषनिवृत्त्यै कल्प्यमानं प्रजानाम् ।

सरसिजनिलयायाः स्तोत्रमेतत्पठन्तः सकलकुशलसीमा सार्वभौमा
भवन्ति ॥ २५ ॥ इति श्रीवेङ्कटेशार्यविरचिता श्रीस्तुतिः संपूर्णा ॥

३२४. लक्ष्मीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अगस्त्य उवाच ॥ पद्मे पद्मपलाशाक्षि जय
त्वं श्रीपतिप्रिये । जगन्मातर्महालक्ष्मीः संसारार्णवतारिणि ॥ १ ॥
महालक्ष्मि नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं सुरेश्वरि । हरिप्रिये नमस्तुभ्यं
नमस्तुभ्यं दयानिधे ॥ २ ॥ पद्मालये नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं शिव-
प्रिये । सर्वभूतहितार्थाय वसुवृष्टिं सदा कुरु ॥ ३ ॥ जगन्मातर्नम-
स्तुभ्यं नमस्तुभ्यं कृपावति । दयावति नमस्तुभ्यं विश्वेश्वरि नमो
नमः ॥ ४ ॥ नमः क्षीराब्धितनये नमस्त्रैलोक्यधारिणि । शशिवक्त्रे
नमस्तुभ्यं रक्ष मां शरणागतम् ॥ ५ ॥ रक्ष त्वं देवि देवेशि देव-
देवेशवल्लभे । दारिद्र्यान्नाहि मां लक्ष्मि कृपां कुरु ममोपरि ॥ ६ ॥
नमस्त्रैलोक्यजननि नमस्त्रैलोक्यपावनि । ब्रह्मादयो नमन्ति त्वां
जगदानन्ददायिनि ॥ ७ ॥ विष्णुप्रिये नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं जग-
द्धिते । आर्तिहन्त्रि नमस्तुभ्यं समृद्धिं कुरु मे रमे ॥ ८ ॥ पद्म-
वासे नमस्तुभ्यं चपलायै नमो नमः । चञ्चलायै नमस्तुभ्यं ललि-
तायै नमो नमः ॥ ९ ॥ नमः प्रद्युम्नमातस्ते पाहि मां त्वां नमाम्य-
हम् । परिपालय मां मातः सर्वथा शरणागतम् ॥ १० ॥ शरणं
त्वां प्रपन्नोऽस्मि कमले कमलानने । त्राहि त्राहि महालक्ष्मि परि-
त्राणपरायणे ॥ ११ ॥ पाण्डित्यं शोभते नैव न शोभन्ते गुणा
नरे । शीलं चापि न शोभेत महालक्ष्मि त्वया विना ॥ १२ ॥
तावद्विराजते रूपं तावच्छीलं विराजते । तावद्गुणा नराणां च
यावल्लक्ष्मीः प्रसीदति ॥ १३ ॥ लक्ष्मि त्वयालंकृतमानवा ये पापैर्वि-
मुक्ता नृपलोकमान्याः । गुणैर्विहीना गुणिनो भवन्ति विशीलिभः

शीलवतां वरिष्ठाः ॥ १४ ॥ लक्ष्मीर्भूषयते रूपं लक्ष्मीर्भूषयते कुलम् ।
लक्ष्मीर्भूषयते विद्यां सर्वाल्लक्ष्मीर्विशिष्यते ॥ १५ ॥ लक्ष्मि त्वद्गुणकी-
र्तने कमलभूर्यायादलं जिह्मतां रुद्राद्या रविचन्द्रदेवपतयो वक्तुं च
नैव क्षमाः । अस्माभिस्त्व रूपलक्षणगुणा वक्तुं कथं पार्यते मातर्मां
परिपाहि विश्वजननि कृत्वा ममेष्टं ध्रुवम् ॥ १६ ॥ दीनार्तिभीतं
क्षुधया प्रपीडितं वासोविहीनं तव पार्श्वमागतम् । कृपां विधत्से मम
लक्ष्मि सत्वरं धनप्रदे मां धननायकं कुरु ॥ १७ ॥ मां विलोक्य
जननी हरिप्रिये निर्धनं तव समीपमागतम् । देहि मे झटिति लक्ष्मि
कराग्रं वस्त्रकाञ्चनवरान्नमद्भुतम् ॥ १८ ॥ त्वमेव जननी लक्ष्मीः पिता
लक्ष्मीस्त्वमेव च । भ्राता त्वं च सखा लक्ष्मीर्विद्या लक्ष्मीस्त्वमेव च
॥ १९ ॥ त्राहि त्राहि महालक्ष्मि त्राहि त्राहि सुरेश्वरि । त्राहि त्राहि
जगन्मातर्दारिद्र्यात्राहि वेगतः ॥ २० ॥ नमस्तुभ्यं जगद्वात्रि विधात्र्यै
ते नमो नमः । धर्मध्वजे नमस्तुभ्यं नमः संपत्तिदायिनि ॥ २१ ॥
दारिद्र्यार्णवमग्नोऽहं निमग्नोऽहं रसातले । मज्जमानं करं धृत्वाऽप्युद्धर
त्वं रमे द्रुतम् ॥ २२ ॥ किं लक्ष्मि बहुनोक्तेन जल्पितं च पुनः
पुनः । अन्यन्मे शरणं नास्ति सत्यं सत्यं हरिप्रिये ॥ २३ ॥ एतच्छ्रु-
त्वाऽगस्त्यवाक्यं हर्षपूर्णा हरिप्रिया । उवाच मधुरां वाणीं तुष्टाऽहं
तव सुवत ॥ २४ ॥ श्रीरुवाच ॥ यत्त्वयोक्तमिदं स्तोत्रं ये पठिष्यन्ति
मानवाः । ये च शृण्वन्ति भक्त्याऽहं तेषां वशवर्तिनी ॥ २५ ॥
नित्यं पठन्ति ये भक्त्या तेषां दैन्यं विनश्यति । ऋणं नश्यति शीघ्रं
च वियोगो नैव जायते ॥ २६ ॥ यः पटेत्प्रातरुत्थाय श्रद्धाभक्तिसम-
न्वितः । गृहे तस्य सदा तिष्ठेन्नित्यं श्रीः पतिना सह ॥ २७ ॥
सुखसौभाग्यसंपन्नो मनुष्यो बुद्धिमान्भवेत् । पुत्रवान् पशुमान् श्रेष्ठो
भुक्त्वा भोनांश्च मानवः ॥ २८ ॥ कीर्तिमांश्च महाभाग्यो नारायणपदं

लभेत् । अपुत्राः पुत्रिणः सन्ति पुत्रिणः सन्ति पौत्रिणः ॥ २९ ॥
 निर्धनाः सधनाः सन्ति जीवन्ति शरदां शतम् । इदं स्तोत्रं महापुण्यं
 महालक्ष्म्याः प्रकीर्तितम् । विष्णुप्रसादजननं चतुर्वर्गफलप्रदम् ॥ ३० ॥
 राजद्वारे जयश्चैव शत्रोश्चैव पराजयः । भूतप्रेतपिशाचानां व्याघ्राणां
 न भयं तथा ॥ ३१ ॥ न शस्त्रानलतोयौवाद्भयं तस्य प्रजायते ।
 दुर्वृत्तानां च पापानां बहुहानिकरं परम् ॥ ३२ ॥ मन्दुराकरिशालासु
 गवां गोष्ठे समाहितः । पठेत्तद्दोषशान्त्यर्थं महापातकनाशनम् ॥ ३३ ॥
 सर्वसौख्यकरं नृणामायुरारोग्यदं तथा । अगस्त्यमुनिना प्रोक्तं प्रजानां
 हितकाम्यया ॥ ३४ ॥ इत्यगस्त्यमुनिविरचितं लक्ष्मीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३२५. लक्ष्मीहृदयम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ आचम्य प्राणानायम्य देशकाला संकीर्त्य
 श्रीलक्ष्मीनारायणप्रसादसिद्ध्यै ममाभीष्टकामनासिद्ध्यर्थं अद्यप्रभृत्य-
 मुकदिनपर्यन्तं संकलीकरणरीत्या, संपुटीकरणरीत्या, पुरश्चरणरीत्या,
 सकृदावर्तनपाठरीत्या वा लक्ष्मीनारायणहृदयजपाख्यं कर्म करिष्ये इति
 संकल्प्य न्यासादि कुर्यात् ॥ अस्य श्रीमहालक्ष्मीहृदयमालामंत्रस्य,
 भार्गव ऋषिः, आद्यादिश्रीमहालक्ष्मीदेवता, अनुष्टुवादिनानालंदांसि,
 श्रीबीजम्, ह्रीं शक्तिः, ऐं कीलकम्, श्रीमहालक्ष्मीप्रसादसिद्ध्यर्थं
 जपे विनियोगः ॥ ॥ अथ न्यासः ॥ ॐ भार्गवऋषये नमः शिरसि ॥
 अनुष्टुवादिनानालंदोभ्यां नमो मुखे ॥ आद्यादिश्रीमहालक्ष्म्यै देवतायै
 नमो हृदये ॥ श्रीं बीजाय नमो गुह्ये ॥ ह्रीं शक्तये नमः पादयोः ॥
 ऐं कीलकाय नमः सर्वांगे ॥ ॥ अथ करन्यासः ॥ ॐ श्रीं अंगुष्ठाभ्यां
 नमः ॥ ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः ॥ ॐ ऐं मध्यमाभ्यां नमः ॥ श्रीं
 अनामिकाभ्यां नमः ॥ ॐ ह्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ॐ ऐं करतल-
 करपृष्ठाभ्यां नमः ॥ ॐ हृदयाय नमः ॥ ॐ शिरसे स्वाहा ॥ ॐ ऐं

शिखायै वषट् ॥ ॐ श्रीं कवचाय हुम् ॥ ॐ ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट् ॥
 ॐ ऐं अस्त्राय फट् ॥ ॐ श्रीं ह्रीं ऐं इति दिग्बन्धः ॥ अथ ध्यानम् ॥
 हस्तद्वयेन कमले धारयन्तीं स्वलीलया ॥ हारनूपुरसंयुक्तां लक्ष्मीं
 देवीं विचिंतये ॥ इति मनसि ध्यात्वा मानसोपचारैः संपूजयेत् ॥
 शंखचक्रगदाहस्ते शुभ्रवर्णे सुवासिनि ॥ मम देहि वरं लक्ष्मीः सर्व-
 सिद्धिप्रदायिनि ॥ इति संप्रार्थ्य ॐ श्रीं ह्रीं ऐं महालक्ष्म्यै कमलधा-
 रिण्यै सिंहवाहिन्यै स्वाहा ॥ इति मंत्रं जप्त्वा पुनः पूर्ववद्धृदयादिषडंग-
 न्यासं कृत्वा स्तोत्रं पठेत् ॥ वंदे लक्ष्मीं परशिवमयीं शुद्धजांबूनदाभां
 तेजोरूपां कनकवसनां सर्वभूषोज्ज्वलांगीम् ॥ बीजापूरं कनककलशं
 हेमपद्मं दधानामाद्यां शक्तिं सकलजननीं विष्णुवामांकसंस्थाम् ॥ १ ॥
 श्रीमत्सौभाग्यजननीं स्तौमि लक्ष्मीं सनातनीम् ॥ सर्वकामफलावाप्ति-
 साधनैकसुखावहाम् ॥ २ ॥ स्मरामि नित्यं देवेशि त्वया प्रेरितमानसः ॥
 त्वदाज्ञां शिरसा धृत्वा भजामि परमेश्वरीम् ॥ ३ ॥ समस्तसंपत्सुखदां
 महाश्रियं समस्तसौभाग्यकरीं महाश्रियम् ॥ समस्तकल्याणकरीं महा-
 श्रियं भजाम्यहं ज्ञानकरीं महाश्रियम् ॥ ४ ॥ विज्ञानसंपत्सुखदां
 सनातनीं विचित्रवाग्भूतिकरीं मनोहराम् ॥ अनंतसंमोदसुखप्रदायिनीं
 नमाम्यहं भूतिकरीं हरिप्रियाम् ॥ ५ ॥ समस्तभूतांतरसंस्थिता त्वं
 समस्तभोक्त्रीश्वरि विश्वरूपे ॥ तन्नास्ति यत्त्वद्व्यतिरिक्तवस्तु त्वत्पादपद्मं
 प्रणमाम्यहं श्रीः ॥ ६ ॥ दारिद्र्यदुःखौघतमोपहंत्रि त्वत्पादपद्मं मयि
 संनिधत्स्व ॥ दीनार्तिविच्छेदनहेतुभूतैः कृपाकटाक्षैरभिषिंच मां श्रीः
 ॥ ७ ॥ अम्ब प्रसीद कर्णसुधयार्द्रदृष्ट्या मां त्वत्कृपाद्रविणगेहमिमं
 कुरुव ॥ आलोकय प्रणतहृद्गतशोकहंत्रि त्वत्पादपद्मयुगलं प्रणमाम्यहं
 श्रीः ॥ ८ ॥ शान्त्यै नमोऽस्तु शरणागतरक्षणायै कान्त्यै नमोऽस्तु कम-
 नीयगुणाश्रयायै ॥ क्षान्त्यै नमोऽस्तु दुरितक्षयकारणायै धान्त्यै नमोऽस्तु
 धनधान्यसमृद्धिदायै ॥ ९ ॥ शक्त्यै नमोऽस्तु शशिशेखरसंस्तुतायै

रत्यै नमोऽस्तु रजनीकरसोदरायै ॥ भक्त्यै नमोऽस्तु भवसागरता-
 रिकायै मृत्यै नमोऽस्तु मधुसूदनवल्लभायै ॥ १० ॥ लक्ष्म्यै नमोऽस्तु
 शुभलक्षणलक्षितायै सिद्ध्यै नमोऽस्तु शिवसिद्धसुपूजितायै ॥ धृत्यै
 नमोऽस्त्वमितदुर्गतिभंजनायै गत्यै नमोऽस्तु वरसद्गतिदायिकायै ॥ ११ ॥
 देव्यै नमोऽस्तु दिवि देवगणार्चितायै भूत्यै नमोऽस्तु भुवनातिवि-
 नाशनायै ॥ दात्र्यै नमोऽस्तु धरणीधरवल्लभायै पुष्ट्यै नमोऽस्तु
 पुरुषोत्तमवल्लभायै ॥ १२ ॥ सुतीव्रदारिद्र्यविदुःखहन्त्र्यै नमोऽस्तु
 ते सर्वभयापहन्त्र्यै ॥ श्रीविष्णुवक्षःस्थलसंस्थितायै नमो नमः
 सर्वविभूतिदायै ॥ १३ ॥ जयतु जयतु लक्ष्मीर्लक्ष्णालंकृतांगी जयतु
 जयतु पद्मा पद्मसद्भाभिवन्दा ॥ जयतु जयतु विद्या विष्णुवामांकसंस्था
 जयतु जयतु सम्यक् सर्वसंपत्करी श्रीः ॥ १४ ॥ जयतु जयतु
 देवी देवसंवाभिपूज्या जयतु जयतु भद्रा भार्गवी भाग्यरूपा ॥
 जयतु जयतु नित्या निर्मलज्ञानवेद्या जयतु जयतु सत्या सर्व-
 भूतान्तरस्था ॥ १५ ॥ जयतु जयतु रम्या रत्नगर्भान्तरस्था जयतु
 जयतु शुद्धा शुद्धजावूनदाभा ॥ जयतु जयतु कान्ता कान्तिमद्भा-
 सितांगी जयतु जयतु शान्ता शीघ्रमागच्छ सौम्ये ॥ १६ ॥
 यस्याः कलायाः कमलोद्भवाद्या रुद्राश्च शक्रप्रमुखाश्च देवाः ॥
 जीवन्ति सर्वा अपि शक्त्यस्ताः प्रभुत्वमाप्ताः परमायुषस्ते ॥ १७ ॥
 लिलेख निटिले विधिर्मम लिपिं विसृज्यापरं त्वया विलिखितव्य-
 मेतदिति तत्फलप्राप्तये ॥ तदंतरफले स्फुटं कमलवासिनि श्रीरिमां
 समर्पय स्वमुद्रिकां सकलभाग्यसंसूचिकाम् ॥ १८ ॥ कलया ते
 यथा देवि जीवन्ति सचराचराः ॥ तथा संपत्करे लक्ष्मीः सर्वदा
 संप्रसीद मे ॥ १९ ॥ यथा विष्णुर्ध्रुवे नित्यं स्वकलां संन्यवेशयत् ॥
 तथैव स्वकलां लक्ष्मि मयि सम्यक् समर्पय ॥ २० ॥ सर्वसौख्य-
 प्रदे देवि भक्तानामभयप्रदे ॥ अचलां कुरु यत्नेन कलां मयि

निवेशिताम् ॥ २१ ॥ सुदास्तां मद्गले परमपदलक्ष्मीः स्फुटकला
 सदा वैकुण्ठश्रीनिवासतु कला मे नयनयोः ॥ वसेत्सत्ये लोके मम
 वचसि लक्ष्मीर्वरकला श्रियः श्वेतद्वीपे निवसतु कला मेऽस्तु
 करयोः ॥ २२ ॥ तावन्नित्यं समांगेषु क्षीराब्धौ श्रीकला वसेत् ॥
 सूर्याचन्द्रमसौ यावद्यावल्लक्ष्मीपतिः श्रिया ॥ २३ ॥ सर्वमंगल-
 संपूर्णा सर्वैश्वर्यसमन्विता ॥ आद्यादिश्रीर्महालक्ष्मीस्त्वत्कला मयि
 तिष्ठतु ॥ २४ ॥ अज्ञानतिमिरं हंतुं शुद्धज्ञानप्रकाशिका ॥ सर्वैश्वर्य-
 प्रदा मेऽस्तु त्वत्कला मयि संस्थिता ॥ २५ ॥ अलक्ष्मीं हरतु क्षिप्रं
 तमः सूर्यप्रभा यथा ॥ वितनोतु मम श्रेयस्त्वत्कला मयि संस्थिता
 ॥ २६ ॥ ऐश्वर्यमंगलोत्पत्तिस्त्वत्कलायां निधीयते ॥ मयि तस्मा-
 त्कृतार्थोऽस्मि पात्रमस्मि स्थितेस्त्वत् ॥ २७ ॥ भवदावेशभाग्याहो
 भाग्यवानस्मि भार्गवि ॥ त्वत्प्रसादात्पवित्रोऽहं लोकमातर्नमोऽस्तु
 ते ॥ २८ ॥ पुनासि मां त्वं कलयैव यस्मादतः समागच्छ समा-
 ग्रतस्त्वम् ॥ परं पदं श्रीर्भव सुप्रसन्ना मय्यच्युतेन प्रविशादि-
 लक्ष्मि ॥ २९ ॥ श्रीवैकुण्ठस्थिते लक्ष्मि समागच्छ समाग्रतः ॥
 नारायणेन सह मां कृपादृष्ट्याऽवलोकय ॥ ३० ॥ सत्यलोकस्थिते
 लक्ष्मि त्वं समागच्छ संनिधिम् ॥ वासुदेवेन सहिता प्रसीद वरदा
 भव ॥ ३१ ॥ श्वेतद्वीपस्थिते लक्ष्मि शीघ्रमागच्छ सुवते ॥
 विष्णुना सहिते देवि जगन्मातः प्रसीद मे ॥ ३२ ॥ क्षीरांबुधि-
 स्थिते लक्ष्मि समागच्छ समाधवे ॥ त्वत्कृपादृष्टिसुधया सततं मां
 विलोकय ॥ ३३ ॥ रत्नगर्भस्थिते लक्ष्मि परिपूर्णहिरण्मयि ॥
 समागच्छ समागच्छ स्थित्वाशु पुरतो मम ॥ ३४ ॥ स्थिरा भव
 महालक्ष्मि निश्चला भव निर्मले ॥ प्रसन्ने कमले देवि प्रसन्नहृदया
 भव ॥ ३५ ॥ श्रीधरे श्रीमहाभूते त्वदंतस्थं महानिधिम् ॥
 शीघ्रमुद्धृत्य पुरतः प्रदर्शय समर्पय ॥ ३६ ॥ वसुंधरे श्रीवसुधे

वसुदोग्नि कृपां मयि ॥ त्वत्कुक्षिगतसर्वस्वं शीघ्रं मे संप्रदर्शय
 ॥ ३७ ॥ विष्णुप्रिये रत्नगर्भे समस्तफलदे शिवे ॥ त्वद्गर्भगतहेमा-
 दीन् संप्रदर्शय दर्शय ॥ ३८ ॥ रसातलगतं लक्ष्मि शीघ्रमागच्छ
 मे पुरः ॥ न जाने परमं रूपं मातर्मे संप्रदर्शय ॥ ३९ ॥ आवि-
 र्भव मनोवेगाच्छीघ्रमागच्छ मे पुरः ॥ मा वत्स भैरिहेत्युक्त्वा
 कामं गौरिव रक्ष माम् ॥ ४० ॥ देवि शीघ्रं समागच्छ धरणी-
 गर्भसंस्थिते ॥ मातस्त्वद्भृत्यभृत्योऽहं मृगये त्वां कुतूहलात् ॥ ४१ ॥
 उत्तिष्ठ जागृहि त्वं मे समुत्तिष्ठ सुजागृहि ॥ अक्षयान् हेमकलशान्
 सुवर्णेन सुपूरितान् ॥ ४२ ॥ निक्षेपान्मे समाकृष्य समुद्धृत्य
 ममाग्रतः ॥ समुन्नतानना भूत्वा समाधेहि धरांतरात् ॥ ४३ ॥
 मत्संनिधिं समागच्छ मदाहितकृपारसात् ॥ प्रसीद श्रेयसां दोग्नि
 लक्ष्मि मे नयनाग्रतः ॥ ४४ ॥ अत्रोपविश लक्ष्मि त्वं स्थिरा भव
 हिरण्मयि ॥ सुस्थिरा भव संप्रीत्या प्रसीद वरदा भव ॥ ४५ ॥
 आनीय त्वं तथा देवि निधीन्मे संप्रदर्शय ॥ अद्य क्षणेन सहसा
 दत्त्वा संरक्ष मां सदा ॥ ४६ ॥ मयि तिष्ठ तथा नित्यं यथेन्द्रादिषु
 तिष्ठसि ॥ अभयं कुरु मे देवि महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते ॥ ४७ ॥
 समागच्छ महालक्ष्मि शुद्धजांबूनदप्रभे ॥ प्रसीद पुरतः स्थित्वा
 प्रणतं मां विलोकय ॥ ४८ ॥ लक्ष्मीर्भुवं गता भासि यत्र यत्र
 हिरण्मयि । तत्र तत्र स्थिता त्वं मे तव रूपं प्रदर्शय ॥ ४९ ॥
 क्रीडसे बहुधा भूमौ परिपूर्णा कृपा मयि । मम मूर्ध्नि स्थिते
 हस्तमविलम्बितमर्पय ॥ ५० ॥ फलद्वाग्योदये लक्ष्मि समस्त-
 पुरवासिनी । प्रसीद मे महालक्ष्मि परिपूर्णमनोरथे ॥ ५१ ॥
 अयोध्यादिषु सर्वेषु नगरेषु समाश्रिते । विभवैर्विविधैर्युक्ते
 समागच्छ बलान्विते ॥ ५२ ॥ समागच्छ समागच्छ ममाग्रे
 भव सुस्थिरा ॥ करुणारसनिष्यन्दनेत्रद्वयविशालिनि ॥ ५३ ॥

संविधत्स्व महालक्ष्मि त्वं पाणिं मम मस्तके । करुणासुधया मां
 त्वमभिषिञ्च्य स्थिरं कुरु ॥ ५४ ॥ सर्वराजगृहे लक्ष्मि समागच्छ
 बलान्विते । स्थित्वाऽऽशु पुरतो मेऽद्य प्रसादेनाभयं कुरु ॥ ५५ ॥
 सादरं मस्तके हस्तं मम त्वं कृपयाऽर्पय । सर्वराजगृहे लक्ष्मीस्त्व-
 त्कला मयि तिष्ठतु ॥ ५६ ॥ आद्यादिश्रीर्महालक्ष्मीर्विष्णुवामाङ्क-
 संस्थिते । प्रत्यक्षं कुरु मे रूपं रक्ष मां शरणागतम् ॥ ५७ ॥
 प्रसीद मे महालक्ष्मि सुप्रसीद महाशिवे । अचला भव
 संप्रीत्या सुस्थिरा भव मद्गृहे ॥ ५८ ॥ यावत्तिष्ठन्ति वेदाश्च
 यावच्चन्नाम तिष्ठति । यावद्विष्णुश्च यावत्त्वं तावत्कुरु कृपां मयि
 ॥ ५९ ॥ चान्द्री कला यथा शुक्ले वर्धते सा दिने दिने । तथा
 दया ते मय्येव वर्धतामभिवर्धताम् ॥ ६० ॥ यथा वैकुण्ठनगरे
 यथा वै क्षीरसागरे । तथा मद्भवने तिष्ठ स्थिरं श्रीविष्णुना
 सह ॥ ६१ ॥ योगिनां हृदये नित्यं यथा तिष्ठसि विष्णुना । तथा
 मद्भवने तिष्ठ स्थिरं श्रीविष्णुना सह ॥ ६२ ॥ नारायणस्य
 हृदये भवती यथाऽऽस्ते नारायणोऽपि तत्र हृत्कमले यथाऽऽस्ते ।
 नारायणस्त्वमपि नित्यमुभौ तथैव तौ तिष्ठतां हृदि ममापि
 दयावती श्रीः ॥ ६३ ॥ विज्ञानवृद्धिं हृदये कुरु श्रीः सौभाग्यवृद्धिं
 कुरु मे गृहे श्रीः । दयासुवृद्धिं कुरुतां मयि श्रीः सुवर्णवृद्धिं
 कुरु मे गृहे श्रीः ॥ ६४ ॥ न मां त्यजेथाः श्रितकल्पवह्नि
 सद्भक्तिचिन्तामणिकामधेनो । विश्वस्य मातर्भव सुप्रसन्ना गृहे
 कलत्रेषु च पुत्रवर्गे ॥ ६५ ॥ आद्यादिमाये त्वमजांढवीजं त्वमेव
 साकारनिराकृतिस्त्वम् ॥ त्वया धृताश्चाब्जभवांडसंवाश्वित्रं चरित्रं
 तव देवि विष्णोः ॥ ६६ ॥ ब्रह्मरुद्रादयो देवा वेदाश्चापि न
 शक्नुयुः ॥ महिमानं तव स्तोतुं मंदोऽहं शक्नुयां कथम् ॥ ६७ ॥
 अंब त्वद्वत्सवाक्यानि सूक्तासूक्तानि यानि च ॥ तानि स्वीकुरु

सर्वज्ञे दयालुत्वेन सादरम् ॥ ६८ ॥ भवतीं शरणं गत्वा कृतार्थाः
 स्युः पुरातनाः ॥ इति संचित्य मनसा त्वामहं शरणं ब्रजे ॥ ६९ ॥
 अनंता नित्यसुखिनस्त्वद्भक्तास्त्वत्परायणाः ॥ इति वेदप्रमाणाद्धि
 देवि त्वां शरणं ब्रजे ॥ ७० ॥ तव प्रतिज्ञा मद्भक्ता न नश्यंतीत्यपि
 क्वचित् ॥ इति संचित्य संचित्य प्राणान् संधारयाम्यहम् ॥ ७१ ॥
 त्वदधीनस्त्वहं मातस्त्वत्कृपा मयि विद्यते ॥ यावत्संपूर्णकामः स्यां
 तावदेहि दयानिधे ॥ ७२ ॥ क्षणमात्रं न शक्नोमि जीवितुं त्वत्कृपां
 विना ॥ न जीवंतीह जलजा जलं त्यक्त्वा जलग्रहाः ॥ ७३ ॥
 यथा हि पुत्रवात्सल्याज्जननी प्रस्नुतस्तनी ॥ वत्सं त्वरितमागत्य
 संप्रीणयति वत्सला ॥ ७४ ॥ यदि स्यां तव पुत्रोऽहं माता त्वं
 यदि मामकी ॥ दयापयोधरस्तन्यसुधाभिरभिषिंच माम् ॥ ७५ ॥
 मृग्यो न गुणलेशोऽपि मयि दोषैकमंदिरे ॥ पांसूनां वृष्टिबिंदूनां
 दोषाणां च न मे मितिः ॥ ७६ ॥ पापिनामहमेवाग्र्यो दयालूनां
 त्वमग्रणीः ॥ दयनीयो मदन्योऽस्ति तव कोऽत्र जगन्नये ॥ ७७ ॥
 विधिनाहं न सृष्टश्चेन्न स्यात्तव दयालुता ॥ आमयो वा न सृष्ट-
 श्चेदौषधस्य वृथोदयः ॥ ७८ ॥ कृपा मदग्रजा किं ते अहं किं वा
 तदग्रजः ॥ विचार्य देहि मे वित्तं तव देवि दयानिधे ॥ ७९ ॥
 माता पिता त्वं गुरुः सद्गतिः श्रीस्त्वमेव संजीवनहेतुभूता ॥
 अन्यन्न मन्ये जगदेकनाथे त्वमेव सर्वं मम देवि सत्ये ॥ ८० ॥
 आद्यादिलक्ष्मीर्भव सुप्रसन्ना विशुद्धविज्ञानसुखैकदोग्ध्री ॥ अज्ञान-
 हंत्री त्रिगुणातिरिक्ता प्रज्ञाननेत्री भव सुप्रसन्ना ॥ ८१ ॥ अशेष-
 वाग्जाड्यमलापहन्त्री नवं नवं स्पष्टसुवाक्प्रदायिनी ॥ ममेह
 जिह्वाग्रसुरंगनर्तकी भव प्रसन्ना वदने च मे श्रीः ॥ ८२ ॥ समस्त-
 संपत्सु विराजमाना समस्ततेजश्चयभासमाना ॥ विष्णुप्रिये त्वं
 भव दीप्यमाना वाग्देवता मे नयने प्रसन्ना ॥ ८३ ॥ सर्वप्रदर्शे

सकलार्थदे त्वं प्रभासुलावण्यदयाप्रदोग्ध्री ॥ सुवर्णदे त्वं सुमुखी
 भव श्रीर्हिरण्मयी मे नयने प्रसन्ना ॥ ८४ ॥ सर्वार्थदा
 सर्वजगत्प्रसूतिः सर्वेश्वरी सर्वभयापहन्त्री ॥ गर्वोन्नता त्वं सुमुखी
 भव श्रीर्हिरण्मयी मे नयने प्रसन्ना ॥ ८५ ॥ समस्तविघ्नौघविनाश-
 कारिणी समस्तभक्तोद्धरणे विचक्षणा ॥ अनन्तसौभाग्यसुखप्रदा-
 यिनी हिरण्मयी मे नयने प्रसन्ना ॥ ८६ ॥ देवि प्रसीद दयनीय-
 तमाय मह्यं देवाधिनाथभवदेवगणाभिवंद्ये ॥ मातस्तथैव भव
 संनिहिता दृशोर्मे पत्या समं मम मुखे भव सुप्रसन्ना ॥ ८७ ॥ मा
 वत्स भैरभयदानकरोऽर्पितस्ते मौलौ ममेति मयि दीनदयानुकम्पे ॥
 मातः समर्पय मुदा करुणाकटाक्षं मांगल्यवीजमिह नः सृज जन्म
 मातः ॥ ८८ ॥ कटाक्ष इह कामधुक् तव मनस्तु चिन्तामणिः करः
 सुरतरुः सदा नवनिधिस्त्वमेवैन्दिरे ॥ भवेत्तव दयारसो मम रसा-
 यनं चान्वहं मुखं तव कलानिधिर्विविधवाञ्छितार्थप्रदम् ॥ ८९ ॥
 यथा रसस्पर्शनतोऽयसोऽपि सुवर्णता स्यात्कमले तथा ते ॥ कटाक्ष-
 संस्पर्शनतो जनानाममंगलानामपि मंगलत्वम् ॥ ९० ॥ देहीति
 नास्तीति वचः प्रवेशाद्भीतो रमे त्वां शरणं प्रपद्ये ॥ अतः सदा-
 स्मिन्नभयप्रदा त्वं सहैव पत्या मयि संनिधेहि ॥ ९१ ॥ कल्प-
 द्रुमेण मणिना सहिता सुरम्या श्रीस्ते कला मयि रसेन रसायनेन ॥
 आस्तां यतो मम च दृक्शिरपाणिपादस्पृष्टाः सुवर्णवपुषः स्थिर-
 जंगमाः स्युः ॥ ९२ ॥ आद्यादिविष्णोः स्थिरधर्मपत्नी त्वमेव पत्या
 मयि संनिधेहि ॥ आद्यादिलक्ष्मि त्वदनुग्रहेण पदे पदे मे निधि-
 दर्शनं स्यात् ॥ ९३ ॥ आद्यादिलक्ष्मीहृदयं पठेद्यः स राज्यलक्ष्मी-
 मचलां तनोति ॥ महादरिद्रोऽपि भवेद्धनाढ्यस्तदन्वये श्रीः स्थिरतां
 प्रयाति ॥ ९४ ॥ यस्य स्मरणमात्रेण तुष्टा स्याद्विष्णुवल्लभा ॥ तस्या-
 भीष्टं ददत्याशु तं पालयति पुत्रवत् ॥ ९५ ॥ इदं रहस्यं हृदयं

सर्वकामफलप्रदम् ॥ जपः पंचसहस्रं तु पुरश्चरणमुच्यते ॥ ९६ ॥
 त्रिकालमेककालं वा नरो भक्तिसमन्वितः ॥ यः पठेच्छृणुयाद्वापि स
 याति परमां श्रियम् ॥ ९७ ॥ महालक्ष्मीं समुद्दिश्य निशि
 भार्गववासरे ॥ इदं श्रीहृदयं जप्त्वा पञ्चवारं धनी भवेत्
 ॥ ९८ ॥ अनेन हृदयेनात्रं गर्भिण्या अभिमंत्रितम् ॥ ददाति
 तत्कुले पुत्रो जायते श्रीपतिः स्वयम् ॥ ९९ ॥ नरेण वाऽथवा
 नार्या लक्ष्मीहृदयमंत्रिते ॥ जले पीते च तद्वंशे मंदभाग्यो न
 जायते ॥ १०० ॥ य आश्विने मासि च शुक्लपक्षे रमोत्सवे
 संनिहितैकभक्त्या ॥ पठेत्तथैकोत्तरवावृद्ध्या लभेत्स सौवर्णमयीं
 सुवृष्टिम् ॥ १०१ ॥ य एकभक्तोऽन्वहमेकवर्षं विशुद्धधीः
 सप्ततिवारजापी ॥ स मंदभाग्योऽपि रमाकटाक्षाद्भवेत्सहस्राक्ष-
 शताधिकश्रीः ॥ १०२ ॥ श्रीशांघ्रिभक्तिं हरिदासदास्यं प्रपन्न-
 मंत्रार्थद्वैकनिष्ठाम् ॥ गुरोः स्मृतिं निर्मलबोधवृद्धिं प्रदेहि मातः
 परमं पदं श्रीः ॥ १०३ ॥ पृथ्वीपतित्वं पुरुषोत्तमत्वं विभूतिवासं
 विविधार्थसिद्धिम् ॥ संपूर्णकीर्तिं बहुवर्षभोगं प्रदेहि मे देवि
 पुनःपुनस्त्वम् ॥ १०४ ॥ वादार्थसिद्धिं बहुलोकवश्यं वयःस्थिरत्वं
 ललनासु भोगम् ॥ पौत्रादिलब्धिं सकलार्थसिद्धिं प्रदेहि मे भार्गवि
 जन्मजन्मनि ॥ १०५ ॥ सुवर्णवृद्धिं कुरु मे गृहे श्रीर्विभूतिवृद्धिं कुरु
 मे गृहे श्रीः ॥ १०६ ॥ अथ शिरोबीजम् ॥ ॐ यंहंकलंपश्रीं ॥
 ध्यायेत्लक्ष्मीं प्रहसितमुखीं कोटिबालार्कभासां विद्युद्वर्णांबरवरधरां
 भूषणाढ्यां सुशोभाम् ॥ बीजापूरं सरसिजयुगं बिभ्रतीं स्वर्णपात्रं
 भर्त्रा युक्तां मुहुरभयदां मह्यमप्यच्युतश्रीः ॥ १०७ ॥ गुह्यातिगुह्य-
 गोप्त्री त्वं गृहाणास्तत्कृतं जपम् ॥ सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्मयि
 स्थिता ॥ १०८ ॥ इति श्रीअथर्वणरहस्ये लक्ष्मीहृदयस्तोत्रं संपूर्णम् ॥



❀ सरस्वतीस्तोत्राणि । ❀



या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रान्विता
या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना ।
या ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता
सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा ॥



३२६. जगन्मङ्गलास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वीणावादनतत्पराङ्गुलिनदल्लोलांचितैः किंकिणीजालैः शोभितकङ्कणे शशिसुखे वालेंदुचूडामणे ॥ हेलाराजितचारुनेत्रयुगले ग्रैवेयशोभांचिते बाले पालय पापसंहतितमस्तारे जगन्मङ्गले ॥ १ ॥ कुक्षौ ते बहुजीवलोकसमितेः कोटिं चिरं विभ्रती कल्पादौ त्रिपुरे सृजस्यवसि तान् सर्वास्ववस्थास्वहो ॥ अन्ते तानखिलान्विनाशयसि सर्वं भो विलासस्तव बाले पालय ॥ २ ॥ लोके नीरधराग्निवायुगगनाः सर्वे भवल्लीलया मातः संचलिता हि तारकगणाः सूर्यादिसर्वे ग्रहाः ॥ सर्वं खल्विह ते स्वरूपमपि च त्वं चोदयित्री सदा बाले पालय ॥ ३ ॥ मायामेयविलासमात्रविभवा मातस्तवेयं कृतिर्गेया सर्वगुणान्विता च बहुदा मेयापि वेद्या नहि ॥ ध्येया ज्ञानविशारदैश्च विविधैः शास्त्रैर्विलोक्यापि वै बाले पालय ॥ ४ ॥ नेत्रैः श्वेतविनीलशोणरुचिभिः पूर्णानुकंपान्वितैः पापानां मम भंजनाय गिरिजे पूरत्रयाणामिव ॥ तीर्थानामुपसंगमस्य नयसीत्येतद्भुवं मां तथा बाले पालय ॥ ५ ॥ मातस्ते दरलोलशीतविमलैर्नेत्रैः शिवे पश्य मां दुःखात्यन्तविपाकदीनवदनं शीघ्रं दयाद्वैर्यतः । ग्रामे वा विपिनेऽपि वा हिमकरो ज्योत्स्नानिपातैः समं बाले पालय ॥ ६ ॥ वेदानां शिखराणि पादयुगली धत्ते तवाम्बान्वहं पाद्यं तद्वरमौलिजूटतटिनीलाक्षांकितो रागिमा ॥ श्रीविष्णोर्हि किरीटरत्नसुषमा यस्यास्तु वंदेतरां बाले पालय ॥ ७ ॥ या शंभोश्चरितामृतेन चलिता रोषा च गंगाहृदे या सख्यां परमादरा शिवगले या संगता सर्वदा ॥ दृष्ट्वा ते शशिशीतया च दिशती सन्मङ्गलं संततं बाले ॥ ८ ॥ वाग्देवीं चतुराननस्य गृहिणीमाहुर्विधिज्ञा नराः श्रीविष्णोर्गृहिणीं सुधाब्धितनयां श्रीकण्ठपत्नीमुमाम् ॥ मातः का भवती विलासचतुरा माया परा देवता बाले पालय ॥ ९ ॥ इति श्रीजगन्मङ्गलास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३२७. शारदाभुजङ्गप्रयातस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सुवक्षोजकुंभां सुधापूर्णकुंभां प्रसादावलम्बां
प्रपुण्यावलम्बाम् । सदास्येन्दुविम्बां सदानोष्ठविम्बां भजे शारदाम्बाम-
जस्रं मदम्बाम् ॥ १ ॥ कटाक्षे दयार्द्रां करे ज्ञानमुद्रां कलाभिर्विनिद्रां
कलापैः सुभद्राम् ! पुरस्त्रीं विनिद्रां पुरस्तुङ्गभद्रां भजे शारदाम्बाम-
जस्रं मदम्बाम् ॥ २ ॥ ललामाङ्गफालां लसद्धानलोलां स्वभक्तैकपालां
यशःश्रीकपोलाम् । करे त्वक्षमालां कनत्प्रत्नलोलां भजे शारदाम्बाम-
मजस्रं मदम्बाम् ॥ ३ ॥ सुसीमन्तवेणीं दृशा निर्जितैर्णीं रमत्कीर-
वाणीं नमद्वज्रपाणिम् । सुधामन्थरास्यां मुदा चिन्त्यवेणीं भजे शार-
दाम्बामजस्रं मदम्बाम् ॥ ४ ॥ सुशान्तां सुदेहां दृगन्ते कचान्तां
लसत्सल्लताङ्गीमनन्तामचिन्त्याम् । स्मरेत्तापसैः संगपूर्वस्थितां तां भजे
शारदाम्बामजस्रं मदम्बाम् ॥ ५ ॥ कुरङ्गे तुरङ्गे मृगेन्द्रे खगेन्द्रे
मराले मदेभे महोक्षेऽधिरूढाम् । महत्यां नवम्यां सदा सामरूपां
भजे शारदाम्बामजस्रं मदम्बाम् ॥ ६ ॥ ज्वलत्कान्तिवह्निं जगन्मोह-
नाङ्गीं भजे मानसाम्भोजसुभ्रान्तभृङ्गीम् । निजस्तोत्रसंगीतनृत्यप्रभाङ्गीं
भजे शारदाम्बामजस्रं मदम्बाम् ॥ ७ ॥ भवाम्भोजनेत्राब्जसंपूज्यमानां
लसन्मन्दहासप्रभावक्रचिह्नाम् । चलच्चञ्चलाचारुताटङ्गकर्णां भजे
शारदाम्बामजस्रं मदम्बाम् ॥ ८ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजका-
चार्यश्रीमच्छंकराचार्यप्रणीतं शारदाभुजङ्गप्रयातस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३२८. सरस्वतीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ बृहस्पतिरुवाच ॥ सरस्वति नमस्यामि चेतनां
हृदि संस्थिताम् । कण्ठस्थां पद्मयोनिं त्वां ह्रीङ्कारां सुप्रियां सदा
॥ १ ॥ मतिदां वरदां चैव सर्वकामफलप्रदाम् । केशवस्य प्रियां

देवीं वीणाहस्तां वरप्रदाम् ॥ २ ॥ मन्त्रप्रियां सदा हृद्यां कुमतिध्वंस-
कारिणीम् । स्वप्रकाशां निरालम्बामज्ञानतिमिरापहाम् ॥ ३ ॥ मोक्ष-
प्रियां शुभां नित्यां सुभगां शोभनप्रियाम् । पद्मोपविष्टां कुण्डलिनीं
शुक्लवस्त्रां मनोहराम् ॥ ४ ॥ आदित्यमण्डले लीनां प्रणमामि जन-
प्रियाम् । ज्ञानाकारां जगद्धीपां भक्तविघ्नविनाशिनीम् ॥ ५ ॥ इति सत्यं
स्तुता देवी वागीशेन महात्मना । आत्मानं दर्शयामास शरदिन्दुसम-
प्रभाम् ॥ ६ ॥ श्रीसरस्वत्युवाच ॥ वरं वृणीष्व भद्रं त्वं यत्ते मनसि
वर्तते । बृहस्पतिरुवाच ॥ प्रसन्ना यदि मे देवि परं ज्ञानं प्रयच्छ
मे ॥ ७ ॥ श्रीसरस्वत्युवाच ॥ दत्तं ते निर्मलं ज्ञानं कुमतिध्वंसकार-
कम् । स्तोत्रेणानेन मां भक्त्या ये स्तुवन्ति सदा नराः ॥ ८ ॥ लभन्ते
परमं ज्ञानं मम तुल्यपराक्रमाः । कवित्वं मत्प्रसादेन प्राप्नुवन्ति मनो-
गतम् ॥ ९ ॥ त्रिसन्ध्यं प्रयतो भूत्वा यस्त्विदं पठते नरः । तस्य
कण्ठे सदा वासं करिष्यामि न संशयः ॥ १० ॥ इति श्रीरुद्रयामले
श्रीबृहस्पतिविरचितं सरस्वतीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

३२९. शारदाषट्कस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वेदाभ्यासजडोऽपि यत्करसरोजातग्रहात्पद्मभू-
श्चित्रं विश्वमिदं तनोति विविधं वीतक्रियं सक्रियम् । तां तुङ्गातटवास-
सक्तहृदयां श्रीचक्रराजालयां श्रीमच्छंकरदेशिकेन्द्रविनुतां श्रीशार-
दाम्बां भजे ॥ १ ॥ यः कश्चिद्बुद्धिहीनोऽन्यविदितमनमनध्यानपूजा-
विधानः कुर्याद्यद्यम्ब सेवां तव पदसरसीजातसेवारतस्य । चित्रं तस्या-
स्यमध्यात्प्रसरति कविता वाहिनीवामराणां सालंकारा सुवर्णा सरस-
पदयुता यत्नलेशं विनैव ॥ २ ॥ सेवापूजानमनविधयः सन्तु दूरे
नितान्तं कादाचित्का स्मृतिरपि पदाम्भोजयुग्मस्य तेऽम्ब । मूकं रङ्गं

कलयति सुराचार्यमिन्द्रं च वाचा लक्ष्म्या लोको न च कलयते तां कलेः
 किं हि दौःस्थ्यम् ॥ ३ ॥ दृष्ट्वा त्वत्पादपङ्केरुहनमनविधायुद्यतान्भक्त-
 लोकान्दूरं गच्छन्ति रोगा हरिमिव हरिणा वीक्ष्य तद्वत्सुदूरम् । कालः
 कुत्रापि लीनो भवति दिनकरे प्रोद्यमाने तमोवत् सौख्यं चायुर्यथाब्जं
 विकसति वचसां देवि शृङ्गाद्रिवासे ॥ ४ ॥ त्वत्पादांबुजपूजनासहद-
 याम्भोजातशुद्धिर्जनः स्वर्गं रौरवमेव वेत्ति कमलानाथास्पदं दुःखदम् ।
 कारागारमवैति चन्द्रनगरं वाग्देवि किं वर्णनैर्दृश्यं सर्वमुदीक्षते स हि
 पुना रज्जूरगाद्यैः समम् ॥ ५ ॥ त्वत्पादाम्बुरुहं हृदाख्यसरसि स्याद्बृह-
 मूलं यदा वक्त्राब्जे त्वमिवाम्ब पद्मनिलया तिष्ठेद्गृहे निश्चला । कीर्ति-
 र्यास्यति दिक्ततटानपि नृपैः संपूजिता स्यात्तदा वादे सर्वनयेष्वपि
 प्रतिभयान्दूरे करोत्येव हि ॥ ६ ॥ इति श्रीजगद्गुरुनृसिंहभारती-
 स्वामिविरचितं शारदाषट्कस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३३०. सरस्वतीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्वेतपद्मासना देवि श्वेतपुष्पोपशोभिता ।
 श्वेताम्बरधरा नित्या श्वेतगन्धानुलेपना ॥ १ ॥ श्वेताक्षी शुक्लवस्त्रा
 च श्वेतचन्दनचर्चिता । वरदा सिद्धगन्धर्वैर्ऋषिभिः स्तूयते सदा
 ॥ २ ॥ स्तोत्रेणानेन तां देवीं जगद्वात्रीं सरस्वतीम् । ये स्तुवन्ति
 त्रिकालेषु सर्वविधां लभन्ति ते ॥ ३ ॥ या देवी स्तूयते नित्यं
 ब्रह्मेन्द्रसुरकिनरैः । सा ममैवास्तु जिह्वाग्रे पद्महस्ता सरस्वती ॥ ४ ॥
 इति श्रीसरस्वतीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३३१. शारदास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शिशुमिव पदनतलोकं परिरक्षामीति बोधना-
 यैव । अङ्गे निधाय बालं भातीयं पङ्कजातभवदयिता ॥ १ ॥ पुराण-

वस्त्राणि न धारयामि नवाम्बराण्येव तु धारयामि । इति प्रबोधाय
 जनस्य नूनं नवाम्बराण्येव दधाति वाणी ॥ २ ॥ एकमेवाम्बरं वाणि
 विरूपं च वदन्ति हि । नवाम्बराणि धत्से त्वं सुरुपाणि कथं वद ॥ ३ ॥
 आकाशवत्सर्वगतश्च नित्यं इत्यादिवेदेऽम्ब किलाम्बरस्य । प्रतनत्वमेक-
 त्वमपि प्रसिद्धं कथं नवत्वं समभूदमुष्मिन् ॥ ४ ॥ हंसैरेव परैः सेव्या
 नाहमन्यैर्जनैरिति । प्रबोधनकृते मातर्हंसं वाहं करोषि किम् ॥ ५ ॥
 हंसे हि शब्दे किमु मुख्यवृत्त्या स्थिताहमेवेति विबोधनाय । विभासि
 हंसे जगदम्बिके त्वमित्यस्मदीये हृदये विभाति ॥ ६ ॥ हंसो बाह्या-
 न्धकारप्रदलनचतुरो ह्यहि मोक्षप्रदायी पद्मानामेष मेऽन्तःस्थिततिमिर-
 ततेर्वारयित्र्याश्च रात्रौ । अप्यामोदप्रदाय्या नतहृदयसरोजातपङ्क्तेरध-
 स्ताद्भूतो हीत्येव बोधं रचयितुमिव किं हंसमारोहसीशे ॥ ७ ॥ वृषं
 पुरस्तात्कुरूपे किमद्य वृषप्रदानाय नमज्जेनेभ्यः । द्रुतं पयोजन्मभव-
 प्रमोदपयोधिराकाशशिविम्बपङ्क्ते ॥ ८ ॥ शार्दूलचर्म परिवीक्ष्य भवाङ्ग-
 संस्थं भीतः पलाय्य तव सन्निधिमागतः किम् । उक्षाधिपः सरसिजा-
 सनधर्मपतिन ब्रूह्यद्य संशयनिमग्नमतेर्ममाशु ॥ ९ ॥ कर्तुमात्मनि
 सार्था किं वृषेन्द्रः पुर एतु नः । इत्यादिकां श्रुतिं वाणि पुरस्तात्कुरूपे
 वृषम् ॥ १० ॥ वृषभो वृषभो नो चेत्कथं तव पदाम्बुजम् । वाणि
 सेवितुमर्हः स्यात्तस्माद्वृषभ एव हि ॥ ११ ॥ शशिसूर्यचन्द्रमुख्यान-
 हमेवास्थाय पालयामीदम् । जगदिति विबोधनार्थं वागीश्वरि भासि
 शिखिनमास्थाय ॥ १२ ॥ शंभौ सन्ति शशाङ्कसूर्यशिखिनो नेत्रापदे-
 शात्सदा सागर्भ्यं त इमे निरीक्ष्य गिरिजानाथस्य मातस्त्वयि । वक्त्रा-
 रक्तपटीसुवाहमिवतः सेवां सदा कुर्वते मोदादेव हि तेन चात्र विषयः
 कश्चिद्विरां देवते ॥ १३ ॥ शिखिवच्छुद्ध एवेति नास्त्रैवाह यतः
 शिखी । तस्मात्त्वद्वाहता चास्य युक्तैव विधिवल्लभे ॥ १४ ॥ शिखी

मुण्डी जटीत्याद्याः सर्वे त्वत्सेवका इति । द्योतनाय शिखी किं वा
मातस्त्वामेव सेवते ॥ १५ ॥ निशम्य संप्रेषितवान्मयूरमुद्धर्ष
इत्येव पितृष्वसुः किम् । षडाननो ब्रूहि गिरां सवित्रि नम्रस्य संदेह-
युजो ममाशु ॥ १६ ॥ के का न पूजयेयुस्त्वां भुवनेऽस्मिन्महो-
त्सवे वाणि । इति नास्त्रैव हि वक्तुं भाति त्वत्सन्निधौ केकी ॥ १७ ॥
विनतातनूद्भवत्वं प्रकटं प्रभवेद्विनत्यैव । इति बुद्ध्या खगराद् किं
विनतस्त्वत्पादपद्मयोर्वाणि ॥ १८ ॥ मानसविहरणशीलां देवीं
त्यक्त्वाऽन्यदेवतासेवा । नैवोचितेति खगराद् वहति त्वां तादृशीं
नूनम् ॥ १९ ॥ सुवर्णनीकाशभवत्प्रतीककान्तैः परिष्वङ्गत एव
सार्धा । सुवर्णतेत्यात्मन आकलय्य खगेद् करोत्यम्ब तवाग्नि-
सेवाम् ॥ २० ॥ विष्णौ वीक्ष्य जडाधिवासमथ च स्वामित्रशायित्व-
मप्यण्डोद्धूतपतिर्विहाय तमिमं विज्ञानरूपामयम् । त्वामेवाद्य
निषेवते खलु मुदा वाग्देवि युक्तं च तत्को वा शत्रुसहासिकां हि सहते
लोकेषु विद्वज्जनः ॥ २१ ॥ भूताकाशचरेद् त्वमेव भुवने सिद्धं हि
का तेन मे बुद्धिश्चाभवदित्यवेत्य खगराद् नूनं गिरां देवते । हार्दा-
काशचराधिपत्यमपि मे भूयादितीच्छावशात्तत्प्राप्त्यै तव पादपङ्कज-
युगीसेवां करोत्यादरात् ॥ २२ ॥ लोके ह्येकः पक्षः शुक्लश्चान्यश्च
कृष्ण एवेह । द्वावपि शुक्लौ पक्षौ धत्ते गरुडः किमम्ब तव वाहः
॥ २३ ॥ हस्तान्तरस्थपरशुं शंभोर्भूषार्थमाहृताज्ञागान् । दृष्ट्वा
भीतो हरिणश्चरणं शरणं जगाम तव वाणि ॥ २४ ॥ समाश्रयेयं यदि
पुष्करस्थमब्जं तदा स्यात्पतनं हि दर्शे । ममेति मत्वा मृगशावको-
ऽयं पदाब्जमेवाश्रयते तवाम्ब ॥ २५ ॥ पिवेयुरपि मां सुरा यदि
वसामि चन्द्रे तदेत्यपायरहितं पदं जिगमिषुश्चिरं संचरन् । अपाय-
वचनोज्झितं तव पदाब्जयोरन्तरं विलोक्य मृगशावको वसति तत्र

वाग्देवि किम् ॥ २६ ॥ लालयति वाणि किं त्वां पञ्चास्यः स्कन्ध-
 मारोप्य । युक्तमिदं भ्रातृणां सोदर्याल्लालनं लोके ॥ २७ ॥ नाथ-
 स्यापि ममानिवेद्य हरिणः सेवां कथं प्रातनोद्वाग्देव्याश्चरणाब्जयो-
 रिति रुषा सारङ्गबालं भृशम् । त्वां शीघ्रप्रपलायनोत्सवपरं सेवां
 करोत्यादराद्दृश्येशः स्वयमित्यवैमि करुणावारांनिधे शारदे ॥ २८ ॥
 विष्णवर्धत्वात्पालकत्वं ममास्ते संहर्तृत्वं नैजमेवास्ति किंतु । स्रष्टु-
 र्भावो वाणि नास्तीति मत्वा तत्प्राप्त्यै त्वां सेवते पञ्चवक्त्रः ॥ २९ ॥
 उन्नम्य पादद्वितयं तुरङ्गो वदन्नितीवास्ति गिरां सवित्रि । विलङ्घ्य-
 तां किं सरिदीश्वरोऽयमुत्प्लुत्य गच्छेयमथाम्बरं वा ॥ ३० ॥ पदे
 पदे दानववश्यता मे भवेच्छवीनाथसमीपवासे । उच्चैःश्रवा इत्य-
 भिगम्य मातस्तवांग्रिसेवां प्रकरोति किं वा ॥ ३१ ॥ कुरङ्गवेग-
 स्तव दृष्टपूर्वस्तुरङ्गवेगं परिपश्य वाणि । इतीव गर्वादधिगम्य मात-
 स्तुरङ्गमस्तवां परिसेवते किम् ॥ ३२ ॥ विहङ्गं कुरङ्गं तुरङ्गं च वाहं
 विधायाशुगं श्रान्तिमासाद्य किं त्वम् । गजं मन्दगं वाहमद्यातनो-
 पि प्रणम्य मे ब्रूहि वाचामधीशे ॥ ३३ ॥ जम्भारौ कौशिकत्वं
 ह्यथ च तदनुजे वीक्ष्य सम्यग्धरित्वं त्यक्त्वा हीसाध्वसाभ्यामय-
 मिभकुलराट् तौ शरच्चन्द्रशुभ्रः । इन्द्रोपेन्द्रादिसेव्यामपि सकल-
 सुराराध्यपादारविन्दां त्वामेवातिप्रमोदात्कमलजदयिते सेवते नून-
 मेतत् ॥ ३४ ॥ नतेष्टदानाय सदादयार्द्रकराम्बुजा त्वं यत एव
 वाणि । तस्मादिभोऽप्येष तवाङ्घ्रिसङ्गादानाम्बुसंस्तिक्तकरो विभाति
 ॥ ३५ ॥ मत्पादाब्जप्रणम्रं न रमति तरसा सेवते चेभमुख्या लक्ष्मी-
 र्हस्ताग्रराजद्वरकनकमयस्रग्धरेत्येव बोधम् । कर्तुं हस्ताग्रराजद्वार-
 कनकसरं नागराजं प्रधत्से वाणि प्रब्रूहि किं त्वं कमलजहृदया-
 भोजसूर्यप्रभे मे ॥ ३६ ॥ त्यक्ष्यामि नैव रागं कालत्रितयेऽपि

नम्रवर्गेषु । इति बोधनाय वाणी रक्तसुमानां त्रयं धत्ते ॥ ३७ ॥
एकः शुक्रः प्रसिद्धोऽस्ति पाराशर्यसुतः किल । शुकोऽपरस्तु को ब्रूहि
शारदे प्रणताय मे ॥ ३८ ॥ पद्मासनस्थे सरसीरुहोत्थजाये वस त्वं
हृदये सदा मे । तेनाहमाशाः सकला जयेयं न तत्र संदेहलवोऽस्ति
मेऽद्य ॥ ३९ ॥ इति श्रीसच्चिदानन्दशिवाभिनवनृसिंहभारतीस्वामि-
विरचितं शारदास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३३२, नीलसरस्वतीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ घोररूपे महारावे सर्वशत्रुभयङ्करि । भक्तेभ्यो
वरदे देवि त्राहि मां शरणागतम् ॥ १ ॥ ॐ सुरासुरार्चिते देवि
सिद्धगंधर्वसेविते । जाड्यपापहरे देवि त्राहि मां ॥ २ ॥ जटाजूट-
समायुक्ते लोलजिह्वान्तकारिणि । द्रुतबुद्धिकरे देवि त्राहि मां ॥ ३ ॥
सौम्यक्रोधधरे रूपे चंडरूपे नमोऽस्तु ते । सृष्टिरूपे नमस्तुभ्यं
त्राहि मां ॥ ४ ॥ जडानां जडतां हन्ति भक्तानां भक्तवत्सला ।
मूढतां हर मे देवि त्राहि मां ॥ ५ ॥ हूं हूंकारमये देवि बलिहोम-
प्रिये नमः । उग्रतारे नमो नित्यं त्राहि मां ॥ ६ ॥ बुद्धिं देहि यशो
देहि कवित्वं देहि देवि मे । मूढत्वं च हरेर्देवि त्राहि मां ॥ ७ ॥
इन्द्रादिविलसन्द्भवन्दिते करुणामयि । तारे ताराधिनाथास्ये त्राहि मां
॥ ८ ॥ अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां यः पठेन्नरः । षण्मासैः सिद्धि-
माप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥ ९ ॥ मोक्षार्थी लभते मोक्षं धनार्थी
लभते धनम् । विद्यार्थी लभते विद्यां तर्कव्याकरणादिकाम् ॥ १० ॥
इदं स्तोत्रं पठेद्यस्तु सततं श्रद्धयान्वितः । तस्य शत्रुः क्षयं याति
महाप्रज्ञा प्रजायते ॥ ११ ॥ पीडायां वापि संग्रामे जाड्ये दाने तथा
भये । य इदं पठति स्तोत्रं शुभं तस्य न संशयः । इति प्रणम्य स्तुत्वा
च योनिमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥ १२ ॥ इति नीलसरस्वतीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥



❀ नवग्रहस्तोत्राणि । ❀



३३३. आदित्यस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीआदित्यस्तोत्रस्य आङ्गिरस ऋषिः,
 त्रिष्टुप् छन्दः, सूर्यो देवता, सूर्यप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः । नवग्रहाणां
 सर्वेषां सूर्यादीनां पृथक् पृथक् । पीडा च दुःसहा राजन् जायते सततं
 नृणाम् ॥ १ ॥ पीडानाशाय राजेन्द्र नामानि शृणु भास्वतः । सूर्या-
 दीनां च सर्वेषां पीडा नश्यति शृण्वतः ॥ २ ॥ आदित्यः सविता सूर्यः
 पूषाऽर्कः शीघ्रगो रविः । भगस्त्वष्टाऽर्यमा हंसो हेलिस्तेजोनिधिर्हरिः
 ॥ ३ ॥ दिननाथो दिनकरः सप्तसप्तिः प्रभाकरः । विभावसुर्वेदकर्ता
 वेदाङ्गो वेदवाहनः ॥ ४ ॥ हरिदश्वः कालवक्रः कर्मसाक्षी जगत्पतिः ।
 पद्मिनीबोधको भानुर्भास्करः करुणाकरः ॥ ५ ॥ द्वादशात्मा
 विश्वकर्मा लोहिताङ्गस्तमोनुदः । जगन्नाथोऽरविन्दाक्षः कालात्मा कश्य-
 पात्मजः ॥ ६ ॥ भूताश्रयो ग्रहपतिः सर्वलोकनमस्कृतः । जपाकुसुम-
 संकाशो भास्वानदितिनन्दनः ॥ ७ ॥ ध्वान्तेभसिंहः सर्वात्मा लोकनेत्रो

विकर्तनः । मार्तण्डो मिहिरः सूरस्तपनो लोकतापनः ॥ ८ ॥ जगत्कर्ता
 जगत्साक्षी शनैश्चरपिता जयः । सहस्ररश्मिस्तरणिर्भगवान् भक्तवत्सलः
 ॥ ९ ॥ विवस्वानादिदेवश्च देवदेवो दिवाकरः । धन्वन्तरिव्याधिहर्ता
 दद्रुकुष्ठविनाशनः ॥ १० ॥ चराचरात्मा मैत्रेयोऽमितो विष्णुर्विकर्तनः ।
 लोकशोकापहर्ता च कमलाकर आत्मभूः ॥ ११ ॥ नारायणो महादेवो
 रुद्रः पुरुष ईश्वरः । जीवात्मा परमात्मा च सूक्ष्मात्मा सर्वतोमुखः
 ॥ १२ ॥ इन्द्रोऽनलो यमश्चैव नैर्ऋतो वरुणोऽनिलः । श्रीद ईशान
 इन्दुश्च भौमः सौम्यो गुरुः कविः ॥ १३ ॥ शौरिर्विधुन्तुदः केतुः कालः
 कालात्मको विभुः । सर्वदेवमयो देवः कृष्णः कामप्रदायकः ॥ १४ ॥
 य एतैर्नामभिर्मर्त्यो भक्त्या स्तौति दिवाकरम् । सर्वपापविनिर्मुक्तः
 सर्वरोगविवर्जितः ॥ १५ ॥ पुत्रवान् धनवान् श्रीमान् जायते स न
 संशयः । रविवारे पठेद्यस्तु नामान्येतानि भास्वतः ॥ १६ ॥ पीडाशान्ति-
 भवेत्तस्य ग्रहाणां च विशेषतः । सद्यः सुखमवाप्नोति चायुर्दीर्घं च
 नीरुजम् ॥ १७ ॥ इति श्रीभविष्यपुराणे आदित्यस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३३४. सूर्यकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीसूर्य उवाच ॥ सांव सांव महाबाहो शृणु
 मे कवचं शुभम् । त्रैलोक्यसंगलं नाम कवचं परमाद्भुतम् ॥ १ ॥
 यज्ज्ञात्वा मंत्रवित्सम्यक् फलं प्राप्नोति निश्चितम् । यद्धृत्वा च महादेवो
 गणानामधिपोऽभवत् ॥ २ ॥ पठनाद्वारणाद्विष्णुः सर्वेषां पालकः सदा ।
 एवमिन्द्रादयः सर्वे सर्वैश्वर्यमवाप्नुवन् ॥ ३ ॥ कवचस्य ऋषिर्विद्वा
 छंदोऽनुष्टुबुदाहृतः । श्रीसूर्यो देवता चात्र सर्वदेवनमस्कृतः ॥ ४ ॥
 यशश्चारोग्यमोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः । प्रणवो मे शिरः पातु
 घृणिर्मे पातु भालकम् ॥ ५ ॥ सूर्योऽव्यान्नयनद्वंद्वमादित्यः कर्णयुग्म-

कम् । अष्टाक्षरो महामंत्रः सर्वाभीष्टफलप्रदः ॥ ६ ॥ ह्रीं बीजं मे
 मुखं पातु हृदयं भुवनेश्वरी । चंद्रविंबं विंशदाद्यं पातु मे गुह्यदेशकम्
 ॥ ७ ॥ अक्षरोऽसौ महामंत्रः सर्वतंत्रेषु गोपितः । शिवो वह्निसमा-
 युक्तो वामाक्षीविंदुभूषितः ॥ ८ ॥ एकाक्षरो महामंत्रः श्रीसूर्यस्य
 प्रकीर्तितः । गुह्याद्गुह्यतरो मंत्रो वाञ्छाचिंतामणिः स्मृतः ॥ ९ ॥
 शीर्षादिपादपर्यंतं सदा पातु मनूत्तमः । इति ते कथितं दिव्यं त्रिषु
 लोकेषु दुर्लभम् ॥ १० ॥ श्रीप्रदं कांतिदं नित्यं धनारोग्यविवर्धनम् ।
 कुष्ठादिरोगशमनं महाव्याधिविनाशनम् ॥ ११ ॥ त्रिसंध्यं यः पठेन्न-
 त्यमरोगी बलवान् भवेत् । तत्पुनः किमिहोक्तेन यद्यन्मनसि वर्तते
 ॥ १२ ॥ तत्तत्सर्वं भवेत्तस्य कवचस्य च धारणात् । भूतप्रेतपिशाचाश्च
 यक्षगंधर्वाक्षसाः ॥ १३ ॥ ब्रह्मराक्षसवेताला न द्रष्टुमपि ते क्षमाः ।
 दूरादेव पलायंते तस्य संकीर्तनादपि ॥ १४ ॥ भूर्जपत्रे समालिख्य
 रोचनागरकुंकुमैः । रविवारे च संक्रांत्यां सप्तम्यां च विशेषतः ।
 धारयेत्साधकश्रेष्ठः श्रीसूर्यस्य प्रियो भवेत् ॥ १५ ॥ त्रिलोहमध्यगं
 कृत्वा धारयेदक्षिणे करे । शिखायामथवा कंठे सोऽपि सूर्यो न संशयः
 ॥ १६ ॥ इति ते कथितं सांब त्रैलोक्यमंगलाभिधम् । कवचं दुर्लभं
 लोके तव स्नेहात्प्रकाशितम् ॥ १७ ॥ अज्ञात्वा कवचं दिव्यं यो
 जपेत्सूर्यमंत्रैकम् । सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि ॥ १८ ॥
 इति श्रीब्रह्मयामले त्रैलोक्यमंगलं नाम सूर्यकवचं संपूर्णम् ॥



३३५. चन्द्राष्टाविंशतिनामस्तोत्रम् ।



श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीचन्द्राष्टाविंशतिनामस्तोत्रस्य गौतम ऋषिः, सोमो देवता, विराट् छन्दः, चन्द्रप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥ चन्द्रस्य शृणु नामानि शुभदानि महीपते । यानि श्रुत्वा नरो दुःखान्मुच्यते नात्र संशयः ॥ १ ॥ सुधाकरश्च सोमश्च ग्लौरब्जः कुमुदप्रियः । लोकप्रियः शुभ्रभानुश्चन्द्रमा रोहिणीपतिः ॥ २ ॥ शशी हिमकरो राजा द्विजराजो निशाकरः । आत्रेय इन्दुः शीतांशुरोषधीशः कलानिधिः ॥ ३ ॥ जैवातृको रमाभ्राता क्षीरोदार्यवसंभवः । नक्षत्रनायकः शंभुशिरश्चूडामणिर्विभुः ॥ ४ ॥ तापहर्ता नभोदीपो नामान्येतानि यः पठेत् । प्रत्यहं भक्तिसंयुक्तस्तस्य पीडा विनश्यति ॥ ५ ॥ तद्दिने च पठेद्यस्तु लभेत्सर्वं समीहितम् । ग्रहादीनां च सर्वेषां भवेच्चन्द्रबलं सदा ॥ ६ ॥ इति श्रीचन्द्राष्टाविंशतिनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३३६. चन्द्रकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीचन्द्रकवचस्तोत्रमंत्रस्य गौतम ऋषिः । अनुष्टुप् छन्दः, श्रीचन्द्रो देवता, चन्द्रप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥ समं

चतुर्भुजं वन्दे केयूरमुकुटोज्ज्वलम् । वासुदेवस्य नयनं शंकरस्य च
भूषणम् ॥ १ ॥ एवं ध्यात्वा जपेन्नित्यं शशिनः कवचं शुभम् । शशी
पातु शिरोदेशं भालं पातु कलानिधिः ॥ २ ॥ चक्षुषी चंद्रमाः पातु
श्रुती पातु निशापतिः । प्राणं क्षपाकरः पातु सुखं कुमुदबांधवः ॥ ३ ॥
पातु कण्ठं च मे सोमः स्कंधे जैदातृकस्तथा । करौ सुधाकरः पातु
वक्षः पातु निशाकरः ॥ ४ ॥ हृदयं पातु मे चंद्रो नाभिं शंकरभूषणः ।
मध्यं पातु सुरश्रेष्ठः कटिं पातु सुधाकरः ॥ ५ ॥ ऊरू तारापतिः पातु
मृगांको जानुनी सदा । अट्ठिजः पातु मे जंघे पातु पादौ विधुः
सदा ॥ ६ ॥ सर्वाण्यन्यानि चांगानि पातु चंद्रोऽखिलं वपुः । एतद्धि
कवचं दिव्यं भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् । यः पठेच्छृणुयाद्वापि सर्वत्र
विजयी भवेत् ॥ ७ ॥ इति श्रीचंद्रकवचं संपूर्णम् ॥

३३७. अङ्गारकस्तोत्रम् ।



श्रीगणेशाय नमः ॥ अ श्रीअङ्गारकस्तोत्रस्य विरूपाङ्गिरस ऋषिः,
अग्निर्देवता, गायत्री छन्दः, भौमप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः । अङ्गारकः
शक्तिधरो लोहिताङ्गो धरासुतः । कुमारो मङ्गलो भौमो महा-
कायो धनप्रदः ॥ १ ॥ ऋणहर्ता दृष्टिकर्ता रोगकृद्रोगनाशनः ।

विद्युत्प्रभो व्रणकरः कामदो धनहृत् कुजः ॥ २ ॥ सामगानप्रियो
 रक्तवस्त्रो रक्तायतेक्षणः । लोहितो रक्तवर्णश्च सर्वकर्मावबोधकः ॥ ३ ॥
 रक्तमाल्यधरो हेमकुण्डली ग्रहनायकः । नामान्येतानि भौमस्य यः
 पठेत्सततं नरः ॥ ४ ॥ ऋणं तस्य च दौर्भाग्यं दारिद्र्यं च विनश्यति ।
 धनं प्राप्नोति विपुलं स्त्रियं चैव मनोरमाम् ॥ ५ ॥ वंशोद्ध्योतकरं
 पुत्रं लभते नात्र संशयः । योऽर्चयेदहि भौमस्य मङ्गलं बहुपुष्पकैः
 ॥ ६ ॥ सर्वा नश्यति पीडा च तस्य ग्रहकृता ध्रुवम् ॥ ७ ॥ इति
 श्रीस्कन्दपुराणे अङ्गारकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३३८. ऋणमोचकमङ्गलस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मङ्गलो भूमिपुत्रश्च ऋणहर्ता धनप्रदः ।
 स्थिरासनो महाकायः सर्वकर्मावरोधकः ॥ १ ॥ लोहितो लोहिताक्षश्च
 सामगानां कृपाकरः । धरात्मजः कुजो भौमो भूतिदो भूमिनन्दनः
 ॥ २ ॥ अङ्गारको यमश्चैव सर्वरोगापहारकः । वृष्टेः कर्ताऽपहर्ता च
 सर्वकामफलप्रदः ॥ ३ ॥ एतानि कुजनामानि तित्थं यः श्रद्धया
 पठेत् । ऋणं न जायते तस्य धनं शीघ्रमवाप्नुयात् ॥ ४ ॥ धरणी-
 गर्भसंभूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम् । कुमारं शक्तिहस्तं तं मङ्गलं प्रण-
 माम्यहम् ॥ ५ ॥ स्तोत्रमङ्गारकस्यैतत् पठनीयं सदा नृभिः । न तेषां
 भौमजा पीडा स्वल्पापि भवति क्वचित् ॥ ६ ॥ अङ्गारक महाभाग
 भगवन् भक्तवत्सल । त्वां नमामि ममाशेषमृणमाशु विनाशय ॥ ७ ॥
 ऋणरोगादिदारिद्र्यं ये चान्ये ह्यपमृत्यवः । भयक्लेशमनस्तापा नश्यन्तु
 मम सर्वदा ॥ ८ ॥ अतिवक्र दुराराध्य भोगमुक्तजितात्मनः ।
 तुष्टो ददासि साम्राज्यं रुष्टो हरसि तत्क्षणात् ॥ ९ ॥ विरिञ्चिशक्र-
 विष्णूनां मनुष्याणां तु का कथा । तेन त्वं सर्वसत्त्वेन ग्रहराजो

महाबलः ॥ १० ॥ पुत्रान् देहि धनं देहि त्वामस्मि शरणं गतः ।
 ऋणदारिद्र्यदुःखेन शत्रूणां च भयात्ततः ॥ ११ ॥ एभिर्द्वादशभिः
 श्लोकैर्यः स्तौति च धरासुतम् । महतीं श्रियमाप्नोति ह्यपरो धनदो
 युवा ॥ १२ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे भार्गवप्रोक्तं ऋणमोचकमङ्गल-
 स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३३९. मंगलकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीअंगारककवचस्तोत्रमंत्रस्य कश्यप
 ऋषिः, अनुष्टुप् छंदः, अंगारको देवता, भौमप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ।
 रक्तांबरो रक्तवपुः किरीटी चतुर्भुजो मेषगमो गदाभृत् । धरासुतः
 शक्तिधरश्च शूली सदा मम स्याद्भरदः प्रशांतः ॥ १ ॥ अंगारकः
 शिरो रक्षेन्मुखं वै धरणीसुतः । श्रवौ रक्तांबरः पातु नेत्रे मे रक्त-
 लोचनः ॥ २ ॥ नासां शक्तिधरः पातु मुखं मे रक्तलोचनः । भुजौ
 मे रक्तमाली च हस्तौ शक्तिधरस्तथा ॥ ३ ॥ वक्षः पातु वरांगश्च
 हृदयं पातु रोहितः । कटिं मे ग्रहराजश्च मुखं चैव धरासुतः ॥ ४ ॥
 जानुजंघे कुजः पातु पादौ भक्तप्रियः सदा । सर्वाण्यन्यानि चांगानि
 रक्षेन्मे मेषवाहनः ॥ ५ ॥ य इदं कवचं दिव्यं सर्वशत्रुनिवारणम् ।
 भूतप्रेतपिशाचानां नाशनं सर्वसिद्धिदम् ॥ ६ ॥ सर्वरोगहरं चैव
 सर्वसंपत्प्रदं शुभम् । भुक्तिमुक्तिप्रदं नृणां सर्वसौभाग्यवर्धनम् ।
 रोगबंधविमोक्षं च सत्यमेतन्न संशयः ॥ ७ ॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे
 मङ्गलकवचं संपूर्णम् ॥

३४०. बुधपञ्चविंशतिनामस्तोत्रम् ।



श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीबुधपञ्चविंशतिनामस्तोत्रस्य प्रजा-
पतिर्ऋषिः, त्रिष्टुप् छन्दः, बुधो देवता, बुधप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥
बुधो बुद्धिमतां श्रेष्ठो बुद्धिदाता धनप्रदः । प्रियङ्गुकलिकाश्यामः
कञ्जनेत्रो मनोहरः ॥ १ ॥ ग्रहोपमो रौहिणेयो नक्षत्रेशो दयाकरः ।
विरुद्धकार्यहन्ता च सौम्यो बुद्धिविवर्धनः ॥ २ ॥ चन्द्रात्मजो
विष्णुरूपी ज्ञानी ज्ञो ज्ञानिनायकः । ग्रहपीडाहरो दारपुत्रधान्यपशु-
प्रदः ॥ २ ॥ लोकप्रियः सौम्यमूर्तिर्गुणदो गुणिवत्सलः । पञ्चविंशति-
नामानि बुधस्यैतानि यः पठेत् ॥ ४ ॥ स्मृत्वा बुधं सदा तस्य पीडा
सर्वा विनश्यति । तद्दिने वा पठेद्यस्तु लभते स मनोगतम् ॥ ५ ॥
इति श्रीपद्मपुराणे बुधपञ्चविंशतिनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३४१. बुधकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीबुधकवचस्तोत्रमंत्रस्य कश्यप ऋषिः,
अनुष्टुप् छन्दः, बुधो देवता, बुधप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥ बुधस्तु
पुस्तकधरः कुंकुमस्य समद्युतिः । पीतांबरधरः पातु पीतमाल्यानु-

लेपनः ॥ १ ॥ कटिं च पातु मे सौम्यः शिरोदेशं बुधस्तथा । नेत्रे
 ज्ञानमयः पातु श्रोत्रे पातु निशाप्रियः ॥ २ ॥ घ्राणं गंधप्रियः पातु
 जिह्वां विद्याप्रदो मम । कंठं पातु विधोः पुत्रो भुजौ पुस्तकभूषणः
 ॥ ३ ॥ वक्षः पातु वरांगश्च हृदयं रोहिणीसुतः । नाभिं पातु सुरा-
 राध्यो मध्यं पातु खगेश्वरः ॥ ४ ॥ जानुनी रौहिणेयश्च पातु जंघे-
 ऽखिलप्रदः । पादौ मे बोधनः पातु पातु सौम्योऽखिलं वपुः ॥ ५ ॥
 एतद्धि कवचं दिव्यं सर्वपापप्रणाशनम् । सर्वरोगप्रशमनं सर्वदुःख-
 निवारणम् ॥ ६ ॥ आयुरारोग्यशुभदं पुत्रपौत्रप्रवर्धनम् । यः पठे-
 च्छृणुयाद्वापि सर्वत्र विजयी भवेत् ॥ ७ ॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणे
 बुधकवचं संपूर्णम् ॥

३४२. बृहस्पतिस्तोत्रम् ।



श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीबृहस्पतिस्तोत्रस्य गृत्समद ऋषिः,
 अनुष्टुप् छन्दः, बृहस्पतिर्देवता, बृहस्पतिप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥
 गुरुर्बृहस्पतिर्जीवः सुराचार्यो विदांवरः । वागीशो धिषणो दीर्घश्मश्रुः
 पीताम्बरो युवा ॥ १ ॥ सुधादृष्टिर्ग्रहाधीशो ग्रहपीडापहारकः ।

दयाकरः सौम्यमूर्तिः सुरार्च्यः कुञ्जलद्युतिः ॥ २ ॥ लोकपूज्यो
लोकगुरुर्नीतिज्ञो नीतिकारकः । तारापतिश्चाङ्गिरसो वेदवैद्यपिता-
महः ॥ ३ ॥ भक्त्या बृहस्पतिं स्मृत्वा नामान्येतानि यः पठेत् ।
अरोगी बलवान् श्रीमान् पुत्रवान् स भवेन्नरः ॥ ४ ॥ जीवेद्वर्ष-
शतं मर्त्यो पापं नश्यति नश्यति । यः पूजयेद्गुरुदिने पीतगन्धा-
क्षताम्बरैः ॥ ५ ॥ पुष्पदीपोपहारैश्च पूजयित्वा बृहस्पतिम् । ब्राह्मणा-
न्भोजयित्वा च पीडाशान्तिर्भवेद्गुरोः ॥ ६ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे
बृहस्पतिस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३४३. बृहस्पतिकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीबृहस्पतिकवचस्तोत्रमंत्रस्य ईश्वर
ऋषिः, अनुष्टुप् छंदः, गुरुर्देवता, गं बीजं, श्रीशक्तिः, क्लीं
कीलकं, गुरुप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥ अभीष्टफलदं देवं सर्वज्ञं
सुरपूजितम् । अक्षमालाधरं शांतं प्रणमामि बृहस्पतिम् ॥ १ ॥
बृहस्पतिः शिरः पातु ललाटं पातु मे गुरुः । कर्णौ सुरगुरुः पातु
नेत्रे मेऽभीष्टदायकः ॥ २ ॥ जिह्वां पातु सुराचार्यो नासां मे
वेदपारगः । मुखं मे पातु सर्वज्ञो कंठं मे देवतागुरुः ॥ ३ ॥
भुजावांगिरसः पातु करौ पातु शुभप्रदः । स्तनौ मे पातु वागीशः
कुक्षिं मे शुभलक्षणः ॥ ४ ॥ नाभिं देवगुरुः पातु मध्यं पातु
सुखप्रदः । कटिं पातु जगद्गुरु ऊरु मे पातु वाक्पतिः ॥ ५ ॥
जानुजंघे सुराचार्यो पादौ विश्वात्मकस्तथा । अन्यानि यानि चांगानि
रक्षेन्मे सर्वतो गुरुः ॥ ६ ॥ इत्येतत्कवचं दिव्यं त्रिसंध्यं यः पठेन्नरः ।
सर्वान्कामानवाप्नोति सर्वत्र विजयी भवेत् ॥ ७ ॥ इति श्रीब्रह्मयाम-
लोकं बृहस्पतिकवचं संपूर्णम् ॥

३४४. शुक्रस्तवराजः ।



श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीशुक्रस्तवराजस्य प्रजापतिर्ऋषिः,
 अनुष्टुप् छन्दः, शुक्रो देवता, शुक्रप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥
 नमस्ते भार्गवश्रेष्ठ दैत्यदानवपूजित । वृष्टिरोधप्रकर्त्रे च वृष्टिकर्त्रे
 नमो नमः ॥ १ ॥ देवयानिपितस्तुभ्यं वेदवेदांगपारग । परेण
 तपसा शुद्धः शंकरो लोकसुन्दरः ॥ २ ॥ प्राप्तो विद्यां जीवनाख्यां
 तस्मै शुक्रात्मने नमः । नमस्तस्मै भगवते भृगुपुत्राय वेधसे ॥ ३ ॥
 तारामण्डलमध्यस्थ स्वभासाभासितांबर । यस्योदये जगत्सर्वं
 मंगलार्हं भवेदिह ॥ ४ ॥ अस्तं याते ह्यरिष्टं स्यात्तस्मै मंगल-
 रूपिणे । त्रिपुरावासिनो दैत्यान् शिवबाणप्रपीडितान् ॥ ५ ॥
 विद्ययाऽजीवयच्छुक्रो नमस्ते भृगुनन्दन । ययातिगुरवे तुभ्यं नमस्ते
 कविनन्दन ॥ ६ ॥ बलिराज्यप्रदो जीवस्तस्मै जीवात्मने नमः ।
 भार्गवाय नमस्तुभ्यं पूर्वगीर्वाणवंदित ॥ ७ ॥ जीवपुत्राय यो
 विद्यां प्रादात्तस्मै नमो नमः । नमः शुक्राय काव्याय भृगुपुत्राय
 धीमहि ॥ ८ ॥ नमः कारणरूपाय नमस्ते कारणात्मने । स्तवराजमिमं

पुण्यं भार्गवस्य महात्मनः ॥ ९ ॥ यः पठेच्छृणुयाद्वापि लभते
 वाञ्छितं फलम् । पुत्रकामो लभेत्पुत्रान् श्रीकामो लभते श्रियम्
 ॥ १० ॥ राज्यकामो लभेद्राज्यं स्त्रीकामः स्त्रियमुत्तमाम् । भृगुवारे
 प्रयत्नेन पठितव्यं समाहितैः ॥ ११ ॥ अन्यवारे तु होरायां पूजयेद्भृगु-
 नन्दनम् । रोगार्तो मुच्यते रोगाद्भयार्तो मुच्यते भयात् ॥ १२ ॥
 यद्यत्प्रार्थयते जन्तुस्तत्तत्प्राप्नोति सर्वदा । प्रातःकाले प्रकर्तव्या
 भृगुपूजा प्रयत्नतः । सर्वपापविनिर्मुक्तः प्राप्नुयाच्छिवसन्निधिम् ॥ १३ ॥
 इति श्रीब्रह्मयामले शुक्रस्तवराजः संपूर्णः ॥

३४५. शुक्रकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मृणालकुन्देन्दुपयोजसुप्रभं पीतांबरं प्रसूत-
 मक्षमालिनम् ॥ समस्तशास्त्रार्थविधिं महान्तं ध्यायेत्कविं वाञ्छित-
 मर्थसिद्धये ॥ १ ॥ ॐ शिरो मे भार्गवः पातु भालं पातु ग्रहाधिपः ।
 नेत्रे दैत्यगुरुः पातु श्रोत्रे मे चन्दनद्युतिः ॥ २ ॥ पातु मे नासिकां
 काव्यो वदनं दैत्यवन्दितः । वचनं चोशनाः पातु कंठं श्रीकंठ-
 भक्तिमान् ॥ ३ ॥ भुजौ तेजोनिधिः पातु कुक्षिं पातु मनोव्रजः ।
 नाभिं भृगुसुतः पातु मध्यं पातु महीप्रियः ॥ ४ ॥ कटिं मे पातु
 विश्वात्मा ऊरू मे सुरपूजितः । जानुं जाड्यहरः पातु जंघे ज्ञान-
 वतां वरः ॥ ५ ॥ गुल्फौ गुणनिधिः पातु पातु पादौ वरांबरः ।
 सर्वाण्यंगानि मे पातु स्वर्णमालापरिष्कृतः ॥ ६ ॥ य इदं कवचं
 दिव्यं पठति श्रद्धयान्वितः । न तस्य जायते पीडा भार्गवस्य प्रसा-
 दतः ॥ ७ ॥ इति श्रीब्रह्मांडपुराणे शुक्रकवचं संपूर्णम् ॥



३४६. शनैश्वरस्तवराजः ।



श्रीगणेशाय नमः ॥ नारद उवाच ॥ ध्यात्वा गणपतिं राजा धर्मराजो
 युधिष्ठिरः । धीरः शनैश्वरस्येमं चकार स्तवमुत्तमम् ॥ १ ॥ शिरो मे
 भास्करिः पातु भालं छायासुतोऽवतु । कोटराक्षो दृशौ पातु शिखि-
 कण्ठनिभः श्रुती ॥ २ ॥ घ्राणं मे भीषणः पातु मुखं बलिमुखोऽवतु ।
 स्कन्धौ संवर्तकः पातु भुजौ मे भयदोऽवतु ॥ ३ ॥ सौरिर्मे हृदयं
 पातु नाभिं शनैश्वरोऽवतु । ग्रहराजः कटिं पातु सर्वतो रविनन्दनः
 ॥ ४ ॥ पादौ मन्दगतिः पातु कृष्णः पात्वखिलं वपुः । रक्षामेतां
 पठेन्नित्यं सौरिर्नामबलैर्युताम् ॥ ५ ॥ सुखी पुत्री चिरायुश्च स
 भवेन्नात्र संशयः । सौरिः शनैश्वरः कृष्णो नीलोत्पलनिभः शनिः
 ॥ ६ ॥ शुष्कोदरो विशालाक्षो दुर्निरीक्ष्यो विभीषणः । शिखि-
 कण्ठनिभो नीलदृष्टाहृदयनन्दनः ॥ ७ ॥ कालदृष्टिः कोटराक्षः
 स्थूलरोमावलीमुखः । दीर्घो निर्मासगात्रस्तु शुष्को घोरो भयानकः
 ॥ ८ ॥ नीलांशुः क्रोधनो रौद्रो दीर्घश्मश्रुर्जटाधरः । मन्दो मन्द-
 गतिः खंजो तृप्तः संवर्तको यमः ॥ ९ ॥ ग्रहराजः कराली च सूर्य-

पुत्रो रविः शशी । कुजो बुधो गुरुः काव्यो भानुजः सिंहिकासुतः
 ॥ १० ॥ केतुर्देवपतिर्बाहुः कृतान्तो नैर्ऋतस्तथा । शशी मरुत
 कुबेरश्च ईशानः सुर आत्मभूः ॥ ११ ॥ विष्णुर्हरो गणपतिः
 कुमारः काम ईश्वरः । कर्ता हर्ता पालयिता राज्येशो राज्यदायकः
 ॥ १२ ॥ छायासुतः श्यामलाङ्गो धनहर्ता धनप्रदः । क्रूरकर्म-
 विधाता च सर्वकर्मवरोधकः ॥ १३ ॥ तुष्टो रुष्टः कामरूपः
 कामदो रविनन्दनः । ग्रहपीडाहरः शान्तो नक्षत्रेशो ग्रहेश्वरः
 ॥ १४ ॥ स्थिरासनः स्थिरगतिर्महाकायो महाबलः । महाप्रभो
 महाकालः कालात्मा कालकालकः १५ ॥ आदित्यभयदाता च
 मृत्युरादित्यनन्दनः । शतभिरुक्षदयिता त्रयोदशीतिथिप्रियः
 ॥ १६ ॥ तिथ्यात्मकस्तिथिगणो नक्षत्रगणनायकः । योगराशिर्मुहू-
 र्तात्मा कर्ता दिनपतिः प्रभुः ॥ १७ ॥ शमीपुष्पप्रियः श्यामस्त्रैलो-
 क्यभयदायकः । नीलवासाः क्रियासिन्धुर्नीलाञ्जनचयच्छविः
 ॥ १८ ॥ सर्वरोगहरो देवः सिद्धो देवगणस्तुतः । अष्टोत्तरशतं
 नाम्नां सौरेश्छायासुतस्य यः ॥ १९ ॥ पठेन्नित्यं तस्य पीडा समस्ता
 नश्यति ध्रुवम् । कृत्वा पूजां पठेन्मर्त्यो भक्तिमान् यः स्तवं सदा
 ॥ २० ॥ विशेषतः शनिदिने पीडा तस्य विनश्यति । जन्मलप्ते
 स्थितिर्वापि गोचरे क्रूरराशिगे ॥ २१ ॥ दशासु च गते सौरौ तदा
 स्तवमिमं पठेत् । पूजयेद्यः शनिं भक्त्या शमीपुष्पाक्षताम्बरैः
 ॥ २२ ॥ विधाय लोहप्रतिमां नरो दुःखाद्विमुच्यते । बाधा याऽन्य-
 ग्रहाणां च यः पठेत्तस्य नश्यति ॥ २३ ॥ भीतो भयाद्विमुच्येत
 बद्धो मुच्येत बन्धनात् । रोगी रोगाद्विमुच्येत नरः स्तवमिमं
 पठेत् । पुत्रवान् धनवान् श्रीमान् जायते नात्र संशयः ॥ २४ ॥

नारद उवाच ॥ स्तवं निशम्य पार्थस्य प्रत्यक्षोऽभूत् शनैश्वरः ।
दत्त्वा राज्ञे वरः कामं शनिश्चान्तर्दधे तदा ॥ २५ ॥ इति श्रीभविष्य-
पुराणे शनैश्वरस्तवराजः संपूर्णः ॥

३४७. शनैश्वरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ दशरथ उवाच ॥ कोणोऽन्तको रौद्रयमोऽथ
बभ्रुः कृष्णः शनिः पिङ्गलमन्दसौरिः । नित्यं स्मृतो यो हरते च
पीडां तस्मै नमः श्रीरचितन्दनाय ॥ १ ॥ सुरासुराः किंपुरुषोरगेन्द्रा
गन्धर्वविद्याधरपन्नगाश्च । पीडयन्ति सर्वे विषमस्थितेन तस्मै ॥ २ ॥
नरा नरेन्द्राः पशवो मृगेन्द्रा वन्याश्च ये कीटपतङ्गभृङ्गाः । पीडयन्ति
सर्वे विषमस्थितेन तस्मै ॥ ३ ॥ देशाश्च दुर्गाणि वनानि यत्र
सेनानिवेशाः पुरपत्तनानि । पीडयन्ति सर्वे विषमस्थितेन तस्मै ॥
४ ॥ तिलैर्यवैर्माम्बुगुडान्नदानैर्लोहेन नीलाम्बरदानतो वा । प्रीणाति
मन्त्रैर्निजवासरे च तस्मै ॥ ५ ॥ प्रयागकूले यमुनातटे च
सरस्वतीपुण्यजले गुहायाम् । यो योगिनां ध्यानगतोऽपि सूक्ष्म-
स्तस्मै ॥ ६ ॥ अन्यप्रदेशात्स्वगृहं प्रविष्टस्तदीयवारे स नरः सुखी
स्यात् । गृहाद्गतो यो न पुनः प्रयाति तस्मै ॥ ७ ॥ स्रष्टा स्वयंभू-
र्भुवनत्रयस्य त्राता हरीशो हरते पिनाकी । एकस्त्रिधा ऋग्यजुःसाम-
मूर्तिस्तस्मै ॥ ८ ॥ शन्यष्टकं यः प्रयतः प्रभाते नित्यं सुपुत्रैः
पशुबान्धवैश्च । पठेत्तु सौख्यं भुवि भोगयुक्तः प्राप्नोति निर्वाणपदं
तदन्ते ॥ ९ ॥ कोणस्थः पिङ्गलो बभ्रुः कृष्णो रौद्रोऽन्तको यमः ।
सौरिः शनैश्वरो मन्दः पिप्पलादेन संस्तुतः ॥ १० ॥ एतानि दश
नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् । शनैश्वरकृता पीडा न कदाचिद्भवि-
ष्यति ॥ ११ ॥ इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे श्रीशनैश्वरस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३४८. शनिवज्रपञ्जरकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नीलांबरो नीलवपुः किरीटी गृध्रस्थितस्त्रा-
 सकरो धनुष्मान् । चतुर्भुजः सूर्यसुतः प्रसन्नः सदा मम स्याद्भरदः
 प्रशान्तः ॥ १ ॥ ब्रह्मा उवाच ॥ शृणुध्वमृषयः सर्वे शनिपीडाहरं
 महत् । कवचं शनिराजस्य सौरेरिदमनुत्तमम् ॥ २ ॥ कवचं देव-
 तावासं वज्रपंजरसंज्ञकम् । शनैश्चरप्रीतिकरं सर्वसौभाग्यदायकम् ।
 ॥ ३ ॥ ॐ श्रीशनैश्चरः पातु भालं मे सूर्यनंदनः । नेत्रे छायात्मजः
 पातु पातु कर्णौ यमानुजः ॥ ४ ॥ नासां वैवस्वतः पातु मुखं मे
 भास्करः सदा । स्निग्धकंठश्च मे कंठं भुजौ पातु महाभुजः ॥ ५ ॥
 स्कंधौ पातु शनिश्चैव करौ पातु शुभप्रदः । वक्षः पातु यमभ्राता
 कुक्षिं पात्वसितस्तथा ॥ ६ ॥ नाभिं ग्रहेपतिः पातु मंदः पातु
 कटिं तथा । ऊरु ममांतकः पातु यमो जानुयुगं तथा ॥ ७ ॥
 पादौ मंदगतिः पातु सर्वांगं पातु पिप्पलः । अङ्गोपाङ्गानि सर्वाणि
 रक्षेन् मे सूर्यनंदनः ॥ ८ ॥ इत्येतत्कवचं दिव्यं पठेत्सूर्यसुतस्य यः ।
 न तस्य जायते पीडा प्रीतो भवति सूर्यजः ॥ ९ ॥ व्ययजन्म-
 द्वितीयस्थो मृत्युस्थानगतोऽपि वा । कलत्रस्थो गतो वापि सुप्रीतस्तु
 सदा शनिः ॥ १० ॥ अष्टमस्थे सूर्यसुते व्यये जन्मद्वितीयगे ।
 कवचं पठते नित्यं न पीडा जायते क्वचित् ॥ ११ ॥ इत्येतत्कवचं
 दिव्यं सौरेर्यन्निर्मितं पुरा । द्वादशाष्टमजन्मस्थदोषान्नाशयते सदा ।
 जन्मलग्नस्थितान् दोषान् सर्वान्नाशयते प्रभुः ॥ १२ ॥ इति
 श्रीब्रह्मांडपुराणे ब्रह्मनारदसंवादे शनिवज्रपंजरकवचं संपूर्णम् ॥



३४९. राहुस्तोत्रम् ।



श्रीगणेशाय नमः ॥ राहुर्दानवमन्त्री च सिंहिकाचित्तनन्दनः ।
 अर्धकायः सदाक्रोधी चन्द्रादित्यविमर्दनः ॥ १ ॥ रौद्रो रुद्रप्रियो
 दैत्यः स्वर्भानुर्भानुभीतिदः । ग्रहराजः सुधापायी राकातिथ्यभिला-
 पुकः ॥ २ ॥ कालदृष्टिः कालरूपः श्रीकण्ठहृदयाश्रयः । विधुंतुदः
 सैहिकेयो घोररूपो महाबलः ॥ ३ ॥ ग्रहपीडाकरो दंष्ट्री रक्तनेत्रो
 महोदरः । पञ्चविंशतिनामानि स्मृत्वा राहुं सदा नरः ॥ ४ ॥ यः
 पठेन्महती पीडा तस्य नश्यति केवलम् । आरोग्यं पुत्रमतुलां श्रियं
 धान्यं पशूस्तथा ॥ ५ ॥ ददाति राहुस्तस्मै यः पठते स्तोत्रमुत्तमम् ।
 सततं पठते यस्तु जीवेद्वर्षशतं नरः ॥ ६ ॥ इति श्रीस्कंदपुराणे
 राहुस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३५०. राहुकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्रणमामि सदा राहुं शूर्पाकारं किरीटिनम् ।
 सैहिकेयं करालाख्यं लोकानामभयप्रदम् ॥ १ ॥ नीलांबरः शिरः
 पातु ललाटं लोकवंदितः । चक्षुषी पातु मे राहुः श्रोत्रे त्वर्धशरीर-
 वान् ॥ २ ॥ नासिकां मे धूम्रवर्णः शूलपाणिर्मुखं मम । जिह्वां मे
 सिंहिकासूनुः कंठं मे कटिनांघ्रिकः ॥ ३ ॥ भुजंगेशो भुजौ पातु

नीलमाल्याम्बरः करौ । पातु वक्षःस्थलं मंत्री पातु कुक्षिं विधुंतुदः
॥ ४ ॥ कटिं मे विकटः पातु ऊरू मे सुरपूजितः । स्वर्भानुर्जानुनी
पातु जंघे मे पातु जाड्यहा ॥ ५ ॥ गुल्फौ ग्रहपतिः पातु पादौ मे
भीषणाकृतिः । सर्वाण्यंगानि मे पातु नीलचन्दनभूषणः ॥ ६ ॥
राहोरिदं कवचमृद्धिदवस्तुदं यो भक्त्या पठत्यनुदिनं नियतः शुचिः
सन् । प्राप्नोति कीर्तिमतुलं श्रियमृद्धिमायुरारोग्यमात्मविजयं च हि
तत्प्रसादात् ॥ ७ ॥ इति श्रीमहाभारते धृतराष्ट्रसंजयसंवादे द्रोणपर्वणि
राहुकवचं संपूर्णम् ॥

३५१. केतुपञ्चविंशतिनामस्तोत्रम् ।



श्रीगणेशाय नमः ॥ केतुः कालः कलयिता धूम्रकेतुर्विवर्णकः ।
लोककेतुर्महाकेतुः सर्वकेतुर्भयप्रदः ॥ १ ॥ रौद्रो रुद्रप्रियो रुद्रः
क्रूरकर्मा सुगन्धधृक् । पलाशधूमसंकाशश्चित्रयज्ञोपवीतधृक् ॥ २ ॥
तारागणविमर्दी च जैमिनेयो ग्रहाधिपः । पञ्चविंशतिनामानि केतोर्यः
सततं पठेत् ॥ ३ ॥ तस्य नश्यति बाधा च सर्वकेतुप्रसादनः ।
धनधान्यपशूनां च भवेद्बुद्धिर्न संशयः ॥ ४ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे
केतोः पञ्चविंशतिनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३४९. राहुस्तोत्रम् ।



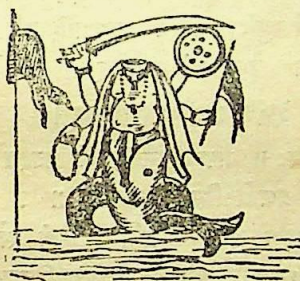
श्रीगणेशाय नमः ॥ राहुर्दानवमन्त्री च सिंहिकाचित्तनन्दनः ।
 अर्धकायः सदाक्रोधी चन्द्रादित्यविमर्दनः ॥ १ ॥ रौद्रो रुद्रप्रियो
 दैत्यः स्वर्भानुर्भानुभीतिदः । ग्रहराजः सुधापायी राकातिथ्यभिला-
 पुकः ॥ २ ॥ कालदृष्टिः कालरूपः श्रीकण्ठहृदयाश्रयः । विधुंतुदः
 सैहिकेयो घोररूपो महाबलः ॥ ३ ॥ ग्रहपीडाकरो दंष्ट्री रक्तनेत्रो
 महोदरः । पञ्चविंशतिनामानि स्मृत्वा राहुं सदा नरः ॥ ४ ॥ यः
 पठेन्महती पीडा तस्य नश्यति केवलम् । आरोग्यं पुत्रमतुलां श्रियं
 धान्यं पशूस्तथा ॥ ५ ॥ ददाति राहुस्तस्मै यः पठते स्तोत्रमुत्तमम् ।
 सततं पठते यस्तु जीवेद्वर्षशतं नरः ॥ ६ ॥ इति श्रीस्कंदपुराणे
 राहुस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३५०. राहुकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्रणमामि सदा राहुं शूर्पाकारं किरीटिनम् ।
 सैहिकेयं करालाखं लोकानामभयप्रदम् ॥ १ ॥ नीलांबरः शिरः
 पातु ललाटे लोकवंदितः । चक्षुषी पातु मे राहुः श्रोत्रे त्वर्धशरीर-
 वान् ॥ २ ॥ नासिकां मे धूम्रवर्णः शूलपाणिर्मुखं मम । जिह्वां मे
 सिंहिकासूनुः कंठं मे कठिनांग्रिकः ॥ ३ ॥ भुजंगेशो भुजौ पातु

नीलमाल्याम्बरः करौ । पातु वक्षःस्थलं मंत्री पातु कुक्षिं विधुंतुदः
॥ ४ ॥ कटिं मे विकटः पातु ऊरू मे सुरपूजितः । स्वर्भानुर्जानुनी
पातु जंघे मे पातु जाड्यहा ॥ ५ ॥ गुल्फौ ग्रहपतिः पातु पादौ मे
भीषणाकृतिः । सर्वाण्यंगानि मे पातु नीलचन्दनभूषणः ॥ ६ ॥
राहोरिदं कवचमृद्धिदवस्तुदं यो भक्त्या पठत्यनुदिनं नियतः शुचिः
सन् । प्राप्नोति कीर्तिमतुलं श्रियमृद्धिमायुरारोग्यमात्मविजयं च हि
तत्प्रसादात् ॥ ७ ॥ इति श्रीमहाभारते धृतराष्ट्रसंजयसंवादे द्रोणपर्वणि
राहुकवचं संपूर्णम् ॥

३५१. केतुपञ्चविंशतिनामस्तोत्रम् ।



श्रीगणेशाय नमः ॥ केतुः कालः कलयिता धूम्रकेतुर्विवर्णकः ।
लोककेतुर्महाकेतुः सर्वकेतुर्भयप्रदः ॥ १ ॥ रौद्रो रुद्रप्रियो रुद्रः
क्रूरकर्मा सुगन्धधृक् । पलाशधूमसंकाशश्चित्रयज्ञोपवीतधृक् ॥ २ ॥
तारागणविमर्दी च जैमिनेयो ग्रहाधिपः । पञ्चविंशतिनामानि केतोर्यः
सततं पठेत् ॥ ३ ॥ तस्य नश्यति बाधा च सर्वकेतुप्रसादनः ।
धनधान्यपशूनां च भवेद्बुद्धिर्न संशयः ॥ ४ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे
केतोः पञ्चविंशतिनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३५२. केतुकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ केतुं करालवदनं चित्रवर्णं किरीटिनम् ।
 प्रणमामि सदा केतुं ध्वजाकारं ग्रहेश्वरम् ॥ १ ॥ चित्रवर्णः शिरः
 पातु भालं धूम्रसमद्युतिः । पातु नेत्रे पिंगलाक्षः श्रुती मे रक्त-
 लोचनः ॥ २ ॥ घ्राणं पातु सुवर्णाभश्चिबुकं सिंहिकासुतः । पातु
 कंठं च मे केतुः स्कंधौ पातु ग्रहाधिपः ॥ ३ ॥ हस्तौ पातु सुरश्रेष्ठः
 कुक्षिं पातु महाग्रहः । सिंहासनः कटिं पातु मध्यं पातु महासुरः
 ॥ ४ ॥ ऊरू पातु महाशीर्षो जानुनी मेऽतिकोपनः । पातु पादौ च
 मे क्रूरः सर्वाङ्गं नरपिंगलः ॥ ५ ॥ य इदं कवचं दिव्यं सर्वरोग-
 विनाशनम् । सर्वशत्रुविनाशं च धारणाद्विजयी भवेत् ॥ ६ ॥
 इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे केतुकवचं संपूर्णम् ॥

३५३. नवग्रहस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जपाकुसुमसंकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम् ।
 तमोरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ॥ १ ॥ दधिशङ्खतुषा-
 राभं क्षीरोदार्यवसम्भवम् । नमामि शशिनं सोमं शम्भोर्मुकुट-
 भूषणम् ॥ २ ॥ धरणीगर्भसंभूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम् । कुमारं
 शक्तिहस्तं तं मङ्गलं प्रणमाम्यहम् ॥ ३ ॥ प्रियङ्गुकलिकाश्यामं
 रूपेणाप्रतिमं बुधम् । सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम्
 ॥ ४ ॥ देवानां च ऋषीणां च गुरुं काञ्चनसंनिभम् । बुद्धिभूतं
 त्रिलोकेशं तं नमामि बृहस्पतिम् ॥ ५ ॥ हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां
 परमं गुरुम् । सर्वशास्त्रप्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम् ॥ ६ ॥
 नीलाञ्जनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् । छायामार्तडसंभूतं तं नमामि
 शनैश्वरम् ॥ ७ ॥ अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम् ।

३५. दत्तलहरिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ दत्तादन ऋषिरुवाच ॥ विभुर्नित्यानन्दः
 श्रुतिगणशिरोवेद्यमहिमा यतो जन्माद्यस्य प्रभवति स मायागुणवतः ।
 सदाधारः सत्यो जयति पुरुषार्थैकफलदः, सदा दत्तात्रेयो विहरति
 मुदा ज्ञानलहरिः ॥ १ ॥ हरीशब्रह्माणः पदकमलपूजां विदधते
 जगद्रक्षाशिक्षाजननकरणे ते ह्यधिकृताः । अभूवन्निद्राद्या हरिदधिपतां
 देवमुनयः परं तत्त्वं प्रापुः शशिदिनकरौ ज्योतिरमलम् ॥ २ ॥ परं
 ज्योतिर्मूर्ते तत्र रुचिरतेजःकलरवाजगद्याप्येदानीं तपनशशितारा
 हुतभुजः । महातेजःपुंजाः सकलजगदाराध्यचरिताश्चरत्येवं लोकान्नत-
 जनमनोभीष्टफलदाः ॥ ३ ॥ भवन्मायारूपं जगदखिलजीवात्मकमिदं
 भवद्रूपं प्राहुर्निखिलनिगमांतश्रुतिचयाः । त्वया सृष्टं चादौ हतम-
 वितमेतत्तदधुना प्रभावं ते वेत्तुं प्रभवति जनः कोऽवनितले ॥ ४ ॥
 कृपासिंधो तावज्जनुरजननस्याप्यकथिते जगद्रक्षादीक्षा भवति खलु
 नो चेत्कथमिदम् । अनीहस्याऽकर्तुस्तत्र जगति कर्मोपकृतये प्रमाणी-
 कर्तुं वा स्वकृतनिगमार्थानिति मतिः ॥ ५ ॥ महाविद्यारूपे भगवति
 निबद्धत्वमुचितं हृदा वाचाऽगम्ये परमपि विमुह्यन्ति कवयः ।
 अविद्यातीतः किं यदि गुणविहीनोऽपि गुणवानविद्यायुक्तोऽयं त्विति
 वदति मायामुषितधीः ॥ ६ ॥ भवानादौ यादोनरमृगखगाश्चादिक-
 तनूर्धिधत्ते लोकानामवनकृतिहेतोरनुयुगम् । विशुद्धस्त्वं लीलानरवपु-
 रिदानीमटसि गां पवित्रीकर्तुं वा परिजननिवासांगणतलम् ॥ ७ ॥
 जगद्रक्षार्थं वा विचरसि जगत्यात्मजनतापरित्राणायाद्यः परमपुरुषो-
 ऽगम्यचरितः । मृपालोको लोको वदति मनुजत्वं तदधुना यथा श्रीकृष्णं
 त्वां यदुपु ब्रुवते मूढमतयः ॥ ८ ॥ महायोगाधीशैरविदितमहायोग-
 चतुरं कथं जानन्ति त्वां कुटिलमतयो मादृशजनाः । तथापि त्वां जाने

तव पदयुगांभोजभजनान्न चेत्त्वत्पादाब्जस्मृतिविषयवाणी कथमभूत्
 ॥ ९ ॥ अपारे संसारे सुतहितकलत्रादिभरणाद्युपाधौ भग्नास्तत्तरण-
 करणोपायरहिताः । पतन्ति त्वत्पादांबुजशृङ्गलसेवासु विमुखा नराः
 पापात्मानः प्रवरनरके शोकनिलये ॥ १० ॥ सुधासिंधौ द्वीपे
 कनकतलिते कल्पकवने वितानैर्मुक्ताढ्यैर्नवमणिमये मंडपवरे ।
 अशेषैर्माणिक्यैः खचितहरिपीठेऽब्जकुहरे हुताशारे ध्यायेत्तव परम-
 मूर्तिं निखिलदाम् ॥ ११ ॥ धराधाराधारे हुतवहपुरेधीशगणपं विधिं
 श्रीशेषौ वानलपवनव्योमानि हृदये । युतौ जीवात्मानावधिकमव-
 मत्या प्रविशते विधत्ते ज्यायस्त्वं परकलितवामेन वपुषा ॥ १२ ॥
 सहस्रारे नीरेरुहि सकलशीतांशुललिते सहंसे हंसं यः स्फुटमपि
 भवंतं कलयते । सुपुष्पावर्तिन्या तव चरणपीठेन्दुसुधयाऽऽश्रुतो भित्त्वा
 ग्रंथित्रयममृतरूपो विचरति ॥ १३ ॥ तवाधारे शक्तिक्षितिकमठ-
 कर्माद्यभिवृते महापीठे वैश्वानरपुरमरुद्देहनिलये । धराव्योमाकल्पे
 सुरमुनिमहेंद्राद्यभिनुतं महातेजोराशिं निगमनिलयं नौमि हृदये
 ॥ १४ ॥ भवत्पादांभोजं भवजलधिपोतं भजति यो महासंसाराब्धिं
 तरति तरतीत्येव निगमः । इहामुत्र त्रातुं तव चरणमेवात्मशरणं
 भजे भीतश्चाहंकृतिपरमनस्कोऽयमधुना ॥ १५ ॥ यथा दारुण्वग्नि-
 र्निवसति तथा देहनिकरे प्रविश्य त्वं चैको बहुविध इवाभासि
 भगवन् । चलन्तीरे चंद्रः शतविध इवाभाति गुणतो न चैतच्चंद्रे
 स्यान्न शतविधता नापि चलनम् ॥ १६ ॥ दरिद्रो वा मूढः कठिन-
 हृदयो वापि भवतां दयापात्रं स्याच्चेद्भजति महतामप्यधिकताम् । न
 विद्या रूपं वा न कुलमपि वा कारणमभून्महत्त्वे सेवैका तव पद-
 युगांभोजकलना ॥ १७ ॥ न ते कारुण्यं स्यात्सकलगुणवानप्यगुणवान्
 भवत्कारुण्यं स्यादगुणगणपो वोरुगुणवान् । यथा पत्न्यौ रक्ते यदपि

च विरक्ते तु युवतौ वृथा सौंदर्यं स्यात्सकलमपि तेऽनुग्रहवशात्
 ॥ १८ ॥ अनाथे दीने मय्यधिगतभवत्पादशरणे शरण्य ब्रह्मण्यप्रथि-
 तगुणासिंधो कुरु दयाम् । महातेजोवार्धे स्वसुकृतमहिम्नैव सततं पुरा-
 पुण्यैर्हीनं पुरुषमुपकुर्वति कृतिनः ॥ १९ ॥ महाश्वेतद्वीपेऽमरतरु-
 गणालयंतरुचिरे मणेः पीठाभोजेऽनलशशिखगांतर्निवसितम् । गदाचक्रा-
 ब्जासिप्रसृतकरपद्मं मुररिपुं स धन्यस्त्वां ध्यायेत्परतरचिदानंदवपुषम्
 ॥ २० ॥ लसन्मेरोः शृंगे सुरमणिमये कल्पकतरुप्रकीर्णे वाक्पीठे
 रविशशिकराकीर्णजलजे । स्थितं वाचाधीशैर्नुतमनुदिनं त्वां भजति
 यो भवेद्वाणीशानामपि गुरुरजेयोऽवन्तिले ॥ २१ ॥ समुद्यद्वालाकां-
 युतनिभशरीरं मुनिवरं स्थितं वीजे मारे त्रिदशपतिगोपातिरुचिरे ।
 हृदि त्वां यः पंचायुधकरमिति ध्यायति सदा स एवाहं नूनं स भवति
 जगन्मोहनकरः ॥ २२ ॥ निधिर्विश्वेषां त्वं निजचरणपद्मद्वयवतां शर-
 ण्यश्चातार्तानां चकितहृदयानामभयदः । वरेण्यः साधूनां वरद इति वा
 कामितधियां भवत्सेवा जंतोः सुरतरुसमानानुफलति ॥ २३ ॥ यथा
 वै पांचाली नटति कुहकेच्छानुसरणं कुलालेन भ्रातं भ्रमति च सकृच्च-
 क्रमनिशम् । तथा विश्वं सर्वं भवति मनवश्चानुगुणिताः स्वतंत्रः को
 वास्ते वद परसुरेश त्रिभुवने ॥ २४ ॥ त्वयाज्ञसो धाता सृजति
 जगदीशोऽपि हरते हरिः पुष्पातीदं तपति तपनो वाति पवनः । धरां
 साद्रिद्वीपां वहति भुजगानामधिपतिः सुराः सर्वे युष्मद्भयपरवशाद्वि-
 भ्रति बलिम् ॥ २५ ॥ स्वयं मुक्तेः पूर्वं स्वकृतसुकृतं मां नयति चेद्भ-
 वान् सत्त्वं का वा तव चरणपंकेरुहरतिः । हरेत्पापौघं नः शुभमपि
 ददातीति च धिया भवंत्याशावद्धाः सकलमपि धातुर्वशमहो ॥ २६ ॥
 प्रधानं वा कर्म स्थितिविलयसर्गेऽलमिति चेज्जडत्वात्क्षीणत्वात्कथमुचि-
 तमेतन्निगदिदुम् । तयोरीशोऽनीशे भवति जगदुत्पत्तिविलयावनान्या-

सन् ब्रह्मन्निति वदति शास्त्रं श्रुतिरपि ॥ २७ ॥ भवत्सेवा जन्तोर्भव-
 दबहुताशांबुदनिभा महामोहध्वांतप्रतिहतमतेर्दीपकलिका । सुधावर्षि-
 ण्येषावहितमनसां निर्ममनृणामुपाध्याये ब्रह्मप्रवचनविधानेऽतिचतुरा
 ॥ २८ ॥ अवज्ञायै लोके बहुपरिचितिः प्राकृतमतिर्निरस्यापो गंगा
 प्रसरति यथा नालपतटिनीम् । विशुद्ध्यर्थं तद्वत् सकलपुरुषार्थैकफलदं
 भवंतं हित्वाऽन्यं भजति गुरुमाशापरवशः ॥ २९ ॥ निमील्याक्षिद्वंद्वं
 निगमनिरतो निश्चलमनाः प्रकाशंतं दृष्ट्या त्रिभुवनमुदं ज्ञानपरया ।
 ललाटेऽधोमुख्या रसजनितदिव्यांजनधरं स्मरेद्यस्त्वां योगी भवति
 निधिसिद्धेरधिपतिः ॥ ३० ॥ महामायासंत्राक्षरकमलपद्मासनयुतं
 महानीलच्छायं मधुमुदितयोगिन्यभिवृतम् । दधानं सद्गंधासितकनक-
 गोक्षीरतिलकं मुने यस्त्वां पश्येद्भवति सकलादृश्यकतनुः ॥ ३१ ॥
 सुधाधारे हेतौ सकलजगतां स्वर्णकलिते सितांभोजे तेजोधिकतपनविंशे
 श्रुतितनौ । मणिप्रोते पीठे निखिलसुरवृंदैः परिवृते स्थितं त्वामारोग्यं
 स्मरति हृदि तस्यामृतमयम् ॥ ३२ ॥ परत्रादाता चेद्भवति न ददात्यै-
 हिकसुखं ददात्येतत्सौख्यं वितरति न चामुष्मिकसुखम् । भवत्सेवा
 जंतोरिह परसुखप्राप्तयकरी सुराणामन्येषामनुसरणमात्मैक्यमकरोत्
 ॥ ३३ ॥ जटी वल्की कापि कचिदपि सुभूषांबरभृती कचिद्भूत्यालितः
 कचिदपि सुगंधांकिततनुः । कचिद्योगी भोगी कचिदपि विरागी
 विहरसे बहुज्ञाना ज्ञातुं तव गतिमशक्ताश्च मुनयः ॥ ३४ ॥ विशुद्धं
 चैतन्यं कचन जडवत्कापि सकलागमज्ञोऽप्यज्ञस्याद्विहरसि कदाचि-
 द्बहुविधः । ऋषिभ्यस्त्वं तत्त्वं परममुपदेष्टासि विततं चरित्रं ते वेत्तुं
 चतुरधिकवक्त्रा न चतुराः ॥ ३५ ॥ मणिर्वा मंत्रो वा विविधविमलै-
 श्वर्यमपि वा महायोगोऽष्टांगाभ्यसनविहितो वा त्रिभुवनम् । समर्थं
 चैकैकं प्रभवति वशीकर्तुमधिकं स्थितं त्वय्येवेदं तव किमुत लोकैक-

वशता ॥ ३६ ॥ सरस्वत्याधारस्थितमरुदतिप्रेरितपरां नृपो धारां भित्त्वा
 रसकमलवासाधिपपुरी । परं तेजोरूपं सकलभुवनालोकनिरतो भवंतं
 सद्योगात्परमसमवेतं मुनिपतिः ॥ ३७ ॥ अपां तत्त्वं हंसं सकलभवदेवे
 जलरुहे तडिद्भास्वदीप्तिप्रकटदलपङ्के सुललिते । परं स्वाधिष्ठाने रुचिर-
 तररूपं निरूपमं स्थितं ध्यायेत्त्वां यो मदनसमरूपो विजयते ॥ ३८ ॥
 परीतं त्वां विष्णो हुतहवनमायाविलसिते सरोजे नीलाभे मणिरचित-
 पीठे मणिगृहे । महासिद्धैः कल्पद्रुमवरतले स्वर्णनिचयात्प्रवर्षद्भिः स
 स्यात्परमतनुभूतिः स्मरति यः ॥ ३९ ॥ मरुत्ताराप्राभे कनकरुचिपद्मे
 श्रुतिमयं प्रभुं लोकातीतं निखिलनिगमावेद्यचरितम् । भजन्ते ये त्वां ते
 सुदृढतरतादात्म्यकदशां चिदानन्दं मायागुणविरहितं यांति परमम्
 ॥ ४० ॥ सुधाशुद्धे व्योम्नि द्रुहिणरमणीवीजलसिते विशुद्धांभोजांते
 सुरनरखगाद्यन्तरहितम् । भवंतं भावोत्थैः कुसुममुखपूजोपकरणैः समर्ह-
 ल्लोके नाऽद्वितयपरमं ब्रह्म भजते ॥ ४१ ॥ तडिल्लेखाशोचिर्द्विदल-
 कमले भासि परमो महामुक्तानंगोनलशशभृतोऽक्षीणि भवतः ।
 अशेषस्तोतःसु प्रसृतचितिरूपोंगकनकः श्रुतिप्राणोष्टांगप्रगुणितकलापीठ-
 निलयः ॥ ४२ ॥ कचिद्बुद्ध्यां जिह्वा क्व च गुदकमन्यत्र कविता कचि-
 द्वागन्यत्र श्रुतिरपरतो लोचनयुगम् । समाकर्षन्त्यात्मानमिव बहुभार्याः
 प्रलुभितास्ततो ध्यातुं स्थातुं कथमपि न शक्तस्तव पदम् ॥ ४३ ॥
 अशक्तोऽहं स्नातुं क्षणमपि जपं कर्तुमपि बौदनाभावादेवातिथिजनस-
 पर्यां च न कृता । कुतो ज्ञानं ध्यानं त्वकृतगुरुसेवस्य मम भो भवेदे-
 वैकाशा वसति तव भक्तत्वजनिता ॥ ४४ ॥ अमन्दे मन्दारद्रुमवरसमीपे
 मणिमये सुखासीनं पीठे सुरवरमुनीन्द्रादिविनुतम् । स्वहृत्पद्मे वापि
 स्थितमनुदिनं त्वां भजति यः स चेहामुष्मिन्वा सकलजनपूज्यश्च
 भवति ॥ ४५ ॥ तृणं मेरुं कुर्यात्सुरवरगिरिं वापि च तृणं भवत्सामर्थ्यं

वाऽघटितघटनाप्रौढिमतनो । इदं जाने तस्मै पुनरपि न जानन्ति
 कवयोऽप्यहो युष्मन्माया सकलजनमोहोन्मदकरी ॥ ४६ ॥ नटो
 भूयो वेषैर्बहुविध इवाभाति सगुणो यथैको वाकाशो घटमठगुहास्वंत-
 रगतः । यथैकं गांगेयं कटकमुकुटाद्याकृतिवशात्तथा दत्तात्रेय त्वमपि
 बहुरूपस्त्रिभुवनम् ॥ ४७ ॥ सहस्रांशुप्राभे सुरतरुसमाख्येऽधिकतरे
 विमाने हंसाख्ये स्थितममृतनीहारवपुषम् । परीतं त्वां ध्यायेद्यदरज-
 समारूढमनिलैरशेषैराज्ञायां भवति खचरो व्योमगमनैः ॥ ४८ ॥
 स्थितं मूलाधारे कनकरुचिरांगं हुतभुजः शिखाभिः प्रख्याभिर्वृतमखिल-
 तेजोरसघटम् । धरंतं भ्रूमध्ये प्रसृतनयनः पश्यति च यः परं त्वां सत्यं
 स्यादखिलरसविद्यातिनिपुणः ॥ ४९ ॥ शिरःप्रांतभ्रांतायतकुटिलबाला-
 र्कमतुलं प्रदीप्तः स्वर्णाढ्यारुणशतलसत्कुंडलधरम् । मस्तपुत्रं लंकाधि-
 पतनुजनाशोद्यतकरं स्मरेद्यस्त्वां यत्नात्सकलभयभूतापहरणे ॥ ५० ॥
 गरुत्मंतं चंचलकनकपक्षद्वययुतं सुधाकुंभोद्भास्वत्करमखिललोकाभि-
 गमनम् । अचिंत्यं वेदैस्त्वां परममुनिनाथं स्मरति यः स दक्षोऽसौ वादी
 कपटविषजंतुप्रहरणे ॥ ५१ ॥ स्मृतिं निंदंतं ये मनुजमुपतिष्ठन्त्यतिबला-
 त्कृताशा मिथ्या स्यात्प्रणतजनमंदार भवता । अदत्ते दत्तत्वादमलतरचि-
 द्रम्यविभवः सदा दत्तात्रेयो भवसि भजतामिष्टफलदः ॥ ५२ ॥ विधिं
 विष्णुं मायां शृणिमदनयोनिं दिनकरं मिलित्वानंगेनानलयुवतियुक्तां
 जपति यः । त्वदाख्यामाख्येयां निखिलनिगमाढ्यामखिलदां स
 संपद्भिर्देवाधिपविभवयुक्तो विहरति ॥ ५३ ॥ परामायावाणीमदनकम-
 लावीजसहितं मनुं प्रत्येकं ते जपति सततं निश्चलधिया । यतोऽभ्येत्यै-
 श्वर्याश्रुतसकलविद्यानिपुणता वशित्वं ब्रह्मैक्यं सपदि यदि यायात्परमुने
 ॥ ५४ ॥ अविज्ञातं किञ्चित्तव जगति नास्ति प्रभवितुस्तदा विज्ञातोऽहं
 यदपि सकलज्ञेय भवता । अदृष्टं मन्येऽहं प्रतिभटसविज्ञानकरणे मुने

दत्तात्रेय प्रकुरु मयि कारुण्यमतुलम् ॥ ५५ ॥ भवत्पादांभोज-
 द्वयशुभरसास्वादचतुरा भ्रमद्भृंगीसंघायितहृदयवृद्धिं कलय माम् ।
 अनाधाराधाराश्रितसुरतरो तावकजने मुने कारुण्याब्धे प्रकुरु मयि
 संपत्प्रकटनम् ॥ ५६ ॥ वदत्येकेऽपाथा तव गतिमनेकार्थहरिणीम-
 जानंतो ज्ञेयामनधिगततत्त्वार्थमतयः । महायोगिल्लोके जडमतिकृते
 त्वं धृतवपुस्तथा नो चेद्भक्तस्वजनपरिरक्षा कथमहो ॥ ५७ ॥
 स्मृतस्त्वच्छिष्यो वा जगति कृतवीर्यस्य तनयोऽर्जुनो राजा चोरा-
 द्वयमहिभयं वृश्चिकभयम् । हिनस्त्याजौ शत्रूदितमपि भयं चेति
 गदितं भवेयुस्त्वच्छिष्याः किमुत हृतचोराधिकभयाः ॥ ५८ ॥
 पदानां सेव्यो वा न भवसि यदा किञ्चन नृणां प्रियः साधूनां त्वं
 तव च सुहृदस्तेऽपि सुजनाः । मयि त्वार्ते दीने जननमरणाद्यैः कुरु
 दयां दयावान्को वा मे भ्रमनिगडनिर्मोचनविधौ ॥ ५९ ॥ यथा
 माता पुत्रं सकलगुणहीनं च कुटिलं प्रपुष्पात्यन्नाद्यैरनुदिनमतीवा-
 दयुता । तथा त्वं लोकानां मम च पितरावित्यभिमतं ततस्त्रातुं
 दातुं फलमभिमतं चार्हसि विभो ॥ ६० ॥ जडं वाचाधीशं
 सुधियमपि मूकं च कुरूपे रवेर्वा शीतत्वं यदि च कुरूपे दृष्टिवसतेः ।
 अकर्तुं कर्तुं वाऽन्यदपि परिकर्तुं च मनुषे तदा सर्वं कुर्याः क्वचन
 किमसाध्यं त्रिभुवने ॥ ६१ ॥ पुमान्यो वै युष्मच्चरणपरिचर्याकृति-
 परो महालापास्थानाशनशयनपानानि कुरुते । स वै धन्यो लोके
 सकलजगदाराध्यगरिमा अहो भाग्यं तस्यागणितयशसः कोऽपि न
 भजेत् ॥ ६२ ॥ प्रसादात्ते यस्मिन्प्रबलतरदारिद्र्यविभवः स यायादि-
 द्रत्वं सकलसुरनारीपरिवृतः । तत्रोपेक्षा यस्मिन्भवति स सुराणा-
 मधिपतिः परत्र ह्यत्यंतं प्रविहतमहैश्वर्यविभवः ॥ ६३ ॥ सदा मंत्रै-
 र्जाप्यः पुनरपि मनूनेव जयसि स्वयं तंत्रधेयो यदपि कुरुते तंत्रनि-

चयम् । सदा ब्रह्मानंदामृतजलधिकेलीकलितधीः स भूतेर्भूयस्या
भवतु भगवन्नः कुरु दयाम् ॥ ६४ ॥ तुरीयाग्निश्चेतद्युतिदिनकृदकैर्मु-
निपतेर्महाविद्याखंडैः परियुतमहानुष्टुभमनोः । चतुर्भिश्चक्राब्जांकुश-
गुणधरं सामि युवतिं नृसिंहं त्वद्रूपं भजति सपुमर्थैकनिलयः ॥ ६५ ॥
मुने ते माणिक्यप्रवरखचिते हेममुकुटे पुराकल्पध्वंसे परिकलितसूर्या-
पररुचः । वसंत्यस्मिन्ननं नहि यदि तदा भूतमुनयो न विद्यंते लोकाः
प्रखरतिमिरांतैकचतुराः ॥ ६६ ॥ अहो योगिन्नानामणिखचितभाव-
त्कमुकुटः शिखाग्रालंबिन्यास्त्रिकतलमसौ रत्नशिखरात् । महोमेरो-
लीलां कलयति सदा यामकलितां शरत्सौदामिन्याः कटकवरतेजोमय-
तनोः ॥ ६७ ॥ सुविज्ञातं लोकैरनवधिसदादेशनपरैः सुधाभानोः
खंडं तव निविडभावांधकरणम् । द्वितीयं सोमैन्दुस्फुटमुकुटतः कांत-
मनघं महामूर्तिर्ज्योत्स्ना हरति नतदारिद्र्यतिमिरम् ॥ ६८ ॥ धृतं
पुंड्रं मात्रात्रितयरुचिरं साक्षरमिदं सहस्रारे हंसः स्थितपरमहंसाजिग-
मिषोः । वहंती पादाब्जद्वयसरललाक्षारसपदं पराशक्तेश्चंद्रोपलरचित-
सोपानपदवी ॥ ६९ ॥ श्रयेते हैमंते तरुविमलपत्रे मधुकरौ शुभं
गर्भाभोजे स्थितमिति सुचित्रं शमनिधे । कठोरैर्दुप्रांशुप्रवरनिकरीभू-
ततिमिरं सुधांशुर्भावत्को मुकुलयति विद्युत्कुवलयम् ॥ ७० ॥ तमो-
भिर्मूर्कालीगृहमिदमनुजृम्भितमिति त्वदीये नेत्राब्जे कमलसदना
जृम्भितवती । सदा सुज्ञानेनाविशति सदयाक्षि प्रसरति प्रभो यस्मि-
न्यास्ते ध्रुवमतिधनोऽयं मुनिपते ॥ ७१ ॥ यदा योगिनीपद्मलिरवि-
लसत्कोदशोरूपांते नीलाली उदरयुगली कंजदलयोः । वरं कारायेते
कनकमकरीकुंडलयुगे कटाक्षौ चांपेयस्तबकविचरंताविव वरौ ॥ ७२ ॥
त्रयीविद्यारूपस्त्रितनुरहिमांशुः प्रतिदिनं श्रुती भावत्केचिद्विविधमक-
रीकुंडलपदे । मिलित्वात्मायं ते घनतरमुपाधिद्वयमिति व्यनक्ति

श्रीकारं निखिलजगदुद्दीपकमुने ॥ ७३ ॥ कपोलौ यौष्माकौ स्फुट-
 मुकुरबिंबप्रतिभटौ भृशं संघर्षित्वात्प्रतिदिनसमारोपितरुचौ । निजा
 कांतिर्नित्या कनकनिकपोऽत्यंतमहिमा त्वदीया नीचैव प्रचुरतरकांति-
 स्त्व मुने ॥ ७४ ॥ मुखेदुं दृष्ट्वा ते यदि विशति राहुं प्रति भयाच्छशी
 वक्रं प्राप्य द्विगुणितकलानां निधिरभूत् । द्विजानां राज्यत्वं प्रकटित-
 मतो दत्तशरणीबलेनाहो स्वामिन् कथमपि च लभ्यो हि महिमा
 ॥ ७५ ॥ तवायं त्रिबोष्ठश्रिबुकसहितो विद्रुमलतासमाक्षिता तिर्यग्यदि
 बहुपदं स्यात्फलयुगम् । व्रजे तत्साम्यं तन्निहितमुत वा पल्लवपदं यदि
 स्यात्ते नालं तुलयितुमहो संयमिपते ॥ ७६ ॥ भवद्वाणीश्रेणीं श्रवण-
 पुटसौख्यप्रकरणीं विजेतुं वाक् श्रुत्वा स्वयमुत विदित्वाऽहमिति
 भाक् । अशक्ता तेऽत्यंतं फणिललितजिह्वाग्रमिषतः प्रविष्टा वक्रांतं
 सितमणिलसद्विद्रुमगृहम् ॥ ७७ ॥ तवावृत्ता रेखात्रयविलसिता
 कंबुरभवच्छिराणामाधारः कथमभवदेतन्न यदि चेत् । अथेमामूहेऽहं
 त्विति कविहराद्याकृतिधरां तथा नो चेद्वेदत्रितयकलितां वापि
 गणये ॥ ७८ ॥ महानंतश्चासीद्विषधरवरो वासुकिरसौ निवर्हतौ
 मर्त्याधिकभयकरत्वं गणयताम् । भुजाकारौ स्त्रीयां तव तु भुजसत्त्वं
 विदधतां मुने भूतौ स्निग्धौ सपदि वरदौ चाभयकरौ ॥ ७९ ॥
 मुने गंगास्रोतोमररवगिरिप्रस्थफलके प्रसादे स्वर्णाढ्यं प्रभवदभवद्भा-
 गलुलितम् । त्रिसूत्रं सुस्निग्धं धवलमुपवीतं कलयते महायोगिन्मूर्ति-
 त्रयमपि विलीनं तदथवा ॥ ८० ॥ प्रसिद्धः स्वर्णाद्रिर्दिवि विबुधवा-
 चावितरणात्प्रशस्तौ ते हस्तावखिलपुरुषार्थप्रकरणात् । जनानां पादाब्ज-
 द्वितयमधिकं प्रेम भजतां मुनीन्द्र त्रैलोक्याद्भुतगणमणिक्षीरजलधे
 ॥ ८१ ॥ इयं रोम्णां राजिर्विलसति महानाभिसरसः प्रवृत्ता कुल्येव
 प्रतिपतितभंग्यस्त्रिवलयः । नवालेखालोकत्रयविभजनार्थं विरचिता मुने

दत्तात्रेय त्वदुदरविलग्ना विलसिताः ॥ ८२ ॥ ध्रुवं शंपा मौंजीत्रित-
 यवल्लिरेखावरतनो रुरुक्षोः प्रासादं खशय हृदयाख्यं तत्र हरे ।
 महालक्ष्म्याश्रंचत्कनकमयसोपानपदवी न चेन्नाभीकुंडोपरि चिदुप-
 लब्धा सुपरिखा ॥ ८३ ॥ प्रवृत्तावूरू ते लसदुदरलोकव्रजधृतेर्धृतौ
 तावद्रींद्रस्फुटपटुकटौ संप्रकटितौ । कटौ विस्तारौ यत्कटकफलकौ
 ताविव मुने महायोगिनिश्वंभर इति च नूनं त्वमधिसूः ॥ ८४ ॥
 कृपालो विश्वेश त्रिभुवनतले ते प्रमितितो दिवारात्रौ स्थानं मिलति
 वपुषो जानुयुगलम् । अभक्तानित्येतत्कथितमभियुक्तैः समतनोः
 प्रपुष्टं त्वं संप्रत्यपि त्वदिदमर्थं हि सुदृढम् ॥ ८५ ॥ जगन्मूलं
 स्रष्टा सकलजगतां सर्गकुशलो भवजंघे लक्ष्मीकृदसमशरस्य प्रकुरुते ।
 प्रकृष्टे ते वीक्ष्य भ्रमवदविलक्ष्योऽल्पगुणवान् मुने तेनानंगस्तव
 तु विमुखो लक्षणवतः ॥ ८६ ॥ नराणां नानार्थप्रदरसगुटित्वं
 च दधतौ मुने गुल्फौ गूढौ तव चरणपुष्ट्या प्रकटितौ ।
 घटावृत्ती नार्या इव सकलकौ वृत्तरुचिरौ विराजेते तेजोनिकर-
 कलितायाः सुवपुषः ॥ ८७ ॥ मदाधारं युष्मत्प्रपदमतिपूज्यं सुरुचिरं
 ध्रुवात्मानं मत्वा जितमिति सदा कच्छपपतिः । विवेशाधो
 भूमेर्यदि तदिदमेकं स्मयकरं त्विदानीं तज्जातिर्मुकुलितशिराश्चाभवदहो
 ॥ ८८ ॥ मया दत्तं किंचिन्न यदि कलितं वासवमहं तदा रोचिर्जातं
 जननमपि पंकप्रकटितम् । प्रविश्येत्यायोज्यं न चलति ह यत्तत्पदधिया
 पदं ते तु श्रीदं सकलसमये श्रीनिलयनम् ॥ ८९ ॥ मुने ते पादाब्जं
 नवममृतपादोद्भवमहो श्रितस्तत् सोदर्यं पशुपतिशिरोब्जं हिमकरः ।
 निवृत्तं स्वस्यांकं भवति भवदेकात्मवपुषः कथं ब्रह्मागारे परमपुरुषा
 नांघ्रिभजनाः ॥ ९० ॥ न चित्रं ते पादौ वितरत इति प्रार्थितफलं
 विधिं श्रीशं रक्षाकलुषविपदं दृश्यमतुलम् । सरांतश्रीगंगाधरचरण-

शंखांबुजसुरद्रुमांश्च त्वद्भावानतजनसदानंदकलनात् ॥ ९१ ॥ त्रिखंडैः
 श्रीविद्यामनुवरभवैर्भावकरिपो विवृद्धस्ते मंत्रो विपद्यदति यो ज्योतिर-
 मलम् । षडङ्गं चंद्रार्कप्रकररुचि तन्मे प्रभवतां सदा ज्ञानानंदं
 युवतिनृमयं लोचनपदम् ॥ ९२ ॥ समुन्मीलद्भानुप्रकररुचि वाग्बीज-
 ममलं मस्तवद्गोपाभां मदनलिपिमाधारकमले । हृदये शक्त्याख्यं
 सितकरकराभं शिरसिजे सरोजे त्वां ध्यायेत्सकलपुरुषार्थान् स लभते
 ॥ ९३ ॥ चिदंशस्त्वद्रूपं किमपि सवितुर्मंडलगतं वरेण्यं भर्गा वै
 त्रिविधतनुदेवस्य वपुषि । मुने धीमह्यासीर्हरिरपि धियो यो न इतर-
 त्प्रचोदायास्तत्त्वं स्थितिलयसृजस्त्वं मुनिपते ॥ ९४ ॥ हरित्तनुप्रोत-
 सदसि शिखरे शुभ्रकपटो जगन्मूलस्थाणुस्त्वमिति शुभमस्पंदमुनिभिः ।
 झरीभिः स्वर्णाढ्यैः पवनहतवाविन्दुनिकरैर्जटासक्ताज्जाहीरुचिरमभि-
 पिक्तः स्थित इव ॥ ९५ ॥ दुराचारो जारश्चपलमतिराजः परवशः पर-
 द्रव्याकांक्षी बहुजनविरोधी च सततम् । तथा ज्ञाहं पूतस्तव पदयुगस्पर्श-
 वशतो ह्ययःखंडः स्वर्णं भवति हि यदा सिद्धसुरतिः ॥ ९६ ॥ परिक्रान्ता
 देशा बहुतरधनस्यार्जनधिया कुलाचारं हित्वा कुमतिनृपसेवापि च
 कृता । विधायाहं श्रान्तः किमपि नच लब्धं तु वपुषाश्रितं त्वत्पादाब्जं
 श्रितमनुजमंदारमधुना ॥ ९७ ॥ त्वदीयो मे देहस्त्वमपि पितरौ
 भ्रातृसुहृदस्त्वमेव ब्रह्मन्मे सुतहितगृहक्षेत्रनिवहाः । त्वमेव प्राणो मे
 धनमपि मम त्वं तव पदं न जाने मय्येव स्थितमपि महन्मेयमधुना
 ॥ ९८ ॥ नमस्ते तारायामृतजलधिधात्रेऽधिमहसे नमस्ते ब्रह्माद्यैर्मुनि-
 सुरवरैः क्लृप्तमहसे । नमस्तुभ्यं नारायणमुनिविलासाय भवते मन्त्रानां
 कोटीनामचलगणितानां च पतये ॥ ९९ ॥ नमस्ते देवैरप्यविदितमहि-
 म्नेऽतियशसे नमस्ते दिक्पालप्रकटमुकुटालंकृतपदे । नमस्ते तेजस्विन्न-
 तमनुजमंदारवपुषे नमो दत्तात्रेयाकृतिहरिहराजाय महते ॥ १०० ॥

नमस्ते पापौघाचलविततिसंहारपत्रये नमस्ते दारिद्र्यव्यथितजनदैवांत-
विधये । नमस्ते रोगार्तानतमनुजदिव्यौषधिदशे नमस्ते दैवं मे नहि
नहि जगत्यां तव पदम् ॥ १०१ ॥ असौ दत्तात्रेयस्तुतियुतकृतिर्ज्ञान-
लहरी सुधाधारापूराखिलनिगमसारानुपठताम् । श्रुतश्रीविद्यायुर्विभव-
धनधान्यामृतचयं ददात्येवात्यंतं जयति सकलाह्लादजनिका ॥ १०२ ॥
इति दलादनमुनिविरचिता श्रीदत्तपदप्रापिका श्रीदत्तात्रेयज्ञान-
लहरिः संपूर्णा ॥

३५६. दत्तात्मपूजास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अजितामृत योगनिद्रिताच्युत शक्तेः
स्वकृतातिमोहित ॥ द्युमुखे श्रुतिबन्दिगीततो भगवज्जागृहि जागृहि
ज्यधीदू ॥ १ ॥ अथ ध्यानम् ॥ यतोऽस्य जनताद्यज स्ववशमाय
आद्यो विभुः स्वराट् सकलविद्गुरुः स सुखसच्चिदात्मा प्रभुः ॥
असंसृतिरूप उज्झितमलोऽमुमैक्याप्तये निवर्त्य नयनं निषेधविधि-
वाक्यतश्चित्तये ॥ २ ॥ कार्याक्षमान्वीक्ष्य पृथग्युतान्वा योऽनु-
प्रविश्यापि विभुर्निजांशात् ॥ निन्ये प्रभुत्वं हि महन्मखांस्त-
मुपाह्वये त्रीशमवन्यचित्तः ॥ ३ ॥ अनेजज्जवीयो हृदोऽप्यामुवन्नो
सुराः पूर्वमर्शत्पराञ्चोऽपि तिष्ठत् ॥ परां धावतोऽत्येति यद्व्यसनं ते
ज्यधीशाऽर्पितं चित्तमस्तान्यवृत्ति ॥ ४ ॥ राहोः शीर्षादौपचारिक-
भिदा विष्णो पदं त्रीश ते प्रत्यक्त्वाच्च निसर्गशुद्धमपि सन्
मायांशतोऽशुद्धवत् ॥ भातं मूढधिया तदर्थममलं ज्ञानामृतं
यत्नतो ध्यामन्नेऽत्र हिरण्यये विनिहितं पाद्यं गृहाणात्मभ ॥ ५ ॥
देवाचार्यप्रसादप्रजनितसुरसंपत्तिसद्गुणजातश्रेण्याढ्ये मञ्जुलेऽस्मिन्न-
तितरविमले भाजने वै विशाले ॥ धृतभजनजलाद्वेष्टृताद्यर्थजाले

स्वर्घ्यं संपादितं ते श्रुधिप परम भोः स्वीकुरुवाप्तकाम ॥ ६ ॥
 विधिवच्छ्रवणादि यत्कृतं ते श्रुधिपा भव मे प्रसीद शंभो ॥
 द्विद्विधावरणाम्बु तेऽर्पितं सत्कृपयाऽऽचमनं कुरुष्व तेन ॥ ७ ॥
 प्रवचनादिसुदुर्लभता श्रुतेरुपधिपते त इह श्रुतिविश्रुते ॥ परम-
 भक्तिसुशीतलसज्जलं वपुषि सिक्तमथाप्युतयेऽस्त्वलम् ॥ ८ ॥
 यत्किञ्चिज्जगति त्रीश तत्त्वयाऽऽवाप्तमीश ते ॥ वस्त्रत्वेनार्पितं तेन
 परानन्दार्हतास्तु मे ॥ ९ ॥ यद्ब्रह्मसूत्रं त्रिवृतं कृत्वा समन्त्रं त्रिप
 सस्वन्नम् ॥ दत्तं सुमित्रं भजते न चात्र सन्नसुपात्रं कुरुमाऽन्य-
 तन्नम् ॥ १० ॥ आह्लादनं चन्दनमुच्यते तत्सत्यर्तरूपं न ततः परं
 ते ॥ प्रेष्टं श्रुधीशागुण तेन नूनमालेपनं ते प्रकरोमि भक्त्या
 ॥ ११ ॥ भगवंरुपधिप प्रददामि मुदे सुमनः सुमनः सकलार्थ-
 विदे ॥ खलु तुभ्यममूल्यमधौवभिदे सुमनः सुमनस्कमनन्यहृदे
 ॥ १२ ॥ योगानलेऽत्र बलदर्पपरिग्रहाहंकाराभिलाषममताप्रतिघांश्च
 दग्ध्वा ॥ धूपोऽयमुत्तमतमोर्पित आर्यशान्तिद्वारा श्रुधीश
 पदपर्यवसाय्यसौ ते ॥ १३ ॥ सोऽहंभावप्रोज्ज्वलज्ज्ञानदीपो मूला-
 ज्ञानध्वान्तसंपातहृत्यै ॥ स्थेयान्भास्वाँश्छाश्वतस्त्रीश तुभ्यं स्वात्म-
 ज्योतिर्दत्त एतं गृहाण ॥ १४ ॥ यस्य ब्रह्मक्षेत्रे मित्रे ग्रासो
 मृत्युर्लेह्यं पेयम् ॥ कान्वेष्टव्यं तस्मै कस्मै नैवेद्यार्थं दत्तं द्वैतम्
 ॥ १५ ॥ त्रीश तेऽद्य परभक्तिवीटिका पञ्चमैकपुरुषार्थसाधिका ॥
 निर्विकल्पकसमाधितः पुरा रञ्जिकाऽस्तु भवभञ्जिका वरा ॥ १६ ॥
 त्वं त्रीशाहमहं त्वमित्यवंगते स्थेम्ने निदिध्यासनात्मानस्ते परिदक्षिणा
 हि विहिता यद्यच्च मे कीडितम् ॥ तद्ब्रह्मास्तु चिदन्वयेक्षितुरथो
 त्वानुस्मरन् व्याहरेत्तारं तारकमेकमात्मनि यथा शार्दूलविक्रीडितम्
 ॥ १७ ॥ असकृदभिहिता तेऽनेकजन्माप्तपुण्यैः प्रणतिविततिरेषा

द्वैतशेषा विशेषा ॥ त्वयि विनिहितमेतन्मेज्ज सर्वं स्वकीयं व्यधिप
जयतु पूजा त्वद्यशोमालिनीयम् ॥ १८ ॥ यन्मे न्यूनं संमतं
स्थूलदृष्ट्या भूमन् तेऽनुकोशपीयूषवृष्ट्या । नित्यं प्रेयः स्वप्नं
शालिनीयं तस्याभूत्संपूर्णता शालिनीयम् ॥ १९ ॥ रोधनं
व्यात्मनः शोधनं व्यात्मनः पूजनं व्यात्मनो भोजनं स्वात्मनः ।
यत्र सैषाऽऽत्मपूजाऽस्तु कण्ठे सतां स्रग्विणी मा परा स्त्रीव कण्ठे
सताम् ॥ २० ॥ इति श्रीमद्वासुदेवानन्दसरस्वतीविरचिताऽऽत्म-
पूजास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३५७. शंकराचार्यकृतगुर्वष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शरीरं सुरूपं तथा वा कलत्रं यशश्चारु चित्रं
धनं मेस्तुल्यम् । मनश्चेन्न लभं गुरोरंघ्रिपद्मे ततः किं ततः किं ततः
किं ततः किम् ॥ १ ॥ कलत्रं धनं पुत्रपौत्रादि सर्वं गृहं बांधवाः
सर्वमेतद्धि जातम् । गुरोरंघ्रिपद्मे मनश्चेन्न लभं ततः किं ॥ २ ॥
षडंगादिवेदो मुखे शास्त्रविद्या कवित्वादिगद्यं सुपद्यं करोति ।
गुरोरंघ्रिपद्मे ॥ ३ ॥ विदेशेषु मान्यः स्वदेशेषु धन्यः सदाचारवृत्तेषु
मत्तो न चान्यः । गुरोरंघ्रिपद्मे ॥ ४ ॥ क्षमामंडले भूपभूपाल-
वृंदैः सदा सेवितं यस्य पादारविंदम् । गुरोरंघ्रिपद्मे ॥ ५ ॥
यशो मे गतं दिक्षु दानप्रतापाज्जगद्वस्तु सर्वं करे यत्प्रसादात् ।
गुरोरंघ्रिपद्मे ॥ ६ ॥ न भोगे न योगे न वा वाजिराजौ न
कांतामुखे नैव वित्तेषु चित्तम् । गुरोरंघ्रिपद्मे ॥ ७ ॥ अरण्ये न
वा स्वस्य गेहे न कार्ये न देहे मनो वर्तते मे त्वनर्घ्ये । गुरोरंघ्रि-
पद्मे ॥ ८ ॥ अनर्घ्याणि रत्नानि मुक्तानि सम्यक्समालिंगिता
कामिनी यामिनीषु । गुरोरंघ्रिपद्मे ॥ ९ ॥ गुरोरष्टकं यः पठेत्

पुण्यदेही यतिर्भूपतिर्ब्रह्मचारी च गेही । लभेद्वांछितार्थं पदं ब्रह्म-
संज्ञं गुरोरुक्तवाक्ये मनो यस्य लग्नम् ॥ १० ॥ इति श्रीमत्परम-
हंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचितं गुरोरष्टकं समाप्तम् ॥

३५८. दत्तात्रेयस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जटाधरं पांडुरंगं शूलहस्तं कृपानिधिम् ।
सर्वरोगहरं देवं दत्तात्रेयमहं भजे ॥ १ ॥ अस्य श्रीदत्तात्रेयस्तोत्र-
मंत्रस्य भगवान्नामद ऋषिः, अनुष्टुप् छंदः, श्रीदत्तः परमात्मा
देवता, श्रीदत्तप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥ जगदुत्पत्तिकर्त्रे च
स्थितिसंहारहेतवे । भवपाशविमुक्ताय दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते
॥ १ ॥ जराजन्मविनाशाय देहशुद्धिकराय च । दिगंबर दयामूर्ते
दत्तात्रेय० ॥ २ ॥ कर्पूरकांतिदेहाय ब्रह्ममूर्तिधराय च । वेदशास्त्रपरि-
ज्ञाय दत्तात्रेय० ॥ ३ ॥ ह्रस्वदीर्घकृशस्थूलनामगोत्रविवर्जित । पंचभू-
तैकदीप्ताय दत्तात्रेय० ॥ ४ ॥ यज्ञभोक्त्रे च यज्ञाय यज्ञरूपधराय च ।
यज्ञप्रियाय सिद्धाय दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥ आदौ ब्रह्मा मध्ये
विष्णुरन्ते देवः सदाशिवः । मूर्तित्रयस्वरूपाय दत्तात्रेय० ॥ ६ ॥
भोगालयाय भोगाय योगयोग्याय धारिणे । जितेंद्रियजितज्ञाय
दत्तात्रेय० ॥ ७ ॥ दिगंबराय दिव्याय दिव्यरूपधराय च । सदोदित-
परब्रह्म दत्तात्रेय० ॥ ८ ॥ जंबुद्वीपे महाक्षेत्रे मातापुरनिवासिने ।
जयमान सतां देव दत्तात्रेय० ॥ ९ ॥ भिक्षाटनं गृहे ग्रामे पानं
हेममयं करे । नानास्वादमयी भिक्षा दत्तात्रेय० ॥ १० ॥ ब्रह्मज्ञानमयी
मुद्रा वक्षे चाकाशभूतले । प्रज्ञानघनबोधाय दत्तात्रेय० ॥ ११ ॥
अवधूत सदानंद परब्रह्मस्वरूपिणे । विदेहदेहरूपाय दत्तात्रेय० ॥ १२ ॥
सत्यरूप सदाचार सत्यधर्मपरायण । सत्याश्रय परोक्षाय

दत्तात्रेय० ॥ १३ ॥ शूलहस्त गदापाणे वनमालासुकंधर । यज्ञसूत्रधर
ब्रह्मन्दत्तात्रेय० ॥ १४ ॥ क्षराक्षरस्वरूपाय परात्परतराय च । दत्त-
मुक्तिपरस्तोत्र दत्तात्रेय० ॥ १५ ॥ दत्त विद्याढ्य लक्ष्मीश दत्तस्वात्म-
स्वरूपिणे । गुणनिर्गुणरूपाय दत्तात्रेय० ॥ १६ ॥ शत्रुनाशकरं स्तोत्रं
ज्ञानविज्ञानदायकम् । सर्वपापं शमं याति दत्तात्रेय० ॥ १७ ॥
इदं स्तोत्रं महद्विष्यं दत्तप्रत्यक्षकारकम् । दत्तात्रेयप्रसादाच्च नारदेन
प्रकीर्तितम् ॥ १८ ॥ इति श्रीनारदपुराणे नारदविरचितं दत्तात्रेय-
स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३५९. दत्तापराधक्षमापनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ दत्तात्रेयं त्वां नमामि प्रसीद त्वं सर्वात्मा
सर्वकर्ता न वेद ॥ कोऽप्यन्तं ते सर्वदेवाधिदेव ज्ञाताज्ञातान्मेऽप-
राधान्क्षमस्व ॥ १ ॥ त्वदुद्भवत्वात्त्वदधीनधीत्वात्त्वमेव मे वन्द्य
उपास्य आत्मन् ॥ अथापि मौढ्यात्स्मरणं न ते मे कृतं क्षमस्व
प्रियकृन्महात्मन् ॥ २ ॥ भोगापवर्गप्रदमार्तबन्धुं कारुण्यसिन्धुं
परिहाय बन्धुम् ॥ हिताय चान्यं परिमार्गयन्ति हा मादृशो नष्ट-
दृशो विमूढाः ॥ ३ ॥ न मत्समो यद्यपि पापकर्ता न त्वत्समोऽथापि
हि पापहर्ता ॥ न मत्समोऽन्यो दयनीय आर्य न त्वत्समः क्वापि
दयालुर्वर्यः ॥ ४ ॥ अनाथनाथोऽसि सुदीनबन्धो श्रीशाऽनुकम्पामृत-
पूर्णसिन्धो ॥ त्वत्पादभक्तिं तव दासदास्यं त्वदीयमन्नार्थदृढैकनि-
ष्ठाम् ॥ ५ ॥ गुरुस्मृतिं निर्मलबुद्धिमाधिव्याधिक्षयं मे विजयं च
देहि ॥ इष्टार्थसिद्धिं वरलोकवश्यं धनान्नवृद्धिं वरगोसमृद्धिम् ॥ ६ ॥
पुत्रादिलब्धिं म उदारतां च देहीश मे चास्त्वभयं हि सर्वतः ॥
ब्रह्माग्निभूभ्यो नम ओषधीभ्यो वाचे नमो वाक्पतये च विष्णवे ॥ ७ ॥

शान्ताऽस्तु भूर्नः शिवमन्तरिक्षं द्यौश्चाभयं नोऽस्तु दिशः शिवाश्च ॥
 आपश्च विद्युत्परिपान्तु देवाः शं सर्वतो मेऽभयमस्तु शान्तिः ॥ ८ ॥
 इति श्रीमद्वासुदेवानन्दसरस्वतीविरचितं श्रीदत्तापराधक्षमापनस्तोत्रं
 संपूर्णम् ॥

३६०. श्रीदत्तप्रार्थनाचतुष्कम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ समस्तदोषशोषणं स्वभक्तचित्ततोषणं निजा-
 श्रितप्रपोषणं यतीश्वराग्र्यभूषणम् ॥ त्रयीशिरोविभूषणं प्रदर्शितार्थ-
 दूषणं भजेऽत्रिजं गतैषणं विभुं विभूतिभूषणम् ॥ १ ॥ समस्तलोक-
 कारणं समस्तजीवधारणं समस्तदुष्टमारणं कुबुद्धिशक्तिजारणम् ॥
 भजद्भयाद्रिदारणं भजत्कुर्मवारणं हरिं स्वभक्ततारणं नमामि साधु-
 चारणम् ॥ २ ॥ नमाम्यहं मुदास्पदं निवारिताखिलापदं समस्तदुःख-
 तापदं मुनीन्द्रवंद्य ते पदम् ॥ यदञ्चितान्तरा मदं विहाय नित्यसमदं
 प्रयान्ति नैव ते भिदं मुहुर्भजन्ति चाविदम् ॥ ३ ॥ प्रसीद सर्वचेतने
 प्रसीद बुद्धिचेतने स्वभक्तहृन्निकेतने सदाशु दुःखशातने ॥ त्वमेव मे
 प्रसूर्मेता त्वमेव मे प्रभो पिता त्वमेव मेऽखिलेहितार्थदोऽखिलार्ति-
 तोऽविता ॥ ४ ॥ इति श्रीमद्वासुदेवानन्दसरस्वतीविरचितं श्रीदत्ता-
 त्रेयप्रार्थनाचतुष्कं संपूर्णम् ॥

३६१. दत्तप्रबोधः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नित्यो हि यस्य महिमा न हि मानमेति स त्वं
 महेश भगवन्मघवन्मुखेज्य ॥ उत्तिष्ठ तिष्ठदमृतैरमृतैरिवोक्तैर्गीता-
 गमैश्च पुरुषा पुरुषामशालिन् ॥ १ ॥ भक्तेषु जागृहि मुदा हिमुदा-
 रभावं तल्पं विधाय सविशेषविशेषहेतो ॥ यः शेष एष सकलः
 सकलः स्वगीतैस्त्वं जागृहि श्रितपते तपते नमस्ते ॥ २ ॥ दृष्ट्वा

जनान् विविधकष्टवशान्दयालुस्त्रयात्मा बभूव सकलार्तिहरोऽत्र दत्तः ॥
 अत्रेर्मुनेः सुतपसोऽपि फलं च दातुं बुद्ध्यस्व स त्वमिह यन्महिमा-
 नियत्तः ॥ ३ ॥ आयात्यशेषविनुतोऽप्यवगाहनाय दत्तोऽधुनेति सुर-
 सिन्धुरपेक्षते त्वाम् ॥ क्षेत्रे तथैव कुरुसंज्ञक एव सिद्धास्तस्थुस्तवाच-
 मनदेश इनोदयात्प्राक् ॥ ४ ॥ संध्यामुपासितुमजोऽप्यधुना गमिष्य-
 त्याकाङ्क्षते कृतिजनः प्रतिवीक्षते त्वाम् ॥ कृष्णातटेऽपि नरसिंहसुवा-
 टिकायां सारार्तिकः कृतिजनः प्रतिवीक्षते त्वाम् ॥ ५ ॥ गान्धर्वसंज्ञ-
 कपुरेऽपि सुभाविकास्ते ध्यानार्थमत्र भगवान्समुपैष्यतीति ॥ मत्वा-
 स्थुराचरितसंनियताप्लवाद्या उत्तिष्ठ देव भगवन्नत एव शीघ्रम् ॥ ६ ॥
 पुत्री दिवः खगगणान् सुचिरं प्रसुप्तानुत्पातयत्यरुणगा अधिरूढा तूपाः ।
 काषायवस्त्रमपिधानमपावृणूद्यन्ताक्ष्याग्रजोऽयमवलोकय तं पुरस्तात्
 ॥ ७ ॥ शाटीनिभाभ्रपटलानि तवेन्द्रकाष्ठाभागं यतीन्द्र रुरुधुर्गरुडा-
 ग्रजोऽतः ॥ अस्माभिरीश विदितो ह्युदितोऽयमेवं चन्द्रोऽपि ते मुख-
 रुचिं चिरगां जहाति ॥ ८ ॥ द्वारेऽर्जुनस्तव च तिष्ठति कार्तवीर्यः
 प्रह्लाद एष यदुरेष मदालसाजः ॥ त्वां द्रष्टुकाम इतरे मुनयोऽपि
 चाहमुत्तिष्ठ दर्शय निजं सुमुखं प्रसीद ॥ ९ ॥ एवं प्रबुद्ध इव संस्त-
 वनादभूत्स मालां कमण्डलुमधो डमरं त्रिशूलम् ॥ चक्रं च शंखमुपरि
 स्वकरैर्दधानो नित्यं स मामवतु भावित्वासुदेवः ॥ १० ॥ इति
 वासुदेवानन्दसरस्वतीविरचितो दत्तप्रबोधः संपूर्णः ॥

३६२. दत्तात्रेयाष्टोत्तरशतनामावलिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐकारतत्त्वरूपाय दिव्यज्ञानात्मने नमः ।
 नमोऽतीतमहाधाम्न ऐन्द्रज्यो ओजसे नमः ॥ १ ॥ नष्टमत्सरगम्याया-
 ऽगम्याचारात्मवर्त्मने । मोचितामेध्यकृतये ह्रींबीजश्राणितश्रिये ॥ २ ॥

मोहादिविभ्रमान्ताय बहुकायधराय च । भक्तदुर्वैभवच्छेद्रे
 क्लींबीजवरजापिने ॥ ३ ॥ भवहेतुविनाशाय राजच्छोणाधराय च ।
 गतिप्रकम्पिताण्डाय चारुव्यायतवाहवे ॥ ४ ॥ गतगर्वप्रियायाऽस्तु
 यमादियतचेतसे । वशिताजातवश्याय मुण्डिने अनसूयवे ॥ ५ ॥
 वदद्वरेण्यवागजालाविस्पष्टविविधात्मने । तपोधनप्रसन्नायेडापतिस्तुत-
 कीर्तये ॥ ६ ॥ तेजोमग्न्यन्तरङ्गायाऽङ्गरसद्मविहापिने । आन्तरस्थान-
 संस्थायाऽयैश्वर्यश्रौतगीतये ॥ ७ ॥ वातादिभययुग्भावहेतवे हेतुहेतवे ।
 जगदात्मात्मभूताय विद्विषत्पङ्कधातिने ॥ ८ ॥ सुरवर्गोद्धृते भूत्या
 असुरावासभेदिने । नेत्रे च नयनाक्षणेऽचिच्चेतनाय महात्मने ॥ ९ ॥
 देवाधिदेवदेवाय वसुधासुरपालिने । याजिनामग्रगण्याय द्रंवीजजप-
 तुष्टये ॥ १० ॥ वासनावनदावाय धूलियुग्देहमालिने । यतिसंन्यासि-
 गतये दत्तात्रेयेति संविदे ॥ ११ ॥ यजनास्यभुजेऽजाय तारकावास-
 गामिने । महाजवास्पृश्रपायाऽऽत्ताकाराय विरूपिणे ॥ १२ ॥ नराय
 धीप्रदीपाय यशस्विशसे नमः । हारिणे चोज्ज्वलाङ्गायाऽत्रेस्तनूजाय
 शंभवे ॥ १३ ॥ मोचितामरसंघाय धीमतां धीकराय च । बलिष्ठ-
 विप्रलभ्याय यागहोमप्रियाय च ॥ १४ ॥ भजन्महिमविख्यात्रेऽमरा-
 रिमहिमच्छिदे । लाभाय मुण्डिपूज्याय यमिने हेममालिने ॥ १५ ॥
 गतोपाधिव्याधये च हिरण्याहितकान्तये । यतीन्द्रचर्या दधते नर-
 भावौषधाय च ॥ १६ ॥ वरिष्ठयोगिपूज्याय तन्तुसंतन्वते नमः ।
 स्वात्मगाथासुतीर्थाय सुश्रिये षट्कराय च ॥ १७ ॥ तेजोमयोत्तमा-
 ङ्गाय नोदनानोद्यकर्मणे । हान्यासिमृतिविज्ञात्र ओंकारितसुभक्तये
 ॥ १८ ॥ रुक्शुद्धमनःखेदहते दर्शनाविषयात्मने । राङ्गवातवस्त्राय
 नरतत्त्वप्रकाशिने ॥ १९ ॥ द्रावितप्रणताघायाऽऽत्तस्वजिष्णुस्वराशये ।
 राज्ञ्यास्यैकरूपाय मस्थाय मसुबन्धवे ॥ २० ॥ यतये चोदनातीत-

प्रचारप्रभवे नमः । मानरोषविहीनाय शिष्यसंसिद्धिकारिणे ॥ २१ ॥
 गत्रे पादविहीनाय चोदनाचोदितात्मने । यवीयसेऽऽलर्कदुःखवारिणे-
 ऽखण्डितात्मने ॥ २२ ॥ हींवीजायाऽर्जुनेष्टाय दर्शनादर्शितात्मने ।
 नतिसंतुष्टचित्ताय यतये ब्रह्मचारिणे ॥ २३ ॥ इत्येष सत्स्तवो वृत्तो-
 ऽयात्कं देयात्प्रजापिने । मस्करीशोमनुस्यूतः परब्रह्मपदप्रदः ॥ २४ ॥
 इत्यनेकमंत्रगर्भितं श्रीदत्तात्रेयाष्टोत्तरशतनामावलिस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३६३. दत्तवेदपादस्तुतिः ।

श्रीदत्तात्रेयाय नमः ॥ अग्निमीले परं देवं यज्ञस्य त्वां त्र्ययीश्व-
 रम् ॥ स्तोमोऽयमग्नियोऽर्थ्यस्ते हृदिस्पृगस्तु शंतमः ॥ १ ॥ अयं
 देवाय दूराय गिरां स्वाध्याय सात्वताम् ॥ स्तोमोऽस्त्वनेन विन्देयं
 तद्विष्णोः परमं पदम् ॥ २ ॥ एता या लौकिकाः सन्तु हीना
 वाचोऽपि नः प्रियाः ॥ बालस्येव पितुष्टे त्वं स नो मृळ महँअसि
 ॥ ३ ॥ अयं वां नात्मनोस्तत्त्वमगम्यास्ति दुर्मनाः ॥ हृद्रोगं
 मम सूर्य त्वं हरिमाणं च नाशय ॥ ४ ॥ प्रमन्महेऽस्मान्विद्धीति
 स्तोतारस्ते वयं नमः ॥ भगवो देव ते स्तोममारे अस्मै च शृण्वते
 ॥ ५ ॥ इन्द्रो मदाय यातीह सत्वरं सोमिनो यथा ॥ स्तोतृनेहि
 तथाऽस्मांस्ते माध्वीर्गावो भवन्तु नः ॥ ६ ॥ द्वे विरूपेऽत्र माया-
 यास्तेऽत्र मग्नेऽस्मि पीडितः ॥ माभितः संतपन्तीह सपत्नीरिव
 पशवः ॥ ७ ॥ इदं श्रेष्ठमपि प्राप्य जन्म गन्ताध एव तत् ॥
 कुरु प्रसादं ज्ञात्वैतत्तेनाहं भूरि चाकन ॥ ८ ॥ प्रवस्तुज्ञानाज्जहाति
 निष्कामश्चेन्मृतिं त्वहम् ॥ न तादृशोऽतः कामादि सर्वं रक्षो
 निवर्हय ॥ ९ ॥ सुषुमामूर्धियः स्तोमैरागच्छैते वयं विभो ॥
 त्वदंशास्त्वं पतिर्नोऽसि देवो देवेषु मेधिरः ॥ १० ॥ वसू रूपं

रूपमिह प्रतिरूपोऽसि नो पृथक् ॥ एतानि भूतानि विदुर्ब्राह्मणा ये
मनीषिणः ॥ ११ ॥ तं नु त्वां किं ब्रुवेऽल्पज्ञो भगवन्तं क्षमस्व भोः ॥
ओषमागहि मां त्वं चेत्सखा सन्नतिमन्यसे ॥ १२ ॥ ता वासना
घ्नन्ति यथा वृश्चिकस्यारसं विषम् ॥ अतो मां पाहि भूयिष्ठां नम-
उक्तिं विधेम ते ॥ १३ ॥ नि होता सीदसि विभो यत्वं यष्टुर्गृहे
प्रिय ॥ तं त्वा ह्वये ज्येष्ठराजं ब्रह्मणां ब्रह्मणस्पते ॥ १४ ॥ सेमा-
मविद्धि प्रभृतिमीशिषे योऽव मानिशम् ॥ त्वं विश्वेषां यदीशानो
ब्रह्मणा वेपि मे हवम् ॥ १५ ॥ मन्दः स्वकोऽयं दीनोऽज्ञ इति
विद्वान्भवान्प्रभुः ॥ इन्द्र आशाभ्यः परि मां सर्वाभ्यो अभयं करत्
॥ १६ ॥ प्र य आरू पितां भ्रान्तिं त्वत्प्रसादाज्जहाति सः ॥ विमु-
च्यते तद्विप्रास्त्वां जागृवांसः समिन्धते ॥ १७ ॥ इच्छन्ति देवा
अपि ते प्रसादाय नृजन्म तत् ॥ विद्वान्नामानि ते दत्त विश्वाभि-
र्गीर्भिरीमहे ॥ १८ ॥ इन्द्र त्वा भजतः सुरैर्दुर्लभं किं तरामि
तत् ॥ भक्त्या क्लेशादि ते नावा गम्भीराँ उदर्धौरिव ॥ १९ ॥
न ता रोद्धुं धियः शक्ता योगेनाऽपि ततः सदा ॥ त्रातारं धीमहीश
त्वां धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ २० ॥ वैश्वानराय दत्त्वाऽञ्जं
विधिलब्धं सदैव ते ॥ भवामो भजने सक्ता अस्माकं शृणुधी हवम्
॥ २१ ॥ एवा त्वामिन्द्र विप्रासौ जागृवांसो विपन्यवः ॥ स्तुव-
न्त्येभ्यो हि ते कोऽपि न ज्यायँ अस्ति वृत्रहन् ॥ २२ ॥
प्रक्रभुभ्यो गृणन्त्यस्ते मर्त्येभ्योऽप्यमृतत्वमित् ॥ दत्तं स्मृत्वा तव
मनोरथ आयातु पाजसा ॥ २३ ॥ इदमुत्पदिषं श्रेयो यज्जग्ध्वा
परितृप्यति ॥ साधुस्तद्भजनं तेऽस्मे इषं स्तोतृभ्य आभर ॥ २४ ॥
त्वामग्ने मायिनं मायां जेतारमपराजितम् ॥ हित्वा कं शरणं यामः
स नो बोधि श्रुधी हवम् ॥ २५ ॥ मही महेशोऽज्ञानेन भवानवतु

मानृतम् ॥ यथा वै सूर्यं स्वर्भानुस्तमसाविध्यदासुरः ॥ २६ ॥
 प्रयुज्जती यदात्मानं मनीषा मनसा सह ॥ तदैव भवतैकान्तं
 जानता संगमेमहि ॥ २७ ॥ ऋतस्य गोपास्त्वं देहि मय्यं शं
 युज्जते धियः ॥ भीताय नाधमानाय ऋषये सप्तवध्रये ॥ २८ ॥
 त्वं हि पातासि नो दत्त परिबाधस्व दुष्कृतम् ॥ कामादीन्यस्य
 बीजानि जहि रक्षांसि सुकृतो ॥ २९ ॥ पिबा सोममिति श्रुत्वा
 यष्टुर्हृतिं शुभं द्रवत् ॥ आयासि पुरुष त्वामासु गोपूपपृच्यताम्
 ॥ ३० ॥ इन्द्रं वोतान्यं न पृथङ् मन्ये मायाभिरिद्धवान् ॥
 पुरुष इतीक्षे त्वममित्रां सुषहान्कृधि ॥ ३१ ॥ यज्ञा यज्ञाधीश
 सर्वे त्वन्मया अपि तेषु नः ॥ जपयज्ञो मतस्तेन सप्त पूष्णा गमे-
 महि ॥ ३२ ॥ स्तुषे नराप्यं तुष्टः सन्नथो यस्या अयोमुखम् ॥
 मायां जित्वा भवान्तां मे विश्वाहा शर्म यच्छतु ॥ ३३ ॥ जुषस्व
 स्तोममीशैते प्रियासः सन्तु सूरयः ॥ वयं स्तोमप्रियानेन यच्छा नः
 शर्म दीर्घश्रुत् ॥ ३४ ॥ उग्रो जज्ञे मृत्युरयमदुग्धा इव धेनवः ॥
 धियो मेऽनेनेदृगीश न जातो न जनिष्यते ॥ ३५ ॥ प्रब्रह्मैहीदमा-
 ण्योर्वारुकमिव बन्धनात् ॥ मृत्युंजय प्रमादाख्यान्मृत्योर्मुक्षीय
 माऽमृतात् ॥ ३६ ॥ यद्य वर्म तेनैव पश्येम शरदः शतम् ॥
 स्तोत्राय ते हते मृत्यौ जीवेम शरदः शतम् ॥ ३७ ॥ प्रत्युत्तमं
 महेशं त्वां मनामह इहागहि ॥ मृळा सुक्षत्र मृळ्य मा नो दुःशंस
 ईशत ॥ ३८ ॥ तिस्रो वाचस्तेऽत्र वरां क ईशानं न याचिषत् ॥
 भक्त्या गृणीमस्त्वां स्तोत्रैस्तेभिर्नस्तूयमागहि ॥ ३९ ॥ दूराद्विहाय
 सर्वं त्वामृशयो ये च तुष्टवः ॥ मर्ता अमर्त्यस्य ते तद्भूरि नाम
 मनामहे ॥ ४० ॥ य इन्द्र त्वं यो नमसा स्वध्वरो हीति
 संस्तुतः ॥ इन्द्रो ब्रह्मेन्द्र ऋषिरित्युप ब्रह्माणि नः शृणु ॥ ४१ ॥

वयमु त्वा वरं देवमस्मभ्यं शर्म सप्रथः ॥ मनामहे पृणन्तं
तदभित्वामिन्द्र नोनुमः ॥ ४२ ॥ प्रकृतात्न्यपि सूक्तानि
शृण्वन्तं जातवेदसम् ॥ त्वां गृणन्ति न के त्वं हि येषामिन्द्रो
युवा सखा ॥ ४३ ॥ त्वावतः पाहि नो मर्त्यान्यत इन्द्र
धयामहे ॥ आदिश्य पदभक्तिं ते ततो नो अभयं कृधि ॥ ४४ ॥
आ त्वा रथं न तुरगैः स्तोत्रैस्त्वा वर्तयामसि ॥ स त्वं न इन्द्र
मृळय यस्य ते स्वादु सख्यमित् ॥ ४५ ॥ आ प्रबोधं भवोऽबोधः
स्वप्नवद्दुःखदोऽशुचिः ॥ पतितान्दुःखितानृन्नाः पाहि त्वं शृणुधी गिरः
॥ ४६ ॥ इन्द्राय सोम ते गातुं न क्षमो नाम ते गृणे ॥ बण्महो-
ऽअसि सूर्य त्वं सत्रादेव महोऽअसि ॥ ४७ ॥ सोमः पुनानोतारामो
मया त्वं नाधिलक्षितः ॥ ईक्षे तुच्छान्वहिर्भोगान्योषा जारमिव
प्रियम् ॥ ४८ ॥ प्रण इन्दोरपि स्मरं रूपं ते दर्शयामलम् ॥
मृन्स्तोतृन्पाह्यंहसो नो जहि रक्षांसि सुक्रतो ॥ ४९ ॥ हि न्वन्ति
द्वैतमस्यस्माद्भयं विन्दति मामिह ॥ यदन्ति दूरके यच्च पवमान
वि तज्जहि ॥ ५० ॥ धर्ता कारकशक्तीनां सर्वेषां त्वमिहैक इत् ॥
यशोऽत्रेदं पवित्रं ते विततं ब्रह्मणस्पते ॥ ५१ ॥ असर्जि भवता
विश्वमनित्यमवशं बृहत् ॥ त्वं संस्मर ज्ञ शरण वत्सं जातं न धेनवः
॥ ५२ ॥ पुरोजितीश भो भूमन् तत्र माममृतं कृधि ॥ यत्रानन्दा-
श्च मोदाश्च मुदः प्रमुद आसते ॥ ५३ ॥ अयं स इति विद्वान्तस-
न्यमाय घृतवद्भविः ॥ कुतो जुहोम्यतोऽदेवा यमाय जुहुता हविः
॥ ५४ ॥ निवर्तध्वमिनो देवा भद्रं नो अपि वातय ॥ मनो हरे मां
पाह्यार्तं पिता पुत्रमिव प्रियम् ॥ ५५ ॥ प्रमा प्रमाता प्रमेयं त्रिपुटीह
न विद्यते ॥ रूपं तेऽविकृतं सत्त्वं मधुमन्मे परायणम् ॥ ५६ ॥
प्रहोतारोऽत्रैव मनोन्वाहुवामह इत्यतः ॥ गमादि मनसो नास्य यो

यज्ञस्य प्रसाधनः ॥ ५७ ॥ ये यज्ञेनार्चन्त्यनेन सर्वे नन्दन्ति ते
 त्वया ॥ नान्येऽतस्तत्प्रिया एव विरूपासो दिवस्पतिः ॥ ५८ ॥
 देवानां नु वशे योऽस्य सुमङ्गलीरियं वधूः ॥ स्नेहेषु त्वच्युतो भोगी
 पतिर्बन्धेषु बध्यते ॥ ५९ ॥ विहितं सर्वमिच्छे त्वमतो ज्यायांश्च
 पूरुषः ॥ पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ ६० ॥
 हये जाये इति वदन्या सालावृकहृत्समा ॥ तन्मयो न स वेदामु-
 मात्मानं तव पूरुष ॥ ६१ ॥ उभा उपाधितोऽत्रैकः पाकेन मनसा-
 न्वितः ॥ त्वां यदीक्षेत तं माता रेहृळि स उ रेहृळि मातरम्
 ॥ ६२ ॥ तदिदात्मन्हृदि वपुः पश्यन्तस्ते मनीषया ॥ मुनयो
 वातरशनाः पिशङ्गा वसतेऽमलाः ॥ ६३ ॥ त्वं चिन्मयं बुधा रूपं
 संजानाना उपासते ॥ यो अस्य पारे रजसः स नः पर्षदति द्विषः ।
 ॥ ६४ ॥ इषे त्वोर्जे चौदनेन नित्यहोमेऽपि गव्यतः ॥ यजन्त्यहं
 त्वकामस्त्वां श्रेष्ठतमाय कर्मणे ॥ ६५ ॥ अग्न आयाहीति गातुं
 त्वाऽक्षमः स्तौमि केवलम् ॥ निषीद मे हृदि यथा निहोता सत्सि
 बर्हिषि ॥ ६६ ॥ शं नो देवीः प्रसादात्ते सन्तु धीवृत्तयोऽनिशम् ॥
 आत्मप्रवाहाः स्वारस्याच्छंयोरभिस्त्रवन्तु नः ॥ ६७ ॥ ज्ञातेऽस्मिन्पाश-
 मुक्तिः सकलविदिति तत्स्यादनिर्देश्यमेकं सूक्ष्मं चातीन्द्रियं सत्तदय-
 मिति गिराशाब्दनिर्देश्यमेव ॥ वाक्यैस्तत्त्वं विरोधेऽपि सति सुमतिभिः
 सोऽयमित्यादिवत्तद्भागत्यागेन लक्ष्यं वरगुरुकृपया लभ्यमैक्यं हि
 तज्ज्ञैः ॥ ६८ ॥ इति श्रीदत्तवेदपादस्तुतिः समाप्ता ॥

३६४. श्रीमहावाक्यार्थबोधः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ त्वामग्ने रविचन्द्रादेर्भासकं लोकचालकम् ।
 पृच्छामीदं कथं ज्ञानमामुयां दयया वद ॥ १ ॥ इति पृष्ठोऽर्जुनेनाह

श्रीदत्तः शृणु भूपते । यदेकं परमं ब्रह्म नित्यमुक्तमविक्रियम् ॥ २ ॥
तत्स्वशक्तिसमाविष्टमीशमाहुर्मनीषिणः । स विष्णुः स शिवो ब्रह्मा
सोऽग्निरिन्द्रः स्वराद् हरिः ॥ ३ ॥ धाता कालः क्रिया कर्ता जीवनं
मृत्युरामयः । नारायणो हृषीकेशो भूतं भव्यं भवच्च सः ॥ ४ ॥
वस्तुमात्रमिदं सर्वमहमेवास्मि सर्वदृक् । अहमेव परं ध्येयं मिथ्याभ्र-
मनिवृत्तये ॥ ५ ॥ भ्रमस्यापि च नामानि कल्पितानि शृणुष्व तत् ।
मायाविद्या परा देवी मनोऽनादिर्भ्रमस्त्रिवृत् ॥ ६ ॥ प्रधानं प्रकृति-
र्ब्रह्म योनिः शक्तिश्च कारणम् । मोहोऽध्यासस्तमोऽज्ञानं प्रस्वापः
कारणं त्विदम् ॥ ७ ॥ अतोऽविद्या पञ्चपर्वा महामोहो द्विरूपकः ।
विक्षेपावृत्तिशक्त्याख्य आद्यात्सर्गोऽत्र भौतिकः ॥ ८ ॥ स्वरूपमावृ-
णोत्यन्यो मुक्तं चेशं विना भृशम् । योऽविद्यार्तोऽवशो दुःखी
भ्रान्तोऽज्ञो जीव एव सः ॥ ९ ॥ समष्टिरीशः सर्वज्ञो वशमायः
स्वराद् सुखः । असत्त्वाभानाख्यभक्तावृत्तिहृद्गुरूप्यसौ ॥ १० ॥
मतं मूढैर्जगन्नित्यं तथा जीवेशयोर्भिदा । एवं भेदत्रयेणेदं भातं
वस्त्वेव मायया ॥ ११ ॥ तन्निवृत्तयै कृता वेदैः सृष्टिप्रलयकल्पना ।
मूढस्य सा मता सत्या भ्रमोऽयं लीयते विदा ॥ १२ ॥ ज्ञानं विद्येति
तां प्राहुर्द्वैधा विद्या विचारजा । परोक्षा चापरोक्षेति तत्राद्या गुरुव-
क्त्रतः ॥ १३ ॥ अमानित्वादियुक्तैः सा विज्ञेया साधनान्वितैः ।
गुरुभक्तिं विना सापि दुर्लभा मोक्षदायिनी ॥ १४ ॥ यस्य देवे परा
भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ । तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते
महात्मनः ॥ १५ ॥ गुर्वनुग्रहमात्रेण विचारः सुलभो नृणाम् । विचारेण
परं तत्त्वं स्वयमेव प्रकाशते ॥ १६ ॥ राजंस्त्वयाखिलं कर्म योगयागा-
दिकं मयि । समर्पितं ततोऽयं ते विचारोऽद्य समुत्थितः ॥ १७ ॥
वैराग्यं परमं जातं भ्रममोहमलापहम् । अतो विद्याप्रसादस्ते भविष्य-

त्यचिरेण हि ॥ १८ ॥ विद्या ज्ञेया परोक्षेयं वेदान्तश्रवणात्मिका ।
 उपक्रमादिमिलिङ्गैर्यत्तात्पर्यावधारणम् ॥ १९ ॥ तदेव श्रवणं तत्तु
 हरेत्संशयभावनाम् । असत्त्वावरणं चापि वस्त्वस्तीति तदेक्षते ॥ २० ॥
 मननं कार्यमस्येदमाश्वसंभावनाहरम् । वशीकाराख्यवैराग्ययुक्तस्येदं
 सुखावहम् ॥ २१ ॥ आत्मैव नेह नानास्ति मोहितस्य जगत्विदम् ।
 भाति नान्यस्य मिथ्येदं स्वप्नो निद्रागमे यथा ॥ २२ ॥ विषयान्ध्या-
 यतो यद्वन्मनोरथपरम्परा । असत्येव सदा भाति नानाविषयगोचरा
 ॥ २३ ॥ परमात्मैक एवाहं वस्तुमात्रश्चिदात्मकः । मयि मिथ्यावि-
 भागोऽयं दृश्यतेऽनाद्यविद्यया ॥ २४ ॥ भ्रमो मोहो महामाया
 प्रधानं प्रकृतिर्मनः । अज्ञानं शक्तिरव्यक्तं गुणसाम्यमितीरिता ॥ २५ ॥
 सैव मिथ्यामतिर्यस्या इदं भातं चराचरम् । एवं विचारश्रवणानुसारि
 मननं तु तत् ॥ २६ ॥ सच्चिदानन्दलक्ष्मापि परात्मा माययाऽवृतः ।
 निजं स्वरूपं विस्मृत्य ययेदं दृश्यते जगत् ॥ २७ ॥ महांस्ततोऽहम-
 स्तस्मात्तन्मात्राणि ततः क्रमात् । भूतेन्द्रियसुराणां च सर्गख्यामाऽहमः
 क्रमात् ॥ २८ ॥ न ह्यत्र नियमो राजन्नसत्ये मानसभ्रमे । कदाचि-
 द्युगपत्सृष्टिः क्रमसृष्टिः कदाचन ॥ २९ ॥ देहाः सुरासुरनरतिरश्वां
 भौतिका इमे । स्थूलैः स्थूलानि सूक्ष्मैश्च सूक्ष्माण्येवं भवोद्भवः
 ॥ ३० ॥ उपक्रमोऽयमाख्यात उपसंहार उच्यते । भूतेषु भौतिका-
 नीह क्रमाद्योगी विलापयेत् ॥ ३१ ॥ पृथ्वी जले जलं वह्नौ वह्निर्वायौ
 स खे च खम् । अहमि प्राणगो देवा मनश्चापि स्वकारणे ॥ ३२ ॥
 अहंकारोऽपि महति सोऽव्यक्ते तच्च निष्कले । स एवाहं परात्मैकः
 शुद्धो मुक्त उपाधितः ॥ ३३ ॥ एवं निदिध्यासनत एकः स्वात्मैव
 शिष्यते । तस्मान्नास्त्यपरं किञ्चिदात्मैवायं यथा तथा ॥ ३४ ॥ राज-
 न्मम प्रसादात्त्वं खलु धन्योऽस्यसंशयम् । अन्तःकरणशुद्धिस्ते जाता

वैराग्यमुत्तमम् ॥ ३५ ॥ मयि भक्तिर्दृढा प्रेम्णा श्रवणं चापि विस्तरात् । प्रपञ्चस्यापि चित्तस्था सर्वथा विलयं गता ॥ ३६ ॥ तत्त्वमेकं परं ब्रह्म न द्वितीयं कदापि हि । एवं शमादिरूपां तामारूढो भव भूमिकाम् ॥ ३७ ॥ त्वं साक्षात्कारसूपायक्रमं विध्यथ भूपते । दत्तचित्तो भवाद्यात्र तत्त्वनिश्चयकारक ॥ ३८ ॥ सर्वसाधनसंपन्नः पुरुषो जातनिश्चयः । श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठं तं सद्गुरुं शरणं व्रजेत् ॥ ३९ ॥ तत्त्वमस्यादिवाक्यार्थमुपदिष्टं तु षड्विधैः । लिङ्गैर्धिया समालोच्य बुधः समवधारयेत् ॥ ४० ॥ श्रवणं त्विदमेवोक्तं तत्समासेन ते ब्रुवे । यतस्त्वं शिष्यतां प्राप्तो मत्सेवाहतकिल्बिषः ॥ ४१ ॥ तत्पदेन परं ब्रह्म त्वंपदेन च पूरुषम् । अनृद्यैक्यं तयोर्भूष बोध्यतेऽसिपदेन सत् ॥ ४२ ॥ विरुद्धस्य त्वमर्थस्य तदर्थत्वं कथं भवेत् । इति चेच्छृणु राजेन्द्र तयोरैक्ये निदर्शनम् ॥ ४३ ॥ देवदत्तः कचिद्दृष्टो युवा देशान्तरे स च । पुनर्दृष्टो जरां प्राप्तः सोऽयमित्यवधार्यते ॥ ४४ ॥ पूर्वदेशमवस्थां च त्यक्त्वेदं तस्य वार्द्धकम् । देशं चापि यथैकेन पिण्डेनैक्यं प्रतीयते ॥ ४५ ॥ त्यक्त्वा व्यंशौ तथाऽत्रापि वाक्य ऐक्यं हि लक्ष्यते ॥ त्वंपदस्य च वाच्यार्थः संसारीति सुनिश्चितः ॥ ४६ ॥ कर्ता भोक्ता सुखी दुःखी माययव न तत्त्वतः ॥ देहेन्द्रियमनःप्राणाहंकारेभ्यो विलक्षणः ॥ ४७ ॥ वस्तुतः सच्चिदानन्दस्वरूपो गुणगोचरः ॥ एकांशस्तत्र चिद्रूपमन्यः संसारिताऽस्य च ॥ ४८ ॥ एवं त्वमर्थं निश्चित्य तदर्थमपि निश्चिनु ॥ अतद्यावृत्त्या विधिना साक्षाच्च श्रुतियुक्तितः ॥ ४९ ॥ तत्पदस्य च वाच्यार्थः सर्वज्ञः परमेश्वरः ॥ तस्यैकोऽंशोऽपि चिद्रूपं सर्वज्ञत्वादि चापरः ॥ ५० ॥ त्यक्त्वा विरुद्ध-वाच्यांशद्वयं जीवेशयोरिह ॥ लक्ष्यौ चिदंशौ निर्बाधं पदयोरुभयो-रपि ॥ ५१ ॥ अविरुद्धं तयोरैक्यं लक्षणालक्षितं द्वयोः ॥ वाक्यार्थोऽयं

लचिरेण हि ॥ १८ ॥ विद्या ज्ञेया परोक्षेयं वेदान्तश्रवणात्मिका ।
 उपक्रमादिभिर्लिङ्गैर्यत्तात्पर्यावधारणम् ॥ १९ ॥ तदेव श्रवणं तत्तु
 हरेत्संशयभावनाम् । असत्त्वावरणं चापि वस्त्वस्तीति तदेक्षते ॥ २० ॥
 मननं कार्यमस्येदमाश्रयसंभावनाहरम् । वशीकाराख्यवैराग्ययुक्तस्येदं
 सुखावहम् ॥ २१ ॥ आत्मैव नेह नानास्ति मोहितस्य जगत्त्विदम् ।
 भाति नान्यस्य मिथ्येदं स्वप्नो निद्रागमे यथा ॥ २२ ॥ विषयान्ध्या-
 यतो यद्वन्मनोरथपरम्परा । असत्येव सदा भाति नानाविषयगोचरा
 ॥ २३ ॥ परमात्मैक एवाहं वस्तुमात्रश्चिदात्मकः । मयि मिथ्यावि-
 भागोऽयं दृश्यतेऽनाद्यविद्यया ॥ २४ ॥ भ्रमो मोहो महामाया
 प्रधानं प्रकृतिर्मेनः । अज्ञानं शक्तिरव्यक्तं गुणसाम्यमितीरिता ॥ २५ ॥
 सैव मिथ्यामतिर्यस्या इदं भातं चराचरम् । एवं विचारश्रवणानुसारि
 मननं तु तत् ॥ २६ ॥ सच्चिदानन्दलक्ष्मापि परात्मा माययाऽवृतः ।
 निजं स्वरूपं विस्मृत्य ययेदं दृश्यते जगत् ॥ २७ ॥ महान्ततोऽहम-
 स्तस्मात्तन्मात्राणि ततः क्रमात् । भूतेन्द्रियसुराणां च सर्गखयामाऽहमः
 क्रमात् ॥ २८ ॥ न ह्यत्र नियमो राजन्नसत्ये मानसभ्रमे । कदाचि-
 द्युगपत्सृष्टिः क्रमसृष्टिः कदाचन ॥ २९ ॥ देहाः सुरासुरनरतिरश्वां
 भौतिका इमे । स्थूलैः स्थूलानि सूक्ष्मैश्च सूक्ष्माण्येवं भवोद्भवः
 ॥ ३० ॥ उपक्रमोऽयमाख्यात उपसंहार उच्यते । भूतेषु भौतिका-
 नीह क्रमाद्योगी विलापयेत् ॥ ३१ ॥ पृथ्वी जले जलं वह्नौ वह्निर्वायौ
 स खे च खम् । अहमि प्राणगो देवा मनश्चापि स्वकारणे ॥ ३२ ॥
 अहंकारोऽपि महति सोऽव्यक्ते तच्च निष्कले । स एवाहं परात्मैकः
 शुद्धो मुक्त उपाधितः ॥ ३३ ॥ एवं निदिध्यासनत एकः स्वात्मैव
 शिष्यते । तस्मान्नास्त्यपरं किञ्चिदात्मैवायं यथा तथा ॥ ३४ ॥ राज-
 न्मम प्रसादात्त्वं खलु धन्योऽस्यसंशयम् । अन्तःकरणशुद्धिस्ते जाता

वैराग्यमुत्तमम् ॥ ३५ ॥ मयि भक्तिर्दृढा प्रेम्णा श्रवणं चापि विस्तरात् । प्रपञ्चस्यापि चित्तस्था सर्वथा विलयं गता ॥ ३६ ॥ तत्त्वमेकं परं ब्रह्म न द्वितीयं कदापि हि । एवं शमादिरूपां तामारूढो भव भूमिकाम् ॥ ३७ ॥ त्वं साक्षात्कारसूपायक्रमं विध्यथ भूपते । दत्तचित्तो भवाद्यात्र तत्त्वनिश्चयकारक ॥ ३८ ॥ सर्वसाधनसंपन्नः पुरुषो जातनिश्चयः । श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठं तं सद्गुरुं शरणं व्रजेत् ॥ ३९ ॥ तत्त्वमस्यादिवाक्यार्थमुपदिष्टं तु षड्विधैः । लिङ्गैर्धिया समालोच्य बुधः समवधारयेत् ॥ ४० ॥ श्रवणं त्विदमेवोक्तं तत्समासेन ते ब्रुवे । यतस्त्वं शिष्यतां प्राप्तो मत्सेवाहृतकिल्बिषः ॥ ४१ ॥ तत्पदेन परं ब्रह्म त्वंपदेन च पूरुषम् । अनृद्यैक्यं तयोर्भूष बोध्यतेऽसिपदेन सत् ॥ ४२ ॥ विरुद्धस्य त्वमर्थस्य तदर्थत्वं कथं भवेत् । इति चेच्छृणु राजेन्द्र तयोरैक्ये निदर्शनम् ॥ ४३ ॥ देवदत्तः क्वचिद्दृष्टो युवा देशान्तरे स च । पुनर्दृष्टो जरां प्राप्तः सोऽयमित्यवधार्यते ॥ ४४ ॥ पूर्वदेशमवस्थां च त्यक्त्वेदं तस्य वार्द्धकम् । देशं चापि यथैकेन पिण्डेनैक्यं प्रतीयते ॥ ४५ ॥ त्यक्त्वा द्वांशौ तथाऽत्रापि वाक्य ऐक्यं हि लक्ष्यते ॥ त्वंपदस्य च वाच्यार्थः संसारीति सुनिश्चितः ॥ ४६ ॥ कर्ता भोक्ता सुखी दुःखी माययव न तत्त्वतः ॥ देहेन्द्रियमनःप्राणाहंकारेभ्यो विलक्षणः ॥ ४७ ॥ वस्तुतः सच्चिदानन्दस्वरूपो गुणगोचरः ॥ एकांशस्तत्र चिद्रूपमन्यः संसारिताऽस्य च ॥ ४८ ॥ एवं त्वमर्थं निश्चित्य तदर्थमपि निश्चिनु ॥ अतद्व्यावृत्त्या विधिना साक्षाच्च श्रुतियुक्तिः ॥ ४९ ॥ तत्पदस्य च वाच्यार्थः सर्वज्ञः परमेश्वरः ॥ तस्यैकोऽंशोऽपि चिद्रूपं सर्वज्ञत्वादि चापरः ॥ ५० ॥ त्यक्त्वा विरुद्ध-वाच्यांशद्वयं जीवेशयोरिह ॥ लक्ष्यौ चिदंशौ निर्बाधं पदयोरुभयो-रपि ॥ ५१ ॥ अविरुद्धं तयोरैक्यं लक्ष्णालक्षितं द्वयोः ॥ वाक्यार्थोऽयं

सुनिष्पन्नस्त्वं ब्रह्म परमं हि तत् ॥ ५२ ॥ तदेव त्वं परं ब्रह्म नास्ति
 भेदः कथंचन ॥ अखण्डैकरसत्वेन वाक्यार्थोऽत्र सतां मतः ॥ ५३ ॥
 विशेष्यं त्वंपदं तस्य तत्पदं च विशेषणम् ॥ निरस्यतेऽस्य दुःखित्वं
 सुखित्वं च विधीयते ॥ ५४ ॥ वैपरीत्येन विज्ञेयं विशेष्यं तत्पदं
 तथा ॥ विशेषणं त्वंपदं च पारोक्ष्यस्य निरासकृत् ॥ ५५ ॥ तद्ब्रह्म
 परमं शुद्धं त्वमात्मैव निरामयः ॥ इत्यैक्यं भूष विज्ञेयं वेदोक्तं
 गुर्वनुग्रहात् ॥ ५६ ॥ स्वात्मैक्यार्थमियं प्रोक्ता सुधीभिर्भागलक्षणा ॥
 त्रिकाण्डेनापि वेदेन सोऽयमर्थो विनिश्चितः ॥ ५७ ॥ स्थूलधीभिः
 सुदुर्ज्ञेयो विज्ञेयो हि मनीषिभिः ॥ पर्यवस्यन्ति वेदाद्या अत्रैव
 विविधा अपि ॥ ५८ ॥ शास्त्रतत्त्वमविज्ञाय मूढाः शास्त्राणि सर्वशः ॥
 ते प्रवृत्तिपराण्येव कथयन्ति कुतर्कतः ॥ ५९ ॥ उपक्रमोपसंहारा-
 वभ्यासोऽपूर्वता फलम् ॥ अर्थवादोपपत्ती च लिङ्गं तात्पर्यनिर्णये
 ॥ ६० ॥ प्राक् सदैवेत्युपक्रम्यैतदात्म्यमिदमेव सत् ॥ उपसंहृत-
 मिलेकमभ्यासो नवधा परम् ॥ ६१ ॥ शाब्देनैव ह्यखण्डार्थविनयत्वं
 तृतीयकम् ॥ तुर्यं विदेहकैवल्यं प्रारब्धान्ते विवेकिनः ॥ ६२ ॥ षष्ठं
 मृदादिदृष्टान्तैर्निर्णयस्तूपपत्तिकम् ॥ सृष्टिस्थित्यन्तप्रवेशानियमः
 शोधनं फलम् ॥ ६३ ॥ सप्तार्थवादास्तद्रूपं पञ्चमं लिङ्गमुच्यते ॥
 सर्वस्यात्मन उत्पत्तेरवस्थानाच्च तत्र हि ॥ ६४ ॥ पुनर्लयाज्जगौ वेदः
 कारणब्रह्ममात्रताम् ॥ सूर्यस्येव जले चात्र प्रवेशमपि चात्र तु ॥ ६५ ॥
 अन्तर्यामितया भेदात्सदा नियमनं स्मृतम् ॥ तथा रोहितरूपाद्यैः
 पदार्थपरिशोधनम् ॥ ६६ ॥ अभेदज्ञानस्य परं स्वात्मैक्यममृतं
 फलम् ॥ एवं सप्तार्थवादात्मलक्षणं पञ्चमं मतम् ॥ ६७ ॥ षड्लिङ्गै-
 रिति तात्पर्यावधृतिः श्रवणं स्मृतम् ॥ आस्थायाथो योगभूमिं मननादि
 चरेद्बुधः ॥ ६८ ॥ इति दत्तपुराणे श्रीमहावाक्यार्थबोधः संपूर्णः ॥

३६५. दत्तात्रेयभक्तिनिरूपणस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्रयतेः सुलभो भक्त्याऽयमात्मा पुरुषः परः ।
 इति वेदादिनोक्तं तद्भक्तिमुख्याऽधुनोच्यते ॥ १ ॥ निर्विकल्पं परं
 ब्रह्म साक्षात्कर्तुमनीश्वराः । ये मंदास्तेऽनुकम्प्यन्ते सविशेषनिरूपणैः
 ॥ २ ॥ वशीकृते मनस्येषां सगुणब्रह्मशीलनात् । तदेवाविर्भवेत्सा-
 क्षादपेतोपाधिकल्पनम् ॥ ३ ॥ इत्युक्तेर्नवधा भक्तिर्वाच्यात्र स्मरणा-
 त्मिका । श्रेष्ठार्थ्यान्यत्र च व्याप्ता हृच्छुद्ध्यास्य पदप्रदा ॥ ४ ॥
 सहस्राङ्गात्मकर्माख्यभगवत्स्मरणात्सदा । कृतं कर्माप्यकर्मैव येनैष
 द्वाग्विमुच्यते ॥ ५ ॥ कृत्वेश्वरे परां भक्तिं भगवत्कीर्तनादपि ।
 सद्भक्तो मायिकं पाशं छित्त्वा याति स सद्भूतिम् ॥ ६ ॥ तद्गुणश्रव-
 णाच्चापि श्रद्धावानबहिर्मुखः । समाहितोऽनसूयुर्ना क्षिप्रं नैष्कर्म्य-
 सिद्धिभाक् ॥ ७ ॥ वज्राङ्कुशध्वजाङ्गाङ्गभगवत्पादसेवनात् । भित्त्वा
 मायावृत्तिं सत्त्वशुद्धो याति परं पदम् ॥ ८ ॥ जलेष्टासं कनिष्ठिक्या
 लिखित्वा तारमन्तरे । पत्रेष्वष्टाक्षरं चैकं हृत्स्थमावाह्य तत्र षट्
 ॥ ९ ॥ प्रदर्श्य मुद्रा ऋष्यादीन्स्मृत्वा विन्यस्य चोक्तैः । मात्राः
 शाखाङ्गेषु भूखवाताश्चव्वीजतो हृदा ॥ १० ॥ दत्त्वोपचारान् गन्धा-
 दीन् जपित्वाऽष्टसहस्रकम् । तर्पयित्वा चाष्टशतमृष्यादीनेकवारतः
 ॥ ११ ॥ पुनः संपूज्य विन्यस्य तं स्वात्मन्युद्वेसेत्परम् । त्रिसंध्य-
 मर्चनं त्वेवं यतेरन्यस्य चोच्यते ॥ १२ ॥ लब्ध्वा पूर्वं स्वगृह्योक्तं
 द्विजत्वं भक्तिमान्शुचिः । ज्ञात्वा धनर्णसिद्धारिचक्रसिद्धं मनुं गुरोः
 ॥ १३ ॥ लब्ध्वाऽर्णसंख्यालक्षां प्राक् पुरश्चर्या यथाविधि । कृत्वाऽने-
 नार्चयेदर्चा नियतो नित्यकर्मकृत् ॥ १४ ॥ लौहीं वा संस्कृतां
 शैलीं विभोः साखां सलक्षणाम् । सोऽपि लब्ध्वाखिलान्कामान्
 देहान्ते तन्मयो भवेत् ॥ १५ ॥ पुरा नारायणं ब्रह्मा सत्यक्षेत्रे दया-

निधिम् । प्रणतोऽपृच्छदेकं किमुपास्यं दैवतं परम् ॥ १६ ॥
 स प्राह मामकं धाम यदत्तात्रेयसंज्ञितम् । सदानन्दात्मकं शुद्धं
 सात्त्विकं तारकं परम् ॥ १७ ॥ विश्वरूपं जगद्योनिं तदेकोपास्व
 दैवतम् । लकारं वह्निसंयुक्तं सतुण्डाक्षरबिन्दुकम् ॥ १८ ॥
 तदर्चने मनुं विद्धि छन्दो गायत्रिकास्य च । सदाशिवऋषिर्देवो
 दत्तात्रेयश्चतुर्भुजः ॥ १९ ॥ मनुरेकाक्षरोऽस्यायं जाप्यो गर्भादिता-
 रणः । तारः श्रीदुर्गा क्रों भूमिदत्तैकाक्षरयुञ्जानुः ॥ २० ॥ षडक्षरो
 योगदोऽयं सर्वसंपत्समृद्धिकृत् । ऋष्यादिः पूर्ववक्ष्यासो बीजैः
 शाखाहदादिषु ॥ २१ ॥ दत्तात्रेयं शिवं शान्तमिन्द्रनीलनिभं
 विभुम् । आत्ममायारतं देवमवधूतं दिगम्बरम् ॥ २२ ॥
 भस्मोद्भूलितसवाङ्गं जटाजूटधरं विभुम् । चतुर्बाहुमुदाराङ्गं प्रफुल्लकमले-
 क्षणम् ॥ २३ ॥ ज्ञानयोगनिधिं विश्वगुरुं योगिजनप्रियम् ॥ भक्तानु-
 कम्पिनं सर्वसाक्षिणं सिद्धसेवितम् ॥ २४ ॥ इत्यौपनिषदं दत्तं
 ध्वात्वैकाग्र्यं मनुं जपेत् । स वाञ्छितफलं भुक्त्वा परत्र श्रेय आप्नुयात्
 ॥ २५ ॥ सैकाक्षरं चतुर्थ्यन्तं दत्तात्रेयं नमोन्वितम् । अष्टार्णमन्त्रं
 गायत्रं विद्धि द्वां बीजमस्य तु ॥ २६ ॥ चतुर्थी कीलकं शक्तिर्नम आर्षः
 सदाशिवः । दत्तात्रेयपदस्यार्थः सत्यानन्दचिदात्मकः ॥ २७ ॥ प्रह्नी-
 भावो नमोर्थस्तु पूर्णानन्दैकविग्रहः । तारं सविन्दुं तुण्डार्णं दुर्गा क्रों
 तुर्यमेहि च ॥ २८ ॥ दत्तात्रेयेति संबुद्ध्या स्वाहान्तं द्वादशाक्षरम् ।
 सर्वकामदुघं विद्धि गायत्रं भो शिवार्षकम् ॥ २९ ॥ वराभयदहस्तं
 यो भजेदाभ्यां महाव्रतः । सर्वान्कामानिहैवाप्त्वा सोऽमृतो भवति
 ध्रुवम् ॥ ३० ॥ ॐ बीजं स्वाहात्र शक्तिः संबुद्धिः कीलकं क्रमात् ।
 द्वाभ्यां हृदि च के द्वाभ्यां शिखायां क्रियया न्यसेत् ॥ ३१ ॥
 संबुद्धिभ्यां स्कन्धचक्षुर्द्वयेष्वेऽन्येन तन्मयः । चतुर्वीजैः सक्रियाख्या-

न्याभ्यां करादिषु ॥ ३२ ॥ कृत्वा यजेद्देवदेवं यन्नन्यस्तमभीष्टदम् ।
 दत्तात्रेय हरे कृष्ण उन्मत्तानन्ददायक ॥ ३३ ॥ दिगम्बर मुने बाल
 पिशाचज्ञानसागर । आनुष्टुभः शिवार्पोऽयं षड्भुजात्रेयदैवतः ॥ ३४ ॥
 द्वाभ्यां द्वाभ्यां हृच्छिरसोः शिखायामेकतो गले । द्वाभ्यामेकैकेन
 दोर्द्वगद्वये द्वाभ्यां तथास्त्रके ॥ ३५ ॥ विन्यस्य जपिता दोषमुक्ता सर्वोप-
 कारकृत् । तारं वायुं क्वां कामं क्वां हं दुर्गां हूं च विद्धि सौः ॥ ३६ ॥
 दत्तात्रेयं चतुर्थ्यन्तं स्वाहान्तं षोडशाक्षरम् । वायुस्थाने तु वाग्बीजं
 नमोऽन्ते योजयाथवा ॥ ३७ ॥ स्वाहैकत्र नमोऽन्यत्र शक्तिर्वीजं च
 कीलकम् । तारश्चतुर्थी गायत्री मंत्रराजः शिवोदितः ॥ ३८ ॥ हृदि
 द्वे के त्रीणि शिखायां चैकं कवचे दृशोः । चतुर्थीमन्त्रमस्ये च
 विन्यस्य जपकामदम् ॥ ३९ ॥ सच्चिदानन्दस्वरूपी मुखी मुक्तो
 भवत्यतः । सिद्धगन्धर्वादिसङ्गी लक्षजाप्यष्टसिद्धिभाक् ॥ ४० ॥
 त्रिदेवलोकसंचारी कोटिजापि च दत्तवत् । दशकोटिजपी साक्षाज्जरा-
 मरणवर्जितः ॥ ४१ ॥ द्वयष्टकोटिजपी सिद्धः परकायगतादिकृत् ।
 मन्त्रशक्तिरियं श्लोका अभिगीता इहाप्यमी ॥ ४२ ॥ खड्गस्तम्भो
 जलस्तम्भः सेनास्तम्भस्तथैव च । इच्छासिद्धिर्विशित्वं च दिक्पालैः सह
 भाषणम् ॥ ४३ ॥ वायुवद्वतिरित्याहुराह्लादित्वं च चन्द्रवत् । अग्नि-
 वत्सर्वभक्षत्वं नित्यतृप्तत्वमेव च ॥ ४४ ॥ सर्वभाषापरिज्ञानं सर्व-
 चित्तावबोधनम् । वापीकूपसमुद्राणां पर्वतानां च चालनम् ॥ ४५ ॥
 दत्तात्रेयमयः स्वच्छो भवेत्स व्यासवत्कविः । इतीदं षोडशार्णस्य
 माहात्म्यं तत्प्रयत्नतः ॥ ४६ ॥ प्राणो देवो मनश्चक्षुश्छित्त्वा देयं
 शिरो वपुः । न देयः षोडशार्णोऽसौ सच्छिन्नाय महात्मने ॥ ४७ ॥
 महागुणवते देयः कुप्येत प्रभुरन्यथा । मालाकमण्डलवाद्यत्रिशूले
 शङ्खचक्रके ॥ ४८ ॥ दधानमन्त्रिवरदं दत्तात्रेयं त्र्यम्बीश्वरम् । ध्यात्वेत्थं

विधिवन्मन्त्रजाप्युक्तफलभागभवेत् ॥ ४९ ॥ ॐ नमो भगवान्दत्तात्रेयः
 स्मरणमात्रसंतुष्टो महाभयनिवारणो महाज्ञानप्रदः ॥ ५० ॥ चिदा-
 नन्दात्मा वालोन्मत्तपिशाचवेषो महायोग्यवधूतोऽनसूयानन्द-
 वर्धनोऽन्निपुत्रः ॥ ५१ ॥ ॐ भवबन्धविमोचनो ह्रीं सर्वभूतिदः
 क्रीं असाध्याकर्षण ऐं वाक्प्रदः ॥ ५२ ॥ क्लींजगन्नयवशीकरणः सौः
 सर्वमनःक्षोभणः श्रींमहासंपत्प्रदो ग्लौं भूमण्डलाधिपत्यप्रदः ॥ ५३ ॥
 द्रां चिरजीवी वषड्वशीकुरु वौषडाकर्षय हुं विद्वेषय फडुच्चाटय
 ठः ठः ॥ ५४ ॥ स्तम्भय खं खं मारय नमः संपन्नय स्वाहा पोषय
 परमन्त्रपरयन्त्रपरतन्त्राणि ॥ ५५ ॥ छिन्धि ग्रहान्निवारय व्याधीन्विना-
 शय दुःखं हर दारिद्र्यं विद्रावय देहं पोषय ॥ ५६ ॥ चित्तं तोषय
 सर्वमन्त्रस्वरूपः सर्वतन्त्रस्वरूपः सर्वपल्लवस्वरूपः ॥ ५७ ॥ ॐ नमो
 महासिद्धः स्वाहान्तो मालामन्त्रः । प्रथमान्तां चतुर्थ्यां द्विः क्रियाश्च
 व्याहरेत् ॥ ५८ ॥ विष्णुनोक्ता इमे मन्त्रा ब्रह्मणे कामधेनवः ।
 प्रयोगग्रहभूतारिकुट्टश्रुक्तापभीतिहाः ॥ ५९ ॥ कामिनोऽभीष्टफलदा
 देवसांनिध्यकारकाः । तद्वच्च वज्रकवचं दत्तनामसहस्रकम् ॥ ६० ॥
 एषामन्यतमेनेशं यो वैदिकविधानतः । उपास्ते चित्तशुद्ध्या स मुच्य-
 तेऽत्र परत्र वा ॥ ६१ ॥ दत्तात्रेयनिवासं तदाचण्डालश्चगोखरम् ।
 ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तं समदृक् प्रणमेत्सुधीः ॥ ६२ ॥ चालको भास-
 कोऽस्त्येषां सच्चिदात्मा स्वयंप्रभः । अस्ति भाति प्रियत्वेन भगवानेव
 नापरः ॥ ६३ ॥ यथाधिपे वशा भृत्या निर्माणा ईश्वरे तथा । विदध्या-
 त्स्वामनो दास्यं निरीहं द्वैतदर्शने ॥ ६४ ॥ सख्योः सख्यं यथा लोके
 निरीपेक्षं तथात्मनः । परात्मनापि सततं समाधेः प्राक् प्रकल्पयेत्
 ॥ ६५ ॥ कर्तृत्वादि न मय्येके शुद्धे देहादिसाक्षिणि । इतीक्षणमसं-
 दिग्धं सर्वस्वात्मनिवेदनम् ॥ ६६ ॥ अतीत्य वरदेशादीन् काश्यां

संतोष्य दीपकः । वेदधर्मगुरुं रुग्णं कष्टेन हि महामतिः ॥ ६७ ॥
श्रीदत्तलीलाश्रवणं नयाचे तुष्ट एव सः । गुरुः शिष्याय यत्प्राह मुक्त्यै
तत्सार उच्यते ॥ ६८ ॥ इति श्रीदत्तात्रेयभक्तिनिरूपणस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३६६. गुरुवरप्रार्थनापंचरत्नस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यं विज्ञातुं भृगुर्यः स्वापितरमुपगतः पंचवारं
यथावज्ज्ञादेवामृतासेः सततमनुपमं चिद्विवेकादि लब्ध्वा । तस्मै
तुभ्यं नमः श्रीहरिहरगुरवे सच्चिदानंदमुक्तानंताद्वैतप्रतीते न कुरु
कितवतां पाहि मां दीनबंधो ॥ १ ॥ यस्माद्दृश्यस्य जन्मस्थितिविलय-
मिमे तैत्तिरीयाः पठन्ति स्वाविद्यामात्रयोगात्सुखशयनतले मुख्यतः
स्वप्नवच्च । तस्मै० ॥ २ ॥ यो वेदांतैकलभ्यः श्रुतिषु निवमितस्तैत्तिरी-
यैश्च काण्वैरन्यैरप्यानिषेकादुदयपरिमितं चारुसंस्कारभाजाम् । तस्मै०
॥ ३ ॥ यस्मिन्नवावसन्नाः सकलनिगमवाङ्मौलयः सुप्तपुंसि प्रोक्तं तन्नाम
यद्वन्निजमहिमगतध्वाततत्कार्यरूपे । तस्मै० ॥ ४ ॥ चित्त्वात्संकल्प-
पूर्वं सृजति जगदिदं योगिवन्मायया यः स्वात्मन्येवाद्वितीये परमसुख-
दृशि स्वप्नवद्भूति नित्ये । तस्मै० ॥ ५ ॥ इत्यच्युतविरचितं गुरुवर-
प्रार्थनापंचरत्नस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३६७. दक्षिणामूर्तिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विश्वं दर्पणदृश्यमाननगरीतुल्यं निजांतर्मतं
पश्यन्नात्मनि मायया बहिरिवोद्भूतं यथा निद्रया । यः साक्षी
कुरुते प्रबोधसमये स्वात्मानमेवाद्वयं तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ १ ॥ बीजस्यांतरिवांकुरो जगदिदं प्राङ्निर्विकल्पं
पुनर्मायाकल्पितदेशकालकलनावैचित्र्यचित्रीकृतम् । मायावीव
विजृम्भयत्यपि महायोगीव यः स्वेच्छया तस्मै श्रीगुरु० ॥ २ ॥

यस्यैव स्फुरणं सदात्मकमसत्कल्पार्थकं भासते साक्षात्तत्त्वमसीति
 वेदवचसा यो बोधयत्याश्रितान् । यत्साक्षात्करणाद्भवेन्न पुनरावृत्ति-
 र्भवांभोनिधौ तस्मै श्रीगुरु० ॥ ३ ॥ नानाछिद्रवटोदरस्थितमहादीप-
 प्रभाभास्वरं ज्ञानं यस्य तु चक्षुरादिकरणद्वारा बहिः स्पंदते ।
 जानामीति तमेव भांतमनुभात्येतत्समस्तं जगत्तस्मै श्रीगुरु० ॥ ४ ॥
 देहप्राणमपीन्द्रियाण्यपि चलां बुद्धिं च शून्यं विदुः स्त्रीबालांधजडोप-
 मास्त्वहमिति भ्रांता भृशं वादिनः । मायाशक्तिविलासकल्पितमहा-
 व्यामोहसंहारिणे तस्मै श्रीगुरु० ॥ ५ ॥ राहुग्रस्तदिवाकरेन्दुसदृशो
 मायासमाच्छादनात्सन्मात्रः करणोपसंहरणतो योऽभूत्सुषुप्तः पुमान् ।
 प्रागस्वाप्समिति प्रबोधसमये यः प्रत्यभिज्ञायते तस्मै श्रीगुरु० ॥ ६ ॥
 बाल्यादिष्वपि जाग्रदादिषु तथा सर्वास्वस्थास्वपि व्यावृत्तास्वनुवर्तमा-
 नमहमित्यंतः स्फुरंतं सदा । स्वात्मानं प्रकटीकरोति भजतां यो मद्रया
 तस्मै श्रीगुरु० ॥ ७ ॥ विश्वं पश्यति कार्यकारणतया स्वस्वामिसंबन्धतः
 शिष्याचार्यतया तथैव पितृपुत्राद्यात्मना भेदतः । स्वप्ने जाग्रति वा य
 एष पुरुषो मायापरिभ्रामितस्तस्मै श्रीगुरु० ॥ ८ ॥ भूरम्भांस्यनलोऽनि-
 लोऽवरमहर्नाथोहिमांशुः पुमानित्याभाति चराचरात्मकमिदं यस्यैव
 मूर्त्यष्टम् । नान्यत्किंचन विद्यते विमृशतां यस्मात्परस्माद्विभोस्तस्मै
 श्रीगुरु० ॥ ९ ॥ सर्वात्मत्वमिति स्फुटीकृतमिदं यस्मादमुष्मिन्स्तवे
 तेनास्य श्रवणात्तथार्थमननाङ्ग्यानाच्च संकीर्तनात् । सर्वात्मत्वमहावि-
 भूतिसहितं स्यादीश्वरत्वं स्वतः सिद्ध्येत्तत्पुनरष्टधा परिणतं चैश्वर्यमव्या-
 हतम् ॥ १० ॥ वटविटपिसमीपे भूमिभागे निषण्णं सकलमुनिजनानां
 ज्ञानदातारमारात् । त्रिभुवनगुरुमीशं दक्षिणामूर्तिदेवं जननमरण-
 दुःखच्छेददक्षं नमामि ॥ ११ ॥ चित्रं वटतरोर्मूले वृद्धाः शिष्या
 गुरुर्युवा । गुरोस्तु मौनं व्याख्यातं शिष्यास्तु छिन्नसंशयाः ॥ १२ ॥

ॐ नमः प्रणवार्थाय शुद्धज्ञानैकमूर्तये । निर्मलाय प्रशान्ताय दक्षिणा-
मूर्तये नमः ॥ १३ ॥ निधये सर्वविद्यानां भिषजे भवरोगिणाम् ।
गुरवे सर्वलोकानां दक्षिणामूर्तये नमः ॥ १४ ॥ मौनव्याख्याप्रकटित-
परब्रह्मतत्त्वं युवानं वर्षिष्ठातिवसदपिगणैरावृतं ब्रह्मनिष्ठैः । आचार्येन्द्रं
करकलितचिन्मुद्रमानंदरूपं स्वात्मारामं मुदितवदनं दक्षिणामूर्तिमीडे
॥ १५ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचितं
दक्षिणामूर्तिस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३६८. श्रीदत्तात्रेयवज्रकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीदत्तात्रेयाय नमः ॥ ऋषयः ऊचुः ॥ कथं
संकल्पसिद्धिः स्याद्वेदव्यास कलौ युगे । धर्मार्थकाममोक्षाणां
साधनं किमुदाहृतम् ॥ १ ॥ व्यास उवाच ॥ शृण्वन्तु ऋषयः
सर्वे शीघ्रं संकल्पसाधनम् । सकृदुच्चारमात्रेण भोगमोक्षप्रदायकम्
॥ २ ॥ गौरीशृंगे हिमवतः कल्पवृक्षोपशोभितम् । दीप्ते दिव्यमहा-
रत्नहेममंडपमध्यगम् ॥ ३ ॥ रत्नसिंहासनासीनं प्रसन्नं परमेश्वरम् ।
मंदस्मितमुखाम्भोजं शंकरं प्राह पार्वती ॥ ४ ॥ श्रीदेव्युवाच ॥
देवदेव महादेव लोकशंकर शंकर । मंत्रजालानि सर्वाणि यंत्रजालानि
कृतस्तथा ॥ ५ ॥ तंत्रजालान्यनेकानि मया त्वत्तः श्रुतानि वै । इदानीं
द्रष्टुमिच्छामि विशेषेण महीतलम् ॥ ६ ॥ इत्युदीरितमाकर्ण्य पार्वत्या
परमेश्वरः । करेणामृज्य संतोषात्पार्वतीं प्रत्यभाषत ॥ ७ ॥ मयेदानीं
त्वया सार्धं वृषमारुह्य गम्यते । इत्युक्त्वा वृषमारुह्य पार्वत्या सह
शंकरः ॥ ८ ॥ ययौ भूमंडलं द्रष्टुं गौर्याश्चित्राणि दर्शयन् । क्वचित्
विंध्याचलग्रान्ते महारण्ये सुदुर्गमे ॥ ९ ॥ तत्र व्याहर्तुमायान्तं भिक्षुं
परशुधारिणम् । वर्धमानं महाव्याघ्रं नखदंष्ट्राभिरावृतम् ॥ १० ॥
अतीव चित्रचारित्र्यं वज्रकायसमायुतम् । अप्रयत्नमनायासमखिलं

सुखमास्थितम् ॥ ११ ॥ पलायन्तं मृगं पश्चाद्वाघो भीत्या पलायितः ।
 एतदाश्चर्यमालोक्य पार्वती प्राह शंकरम् ॥ १२ ॥ श्रीपार्वत्युवाच ॥
 किमाश्चर्यं किमाश्चर्यमग्रे शंभो निरीक्ष्यताम् । इत्युक्तः स ततः
 शंभुर्दृष्ट्वा प्राह पुराणवित् ॥ १३ ॥ श्रीशंकर उवाच ॥ गौरि
 वक्ष्यामि ते चित्रमवाङ्मानसगोचरम् । अदृष्टपूर्वमस्माभिर्नास्ति
 किञ्चिन्न कुत्रचित् ॥ १४ ॥ मया सम्यक् समासेन वक्ष्यते शृणु
 पार्वति । अयं दूरश्रवा नाम भिल्लः परमधार्मिकः ॥ १५ ॥ समि-
 त्कुशप्रसूनानि कंदमूलफलादिकम् । प्रत्यहं विपिनं गत्वा समादाय
 प्रयासतः ॥ १६ ॥ प्रिये पूर्वं मुनींद्रेभ्यः प्रयच्छति न वाञ्छति ।
 तेऽपि तस्मिन्नपि दयां कुर्वते सर्वमौनिनः ॥ १७ ॥ दलादनो
 महायोगी वसन्नेव निजाश्रमे । कदाचिदस्मरत् सिद्धं दत्तात्रेयं
 दिगम्बरम् ॥ १८ ॥ दत्तात्रेयः स्मर्तृगामी चेतिहासं परीक्षितुम् ।
 तत्क्षणात्सोऽपि योगीन्द्रो दत्तात्रेयः समुत्थितः ॥ १९ ॥ तं दृष्ट्वाऽऽ-
 श्चर्यतोषाभ्यां दलादनमहामुनिः । संपूज्याग्रे निषीदन्तं दत्तात्रेयमु-
 वाच तम् ॥ २० ॥ मयोपहूतः संप्राप्तो दत्तात्रेय महामुने ।
 स्मर्तृगामी त्वमित्येतत् किंवदन्ती परीक्षितुम् ॥ २१ ॥ मयाद्य
 संस्मृतोऽसि त्वमपराधं क्षमस्व मे । दत्तात्रेयो मुनिं प्राह मम
 प्रकृतिरीदृशी ॥ २२ ॥ अभक्त्या वा सुभक्त्या वा यः स्मरेन्माम-
 नन्यधीः । तदानीं तमुपागत्य ददामि तदभीप्सितम् ॥ २३ ॥
 दत्तात्रेयो मुनिं प्राह दलादनमुनीश्वरम् । यदिष्टं तद्वृणीष्व त्वं यत्
 प्राप्तोऽहं त्वया स्मृतः ॥ २४ ॥ दत्तात्रेयं मुनिः प्राह मया किमपि
 नोच्यते । त्वच्चित्ते यत्स्थितं तन्मे प्रयच्छ मुनिपुंगव ॥ २५ ॥
 श्रीदत्तात्रेय उवाच ॥ ममास्ति वज्रकवचं गृहाणेत्यवदन्मुनिम् ।
 तथेत्यङ्गीकृतवते दलादमुनये मुनिः ॥ २६ ॥ स्ववज्रकवचं प्राह

ऋषिच्छन्दःपुरःसरम् । न्यासं ध्यानं फलं तत्र प्रयोजनमशेषतः
 ॥ २७ ॥ अस्य श्रीदत्तात्रेयवज्रकवचस्तोत्रमंत्रस्य, किरातरूपी महारुद्र
 ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीदत्तात्रेयो देवता, द्रां बीजम्, आं शक्तिः,
 कौं कीलकम्, ॐ आत्मने नमः ॥ ॐ द्रीं मनसे नमः ॥ ॐ आं
 द्रीं श्रीं सौः ॐ क्वां क्लीं क्लूं क्लैं क्लौं क्लुः ॥ श्रीदत्तात्रेयप्रसाद-
 सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ॥ ॐ द्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः ॐ द्रीं तर्ज-
 नीभ्यां नमः ॥ ॐ द्रूं मध्यमाभ्यां नमः ॥ ॐ द्रै अनामिकाभ्यां
 नमः ॥ ॐ द्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ॐ द्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां
 नमः ॥ एवं हृदयादिन्यासः ॥ ॐ भूर्भुवःस्वरोमिति दिग्बंधः ॥
 अथ ध्यानम् ॥ जगदंकुरकंदाय सच्चिदानंदमूर्तये । दत्तात्रेयाय
 योगीन्द्रचन्द्राय परमात्मने ॥ १ ॥ कदा योगी कदा भोगी कदा
 नम्रः पिशाचवत् । दत्तात्रेयो हरिः साक्षाद्भुक्तिमुक्तिप्रदायकः
 ॥ २ ॥ वाराणसीपुरस्त्रायी कोल्हापुरजपादरः । माहुरीपुरभिक्षाशी
 सह्यशायी दिगंबरः ॥ ३ ॥ इन्द्रनीलसमाकारश्चन्द्रकांतिसमद्युतिः ।
 वैदूर्यसदृशस्फूर्तिश्चलत्किञ्चिज्जटाधरः ॥ ४ ॥ स्निग्धधावलययुक्ता-
 क्षोऽल्यंतनीलकनीनिकः । भ्रूवक्षःश्मश्रुनीलांकः शशांकसदृशाननः
 ॥ ५ ॥ हासनिर्जितनीहारः कंठनिर्जितकंबुकः । मांसलांसो दीर्घ-
 बाहुः पाणिनिर्जितपल्लवः ॥ ६ ॥ विशालपीनवक्षाश्च ताम्रपाणि-
 र्दलोदरः । पृथुलश्रोणिललितो विशालजघनस्थलः ॥ ७ ॥ रंभास्तं-
 भोपमानोरुर्नानुपूर्वैकजंघकः । गूढगुल्फः कूर्मपृष्ठो लसत्पादोपरि-
 स्थलः ॥ ८ ॥ रक्तारविंदसदृशरमणीयपदाधरः । चर्मास्वरधरो
 योगी स्वर्तृगामी क्षणे क्षणे ॥ ९ ॥ ज्ञानोपदेशनिरतो विपद्हरण-
 दीक्षितः । सिद्धासनसमासीन ऋजुकायो हसन्मुखः ॥ १० ॥ वाम-
 हस्तेन वरदो दक्षिणेनाभयंकरः । बालोन्मत्तपिशाचीभिः क्वचिद्युक्तः

परीक्षितः ॥ ११ ॥ त्यागी भोगी महायोगी नित्यानन्दो निरंजनः ।
 सर्वरूपी सर्वदाता सर्वगः सर्वकामदः ॥ १२ ॥ भस्मोद्धूलित-
 सर्वाङ्गो महापातकनाशनः । मुक्तिप्रदो मुक्तिदाता जीवन्मुक्तो न
 संशयः ॥ १३ ॥ एवं ध्यात्वाऽनन्यचित्तो मद्रज्रकवचं पठेत् ।
 मामेव पश्यन्सर्वत्र स मया सह संचरेत् ॥ १४ ॥ दिगंबरं
 भस्मसुगंधलेपनं चक्रं त्रिशूलं डमरुं गदायुधम् । पद्मासनं
 योगिमुनीन्द्रवंदितं दत्तेति नामस्मरणेन नित्यम् ॥ १५ ॥ (अथ
 पंचोपचारैः संपूज्य, ॐ द्राम् इति १०८ वारं जपेत्) ॐ
 दत्तात्रेयः शिरः पातु सहस्राब्जेषु संस्थितः । भालं पातवानसूयेय-
 श्चंद्रमंडलमध्यगः ॥ १ ॥ कूर्चं मनोमयः पातु हं क्षं द्विदलपद्मभूः ।
 ज्योतीरूपोऽक्षिणी पातु पातु शब्दात्मकः श्रुती ॥ २ ॥ नासिकां
 पातु गंधात्मा मुखं पातु रसात्मकः । जिह्वां वेदात्मकः पातु
 दंतोष्ठौ पातु धार्मिकः ॥ ३ ॥ कपोलावन्निभूः पातु पात्वशेषं
 ममात्मवित् । स्वरात्मा षोडशराजस्थितः स्वात्माऽवताद्वलम्
 ॥ ४ ॥ स्कन्धौ चन्द्रानुजः पातु भुजौ पातु कृतादिभूः । जत्रुणी
 शत्रुजित् पातु पातु वक्षःस्थलं हरिः ॥ ५ ॥ कादिठांतद्वादशारपद्मगो
 मरुदात्मकः । योगीश्वरेश्वरः पातु हृदयं हृदयस्थितः ॥ ६ ॥
 पार्श्वे हरिः पार्श्ववर्ती पातु पार्श्वस्थितः स्मृतः । हठयोगादियोगज्ञः
 कुक्षी पातु कृपानिधिः ॥ ७ ॥ डकारादिफकारान्तदशारसरसीरुहे ।
 नाभिस्थले वर्तमानो नाभिं वह्न्यात्मकोऽवतु ॥ ८ ॥ वह्नितत्त्वमयो
 योगी रक्षतान्मणिपूरकम् । कटिं कटिस्थब्रह्मांडवासुदेवात्मकोऽवतु
 ॥ ९ ॥ वकारादिलकारान्तषट्पद्मत्रांबुजबोधकः । जलतत्त्वमयो
 योगी स्वाधिष्ठानं समावतु ॥ १० ॥ सिद्धासनसमासीन ऊरू
 सिद्धेश्वरोऽवतु । वादिसांतचतुष्पत्रसरोरुहनिबोधकः ॥ ११ ॥

मूलाधारं महीरूपो रक्षताद्वीर्यनिग्रही । पृष्ठं च सर्वतः पातु जातु-
न्यस्तकरांनुजः ॥ १२ ॥ जंघे पात्ववधूतेंद्रः पात्वंग्री तीर्थपावनः ।
सर्वांगं पातु सर्वात्मा रोमाण्यवतु केशवः ॥ १३ ॥ चर्म चर्मांबरः
पातु रक्तं भक्तिप्रियोऽवतु । मांसं मांसकरः पातु मज्जां मज्जा-
त्मकोऽवतु ॥ १४ ॥ अस्थीनि स्थिरधीः पायान्मेधां वेधाः प्रपाल-
येत् । शुक्रं सुखकरः पातु चित्तं पातु दृढाकृतिः ॥ १५ ॥ मनोबुद्धिः
महंकारं हृषीकेशात्मकोऽवतु । कर्मेन्द्रियाणि पातवीशः पातु ज्ञानेन्द्रि-
याण्यजः ॥ १६ ॥ बंधून् बंधूत्तमः पायाच्छत्रुभ्यः पातु शत्रुजित् ।
गृहारामधनक्षेत्रपुत्रादीञ्चकरोऽवतु ॥ १७ ॥ भार्या प्रकृतिचित्
पातु पश्वादीन्पातु शार्ङ्गभृत् । प्राणान्पातु प्रधानज्ञो भक्ष्यादीन्पातु
भास्करः ॥ १८ ॥ सुखं चंद्रात्मकः पातु दुःखात् पातु पुरांतकः ।
पशून्पशुपतिः पातु भूतिं भूतेश्वरो मम ॥ १९ ॥ प्राच्यां विषहर-
पातु पात्वाग्नेय्यां मखात्मकः । याम्यां धर्मात्मकः पातु नैर्ऋत्यां
सर्ववैरिहृत् ॥ २० ॥ वराहः पातु वारुण्यां वायव्यां प्राणदोऽवतु ।
कौबेर्यां धनदः पातु पात्वैशान्यां महागुरुः ॥ २१ ॥ ऊर्ध्वं पातु
महासिद्धः पात्वधस्ताज्जटाधरः । रक्षाहीनं तु यत्स्थानं रक्षत्वादिमुनी-
श्वरः ॥ २२ ॥ मालामंत्रजपः ॥ हृदयादिन्यासः ॥ एतन्मे वज्रकवचं
यः पठेच्छृणुयादपि । वज्रकायश्चिरंजीवी दत्तात्रेयोऽहमब्रुवम् ॥ २३ ॥
त्यागी भोगी महायोगी सुखदुःखविवर्जितः । सर्वत्रसिद्धसंकल्पो
जीवन्मुक्तोऽद्य वर्तते ॥ २४ ॥ इत्युक्तवान्तर्दधे योगी दत्तात्रेयो
दिगंबरः । दलादनोऽपि तज्जप्त्वा जीवन्मुक्तः स वर्तते ॥ २५ ॥ भिल्लो
दूरश्रवा नाम तदानीं श्रुतवानिदम् । सकृच्छ्रवणमात्रेण वज्राङ्गोऽभ-
वदप्यसौ ॥ २६ ॥ इत्येतद्वज्रकवचं दत्तात्रेयस्य योगिनः । श्रुत्वा-
शेषं शम्भुमुखात् पुनरप्याह पार्वती ॥ २७ ॥ पार्वत्युवाच ॥

एतत्कवचमाहात्म्यं वद विस्तरतो मम । कुत्र केन कदा जाप्यं किं
यज्ञाप्यं कथं कथम् ॥ २८ ॥ उवाच शंभुस्तत्सर्वं पार्वत्या विनयो-
दितम् ॥ श्रीशिव उवाच ॥ शृणु पार्वति वक्ष्यामि समाहितमना-
विलम् ॥ २९ ॥ धर्मार्थकाममोक्षाणामिदमेव परायणम् । हस्त्यश्व-
रथपादातिसर्वैश्वर्यप्रदायकम् ॥ ३० ॥ पुत्रमित्रकलत्रादिसर्वसंतोष-
साधनम् । वेदशास्त्रादिविद्यानां निधानं परमं हि तत् ॥ ३१ ॥
सङ्गीतशास्त्रसाहित्यसत्कवित्वविधायकम् । बुद्धिविद्यास्मृतिप्रज्ञा-
मतिप्रौढिप्रदायकम् ॥ ३२ ॥ सर्वसंतोषकरणं सर्वदुःखनिवारणम् ॥
शत्रुसंहारकं शीघ्रं यशःकीर्तिविवर्धनम् ॥ ३३ ॥ अष्टसंख्या महा-
रोगाः सन्निपातास्त्रयोदश । षण्णवत्यक्षिरोगाश्च विंशतिर्मेहरोगकाः
॥ ३४ ॥ अष्टादश तु कुष्ठानि गुल्मान्यष्टविधान्यपि । अशीति-
र्वातरोगाश्च चत्वारिंशत्तु पैत्तिकाः ॥ ३५ ॥ विंशति श्लेष्मरोगाश्च
क्षयचातुर्थिकादयः । मंत्रयंत्रकुयोगाद्याः कल्पतंत्रादिनिर्मिताः
॥ ३६ ॥ ब्रह्मराक्षसवेतालकूष्मांडादिग्रहोद्भवाः । संग्रजादेशकाल-
स्थास्तापत्रयसमुत्थिताः ॥ ३७ ॥ नवग्रहसमुद्भूता महापातकस-
भवाः । सर्वे रोगाः प्रणश्यन्ति सहस्रावर्तनाद्भुवम् ॥ ३८ ॥
अयुतावृत्तिमात्रेण वंध्या पुत्रवती भवेत् । अयुतद्वितयावृत्त्या
ह्यपमृत्युजयो भवेत् ॥ ३९ ॥ अयुतत्रितयाच्चैव खेचरत्वं प्रजायते ।
सहस्रादयुतादर्वाक् सर्वकार्याणि साधयेत् ॥ ४० ॥ लक्षावृत्त्या
कार्यसिद्धिर्भवत्येव न संशयः ॥ ४१ ॥ विषवृक्षस्य मूलेषु तिष्ठन्
वै दक्षिणामुखः । कुरुते मासमात्रेण वैरिणी विकलेंद्रियम् ॥ ४२ ॥
औदुम्बरतरोर्मूले वृद्धिकामेन जाप्यते । श्रीवृक्षमूले श्रीकामी
तितिणी शान्तिकर्मणि ॥ ४३ ॥ ओजस्कामोऽश्वत्थमूले स्त्रीकामैः
सहकारके । ज्ञानार्थी तुलसीमूले गर्भगोहे सुतार्थिभिः ॥ ४४ ॥

धनार्थिभिस्तु सुक्षेत्रे पशुकामैस्तु गोष्ठके । देवालये सर्वकामैस्त-
त्काले सर्वदर्शितम् ॥ ४५ ॥ नाभिमात्रजले स्थित्वा भानुमालोक्य
यो जपेत् । युद्धे वा शास्त्रवादे वा सहस्रेण जयो भवेत् ॥ ४६ ॥
कण्ठमात्रे जले स्थित्वा यो रात्रौ कवचं पठेत् । ज्वरापस्मारकुष्ठा-
दितापज्वरनिवारणम् ॥ ४७ ॥ यत्र यत्स्यात्स्थिरं यद्यत्प्रसन्नं
तन्निवर्तते । तेन तत्र हि जप्तव्यं ततः सिद्धिर्भवेद्भुवम् ॥ ४८ ॥
इत्युक्तवान् च शिवो गौर्यै रहस्यं परमं शुभम् । यः पठेत् वज्रकवचं
दत्तात्रेयसमो भवेत् ॥ ४९ ॥ एवं शिवेन कथितं हिमवत्सुतायै
प्रोक्तं दलादमुनयेऽत्रिसुतेन पूर्वम् । यः कोऽपि वज्रकवचं पठतीह
लोके दत्तोपमश्नरति योगिवरश्चिरायुः ॥ ५० ॥ इति श्रीरुद्रयामले
हिमवत्खण्डे उमामहेश्वरसंवादे श्रीदत्तात्रेयवज्रकवचस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३६९. श्रीदत्तशरणाष्टकम् ।

श्रीपादश्रीवल्लभ त्वं सदैव श्रीदत्तास्मान्पाहि देवाधिदेव ।
भावग्राह्यक्लेशहारिन्सुकीर्ते घोरात्कष्टादुद्धरास्मान्नमस्ते ॥ १ ॥ त्वं
नो माता त्वं पिताप्तोऽधिपस्त्वं त्राता योगक्षेमकृत्सद्गुरुस्त्वम् । त्वं
सर्वस्वं नो प्रभो विश्वमूर्ते घोरात्कष्टा० ॥ २ ॥ पापं तापं व्याधिमाधिं
च दैन्यं भीतिं क्लेशं त्वं हराशु त्वदन्यम् । त्रातारं नो वीक्ष
ईशास्तजूर्ते घोरात्कष्टा० ॥ ३ ॥ नान्यस्त्राता नापि दाता न भर्ता
त्वत्तो देव त्वं शरण्योऽकहर्ता । कुर्वात्रेयानुग्रहं पूर्णराते घोरात्कष्टा०
॥ ४ ॥ धर्मे प्रीतिं सन्मतिं देवभक्तिं सत्संगातिं देहि भक्तिं च
मुक्तिम् । भावासक्तिं चाखिलानन्दमूर्ते घोरा० ॥ ५ ॥ श्लोकपंचकमे-
तद्यो लोकमंगलवर्धनम् । प्रपठेन्नियतो भक्त्या स श्रीदत्तप्रियो
भवेत् ॥ ६ ॥ इति वासुदेवानन्दसरस्वतियतिविरचितं दत्तशरणा-
ष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥



श्रीमद्भागवतपुराणान्तर्गतानि

❀ दशावतारस्तोत्राणि ❀

३७०. मत्स्यस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नूनं त्वं भगवान्साक्षाद्दर्शित्वायणोऽव्ययः ।
अनुग्रहाय भूतानां धत्से रूपं जलौकसाम् ॥ १ ॥ नमस्ते पुरुष-
श्रेष्ठ स्थित्युत्पत्त्यप्ययेश्वर । भक्तानां नः प्रपन्नानां मुख्यो ह्यात्म-
गतिर्विभो ॥ २ ॥ सर्वे लीलावतारांस्ते भूतानां भूतिहेतवः । ज्ञातु-
मिच्छाम्यदो रूपं यदर्थं भवता धृतम् ॥ ३ ॥ न तेऽरविन्दाक्ष
पदोपसर्पणं मृषा भवेत्सर्वसुहृत्प्रियात्मनः । यथैतरेषां पृथगात्मनां
सतामदीदृशो यद्वपुर्जुतं हि नः ॥ ४ ॥ इति श्रीमद्भागवतपुराणांतर्गतं
मत्स्यस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३७१. कूर्मस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ देवा ऊचुः ॥ नमाम ते देव पदारविंदं प्रपन्न-
तापोपशमातपत्रम् । यन्मूलकेता यतयोऽजसोरुसंसारदुःखं बहि-
रुत्क्षिपन्ति ॥ १ ॥ धातर्यदस्मिन्भव ईश जीवास्तापत्रयेणोपहृता न
शर्म । आत्मलभन्ते भगवंस्तवांग्रिच्छायां सविद्यामत आश्रयेम ॥ २ ॥
मार्गंति यत्ते मुखपद्मनीडैश्छंदःसुपर्णैर्ऋषयो विविक्ते । यस्याधमर्षो-
दसरिद्वारायाः पदं पदं तीर्थपदः प्रपन्नाः ॥ ३ ॥ यच्छ्रद्धया श्रुत-
वत्या च भक्त्या संमृज्यमाने हृदयेऽवधाय । ज्ञानेन वैराग्यबलेन
धीरा ब्रजेम तत्तेऽग्निसरोजपीठम् ॥ ४ ॥ विश्वस्य जन्मस्थिति-
संयमार्थं कृतावतारस्य पदांबुजं ते । ब्रजेम सर्वे शरणं यदीश स्मृतं
प्रयच्छत्यभयं स्वपुंसाम् ॥ ५ ॥ यत्सानुबन्धेऽसति देहगेहे समाह-

मित्यूढदुराग्रहाणाम् । पुंसां सुदूरं वसतोऽपि पुर्यां भजेम तत्ते
 भगवन् पदाब्जम् ॥ ६ ॥ तान्वा असद्वृत्तिभिरक्षिभिर्ये पराहतां-
 तर्मेनसः परेश । अथो न पश्यंत्युस्त्रगाय नूनं ये ते पदन्यासविलास-
 लक्ष्म्याः ॥ ७ ॥ पानेन ते देव कथासुधायाः प्रवृद्धभक्त्या
 विशदाशया ये । वैराग्यसारं प्रतिलभ्य बोधं यथांजसाऽन्वीयुर-
 कुण्ठधिष्यम् ॥ ८ ॥ तथापरे चात्मसमाधियोगवलेन जित्वा
 प्रकृतिं बलिष्ठाम् । त्वामेव धीराः पुरुषं विशन्ति तेषां श्रमः स्यान्न
 तु सेवया ते ॥ ९ ॥ तत्ते वयं लोकसिसृक्षयाद्य त्वयानुसृष्टास्त्रि-
 भिरात्मभिः स्म । सर्वे वियुक्ताः स्वविहारतंत्रं न शक्नुमस्तत्प्रति-
 हर्तवे ते ॥ १० ॥ यावद्बलिं तेऽज हराम काले यथा वयं चान्न-
 मदाम यत्र । यथोभयेषां त इमे हि लोका बलिं हरंतोऽन्नमदं त्य-
 नूहाः ॥ ११ ॥ त्वं नः सुराणामसि सान्वयानां कूटस्थ आद्यः पुरुषः
 पुराणः । त्वं देवशक्त्यां गुणकर्मयोनों रेतस्त्वजायां कविमादधेऽजः
 ॥ १२ ॥ ततो वयं सत्प्रमुखा यदर्थे बभूविमात्मन्करवाम किं ते ।
 त्वं नः स्वचक्षुः परिदेहि शक्त्या देवक्रियार्थे यदनुग्रहाणाम् ॥ १३ ॥
 इति श्रीमद्भागवतपुराणांतर्गतं कूर्मस्तोत्रं समाप्तम् ॥

३७२. वराहस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ऋषय ऊचुः ॥ जितं जितं तेऽजित यज्ञभावना
 त्रयीं तनुं स्वां परिधुन्वते नमः । यद्रोमगर्तेषु निलिल्युरध्वरास्तस्मै
 नमः कारणसूकराय ते ॥ १ ॥ रूपं तवैतन्ननु दुष्कृतात्मनां
 दुर्दर्शनं देव यदध्वरात्मकम् । छंदांसि यस्य त्वचि बहिं रोमस्वाज्यं
 दृशि त्वंग्रियु चातुर्होत्रम् ॥ २ ॥ सुक् तुण्ड आसीत्सुव ईश
 नासयोरिडोदरे चमसाः कर्णरंध्रे । प्राशित्रमास्ये ग्रसने ग्रहास्तु ते

यच्चर्वणं ते भगवन्नग्निहोत्रम् ॥ ३ ॥ दीक्षानुजन्मोपसदः शिरोधरं
 त्वं प्रायणीयोदयनीयदंष्ट्रः । जिह्वा प्रवर्ग्यस्तव शीर्षकं क्रतोः सभ्या-
 वसथ्यं चितयोऽसवो हि ते ॥ ४ ॥ सोमस्तु रेतः सवनान्यवस्थिति-
 संस्थाविभेदास्तव देव धातवः । सत्राणि सर्वाणि शरीरसंधिस्त्वं
 सर्वयज्ञक्रतुरिष्टिवंधनः ॥ ५ ॥ नमो नमस्तेऽखिलयन्त्रदेवताद्रव्याय
 सर्वकृतवे क्रियात्मने । वैराग्यभक्त्यात्मजयानुभावितज्ञानाय विद्यागुरवे
 नमो नमः ॥ ६ ॥ दंष्ट्राग्रकोव्या भगवंस्त्वया धृता विराजते भूधर
 भूः सभूधरा । यथा वनान्निःसरतो दत्ता धृता मतंगजेंद्रस्य सप-
 त्रपद्मिनी ॥ ७ ॥ त्रयीमयं रूपमिदं च सौकरं भूमंडले नाथ दत्तः
 धृतेन ते । चकास्ति शृंगोढघनेन भूयसा कुलाचलेंद्रस्य यथैव
 विभ्रमः ॥ ८ ॥ संस्थापयैनां जगतां सतस्थुषां लोकाय पत्नीमसि
 मातरं पिता । विधेम चास्यै नमसा सह त्वया यस्यां स्वतेजोऽग्नि-
 मिवारणावधाः ॥ ९ ॥ कः श्रद्धधीतान्यतमस्तव प्रभो रसां गताया
 भुव उद्विर्बर्हणम् । न विस्मयोऽसौ त्वयि विश्वविस्मये यो माययेदं
 ससृजेऽतिविस्मयम् ॥ १० ॥ विधुन्वता वेदमयं निजं वपुर्जनस्तपः-
 सत्यनिवासिनो जयम् । सटाशिखोद्भूतशिवांबुबिंदुभिर्विमृज्यमाना
 भृशमीश पाविताः ॥ ११ ॥ स वै वत अष्टमतिस्तवैष ते यः कर्मणां
 पारमपारकर्मणः । यद्योगमायागुणयोगमोहितं विश्वं समस्तं भगवन्वि-
 धेहि शम् ॥ १२ ॥ इति श्रीमद्भागवतपुराणांतर्गतं वराहस्तोत्रं
 संपूर्णम् ॥

३७३. नृसिंहस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ब्रह्मोवाच ॥ नतोऽस्म्यनंताय दुरंतशक्तये
 विचित्रवीर्याय पवित्रकर्मणे । विश्वस्य सर्गस्थितिसंयमान्गुणैः स्वली-
 कया संदधतेऽव्ययात्मने ॥ १ ॥ श्रीरुद्र उवाच ॥ कोपकालो

युगांतस्ते हतोऽयमसुरोऽल्पकः । तत्सुतं पाह्युपसृतं भक्तं ते भक्त-
वत्सल ॥ २ ॥ इंद्र उवाच ॥ प्रत्यानीताः परम भवता त्रायतां नः
स्वभागा दैत्याक्रांतं हृदयकमलं त्वद्गृहं प्रत्यबोधि । कालग्रस्तं किय-
दिदमहो नाथ शुश्रूषतां ते मुक्तिस्तेषां नहि बहुमता नारसिंहापरैः
किम् ॥ ३ ॥ ऋषय ऊचुः ॥ त्वं नस्तपः परममात्थ यदात्मतेजो
येनेदमादिपुरुषात्मगतं ससर्ज । तद्विप्रलुप्तममुनाद्य शरण्यपाल रक्षा-
गृहीतवपुषा पुनरन्वमंस्थाः ॥ ४ ॥ पितर ऊचुः । श्राद्धानि नोऽधिवृ-
भुजे प्रसभं तनूजैर्दत्तानि तीर्थसमयेऽप्यपिवत्तिलाम्बु । तस्योदराब्रू-
विदीर्णवपाद्य आर्च्छत्तस्मै नमो नृहरयेऽखिलधर्मगोप्त्रे ॥ ५ ॥ सिद्धा
ऊचुः ॥ यो नो गतिं योगसिद्धामसाधुरहारपीद्योगतपोबलेन ।
नानादर्पं तं नखैर्निर्ददार तस्मै तुभ्यं प्रणताः स्मो नृसिंह ॥ ६ ॥
विद्याधरा ऊचुः । विद्यां पृथग्धारणयाऽनुराद्धां न्यपेधदज्ञो बलवीर्य
दृष्टः । स येन संख्ये पशुवद्धतस्तं मायानृसिंहं प्रणताः स्म नित्यम्
॥ ७ ॥ नागा ऊचुः ॥ येन पापेन रत्नानि स्त्रीरत्नानि हृतानि नः ।
तद्वक्षःपाटनेनासां दत्तानन्द नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥ मनव ऊचुः ॥
मनवो वयं तव निदेशकारिणो दितिजेन देव परिभूतसेतवः । भवता
खलः स उपसंहृतः प्रभो करवाम ते किमनुशाधि किंकरान् ॥ ९ ॥
प्रजापतय ऊचुः ॥ प्रजेशा वयं ते परेशाभिसृष्टा न येन प्रजा वै
सृजामो निषिद्धाः । स एष त्वया भिन्नवक्षानुशेते जगन्मङ्गलं सत्त्वमूर्ते-
ऽवहारः ॥ १० ॥ गन्धर्वा ऊचुः ॥ वयं विभो ते नटनाट्यगायका
येनात्मसाद्वीर्यबलौजसा कृताः । स एष नीतो भवता दशामिमां
किमुत्पथस्थः कुशलाय कल्पते ॥ ११ ॥ चारणा ऊचुः ॥ हरे तवांग्नि-
पंकजं भवापवर्गमाश्रिताः । यदेव साधु हृच्छयस्त्वयाऽसुरः समापितः
॥ १२ ॥ यक्षा ऊचुः ॥ वयमनुचरमुख्याः कर्मभिस्ते मनोज्ञैस्त इह

दितिसुतेन प्रापिता वाहकत्वम् । स तु जनपरितापं तत्कृतं जानता ते
 नरहर उपनीतः पंचतां पंचविंशः ॥ १३ ॥ किंपुरुषा ऊचुः ॥ वयं
 किंपुरुषास्त्वं तु महापुरुष ईश्वर । अयं कुपुरुषो नष्टो धिक्कृतः साधु-
 भिर्यदा ॥ १४ ॥ वैतालिका ऊचुः ॥ सभासु सत्रेषु तवामलं यशो
 गीत्वा सपर्या महतीं लभामहे । यस्तां व्यनैषीद्वृक्षमेष दुर्जनो दिष्ट्या
 हतस्ते भगवन्त्यथामयः ॥ १५ ॥ किन्नरा ऊचुः ॥ वयमीश किन्नर-
 गणास्तवानुगा दितिजेन विष्टिममुनाऽनुकारिताः । भवता हरे स वृजि-
 नोऽवसादितो नरासिंह नाथ विभवाय नो भव ॥ १६ ॥ विष्णुपार्षदा
 ऊचुः ॥ अद्यैतद्वरिनररूपमद्भुतं ते दृष्टं नः शरणद सर्वलोकशर्म ।
 सोऽयं ते विधिकर ईश विप्रशसस्तस्येदं निधनमनुग्रहाय विद्मः ॥ १७ ॥
 इति श्रीमद्भागवतपुराणांतर्गतं नृसिंहस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३७४. लक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमत्पयोनिधिनिकेतन चक्रपाणे भोगीन्द्र-
 भोगमणिरंजितपुण्यमूर्ते । योगीश शाश्वत शरण्य भवाब्धिपोत लक्ष्मी-
 नृसिंह मम देहि करावलंबम् ॥ १ ॥ ब्रह्मेन्द्ररुद्रमरुदर्ककिरीटकोटि-
 संवट्टिताङ्घ्रिकमलामलकांतिकांत । लक्ष्मीलसत्कुचसरोरुहराजहंस
 लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलंबम् ॥ २ ॥ संसारघोरगहने चरतो
 मुरारे मारोग्रभीकरमृगप्रवरार्दितस्य । आर्तस्य मत्सरनिदाघनिपीडितस्य
 लक्ष्मीनृसिंह ॥ ३ ॥ संसारकूपमतिघोरमगाधमूलं संप्राप्य दुःख-
 शतसर्पसमाकुलस्य । दीनस्य देव कृपणापदमागतस्य लक्ष्मीनृसिंह ॥
 ४ ॥ संसारसागरविशालकरालकालनक्रग्रहग्रसननिग्रहविग्रहस्य ।
 व्यग्रस्य रागरसनोर्मिनिपीडितस्य लक्ष्मीनृसिंह ॥ ५ ॥ संसारवृक्ष-
 भवबीजमनंतकर्मशाखाशतं करणपत्रमनंगपुष्पम् । आरुह्य दुःखफलितं
 पततो दयालो लक्ष्मीनृसिंह ॥ ६ ॥ संसारसर्पघनवक्रभयोग्रती-

ब्रदंष्ट्राकरालविषदग्धत्रिनष्टमूर्ते । नागारिवाहन सुधाधिनिवास शौरे
 लक्ष्मीनृसिंह० ॥ ७ ॥ संहारदावदहनातुरभीकरोरुज्वालावलीभिरति-
 दग्धतनूरुहस्य । त्वत्पादपद्मसरसीशरणागतस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥ ८ ॥
 संसारजालपतितस्य जगन्निवास सर्वेन्द्रियार्थबडिशार्थज्ञपोषमस्य ।
 प्रोत्खंडितप्रचुरतालुकमस्तकस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥ ९ ॥ संसारभीकर-
 करींद्रकलाभिघातनिष्पिष्टमर्मवपुषः सकलार्तिनाश । प्राणप्रयाणभव-
 भीतिसमाकुलस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥ १० ॥ अंधस्य मे हतविवेकमहा-
 धनस्य चोरैः प्रभो बलिभिरिन्द्रियनामधेयैः । मोहांधकूपकुहरे विनि-
 पातितस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥ ११ ॥ लक्ष्मीपते कमलनाभ सुरेश
 विष्णो वैकुण्ठ कृष्ण मधुसूदन पुष्कराक्ष । ब्रह्मण्य केशव जनार्दन
 वासुदेव देवेश देहि कृपणस्य करावलंबम् ॥ १२ ॥ यन्माययोजित-
 वपुःप्रचुरप्रवाहमज्ञार्थमत्र निवहोरुकरावलंबम् । लक्ष्मीनृसिंहचरणाब्ज-
 मधुव्रतेन स्तोत्रं कृतं सुखकरं भुवि शंकरेण ॥ १३ ॥ इति
 श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचितं संकष्टनाशनं
 लक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३७५. वामनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अदितिरुवाच ॥ यज्ञेश यज्ञपुरुषाच्युत तीर्थ-
 पाद तीर्थश्रवः श्रवणसंगलनामधेय । आपन्नलोकवृजिनोपशमोदयाऽद्य
 शं नः कृधीश भगवन्नसि दीननाथः ॥ १ ॥ विश्वाय विश्वभवनस्थिति-
 संयमाय स्वैरं गृहीतपुरुशक्तिगुणाय भूम्ने । स्वस्थाय शश्वदुपवृंहित-
 पूर्णबोधव्यापादितात्मतमसे हरये नमस्ते ॥ २ ॥ आयुः परं वपुर-
 भीष्टमतुल्यलक्ष्मीद्यौर्भूरसाः सकलयोगगुणास्त्रिवर्गः । ज्ञानं च केवल-
 मनंत भवंति तुष्टात्त्वत्तो नृणां किमु सपत्नजयादिराशीः ॥ ३ ॥ इति
 श्रीमन्नागवतपुराणांतर्गतं वामनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३७६. वामनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अदितिरुवाच ॥ नमस्ते देवदेवेश सर्वव्यापिन्
जनार्दन । सत्त्वादिगुणभेदेन लोकव्यापारकारिणे ॥ १ ॥ नमस्ते बहु-
रूपाय अरूपाय नमो नमः । सर्वैकाद्भुतरूपाय निर्गुणाय गुणात्मने
॥ २ ॥ नमस्ते लोकनाथाय परमज्ञानरूपिणे । सद्भक्तजनवात्सल्य-
शीलिने मंगलात्मने ॥ ३ ॥ यस्यावताररूपाणि ह्यर्जयन्ति मुनीश्वराः ।
तमादिपुरुषं देवं नमामीष्टार्थसिद्धये ॥ ४ ॥ यं न जानन्ति श्रुतयो यं
न जानन्ति सूरयः । तं नमामि जगद्धेतुं मायिनं तममायिनम् ॥ ५ ॥
यस्यावलोकनं चित्रं मायोपद्रववारणम् । जगद्रूपं जगत्पालं तं वंदे
पद्मजाधवम् ॥ ६ ॥ यो देवस्त्यक्तसंगानां शांतानां करुणार्णवः ।
करोति ह्यात्मना संगं तं वंदे संगवर्जितम् ॥ ७ ॥ यत्पा-
दाब्जजलक्लिन्नसेवारंजितमस्तकाः । अवापुः परमां सिद्धिं तं वंदे
सर्ववर्दितम् ॥ ८ ॥ यज्ञेश्वरं यज्ञभुजं यज्ञकर्मसु निष्ठितम् ।
नमामि यज्ञफलदं यज्ञकर्मप्रबोधकम् ॥ ९ ॥ अजामिलोऽपि
पापात्मा यन्नामोच्चारणादनु । प्राप्तवान्परमं धाम तं वंदे
लोकसाक्षिणम् ॥ १० ॥ ब्रह्माद्या अपि ये देवा यन्मायापाश-
यन्त्रिताः । न जानन्ति परं भावं तं वंदे सर्वनायकम् ॥ ११ ॥ हृत्प-
द्मनिलयोऽज्ञानां दूरस्थ इव भाति यः । प्रमाणातीतसद्भावं तं वंदे
ज्ञानसाक्षिणम् ॥ १२ ॥ यन्मुखाद्ब्राह्मणो जातो बाहुभ्यां क्षत्रियो-
ऽजनि । तथैव ऊरुतो वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥ १३ ॥ मन-
सश्चंद्रमा जातो जातः सूर्यश्च चक्षुषः । मुखादिंद्रस्तथाग्निश्च प्राणा-
द्वायुरजायत ॥ १४ ॥ त्वमिंद्रः पवनः सोमस्त्वमीशानस्त्वमंतकः ।
त्वमग्निर्निर्ऋतिश्चैव वरुणस्त्वं दिवाकरः ॥ १५ ॥ देवाश्च स्थावराश्चैव
पिशाचाश्चैव राक्षसाः । गिरयः सिद्धगंधर्वा नद्यो भूमिश्च सागराः ॥ १६ ॥

त्वमेव जगतामीशो यन्नामास्ति परात्परः । त्वद्रूपमखिलं
तस्मात्पुत्रान् मे पाहि श्रीहरे ॥ १७ ॥ इति स्तुत्वा देवधात्री देवं
नत्वा पुनः पुनः । उवाच प्राञ्जलिर्भूत्वा हर्षाश्रुक्षालितस्तनी ॥ १८ ॥
अनुग्राह्यास्मि देवेश हरे सर्वादिकारण । अकंटकश्रियं देहि मत्सु-
तानां दिवौकसाम् ॥ १९ ॥ अंतर्यामिन् जगद्रूप सर्वभूतपरेश्वर ।
तवाज्ञातं किमस्तीह किं मां मोहयसि प्रभो ॥ २० ॥ तथापि तव
वक्ष्यामि यन्मे मनसि वर्तते । वृथापुत्रास्मि देवेश रक्षोभिः परि-
पीडिता ॥ २१ ॥ एतान्न हंतुमिच्छामि मत्सुता दितिजा यतः । तान-
हत्वा श्रियं देहि मत्सुतानामुवाच सा ॥ २२ ॥ इत्युक्तो देवदेवस्तु
पुनः प्रीतिमुपागतः । उवाच हर्षयन् साध्वीं कृपयाभिपरिभुतः
॥ २३ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ प्रीतोऽस्मि देवि भद्रं ते भविष्यामि
सुतस्तव । यतः सपत्नीतनयेष्वपि वात्सल्यशालिनी ॥ २४ ॥ त्वया
च मे कृतं स्तोत्रं पठन्ति भुवि मानवाः । तेषां पुत्रा धनं संपन्न
हीयन्ते कदाचन ॥ २५ ॥ अंते मत्पदमाप्नोति यद्विष्णोः परमं
शुभम् ॥ २६ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे वामनस्तोत्रं समाप्तम् ॥

३७७. परशुरामाष्टाविंशतिनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ऋषिरुवाच ॥ यमाहुर्वासुदेवांशं हैहयानां
कुलान्तकम् ॥ त्रिःसप्तकृत्वो य इमां चक्रे निःक्षत्रियां महीम् ॥ १ ॥
दुष्टं क्षत्रं भुवो भारमब्रह्मण्यमनीनशत् ॥ तस्य नामानि पुण्यानि
वच्मि ते पुरुषर्षभ ॥ २ ॥ भूभारहरणार्थाय मायामानुषविग्रहः ॥
जनार्दनांशसम्भूतः स्थित्युत्पत्त्यप्ययेश्वरः ॥ ३ ॥ भार्गवो जामदग्न्यश्च
पित्राज्ञापरिपालकः ॥ मातृप्राणप्रदो धीमान् क्षत्रियान्तकरः प्रभुः
॥ ४ ॥ रामः परशुहस्तश्च कार्तवीर्यमदापहः ॥ रेणुकादुःखशोकघ्नो
विशोकः शोकनाशनः ॥ ५ ॥ नवीननीरदश्यामो रक्तोत्पलविलोचनः ॥

घोरो दण्डधरो धीरो ब्रह्मण्यो ब्राह्मणप्रियः ॥ ६ ॥ तपोधनो महे-
न्द्रादौ न्यस्तदण्डः प्रशान्तधीः ॥ उपगीयमानचरितः सिद्धगन्धर्वचा-
रणैः ॥ ७ ॥ जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखशोकभयातिगः ॥ इत्यष्टाविं-
शतिर्नाम्नामुक्ता स्तोत्रात्मिका शुभा ॥ ८ ॥ अनया प्रीयतां देवो
जामदग्न्यो महेश्वरः ॥ नेदं स्तोत्रमशान्ताय नादान्तायातपस्विने
॥ ६ ॥ नावेदविदुषे वाच्यमशिष्याय खलाय च ॥ नासूयकायानृजवे न
चानिर्दिष्टकारिणे ॥ १० ॥ इदं प्रियाय पुत्राय शिष्यायानुगताय च ॥
रहस्यधर्मो वक्तव्यो नान्यस्मै तु कदाचन ॥ ११ ॥ इति परशुरामाष्टा-
विंशतिनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥



रामस्तोत्राणि ।



कल्याणानां निधानं कलिमलमथनं पावनं पावनानां
पाथेयं यन्मुमुक्षोः सपदि परपदप्राप्तये प्रस्थितस्य ।
विश्रामस्थानमेकं कविवरवचसां जीवनं सज्जनानां
बीजं धर्मद्रुमस्य प्रभवतु भवतां भूतये रामनाम ॥

❀ रामस्तोत्राणि । ❀

३७८. रामहृदयम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमहादेव उवाच ॥ ततो रामः स्वयं प्राह
हनूमंतमुपस्थितम् । शृणु यत्त्वं प्रवक्ष्यामि ह्यात्मानात्मपरात्मनाम्
॥ १ ॥ आकाशस्य यथा भेदस्त्रिविधो दृश्यते महान् । जलाशये
महाकाशस्तदवच्छिन्न एव हि । प्रतिबिंबाख्यमपरं दृश्यते त्रिविधं
नभः ॥ २ ॥ बुद्ध्यवच्छिन्नचैतन्यमेकं पूर्णमथापरम् । आभास-
स्त्वपरं बिंबभूतमेवं त्रिधा चित्तिः ॥ ३ ॥ साभासबुद्धेः कर्तृत्वम-
विच्छिन्नेऽविकारिणि । साक्षिण्यारोप्यते भ्रांत्या जीवत्वं च तथा-
ऽबुधैः ॥ ४ ॥ आभासस्तु मृषाबुद्धिरविद्याकार्यमुच्यते । अविच्छिन्नं
तु तद्ब्रह्म विच्छेदस्तु विकल्पितः ॥ ५ ॥ अविच्छिन्नस्य पूर्णेन एकत्वं
प्रतिपद्यते । तत्त्वमस्यादिवाक्यैश्च साभासस्याहमस्तथा ॥ ६ ॥
ऐक्यज्ञानं यदोत्पन्नं महावाक्येन चात्मनोः । तदाऽविद्या स्वकार्यैश्च
नश्यत्येव न संशयः ॥ ७ ॥ एतद्विज्ञाय मद्भक्तो मद्भावायोपप-
द्यते ॥ ८ ॥ मद्भक्तिविमुखानां हि शास्त्रगतेषु मुख्यताम् । न ज्ञानं
न च मोक्षः स्यात्तेषां जन्मशतैरपि ॥ ९ ॥ इदं रहस्यं हृदयं
ममात्मनो मयैव साक्षात्कथितं तवानघ । मद्भक्तिहीनाय शठाय न
त्वया दातव्यमैन्द्रादपि राज्यतोऽधिकम् ॥ १० ॥ इति श्रीमदध्यात्म-
रामायणे बालकांडे श्रीरामहृदयं संपूर्णम् ॥

३७९. रामस्तवराजः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीरामचंद्रस्तवराजस्तोत्रमंत्रस्य सनत्कुमार
ऋषिः । श्रीरामो देवता । अनुष्टुप् छंदः । सीता बीजम् । हनूमान्
शक्तिः । श्रीरामप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥ सूत उवाच ॥ सर्वशास्त्रार्थ-

तत्त्वज्ञं व्यासं सत्यवतीसुतम् । धर्मपुत्रः प्रहृष्टात्मा प्रत्युवाच
मुनीश्वरम् ॥ १ ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ भगवन्योगिनां श्रेष्ठ सर्व-
शास्त्रविशारद । किं तत्त्वं किं परं जाप्यं किं ध्यानं मुक्तिसाधनम्
॥ २ ॥ श्रोतुमिच्छामि तत्सर्वं ब्रूहि मे मुनिसत्तम । वेदव्यास
उवाच ॥ धर्मराज महाभाग शृणु वक्ष्यामि तत्त्वतः ॥ ३ ॥ यत्परं
यद्गुणातीतं यज्ज्योतिरमलं शिवम् । तदेव परमं तत्त्वं कैवल्यपद-
कारणम् ॥ ४ ॥ श्रीरामेति परं जाप्यं तारकं ब्रह्मसंज्ञकम् । ब्रह्म-
हत्यादिपापघ्नमिति वेदविदो विदुः ॥ ५ ॥ श्रीराम रामेति जना ये
जपन्ति च सर्वदा । तेषां भुक्तिश्च मुक्तिश्च भविष्यति न संशयः
॥ ६ ॥ स्तवराजं पुरा प्रोक्तं नारदेन च धीमता । तत्सर्वं संप्रवक्ष्यामि
हरिध्यानपुरःसरम् ॥ ७ ॥ तापत्रयाग्निशमनं सर्वाघौघनिकृंतनम्
दारिद्र्यदुःखशमनं सर्वसंपत्करं शिवम् ॥ ८ ॥ विज्ञानफलदं दिव्यं
मोक्षैकफलसाधनम् । नमस्कृत्य प्रवक्ष्यामि रामं कृष्णं जगन्मयम्
॥ ९ ॥ अयोध्यानगरे रम्ये रत्नमंडपमध्यगे । स्मरेत्कल्पतरुर्मूले रत्न-
सिंहासनं शुभम् ॥ १० ॥ तन्मध्येऽष्टदलं पद्मं नानारत्नैश्च वेष्टितम् ।
स्मरेन्मध्ये दाशरथिं सहस्रादित्यतेजसम् ॥ ११ ॥ पितुरंकगतं
राममिंद्रनीलमणिप्रभम् । कोमलांगं विशालाक्षं विद्युद्वर्णावरावृतम्
॥ १२ ॥ भानुकोटिप्रतीकाक्षं किरीटेन विराजितम् । रत्नग्रैवेयकेयूर-
रत्नकुंडलमंडितम् ॥ १३ ॥ रत्नकंकणमंजीरकटिसूत्रैरलंकृतम् ।
श्रीवत्सकौस्तुभोरस्कं मुक्ताहारोपशोभितम् ॥ १४ ॥ दिव्यरत्नसमा-
युक्तमुद्रिकाभिलंकृतम् । राघवं द्विभुजं बालं राममीषत्सिताननम्
॥ १५ ॥ तुलसीकुंदमंदारपुष्पमाल्यैरलंकृतम् । कर्पूरागरुकस्तूरीदिव्य-
गंधानुलेपनम् ॥ १६ ॥ योगशास्त्रेष्वभिरतं योगेशं योगदायकम् ।
सदा भरतसौमित्रिशत्रुघ्नैरुपशोभितम् ॥ १७ ॥ विद्याधरसुराधीश-

सिद्धगंधर्वकिन्नरैः । योगीन्द्रैर्नारदाद्यैश्च स्तूयमानमहर्निशम् ॥ १८ ॥
 विश्वामित्रवसिष्ठादिमुनिभिः परिसेवितम् । सनकादिमुनिश्रेष्ठैर्योगि-
 वृन्दैश्च सेवितम् ॥ १९ ॥ रामं रघुवरं वीरं धनुर्वेदविशारदम् ।
 मंगलायतनं देवं रामं राजीवलोचनम् ॥ २० ॥ सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञ-
 मानंदकरसुंदरम् । कौसल्यानंदनं रामं धनुर्बाणधरं हरिम्
 ॥ २१ ॥ एवं संचिंतयन्विष्णुं यज्योतिरमलं विभुम् । प्रहृष्टमानसो
 भूत्वा मुनिवर्यः स नारदः ॥ २२ ॥ सर्वलोकहितार्थाय तुष्टाव
 रघुनंदनम् । कृताञ्जलिपुटो भूत्वा चिंतयन्नद्भुतं हरिम् ॥ २३ ॥
 यदेकं यत्परं नित्यं यदनंतं चिदात्मकम् । यदेकं व्यापकं लोके
 तद्रूपं चिंतयाम्यहम् ॥ २४ ॥ विज्ञानहेतुं विमलायताक्षं प्रज्ञानरूपं
 स्वसुखैकहेतुम् । श्रीरामचंद्रं हरिमादिदेवं परात्परं राममहं भजामि
 ॥ २५ ॥ कविं पुराणं पुरुषं पुरस्तात्सनातनं योगिनमीशितारम् ।
 अणोरणीयांसमनंतवीर्यं प्राणेश्वरं राममसौ ददर्श ॥ २६ ॥ नारद
 उवाच ॥ नारायणं जगन्नाथमभिरामं जगत्पतिम् । कविं पुराणं
 वागीशं रामं दशरथात्मजम् ॥ २७ ॥ राजराजं रघुवरं कौसल्या-
 नंदवर्धनम् । भर्गं वरेण्यं विश्वेशं रघुनाथं जगद्गुरुम् ॥ २८ ॥ सत्यं
 सत्यप्रियं श्रेष्ठं जानकीवल्लभं विभुम् । सौमित्रिपूर्वजं शांतं कामदं
 कमलेक्षणम् ॥ २९ ॥ आदित्यं रविमीशानं घृणिं सूर्यमनामयम् ।
 आनंदरूपिणं सौम्यं राघवं करुणामयम् ॥ ३० ॥ जामदग्न्यं तपो-
 मूर्तिं रामं परशुधारिणम् । वाक्पतिं वरदं वाच्यं श्रीपतिं पक्षिवाह-
 नम् ॥ ३१ ॥ श्रीशार्ङ्गधारिणं रामं चिन्मयानंदविग्रहम् । हलधृ-
 ग्विष्णुमीशानं बलरामं कृपानिधिम् ॥ ३२ ॥ श्रीवल्लभं कृपानाथं
 जगन्मोहनमच्युतम् । मत्स्यकूर्मवराहादिरूपधारिणमव्ययम् ॥ ३३ ॥
 वासुदेवं जगद्योनिमनादिनिधनं हरिम् । गोविंदं गोपतिं विष्णुं

गोपीजनमनोहरम् ॥ ३४ ॥ गोगोपालपरीवारं गोपकन्यासमा-
वृतम् । विद्युत्पुंजप्रतीकाशं रामं कृष्णं जगन्मयम् ॥ ३५ ॥ गो-
गोपिकासमाक्रीणं वेणुवादनतत्परम् । कामरूपं कलावंतं कामिनी-
कामदं विभुम् ॥ ३६ ॥ मन्मथं मथुरानाथं माधवं मकरध्वजम् ।
श्रीधरं श्रीकरं श्रीशं श्रीनिवासं परात्परम् ॥ ३७ ॥ भूतेशं भूपतिं
भद्रं विभूतिं भूतिभूषणम् । सर्वदुःखहरं वीरं दुष्टदानववैरिणम्
॥ ३८ ॥ श्रीनृसिंहं महाबाहुं महांतं दीप्ततेजसम् । चिदानंदमयं
नित्यं प्रणवं ज्योतिरूपिणम् ॥ ३९ ॥ आदित्यमंडलगतं निश्चितार्थ-
स्वरूपिणम् । भक्तप्रियं पद्मनेत्रं भक्तानामीप्सितप्रदम् ॥ ४० ॥
कौसल्येयं कलामूर्तिं काकुत्स्थं कमलाप्रियम् । सिंहासने समासीनं
नित्यव्रतमकल्मषम् ॥ ४१ ॥ विश्वामित्रप्रियं दांतं स्वदारनियत-
व्रतम् । यज्ञेशं यज्ञपुरुषं यज्ञपालनतत्परम् ॥ ४२ ॥ सत्यसंधं जित-
क्रोधं शरणागतवत्सलम् । सर्वक्लेशापहरणं विभीषणवरप्रदम्
॥ ४३ ॥ दशग्रीवहरं रौद्रं केशवं केशिमर्दनम् । वालिप्रमथनं वीरं
सुग्रीवेप्सितराज्यदम् ॥ ४४ ॥ नरवानरदेवैश्च सेवितं हनुम-
त्प्रियम् । शुद्धं सूक्ष्मं परं शांतं तारकब्रह्मरूपिणम् ॥ ४५ ॥ सर्वभूता-
त्मभूतस्थं सर्वाधारं सनातनम् । सर्वकारणकर्तारं निदानं प्रकृतेः
परम् ॥ ४६ ॥ निरामयं निराभासं निरवयवं निरंजनम् । नित्यानंदं
निराकारमद्वैतं तमसः परम् ॥ ४७ ॥ परात्परतरं तत्त्वं सत्यानंदं
चिदात्मकम् । मनसा क्षिरसा नित्यं प्रणमामि रघूत्तमम् ॥ ४८ ॥
सूर्यमंडलमध्यस्थं रामं सीतासमन्वितम् । नमामि पुंडरीकाक्षममेयं
गुरुतत्परम् ॥ ४९ ॥ नमोऽस्तु वासुदेवाय ज्योतिषां पतये नमः ।
नमोऽस्तु रामदेवाय जगदानंदरूपिणे ॥ ५० ॥ नमो वेदान्तिष्ठाय
योगिने ब्रह्मवादिने । मायामयनिरासाय प्रपन्नजनसेविने ॥ ५१ ॥

वंदामहे महेशानचंडकोदंडखंडनम् । जानकीहृदयानंदवर्धनं रघु-
 नंदनम् ॥ ५२ ॥ उत्फुल्लामलकोमलोत्पलदलयामाय रामाय ते
 कामाय प्रमदामनोहरगुणग्रामाय रामात्मने । योगारूढमुनींद्रमान-
 ससरोहंसाय संसारविध्वंसाय स्फुरदोजसे रघुकुलोत्तंसाय पुंसे नमः
 ॥ ५३ ॥ भवोद्धवं वेदविदां वरिष्ठमादित्यचंद्रानलसुप्रभावम् ।
 सर्वात्मकं सर्वगतस्वरूपं नमामि रामं तमसः परस्तात् ॥ ५४ ॥
 निरंजनं निःस्पृष्टमिदं निरीहं निराश्रयं निष्कलमप्रपंचम् । नित्यं ध्रुवं
 निर्विषयस्वरूपं निरंतरं राममहं भजामि ॥ ५५ ॥ भवाब्धिपोतं
 भरताग्रजं तं भक्तप्रियं भानुकुलप्रदीपम् । भूतत्रिनाथं भुवना-
 धिपं तं भजामि रामं भवरोगवैद्यम् ॥ ५६ ॥ सर्वाधिपत्यं
 समरांगधीरं सत्यं चिदानंदमयस्वरूपम् । सत्यं शिवं शांतिमयं
 शरण्यं सनातनं राममहं भजामि ॥ ५७ ॥ कार्यक्रियाकारणमप्रमेयं
 कविं पुराणं कमलायताक्षम् । कुमारवेद्यं करुणामयं तं कल्पद्रुमं
 राममहं भजामि ॥ ५८ ॥ त्रैलोक्यनाथं सरसीरुहाक्षं दयानिधिं
 द्वंद्वविनाशहेतुम् । महाबलं वेदविधिं सुरेशं सनातनं राममहं
 भजामि ॥ ५९ ॥ वेदांतवेद्यं कविमीशितारमनादिमध्यांतमचिंत्य-
 माद्यम् । अगोचरं निर्मलमेकरूपं नमामि रामं तमसः परस्तात्
 ॥ ६० ॥ अशेषवेदात्मकमादिसंज्ञमजं हरिं विष्णुमनंतमाद्यम् ।
 अपारसंवित्सुखमेकरूपं परात्परं राममहं भजामि ॥ ६१ ॥
 तत्त्वस्वरूपं पुरुषं पुराणं स्वतेजसा पूरितविश्वमेकम् । राजाधिराजं
 रविमंडलस्थं विश्वेश्वरं राममहं भजामि ॥ ६२ ॥ लोकाभिरामं
 रघुवंशनाथं हरिं चिदानंदमयं मुकुंदम् । अशेषविद्याधिपतिं कवींद्रं
 नमामि रामं तमसः परस्तात् ॥ ६३ ॥ योगींद्रसंघैश्च सुसेव्यमानं
 नारायणं निर्मलमादिदेवम् । ततोऽस्मि नित्यं जगदेकनाथमादित्य-

वर्णं तमसः परस्तात् ॥ ६४ ॥ विभूतिदं विश्वसृजं विरामं
 राजेंद्रमीशं रघुवंशनाथम् । अचिंत्यमव्यक्तमनंतमूर्तिं ज्योतिर्मयं
 राममहं भजामि ॥ ६५ ॥ अशेषसंसारविहारहीनमादित्यगं पूर्ण-
 सुखाभिरामम् । समस्तसाक्षिं तमसः परस्तान्नारायणं विष्णुमहं
 भजामि ॥ ६६ ॥ मुनींद्रगुह्यं परिपूर्णकामं कलानिधिं कल्मष-
 नाशहेतुम् । परात्परं यत्परमं पवित्रं नमामि रामं महतो महांतम्
 ॥ ६७ ॥ ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च देवेन्द्रो देवतास्तथा । आदित्यादि-
 ग्रहाश्चैव त्वमेव रघुनंदन ॥ ६८ ॥ तापसा ऋषयः सिद्धाः
 साध्याश्च मरुतस्तथा । विप्रा वेदास्तथा यज्ञाः पुराणधर्मसंहिताः
 ॥ ६९ ॥ वर्णाश्रमास्तथा धर्मा वर्णधर्मास्तथैव च । यक्षराक्षस-
 गंधर्वा दिक्पाला दिग्गजादयः ॥ ७० ॥ सनकादिमुनिश्रेष्ठास्त्वमेव
 रघुपुंगव । वसवोऽष्टौ त्रयः काला रुद्रा एकादश स्मृताः
 ॥ ७१ ॥ तारका दश दिक् चैव त्वमेव रघुनंदन । सप्तद्वीपाः
 समुद्राश्च नगा नद्यस्तथा द्रुमाः ॥ ७२ ॥ स्थावरा जंगमाश्चैव
 त्वमेव रघुनायक । देवतिर्यङ्मनुष्याणां दानवानां तथैव च
 ॥ ७३ ॥ माता पिता तथा भ्राता त्वमेव रघुवल्लभ । सर्वेषां त्वं
 परं ब्रह्म त्वन्मयं सर्वमेव हि ॥ ७४ ॥ त्वमक्षरं परं ज्योतिस्त्वमेव
 पुरुषोत्तम । त्वमेव तारकं ब्रह्म त्वत्तोऽन्यन्नैव किंचन ॥ ७५ ॥
 शान्तं सर्वगतं सूक्ष्मं परं ब्रह्म सनातनम् । राजीवलोचनं रामं
 प्रणमामि जगत्पतिम् ॥ ७६ ॥ व्यास उवाच ॥ ततः प्रसन्नः
 श्रीरामः प्रोवाच मुनिपुंगवम् । तुष्टोऽस्मि मुनिशार्दूल वृणीष्व
 वरमुत्तमम् ॥ ७७ ॥ नारद उवाच ॥ यदि तुष्टोऽसि सर्वज्ञ
 श्रीराम करुणानिधे । त्वन्मूर्तिदर्शनेनैव कृतार्थोऽहं च सर्वदा
 ॥ ७८ ॥ धन्योऽहं कृतकृत्योऽहं पुण्योऽहं पुरुषोत्तम । अद्य मे

सफलं जन्म जीवितं सफलं च मे ॥ ७९ ॥ अद्य मे सफलं
 ज्ञानमद्य मे सफलं तपः । अद्य मे सफलं कर्म त्वत्पादांभोजदर्शनात् ।
 अद्य मे सफलं सर्वं त्वन्नामस्मरणं तथा ॥ ८० ॥ त्वत्पादांभोरु-
 हद्वंद्वसद्भक्तिं देहि राघव । ततः परमसंप्रीतः स रामः प्राह नारदम्
 ॥ ८१ ॥ श्रीराम उवाच ॥ मुनिवर्य महाभाग मुने त्विष्टं ददामि
 ते । यत्त्वया चेप्सितं सर्वं मनसा तद्भविष्यति ॥ ८२ ॥ नारद उवाच ॥
 वरं न याचे रघुनाथ युष्मत्पदाब्जभक्तिः सततं ममास्तु । इदं प्रियं
 नाथ वरं हि याचे पुनःपुनस्त्वामिदमेव याचे ॥ ८३ ॥ व्यास उवाच ॥
 इत्येवमीडितो रामः प्रादात्तस्मै वरांतरम् । वीरो रामो महातेजाः
 सच्चिदानंदविग्रहः ॥ ८४ ॥ अद्वैतममलं ज्ञानं स्वनामस्मरणं तथा ।
 अंतर्दधौ जगन्नाथः पुरतस्तस्य राघवः ॥ ८५ ॥ इति श्रीरघुनाथस्य
 स्तवराजमनुत्तमम् । सर्वसौभाग्यसंपत्तिदायकं मुक्तिदं शुभम् ॥ ८६ ॥
 कथितं ब्रह्मपुत्रेण वेदानां सारमुत्तमम् । गुह्याद्गुह्यतमं दिव्यं तव स्नेहा-
 त्प्रकीर्तितम् ॥ ८७ ॥ यः पठेच्छृणुयाद्वापि त्रिसंध्यं श्रद्धयान्वितः ।
 ब्रह्महत्यादिपापानि तत्समानि बहूनि च ॥ ८८ ॥ स्वर्णस्तेयं सुरापानं
 गुरुतल्पगतिस्तथा । गोवधाद्युपपापानि अनृतात्संभवानि च ॥ ८९ ॥
 सत्रैः प्रमुच्यते पापैः कल्पायुतशतोद्भवैः । मानसं वाचिकं पापं कर्मणा
 समुपार्जितम् ॥ ९० ॥ श्रीरामस्मरणेनैव तत्क्षणाद्भयति ध्रुवम् । इदं
 सत्यमिदं सत्यं सत्यमेतदिहोच्यते ॥ ९१ ॥ रामं सत्यं परं ब्रह्म
 रामार्तिकचिह्नं विद्यते । तस्माद्रामस्वरूपं हि सत्यं सत्यमिदं जगत्
 ॥ ९२ ॥ श्रीरामचंद्र रघुपुंगव राजवर्य राजेंद्र राम रघुनायक राघ-
 वेश । राजाधिराज रघुनंदन रामचंद्र दासोऽहमद्यभवतः शरणाग-
 तोऽस्मि ॥ ९३ ॥ वैदेहीसहितं सुरद्रुमतले हैमे महामंडपे मध्ये
 पुष्पकृतासने मणिमये वीरासने संस्थितम् । अग्रे वाचयति प्रभंजन-

सुते तत्त्वं मुनीन्द्रैः परं व्याख्यातं भरतादिभिः परिवृतं रामं भजे
 श्यामलम् ॥ ९४ ॥ रामं रत्नकिरीटकुण्डलयुतं केयूरहारान्वितं सीतालं-
 कृतवामभागममलं सिंहासनस्थं विभुम् । सुग्रीवादिहरीश्वरैः सुरगणैः
 संसेव्यमानं सदा विश्वामित्रपराशरादिमुनिभिः संस्तूयमानं प्रभुम्
 ॥ ९५ ॥ सकलगुणनिधानं योगिभिः स्तूयमानं भुजविजितसमानं
 राक्षसेन्द्रादिमानम् । महितनृपभयानं सीतया शोभमानं स्वर हृदय
 विमानं ब्रह्म रामाभिधानम् ॥ ९६ ॥ रघुवर तव मूर्तिर्मामके मान-
 साब्जे नरकगतिहरं ते नामधेयं मुखे मे । अनिशमतुलभक्त्या मस्तकं
 त्वत्पदाब्जे भवजलनिधिमग्नं रक्ष मामार्तबंधो ॥ ९७ ॥ रामरत्नमहं
 वंदे चित्रकूटपतिं हरिम् । कौसल्याभक्तिसंभूतं जानकीकंठभूषणम्
 ॥ ९८ ॥ इति श्रीसनत्कुमारसंहितायां नारदोक्तं श्रीरामस्तवराज-
 स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३८०. रामगीता ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमहादेव उवाच ॥ ततो जगन्मंगलमंगला-
 त्मना विधाय रामायणकीर्तिमुत्तमाम् । चचार पूर्वाचरितं रघूत्तमो
 राजर्षिवयैरभिसेवितं यथा ॥ १ ॥ सौमित्रिणा पृष्ट उदारबुद्धिना
 रामः कथाः प्राह पुरातनीः शुभाः । राज्ञः प्रमत्तस्य नृगस्य शापतो
 द्विजस्य तिर्यक्तवमथाह राघवः ॥ २ ॥ कदाचिदेकांत उपस्थितं प्रभुं
 रामं रमालालितपादपंकजम् । सौमित्रिरासादितशुद्धभावनः प्रणम्य
 भक्त्या विनयान्वितोऽब्रवीत् ॥ ३ ॥ सौमित्रिरुवाच ॥ त्वं शुद्धबोधो-
 ऽसि हि सर्वदेहिनामात्मास्यधीशोऽसि निराकृतिः स्वयम् । प्रतीयसे
 ज्ञानदृशां महामते पादाब्जभृङ्गाहितसंगसंगिनाम् ॥ ४ ॥ अहं प्रप-
 न्नोऽस्मि पदांबुजं प्रभो भवापवर्गं तव योगिभावितम् । यथांजसाज्ञान-
 मपारवारिधिं सुखं तरिष्यामि तथानुशाधि माम् ॥ ५ ॥ श्रुत्वाथ

सौमित्रिवचोऽखिलं तदा प्राह प्रपन्नार्तिहरः प्रसन्नधीः । विज्ञानमज्ञान-
 तमोपशान्तये श्रुतिप्रपन्नं क्षितिपालभूषणः ॥ ६ ॥ श्रीराम उवाच ॥
 आदौ स्ववर्णाश्रमवर्णिताः क्रियाः कृत्वा समासादितशुद्धमानसः ।
 समाप्य तत्पूर्वमुपात्तसाधनः समाश्रयेत्सद्गुस्मात्मलव्धये ॥ ७ ॥
 क्रिया शरीरोद्भवहेतुरादृता प्रियाप्रियौ तौ भवतः सुरागिणः । धर्मेतरौ
 तत्र पुनः शरीरकं पुनः क्रिया चक्रवदीर्यते भवः ॥ ८ ॥ अज्ञानमे-
 वास्य हि मूलकारणं तद्ध्यानमेवात्र विधौ विधीयते । विद्यैव तन्नाश-
 विधौ पटीयसी न कर्म तज्जं सविरोधमीरितम् ॥ ९ ॥ नाज्ञानहानिर्न
 च रागसंक्षयो भवेत्ततः कर्म सदोषमुद्भवेत् । ततः पुनः संसृतिरप्य-
 वारिता तस्माद्बुधो ज्ञानविचारवान्भवेत् ॥ १० ॥ ननु क्रिया वेदमुखेन
 चोदिता यथैव विद्या पुरुषार्थसाधनम् । कर्तव्यता प्राणभृतः प्रचोदिता
 विद्यासहायत्वमुपैति सा पुनः ॥ ११ ॥ कर्माकृतौ दोषमपि श्रुतिर्जगौ
 तस्मात्सदा कार्यमिदं मुमुक्षुणा । ननु स्वतंत्रा ध्रुवकार्यकारिणी विद्या
 न किञ्चिन्मनसाप्यपेक्षते ॥ १२ ॥ न सत्यकार्योऽपि हि यद्वदध्वरः
 प्रकांक्षतेऽन्यानपि कारकादिकान् । तथैव विद्या विधितः प्रकाशितैर्वि-
 शिष्यते कर्मभिरेव मुक्तये ॥ १३ ॥ केचिद्वदन्तीति वितर्कवादिनस्त-
 दप्यसदृष्टविरोधकारणात् । देहाभिमानादभिवर्धते क्रिया विद्यागताहं-
 कृतितः प्रसिध्यति ॥ १४ ॥ विशुद्धविज्ञानविरोचनांचिता विद्यात्म-
 वृत्तिश्चरमेति भण्यते । उदेति कर्माखिलकारकादिभिर्निर्निहन्ति विद्याऽखि-
 लकारकादिकम् ॥ १५ ॥ तस्मात्त्यजेत्कार्यमशेषतः सुधीर्विद्याविरो-
 धान्न समुच्चयो भवेत् । आत्मानुसंधानपरायणः सदा निवृत्तसर्वेन्द्रिय-
 वृत्तिगोचरः ॥ १६ ॥ यावच्छरीरादिषु माययात्मधीस्तावद्विधेयो
 विधिवादकर्मणाम् । नेतीति वाक्यैरखिलं निषिध्य तज्ज्ञात्वा परात्मा-
 नमथ त्यजेत्क्रियाः ॥ १७ ॥ यदा परात्मात्मविभेदभेदकं विज्ञानमा-

त्मन्यवभाति भास्वरम् । तदैव माया प्रविलीयतेऽजसा सकारका
कारणमात्मसंस्तुतेः ॥ १८ ॥ श्रुतिप्रमाणाभिविनाशिता च सा कथं
भविष्यत्यपि कार्यकारिणी । विज्ञानमात्रादमलाद्वितीयतस्तस्मादविद्या
न पुनर्भविष्यति ॥ १९ ॥ यदि स्म नष्टा न पुनः प्रसूयते कर्ताऽहम-
स्येति मतिः कथं भवेत् । तस्मात्स्वतंत्रा न किमप्यपेक्षते विद्या विमो-
क्षाय विभाति केवला ॥ २० ॥ सा तैत्तिरीयश्रुतिराह सादरं न्यासं
प्रशस्ताखिलकर्मणां स्फुटम् । एतावदित्याह च वाजिनां श्रुतिज्ञानं
विमोक्षाय न कर्म साधनम् ॥ २१ ॥ विद्यासमत्वेन तु दर्शितस्त्वया
ऋतुर्न दृष्टांत उदाहृतः समः । फलैः पृथक्त्वाद्वहुकारकैः ऋतुः संसा-
ध्यते ज्ञानमतो विपर्ययम् ॥ २२ ॥ सप्रत्यवायो ह्यहमित्यनात्मधीरज्ञ-
प्रसिद्धा न तु तत्त्वदर्शिनः । तस्माद्बुधैस्त्याज्यमपि क्रियात्मभिर्विधानतः
कर्म विधिप्रकाशितम् ॥ २३ ॥ श्रद्धान्वितस्तत्त्वमसीति वाक्यतो गुरोः
प्रसादादपि शुद्धमानसः । विज्ञाय चैकात्म्यमथात्मजीवयोः सुखी
भवेन्मेरुरिवाप्रकंपनः ॥ २४ ॥ आदौ पदार्थावगतिर्हि कारणं वाक्यार्थ-
विज्ञानविधौ विधानतः । तत्त्वंपदार्थौ परमात्मजीवकावसीति
चैकात्म्यमथानयोर्भवेत् ॥ २५ ॥ प्रत्यक्परोक्षादिविरोधमात्मनो-
र्विहाय संगृह्य तयोश्चिदात्मताम् । संशोधितां लक्षणया च
लक्षितां ज्ञात्वा स्वमात्मानमथाद्वयो भवेत् ॥ २६ ॥ एकात्मकत्वा-
ज्जहती न संभवेत्तथाऽजहल्लक्षणता विरोधतः । सोऽयंपदार्थाविव
भागलक्षणा युज्येत तत्त्वंपदयोरदोषतः ॥ २७ ॥ रसादिपंचीकृत-
भूतसंभवं भोगालयं दुःखसुखादिकर्मणाम् । शरीरमाद्यंतवदादि-
कर्मजं मायामयं स्थूलसुपाधिमात्मनः ॥ २८ ॥ सूक्ष्मं मनोबुद्धि-
दर्शेन्द्रियैर्युतं प्राणैरपंचीकृतभूतसंभवम् । भोक्तुः सुखादेरनुसाधनं
भवेच्छरीरमन्यद्विदुरात्मनो बुधाः ॥ २९ ॥ अनाद्यनिर्वाच्यमपीह

कारणं मायाप्रधानं तु परं शरीरकम् । उपाधिभेदान्तु यतः पृथक्-
स्थितं स्वात्मानमात्मन्यवधारयेत्क्रमात् ॥ ३० ॥ कोशेषु पंचस्वपि
तत्तदाकृतिर्विभाति संगत्स्फटिकोपलो यथा । असंगरूपोऽयमजो
यतोऽद्वयो विज्ञायतेऽस्मिन्परितो विचारिते ॥ ३१ ॥ बुद्धेस्त्रिधा
वृत्तिरपीह दृश्यते स्वप्नादिभेदेन गुणत्रयात्मनः । अन्योन्य-
तोऽस्मिन्व्यभिचारतो मृषा नित्ये परे ब्रह्मणि केवले शिवे
॥ ३२ ॥ देहेन्द्रियप्राणमनश्चिदात्मनां संवादज्ज्ञं परिवर्तते
धियः । वृत्तिस्तमोमूलतयाऽज्ञलक्षणा यावद्भवेत्तावदसौ
भवोद्भवः ॥ ३३ ॥ नेतिप्रमाणेन निराकृताखिलो हृदा समा-
स्वादितचिद्वनामृतः । त्यजेदशेषं जगदात्तसद्रसं पीत्वा यथा-
ऽम्भः प्रजहाति तत्फलम् ॥ ३४ ॥ कदाचिदात्मा न मृतो न जायते
न क्षीयते नापि विवर्धते नवः । निरस्तसर्वातिशयः सुखात्मकः
स्वयंप्रभः सर्वगतोऽयमद्वयः ॥ ३५ ॥ एवंविधे ज्ञानमये सुखात्मके
कथं भवो दुःखमयः प्रतीयते । अज्ञानतोऽध्यासवशात्प्रकाशते
ज्ञाने विलीयेत विरोधतः क्षणात् ॥ ३६ ॥ यदन्यदन्यत्र विभाव्यते
भ्रमादध्यासमित्याहुरमुं विपश्चितः । असर्पभूतेऽहिविभावनं यथा
रज्ज्वादिके तद्गदपीश्वरे जगत् ॥ ३७ ॥ विकल्पमायारहिते चिदा-
त्मकेऽहंकार एष प्रथमः प्रकल्पितः । अध्यास एवात्मनि सर्वकारणे
निरामये ब्रह्मणि केवले परे ॥ ३८ ॥ इच्छादिरागादिसुखादि-
धर्मिकाः सदा धियः संसृतिहेतवः परे । यस्मात्प्रसुप्तौ तदभावतः
परः सुखस्वरूपेण विभाव्यते हि नः ॥ ३९ ॥ अनाद्यविद्योद्भवबुद्धि-
बिंबितो जीवः प्रकाशोऽयमितीर्यते चितः । आत्मा धियः साक्षितया
पृथक् स्थितो बुद्ध्या परिच्छिन्नपरः स एव हि ॥ ४० ॥ चिद्विब-
साक्षात्मधियां प्रसंगतस्त्वेकत्र वातादनलाक्तलोहवत् । अन्योन्यम-

ध्यासवशात्प्रतीयते जडाजडत्वं च चिदात्मचेतसोः ॥ ४१ ॥ गुरोः
 सकाशादपि वेदवाक्यतः संजातविद्यानुभवो निरीक्ष्य तम् । स्वा-
 त्मानमात्मस्थमुपाधिवर्जितं त्यजेदशेषं जडमात्मगोचरम् ॥ ४२ ॥
 प्रकाशरूपोऽहमजोऽहमद्वयोऽसकृद्विभातोऽहमतीव निर्मलः । विशु-
 द्धविज्ञानवनो निरामयः संपूर्ण आनन्दमयोऽहमक्रियः ॥ ४३ ॥ सदैव
 मुक्तोऽहमचिंत्यशक्तिमानतीन्द्रियज्ञानमविक्रियात्मकः । अनंतपारो-
 ऽहमहर्निशं बुधैर्विभावितोऽहं हृदि वेदवादिभिः ॥ ४४ ॥ एवं सदा-
 त्मानमखंडितात्मना विचार्यमाणस्य विशुद्धभावना । हन्यादविद्या-
 मचिरेण कारकै रसायनं यद्वदुपासितं रुजः ॥ ४५ ॥ विविक्त
 आसीन उपारतेंद्रियो विनिर्जितात्मा विमलांतराशयः । विभावये-
 देकमनन्यसाधनो विज्ञानदृक्केवल आत्मसंस्थितः ॥ ४६ ॥ विश्वं
 यदेतत्परमात्मदर्शनं विलापयेदात्मनि सर्वकारणे । पूर्णश्चिदानन्दम-
 योऽवतिष्ठते न वेद बाह्यं न च किंचिदांतरम् ॥ ४७ ॥ पूर्वं समा-
 धेरखिलं विचिंतयेदोङ्कारमात्रं सचराचरं जगत् । तदेव वाच्यं
 प्रणवो हि वाचको विभाव्यते ज्ञानवशात् बोधतः ॥ ४८ ॥ अकार-
 संज्ञः पुरुषो हि विश्वको ह्युकारकस्तैजस ईर्यते क्रमात् । प्राज्ञो
 मकारः परिपठ्यतेऽखिलैः समाधिपूर्वं न तु तत्त्वतो भवेत् ॥ ४९ ॥
 विश्वं त्वकारं पुरुषं विलापयेदुकारमध्ये बहुधा व्यवस्थितम् । ततो
 मकारे प्रविलाप्य तैजसं द्वितीयवर्णं प्रणवस्य चांतिमम् ॥ ५० ॥
 मकारमप्यात्मनि चिद्धने परे विलापयेत्प्राज्ञमपीह कारणम् । सोऽहं
 परं ब्रह्म सदा विमुक्तिमद्विज्ञानदृष्ट्युक्त उपाधितोऽमलः ॥ ५१ ॥
 एवं सदा जातपरात्मभावनः स्वानन्दतुष्टः परिविस्मृताखिलः । आस्ते
 स नित्यात्मसुखप्रकाशकः साक्षाद्विमुक्तोऽचलवारिसिंधुवत् ॥ ५२ ॥
 एवं सदाऽभ्यस्तसमाधियोगिनो निवृत्तसर्वेन्द्रियगोचरस्य हि ।

विनिर्जिताशेषरिपोरहं सदा दृश्यो भवेयं जितपङ्कणात्मनः ॥ ५३ ॥
 ध्यात्वैवमात्मनमहर्निशं मुनिस्तिष्ठेत्सदा मुक्तसमस्तबंधनः ।
 प्रारब्धमश्रन्नभिमानवर्जितो मय्येव साक्षात्प्रविलीयते ततः ॥ ५४ ॥
 आदौ च मध्ये च तथैव चांततो भयं विदित्वा भयशोककारणम् ।
 हित्वा समस्तं विधिवादचोदितं भजेत्स्वमात्मानमथाद्विलात्मनाम् ॥ ५५ ॥
 आत्मन्यभेदेन विभावयन्निदं भवत्यभेदेन मयात्मना
 तदा । यथा जलं वारिनिधौ यथा पयः क्षीरे वियद्वयोद्भयनिले
 यथानिलः ॥ ५६ ॥ इत्थं यदीक्षेत हि लोकसंस्थितो जगन्मृषवेति
 विभावयन्मुनिः । निराकृतत्वाच्छ्रुतियुक्तिमानतो यथेन्दुभेदो दिशि
 दिग्भ्रमादयः ॥ ५७ ॥ यावन्न पश्येदखिलं मदात्मकं तावन्मदा-
 राधनतत्परो भवेत् । श्रद्धालुरत्यूर्जितभक्तिलक्षणो यस्तस्य दृश्योऽह-
 मर्हर्निशं हृदि ॥ ५८ ॥ रहस्यमेतच्छ्रुतिसारसंग्रहं मया विनिश्चित्य
 तवोदितं प्रिय । यस्त्वेतदालोचयतीह बुद्धिमान्स मुच्यते पातक-
 राशिभिः क्षणात् ॥ ५९ ॥ आतर्यदीदं परिदृश्यते जगन्मायैव सर्वं
 परिहृत्य चेतसा । मद्भावनाभावितशुद्धमानसः सुखी भवानंदमयो
 निरामयः ॥ ६० ॥ यः सेवते मामगुणं गुणात्परं हृदा कदा वा
 यदि वा गुणात्मकम् । सोऽहं स्वपादांचितरेणुभिः स्पृशन्पुनाति
 लोकत्रितयं यथा रविः ॥ ६१ ॥ विज्ञानमेतदखिलं श्रुतिसारमेकं
 वेदांतवेद्यचरणेन मयैव गीतम् । यः श्रद्धया परिपटेद्बुद्भक्तियुक्तो
 मद्रूपमेति यदि मद्बचनेषु भक्तिः ॥ ६२ ॥ इति श्रीमदध्यात्म-
 रामायणे उमामहेश्वरसंवादे उत्तरकांडे रामगीता समाप्ता ॥

३८१. रामरक्षास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीरामरक्षास्तोत्रमंत्रस्य बुधकौशिक
 ऋषिः । श्रीसीतारामचंद्रो देवता । अनुष्टुप् छंदः । सीता शक्तिः ।

श्रीमद्भुमान् कीलकम् । श्रीरामचंद्रप्रीत्यर्थे रामरक्षास्तोत्रजपे
विनियोगः ॥ अथ ध्यानम् ॥ ध्यायेदाजानुबाहुं धृतशरधनुषं
बद्धपद्मासनस्थं पीतं वासो वसानं नवकमलदलस्पर्धिनेत्रं प्रसन्नम् ।
वामांकारुढसीतामुखकमलमिलल्लोचनं नीरदामं नानालंकार-
दीप्तं दधतमुज्जयामंडलं रामचंद्रम् ॥ इति ध्यानम् ॥ चरितं
रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम् । एकैकमक्षरं पुंसां महापातक-
नाशनम् ॥ १ ॥ ध्यात्वा नीलोत्पलश्यामं रामं राजीवलोचनम् ।
जानकीलक्ष्मणोपेतं जयमुकुटमंडितम् ॥ २ ॥ सासितूणधनुर्बाण-
पाणिं नक्तंचरांतकम् । स्वलीलया जगन्नाथमाविर्भूतमजं विभुम्
॥ ३ ॥ रामरक्षां पठेत्प्राज्ञः पापघ्नीं सर्वकामदाम् । शिरो
भे राघवः पातु भालं दशरथात्मजः ॥ ४ ॥ कौसल्येयो दशौ
पातु विश्वामित्रप्रियः श्रुती । ब्राह्मणं पातु मखत्राता सुखं सौमित्रि-
वत्सलः ॥ ५ ॥ जिह्वां विद्यानिधिः पातु कंठं भरतवंदितः । स्कंधौ
दिव्यायुधः पातु भुजौ भग्नेशकार्मुकः ॥ ६ ॥ करौ सीतापतिः
पातु हृदयं जामदग्न्यजित् । मध्यं पातु खरध्वंसी नाभिं जांबवदा-
श्रयः ॥ ७ ॥ सुग्रीवेशः कटी पातु सक्थिनी हनुमत्प्रभुः । ऊरु
रघूत्तमः पातु रक्षःकुलविनाशकृत् ॥ ८ ॥ जानुनी सेतुकृत्पातु
जंघे दशमुखांतकः । पादौ विभीषणश्रीदः पातु रामोऽखिलं वपुः
॥ ९ ॥ एतां रामबलोपेतां रक्षां यः सुकृती पठेत् । स चिरायुः
सुखी पुत्री विजयी विनयी भवेत् ॥ १० ॥ पातालभूतलव्योमचारि-
णश्छिन्नचारिणः । न द्रष्टुमपि शक्तास्ते रक्षितं रामनामभिः ॥ ११ ॥
रामेति रामभद्रेति रामचंद्रेति वा स्मरन् । नरो न लिप्यते पापै-
र्भुक्तिं मुक्तिं च विंदति ॥ १२ ॥ जगज्जैत्रैकमंत्रेण रामनाम्नाऽभिर-
क्षितम् । यः कंठे धारयेत्तस्य करस्थाः सर्वसिद्धयः ॥ १३ ॥ ज्व-

पंजरनामेदं यो रामकवचं स्मरेत् । अव्याहताज्ञः सर्वत्र लभते
 जयमंगलम् ॥ १४ ॥ आदिष्टवान्यथा स्वप्ने रामरक्षामिमां हरः ।
 तथा लिखितवान्प्रातः प्रबुद्धो बुधकौशिकः ॥ १५ ॥ आरामः कल्प-
 वृक्षाणां विरामः सकलापदाम् । अभिरामस्त्रिलोकानां रामः श्रीमान्स
 नः प्रभुः ॥ १६ ॥ तरुणौ रूपसंपन्नौ सुकुमारौ महाबलौ । पुंडरीक-
 विशालाक्षौ चीरकृष्णाजिनांबरौ ॥ १७ ॥ फलमूलाशिनौ दांतौ
 तापसौ ब्रह्मचारिणौ । पुत्रौ दशरथस्येतौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥ १८ ॥
 शरण्यौ सर्वसत्त्वानां श्रेष्ठौ सर्वधनुष्मताम् । रक्षःकुलनिहंतारौ
 त्रायेतां नो रघूत्तमौ ॥ १९ ॥ आत्तसज्जधनुषाघिपुस्पृशावक्षयाशुग-
 निषंगसंगिनौ । रक्षणाय मम रामलक्षणावग्रतः पथि सदैव गच्छताम्
 ॥ २० ॥ सन्नद्धः कवची खड्गी चापबाणधरो युवा । गच्छन्मनोऽरथो-
 ऽस्माकं रामः पातु सलक्षणः ॥ २१ ॥ रामो दाशरथिः शूरो लक्ष्म-
 णानुचरो बली । काकुत्स्थः पुरुषः पूर्णः कौसल्येयो रघूत्तमः ॥ २२ ॥
 वेदांतवेद्यो यज्ञेशः पुराणपुरुषोत्तमः । जानकीवल्लभः श्रीमानप्रमे-
 यपराक्रमः ॥ २३ ॥ इत्येतानि जपेन्नित्यं मद्भक्तः श्रद्धयान्वितः ।
 अश्वमेधाधिकं पुण्यं संप्राप्नोति न संशयः ॥ २४ ॥ रामं दूर्वादलश्यामं
 पद्माक्षं पीतवाससम् । स्तुवंति नामभिर्दिव्यैर्न ते संसारिणो नरः
 ॥ २५ ॥ रामं लक्ष्मणपूर्वजं रघुवरं सीतापतिं सुंदरं काकुत्स्थं
 करुणार्णवं गुणनिधिं विप्रप्रियं धार्मिकम् । राजेंद्रं सत्यसंधं
 दशरथतनयं श्यामलं शांतमूर्तिं वंदे लोकाभिरामं रघुकुलतिकं राघवं
 रावणारिम् ॥ २६ ॥ रामाय रामभद्राय रामचंद्राय वेधसे । रघुना-
 थाय नाथाय सीतायाः पत्नये नमः ॥ २७ ॥ श्रीराम राम रघुनंदन
 राम राम श्रीराम राम भरताग्रज राम राम । श्रीराम राम रणकर्कश
 राम राम श्रीराम राम शरणं भव राम राम ॥ २८ ॥ श्रीरामचंद्र-

चरणौ मनसा स्मरामि श्रीरामचंद्रचरणौ वचसा गृणामि । श्रीरामचंद्र-
चरणौ शिरसा नमामि श्रीरामचंद्रचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥ २९ ॥
माता रामो मत्पिता रामचंद्रः स्वामी रामो मत्सखा रामचंद्रः ।
सर्वस्वं मे रामचंद्रो दयालुर्नान्यं जाने नैव जाने न जाने ॥ ३० ॥
दक्षिणे लक्ष्मणो यस्य वामे च जनकात्मजा । पुरतो मारुतिर्यस्य तं
वंदे रघुनंदनम् ॥ ३१ ॥ लोकाभिरामं रणरंगधीरं राजीवनेत्रं रघुवंश-
नाथम् । कारुण्यरूपं करुणाकरं तं श्रीरामचंद्रं शरणं प्रपद्ये ॥ ३२ ॥
मनोजयं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् । वातात्मजं वानर-
यूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥ ३३ ॥ कूजंतं रामरामेति मधुरं
मधुराक्षरम् । आरुह्य कविताशाखां वंदे वाल्मीकिकोकिलम् ॥ ३४ ॥
आपदासपहर्तारं दातारं सर्वसंपदाम् । लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो
नमाम्यहम् ॥ ३५ ॥ भर्जनं भवबीजानामर्जनं सुखसंपदाम् । तर्जनं
यमदूतानां रामरामेति गर्जनम् ॥ ३६ ॥ रामो राजमणिः सदा विजयते
रामं रमेशं भजे रामेणाभिहता निशाचरचमू रामाय तस्मै नमः । रामा-
ज्ञास्ति परायणं परतरं रामस्य दासोऽस्म्यहं रामे चित्तलयः सदा भवतु
मे भो राम माभुद्धर ॥ ३७ ॥ राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे ।
सहस्रनाम ततुल्यं रामनाम वरानने ॥ ३८ ॥ इति श्रीबुधकौशिक-
विरचितं रामरक्षास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३८२. ब्रह्मदेवकृता रामस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ब्रह्मोवाच ॥ वंदे देवं विष्णुमशेषस्थितिहेतुं
त्वामध्यात्मज्ञानिभिरंतर्हृदि भाव्यम् । हेयाहेयद्वंद्वविहीनं परमेकं
सत्तामात्रं सर्वहृदिस्थं हशिरूपम् ॥ १ ॥ प्राणापानौ निश्चयबुद्ध्या
हृदि रुद्ध्वा छित्त्वा सर्वं संशयबंधं विषयौवान् । पश्यंतीशं यंगत-

मोहा यतयस्तं वंदे रामं रत्नकिरीटं रविभासम् ॥ २ ॥ मायातीतं
 माधवमाद्यं जगदादिं मानातीतं मोहविनाशं मुनिध्वजम् । योगि-
 ध्येयं योगविधानं परिपूर्णं वंदे रामं रंजितलोकं रमणीयम् ॥ ३ ॥
 भावाभावप्रत्ययहीनं भवमुख्यैर्भोगासक्तैरर्चितपादांबुजयुग्मम् ।
 नित्यं शुद्धं बुद्धमनंतं प्रणवाख्यं वंदे रामं वीरमशेषासुरदावम्
 ॥ ४ ॥ त्वं मे नाथो नाश्रितकार्याखिलकारी मानातीतो माधव-
 रूपोऽखिलधारी । भक्त्या गम्यो भावितरूपो भवहारी योगाभ्या-
 सैर्भावितचेतःसहचारी ॥ ५ ॥ त्वामाद्यंतं लोकततीनां परमीशं
 लोकानां नो लौकिकमानैरधिगम्यम् । भक्तिश्रद्धाभावसमेतैर्भज-
 नीयं वंदे रामं सुंदरमिंदीवरनीलम् ॥ ६ ॥ को वा ज्ञातुं त्वामति-
 मानं गतमानं मानासक्तो माधवशक्तो मुनिमान्यम् । वृंदारण्ये
 वंदितवृंदारकवृंदं वंदे रामं भवमुखवंधं सुखकंदम् ॥ ७ ॥ नाना-
 शास्त्रैर्वेदकदंबैः प्रतिपाद्यं नित्यानंदं निर्विषयज्ञानमनादिम् । मत्से-
 वार्थं मानुषभावं प्रतिपन्नं वंदे रामं मरकतवर्णं मथुरेशम् ॥ ८ ॥
 श्रद्धायुक्तो यः पठतीमं स्तवमाद्यं ब्राह्मं ब्रह्मज्ञानविधानं भुवि
 मर्त्यः । रामं श्यामं कामितकामप्रदमीशं ध्यात्वा ध्याता पातक-
 जालैर्विगतः स्यात् ॥ ९ ॥ इति श्रीमदध्यात्मरामायणे युद्धकांडे
 ब्रह्मदेवकृतं रामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३८३. जटायुकृतरामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जटायुर्वाच ॥ अगणितगुणमप्रमेयमाद्यं
 सकलजगत्स्थितिसंयमादिहेतुम् । उपरमपरमं परात्मभूतं सततमहं
 प्रणतोऽस्मि रामचंद्रम् ॥ १ ॥ निरवधिसुखमिंदिराकटाक्षं क्षपितसु-
 रेंद्रचतुर्मुखादिदुःखम् । नरवरमनिशं नतोऽस्मि रामं वरदमहं वर-
 चापबाणहस्तम् ॥ २ ॥ त्रिभुवनकमनीयरूपमीड्यं रविशतभासुरमी-

हितप्रदानम् । शरणदमनिशं सुरागमूले कृतनिलयं रघुनन्दनं प्रपद्ये
 ॥ ३ ॥ भवविपिनदवाग्निनामधेयं भवमुखदैवतदैवतं दयालुम् ।
 दनुजपतिसहस्रकोटिनाशं रवितनयासदृशं हरिं प्रपद्ये ॥ ४ ॥
 अविरतभवभावनातिदूरं भवविमुखैर्मुनिभिः सदैव दृश्यम् । भव-
 जलधिसुतारणांघ्रिपोतं शरणमहं रघुनन्दनं प्रपद्ये ॥ ५ ॥ गिरिश-
 गिरिसुतामनोनिवासं गिरिवरधारिणमीहिताभिरामम् । सुरवरदनु-
 जेन्द्रसेवितांघ्रिं सुरवरदं रघुनायकं प्रपद्ये ॥ ६ ॥ परधनपरदार-
 वर्जितानां परगुणभूतिषु तुष्टमानसानाम् । परहितनिरतात्मनां सुसेव्यं
 रघुवरमंबुजलोचनं प्रपद्ये ॥ ७ ॥ सितरुचिरविकासिताननाजमतिमु-
 लभं सुरराजराजनीलम् । सितजलरुहचारुनेत्रशोभं रघुपतिमीशगुरोर्गुरुं
 प्रपद्ये ॥ ८ ॥ हरिकमलजशंभुरूपभेदाच्चमिह विभासि गुणत्रयानुवृत्तः ।
 रविरिव जलपूरितोदपात्रेष्वमरपतिस्तुतिपात्रमीशमीडे ॥ ९ ॥
 रतिपतिशतकोटिसुंदरांगं शतपथगोचरभावनाविदूरम् । यतिपति-
 हृदये सदा विभातं रघुपतिमार्तिहरं प्रभुं प्रपद्ये ॥ १० ॥ इत्येवं-
 स्तुवतस्तस्य प्रसन्नोऽभूद्रघूत्तमः । उवाच गच्छ भद्रं ते मम
 विष्णोः परं पदम् ॥ ११ ॥ शृणोति य इदं स्तोत्रं लिखेद्वा नियतः
 पठेत् । स याति मम सारूप्यं मरणे मत्स्मृतिं लभेत् ॥ १२ ॥
 इति राघवभाषितं तदा श्रुतवान् हर्षसमाकुलो द्विजः । रघुनन्दनसा-
 म्यमास्थितः प्रययौ ब्रह्मसुपूजितं पदम् ॥ १३ ॥ इति श्रीमदध्यात्म-
 रामायणे अरण्यकांडे जटायुकृतं रामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३८४. रामाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ भजे विशेषसुंदरं समस्तपापखंडनम् । स्वभक्त-
 चित्तरंजनं सदैव राममद्वयम् ॥ १ ॥ जटाकलापशोभितं समस्त-
 पापनाशकम् । स्वभक्तभीतिभंजनं भजे ह राममद्वयम् ॥ २ ॥

निजस्वरूपबोधकं कृपाकरं भवापहम् । समं शिवं निरंजनं भजे ह
 राममद्वयम् ॥ ३ ॥ सहप्रपंचकल्पितं ह्यनामरूपवास्तवम् । निरा-
 कृतिं निरामयं भजे ह राममद्वयम् ॥ ४ ॥ निष्प्रपंचनिर्विकल्प-
 निर्मलं निरामयम् । चिदेकरूपसंततं भजे ह राममद्वयम् ॥ ५ ॥
 भवाब्धिपोतरूपकं ह्यशेषदेहकल्पितम् । गुणाकरं कृपाकरं भजे ह
 राममद्वयम् ॥ ६ ॥ महावाक्यबोधकैर्विराजमानवाक्पदैः । परब्रह्म
 व्यापकं भजे ह राममद्वयम् ॥ ७ ॥ शिवप्रदं सुखप्रदं भवच्छिदं
 भ्रमापहम् । विराजमानदैशिकं भजे ह राममद्वयम् ॥ ८ ॥
 रामाष्टकं पठति यः सुकरं सुपुण्यं व्यासेन भाषितमिदं शृणुते
 मनुष्यः । विद्यां श्रियं विपुलसौख्यमनंतकीर्तिं संप्राप्य देहविलये
 लभते च मोक्षम् ॥ ९ ॥ इति श्रीव्यासविरचितं रामाष्टकं संपूर्णम् ॥

३८५. रामाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कृतार्तदेववंदनं दिनेशवंशनंदनम् । सुशोभि-
 भालचंदनं नमामि राममीश्वरम् ॥ १ ॥ मुनींद्रयज्ञकारकं शिला-
 विपत्तिहारकम् । महाधनुर्विदारकं नमामि राममीश्वरम् ॥ २ ॥
 स्वतातवाक्यकारिणं तपोवने विहारिणम् । करेषु चापधारिणं
 नमामि राममीश्वरम् ॥ ३ ॥ कुरंगमुक्तसायकं जटायुमोक्षदायकम् ।
 प्रविद्धकीशनायकं नमामि राममीश्वरम् ॥ ४ ॥ प्लवंगसंगसंमतिं
 निबद्धनिम्नगापतिम् । दशास्यवंशसंक्षतिं नमामि राममीश्वरम् ॥ ५ ॥
 विदीनदेवहर्षणं कपीप्सितार्थवर्षणम् । स्वबंधुशोककर्षणं नमामि
 राममीश्वरम् ॥ ६ ॥ गतारिराज्यरक्षणं प्रजाजनार्तिभक्षणम् । कृतास्त-
 मोहलक्षणं नमामि राममीश्वरम् ॥ ७ ॥ हृताखिलाचलाभरं स्वधाम-
 नीतनागरम् । जगत्तमोदिवाकरं नमामि राममीश्वरम् ॥ ८ ॥ इदं
 समाहितात्मना नरो रघूत्तमाष्टकम् । पठन्निरंतरं भयं भवोद्भवं न

विंदते ॥ ९ ॥ इति श्रीपरमहंसस्वामिब्रह्मानंदविरचितं श्रीरामाष्टकं
संपूर्णम् ॥

३८६. श्रीमहादेवकृतं रामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमहादेव उवाच ॥ नमोऽस्तु रामाय
सशक्तिकाय नीलोत्पलश्यामलकोमलाय । किरीटहारांगदभूषणाय
सिंहासनस्थाय महाप्रभाय ॥ १ ॥ त्वमादिमध्यांतविहीन एकः
सृजस्यवस्यत्सि च लोकजातम् । स्वमायया तेन न लिप्यसे त्वं
यत्स्वे मुखेऽजसरतोऽनवद्यः ॥ २ ॥ लीलां विधत्से गुणसंवृतस्त्वं
प्रसन्नभक्तानुविधानहेतोः । नानावतारैः सुरमानुषाद्यैः प्रतीयसे
ज्ञानिभिरेव नित्यम् ॥ ३ ॥ स्वांशेन लोकं सकलं विधाय
तं विभर्षि च त्वं तदधः फणीश्वरः । उपर्यधो भान्वनि-
लोडुपौषधीप्रवर्षरूपोऽवसि नैकधा जगत् ॥ ४ ॥ त्वमिह देहभृतां
शिखिरूपः पचसि भक्तमशेषमजस्रम् । पवनमंचकरूपसहायो
जगदखंडमनेन विभर्षि ॥ ५ ॥ चंद्रसूर्यशिखिमध्यगतं यत्तेज
ईश चिदशेषतनूनाम् । प्राभवत्तनुभृतामिह धैर्यं शौर्यमात्रमखिलं
तव सत्त्वम् ॥ ६ ॥ त्वं विरिंचिशिवविष्णुविभेदात् कालकर्मशशि-
सूर्यविभागात् । वादिनां पृथगिवेश विभासि ब्रह्म निश्चितमनन्य-
दिहैकम् ॥ ७ ॥ मत्स्यादिरूपेण यथा त्वमेकः श्रुतौ पुराणेषु च लोक-
सिद्धः । तथैव सर्वं सदसद्विभागस्त्वमेव नान्यद्भवतो विभाति ॥ ८ ॥
यद्यत्समुत्पन्नमनंतसृष्टावुत्पस्यते यच्च भवच्च यच्च । न दृश्यते स्थावर-
जंगमादौ त्वया विनाऽतः परतः परस्त्वम् ॥ ९ ॥ तत्त्वं न जानन्ति
परात्मनस्ते जनः समस्तास्तव माययाऽतः । त्वद्भक्तसेवामलमानसानां
विभाति तत्त्वं परमेकमैशम् ॥ १० ॥ ब्रह्मादयस्ते न विदुः स्वरूपं
चिदात्मतत्त्वं वहिरर्थभावाः । ततो बुधस्त्वामिदमेव रूपं भक्त्या

भजन्मुक्तिमुपैत्यदुःखः ॥ ११ ॥ अहं भवन्नामगुणैः कृतार्थो वसामि
काश्यामनिशं भवान्या । सुमूर्धमाणस्य विमुक्तयेऽहं दिशामि मंत्रं तव
रामनाम ॥ १२ ॥ इमं स्तवं नित्यमनन्यभक्त्या शृण्वन्ति गायन्ति
लिखन्ति ये वै । ते सर्वसौख्यं परमं च लब्ध्वा भवत्पदं यांतु भवत्प्र-
सादात् ॥ १३ ॥ इति श्रीमहादेवकृतरामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३८७. अहल्याकृतं रामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अहल्योवाच ॥ अहो कृतार्थाऽस्मि जगन्निवास
ते पादाब्जसंलग्नरजःकणादहम् । स्पृशामि यत्पद्मजशंकरादिभिर्वि-
मृग्यते रंधितमानसैः सदा ॥ १ ॥ अहो विचित्रं तव राम चेष्टितं
मनुष्यभावेन विमोहितं जगत् । चलस्यजस्रं चरणादिवर्जितः
संपूर्ण आनंदमयोऽतिमायिकः ॥ २ ॥ यत्पादपंकजपरागपवित्रगात्रा
भागीरथी भवविरिंचिमुखान्पुनाति । साक्षात्स एव मम दृग्विषयो
यदाऽऽस्ते किं वर्ण्यते मम पुराकृतभागधेयम् ॥ ३ ॥ मर्त्यावतारे
मनुजाकृतिं हरिं रामाभिधेयं रमणीयदेहिनम् । धनुर्धरं पद्मविशाल-
लोचनं भजामि नित्यं न परान्भजिष्ये ॥ ४ ॥ यत्पादपंकजरजः-
श्रुतिभिर्विमृग्यं यन्नाभिपंकजभवः कमलासनश्च । यन्नामसार-
रसिको भगवान्पुरारिस्तं रामचंद्रमनिशं हृदि भावयामि ॥ ५ ॥
यस्यावतारचरितानि विरिंचिलोके गायन्ति नारदमुखा भवपद्म-
जाद्याः । आनंदजाश्रुपरिषिक्तकुचाग्रसीमा वागीश्वरी च
तमहं शरणं प्रपद्ये ॥ ६ ॥ सोऽयं परात्मा पुरुषः पुराण
एषः स्वयंज्योतिरनंत आद्यः । मायातनुं लोकविमोहनीयां धत्ते
परानुग्रह एष रामः ॥ ७ ॥ अयं हि विश्वोद्भवसंयमाना-
मेकः स्वमायागुणविवितो यः । विरिंचिविष्ण्वीश्वरनाम-
भेदान् धत्ते स्वतंत्रः परिपूर्ण आत्मा ॥ ८ ॥ नमोऽस्तु ते राम

तवांप्रिपंकजं श्रिया धृतं वक्षसि लालितं प्रियात् । आक्रान्तेमेकेन
जगत्रयं पुरा ध्येयं मुनीन्द्रैरभिमानवर्जितैः ॥ ९ ॥ जगतामादि-
भूतस्त्वं जगत्वं जगदाश्रयः । सर्वभूतेष्वसंयुक्त एको भाति भवा-
न्परः ॥ १० ॥ ॐकारवाच्यस्त्वं राम वाचामविषयः पुमान् ।
वाच्यवाचकभेदेन भवानेव जगन्मयः ॥ ११ ॥ कार्यकारणकर्तृत्व-
फलसाधनभेदतः । एको विभासि राम त्वं मायया बहुरूपया
॥ १२ ॥ त्वन्मायामोहितधियस्त्वां न जानन्ति तत्त्वतः । मानुषं
त्वाऽभिमन्यन्ते मायिनं परमेश्वरम् ॥ १३ ॥ आकाशवत्त्वं सर्वत्र
बहिरन्तर्गतोऽमलः । असंगो ह्यचलो नित्यः शुद्धो बुद्धः सदध्ययः
॥ १४ ॥ योपिन्मूढाहमज्ञा ते तत्त्वं जाने कथं विभो । तस्मात्ते
शतशो राम नमस्कुर्यामनन्यधीः ॥ १५ ॥ देव मे यत्रकुत्रापि
स्थिताया अपि सर्वदा । त्वत्पादकमले सक्ता भक्तिरेव सदाऽस्तु
मे ॥ १६ ॥ नमस्तेषु रूपाध्यक्ष नमस्ते भक्तवत्सल । नमस्तेऽस्तु
हृषीकेश नारायण नमोऽस्तु ते ॥ १७ ॥ भवभयहरमेकं भानु-
कोटिप्रकाशं करधृतशरचापं कालमेघावभासम् । कनकरुचिरवस्त्रं
रत्नवत्कुण्डलाढ्यं कमलविशदनेत्रं सानुजं राममीडे ॥ १८ ॥ स्तुत्वैवं
पुरुषं साक्षाद्राघवं पुरतः स्थितम् । परिक्रम्य प्रणम्याशु सानुजाता
ययौ पतिम् ॥ १९ ॥ अहल्यया कृतं स्तोत्रं यः पठेद्भक्तिसंयुतः ।
स मुच्यतेऽखिलैः पापैः परं ब्रह्माधिगच्छति ॥ २० ॥ पुत्रार्थे
पठेद्भक्त्या रामं हृदि निधाय च । संवत्सरेण लभते वंध्या अपि सुपुत्र-
कम् ॥ २१ ॥ सर्वान्कामानवाप्नोति रामचंद्रप्रसादतः ॥ २२ ॥ ब्रह्मघ्नो
गुस्तल्पगोऽपि पुरुषः स्तयी सुरापोऽपि वा मातृभ्रातृविहिंसकोऽपि
सततं भोगैकबद्धादरः । नित्यं स्तोत्रमिदं जपन्रघुपतिं भक्त्या हृदिस्थं
स्मरन् ध्यायन् मुक्तिमुपैति किं पुनरसौ स्वाचारयुक्तो नरः ॥ २३ ॥

इति श्रीमदध्यात्मरामायणे उमामहेश्वरसंवादे बालकांडांतर्गतमहल्या-
विरचितं रामचंद्रस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३८८. इन्द्रकृतरामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ इन्द्र उवाच ॥ भजेहं सदा राममिंद्रीवराभं
भवारण्यदावानलाभाभिधानम् । भवानीहृदा भावितानंदरूपं भवा-
भावहेतुं भवादिप्रपन्नम् ॥ १ ॥ सुरानीकदुःखौघनाशैकहेतुं नराकारदेहं
निराकारमीड्यम् । परेशं परानंदरूपं वरेण्यं हरिं राममीशं भजे
भारनाशम् ॥ २ ॥ प्रपन्नाखिलानंददोहं प्रपन्नं प्रपन्नार्तिनिःशेषनाशा-
भिधानम् । तपोयोगयोगीशभावाभिभाव्यं कपीशादिमित्रं भजे
राममित्रम् ॥ ३ ॥ सदा भोगभाजां सुदूरे विभातं सदा योगभाजाम-
दूरे विभातम् । चिदानंदकंदं सदा राघवेशं विदेहात्मजानंदरूपं
प्रपद्ये ॥ ४ ॥ महायोगमायाविशेषानुयुक्तो विभासीश लीलानरा-
कारवृत्तिः । त्वदानंदलीलाकथापूर्णकर्णाः सदानंदरूपा भवन्तीह लोके
॥ ५ ॥ अहं मानपानाभिमन्तप्रमत्तो न वेदाखिलेशाभिमानाभि-
मानः । इदानीं भवत्पादपद्मप्रसादात्रिलोकाधिपत्याभिमानो विनष्टः
॥ ६ ॥ स्फुरद्रत्नकेयूरहाराभिरामं धराभारभूतासुरानीकदावम् ।
शरच्चंद्रवक्र लसत्पद्मनेत्रं दुरावारपारं भजे राघवेशम् ॥ ७ ॥
सुराधीशनीलाभ्रनीलांगकांतिं विराधादिरक्षोवधालोकशान्तिम् ।
किरीटादिशोभं पुरारातिलाभं भजे रामचंद्रं रघूनामधीशम् ॥ ८ ॥
लसच्चंद्रकोटिप्रकाशादिपीठे समासीनमेकं समाधाय सीताम् । स्फुरद्दे-
मवर्णं तडित्पुंजभासं भजे रामचंद्रं निवृत्तार्तितंद्रम् ॥ ९ ॥ इति
श्रीमदध्यात्मरामायणे युद्धकांडे इन्द्रकृतं रामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३८९. रामचन्द्राष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ चिदाकारो धाता परमसुखदा पावनतनु-
 मुनीन्द्रैर्योगीन्द्रैर्यतिपतिसुरैर्द्रैर्हनुमता । सदा सेव्यः पूर्णो जनकतनयांगः
 सुरगुरु रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु सततम् ॥ १ ॥ मुकुन्दो
 गोविन्दो जनकतनयाललितपदः पदं प्राप्ता यस्याधमकुलभवा चापि
 शबरी । गिरातीतोऽगम्यो विमलधिषणैर्वेदवचसा रमानाथो रामो रमतु
 मम चित्ते तु सततम् ॥ २ ॥ धराधीशोऽधीशः सुरनरवराणां रघुपतिः
 किरीटी केयूरी कनककपिशः शोभितवपुः । समासीनः पीठे रविशत-
 निभे शांतमनसो रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु सततम् ॥ ३ ॥
 वरेण्यः शरण्यः कपिपतिसखा शांतविधुरो ललाटे काश्मीरो रुचिर-
 गतिभंगः शशिसुखः । नराकरो रामो यतिपतिनुतः संस्मृतिहरो
 रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु सततम् ॥ ४ ॥ विरूपाक्षः काश्या-
 मुपदिशति यन्नाम शिवदं सहस्रं यन्नाम्नां पठति गिरिजाप्रत्युपसि वै ।
 कलौ के गायंतीश्वरविधिमुखा यस्य चरितं रमानाथो रामो रमतु मम
 चित्ते तु सततम् ॥ ५ ॥ परो धीरोऽनीरोऽसुरकुलभवश्चासुरहरः
 परत्मा सर्वज्ञो नरसुरगणैर्गीतसुयशाः । अहल्याशापन्नः शरकर अजः
 कौशिकसखा रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु सततम् ॥ ६ ॥
 हृषीकेशः शौरिर्धरणिधरशायी मधुरिपुरुषेन्द्रो वैकुण्ठो गजरिपुहरस्तुष्ट-
 मनसः । बलिध्वंसी वीरो दशरथसुतो नीतिनिपुणो रमानाथो रामो
 रमतु मम चित्ते तु सततम् ॥ ७ ॥ कविः सौमित्रीड्यः कपटमृगधाती
 वनचरो रणश्लाघी दांतो धरणिभरहर्ता सुरनुतः । अमानी मानज्ञो
 निखिलजनपूज्यो हृदिशयो रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु सततम्
 ॥ ८ ॥ इदं रामस्तोत्रं वरममरदासेन रचितमुषःकाले भक्त्या यदि

पठति यो भावसहितम् । मनुष्यः स क्षिप्रं जनिमृतिभयं तापजनकं
परित्यज्य श्रेष्ठं रघुपतिपदं याति शिवदम् ॥ ९ ॥ इति श्रीमद्राम-
दासपूज्यपादशिष्यश्रीमद्वंसदासशिष्येणामरदासाख्यकविना विरचितं
श्रीमद्रामचंद्राष्टकं संपूर्णम् ॥

३९०. श्रीसीतारामाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ब्रह्ममहेंद्रसुरेंद्रमरुद्गणरुद्रमुनींद्रगणैरतिरम्यं
क्षीरसरित्पतितीरमुपेत्य नुतं हि सतामवितारमुदारम् । भूमिभर-
प्रशमार्थमथ प्रथितप्रकटीकृतचिद्वनमूर्तिं त्वां भजतो रघुनंदन देहि
दयाघन मे स्वपदांबुजदास्यम् ॥ १ ॥ पद्मदलायतलोचन हे रघुवंशवि-
भूषणदेव दयालो निर्मलनीरदनीलततोऽखिललोकहृदंबुजभासकभानो ।
कोमलगात्र पवित्रपदाब्जरजःकणपावितगौतमकांतं त्वां भजतो०
॥ २ ॥ पूर्ण परात्पर पालय मामतिदीनमनाथमनंतसुखाब्धे प्रावृड-
भ्रतडित्सुमनोहरपीतवरांबर राम नमस्ते । कामविभंजन कांततरानन
कांचनभूषण रत्नकिरीटं त्वां भजतो० ॥ ३ ॥ दिव्यशरच्छशि-
कांतिहरोज्ज्वलमौक्तिकमालविशालसुमौले कोटिरविप्रभ चारुचरित्र
पवित्र विचित्रधनुःशरपाणे । चंडमहाभुजदंडविखंडितराक्षसराजमहा-
गजदंडं त्वां भजतो० ॥ ४ ॥ दोषविहिंस्रभुजंगसहस्रसुरोपममहानल-
कीलकलापे जन्मजरामरणोर्मिमनोमदमन्मथनक्रभवाब्धौ । दुःखनिधौ
च चिरं पतितं कृपयाऽद्य समुद्धर राम ततो मां त्वां भजतो० ॥ ५ ॥
संसृतिघोरमदोत्कटकुंजरतृदक्षुन्नीरदपिंडिततुंडं दंडकरोन्मथितं च
रजस्तमउन्मदमोहपदोज्झितमार्तम् । दीनमनन्यगतिं कृपणं शरणा-
गतमाशु विमोचय मूढं त्वां भजतो० ॥ ६ ॥ जन्मशतार्जितपाप-
समन्वितहृत्कमले पतिते पशुकल्पे हे रघुवीर महारणधीर दयां कुरु
मय्यतिमंदमनीषे । त्वं जननी भगिनी च पिता मया तावदसि

त्वविताऽपि कृपालो त्वां भजतो० ॥ ७ ॥ त्वां तु दयालुमकिंचन-
वत्सलमुत्पलहारमपारमुदारं रामं विहाय कमन्यमनामयमीश जनं
शरणं ननु यायाम् । त्वत्पदपद्ममतः श्रितमेव मुदा खलु देव सदाऽव
ससीतं त्वां भजतो० ॥ ८ ॥ यः करुणामृतसिंधुरनाथजनोत्तमबंधु-
रजोत्तमकारी भक्तभयोर्मिभवाविधितरी सरयूतटिनीतटचारुबिहारी ।
तस्य रघुप्रवरस्य निरंतरमष्टकमेतदनिष्टहरं वै । यस्तु पटेदमरः स
नरो लभतेऽच्युतरामपदांबुजदास्यम् ॥ ९ ॥ इति श्रीमन्मधुसूदना-
श्रमशिष्याऽच्युतयतिविरचितं श्रीमत्सीतारामाष्टकं संपूर्णम् ॥

३९१. श्रीराममहिम्नः स्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ महामोहावर्ते पतितमिह मां ते शरणगं
शरण्यस्त्वत्तोऽन्यः प्रभवति न कोऽप्यत्र जगति । अतस्त्वत्पादाभो-
रुहयुगलमाश्रित्य नितरां स्थितोऽहं संसाराद्दृजिननिचयादुद्धर विभो
॥ १ ॥ निजाव्यक्तेनेदं जगदखिलमिच्छादिकरणैः समुत्पन्नं प्रत्यावसित-
सततं श्रीरघुपते । युगान्ते सर्वं वै हरसि किल रौद्रेण वपुषा त्वमेकः
सर्वात्मन्विहरसि न चान्यो गुणनिधे ॥ २ ॥ रमन्ते योगीन्द्रास्त्रि-
पुरहरमुख्यास्त्वयि सदा समाधौ विश्वात्मन्नियमितहृषीको रघुपते ।
तथाप्येते पारं निखिलनिगमागोचरविभो महिम्नस्ते गन्तुं गमयितुमलं
नैव कुशलाः ॥ ३ ॥ कदाचिद्भौमान्वै गणयति कणान्कोऽपि मतिमान्
तथा पारावारोदकलवचयान्वै रघुपते । क्वचिन्नक्षत्रौघं विषमगणनं
पारयति वै गुणानां ते पारं गमयितुमलं नैव कुशलाः ॥ ४ ॥ ऋतं
सत्यं भूमन्सगुणमगुणं रूपमुभयं चिदानन्दं तद्वै निखिलनिगमैरप्य-
विदितम् । समष्टिव्यष्टी ते विलसति विराड्रूपमपरं तदेतद्वै किंचि-
त्स्फुरति हृदये चैव विदुषाम् ॥ ५ ॥ विरिञ्चिश्चन्द्राद्यैरमरनिवहैः
सिद्धमुनिभिः स्तुतस्त्वं भूभारं व्यसनमपहर्तुं सुरपते । विभुः

कौसल्यायां दशरथगृहे स्वानुजयुतः समुद्भूतश्चक्रे निजपदकृतायां
 वसुमतीम् ॥ ६ ॥ मुनेर्विश्वामित्राच्छरणद बलां चाप्यतिबलां महाविद्यां
 प्राप्य प्रणतसुखसौभाग्यद विभो । शरेणैकेन त्वं निशिचरवधूं
 चातिमहतीं महाघोरां हत्वा विपिनमभयं चैव कृतवान् ॥ ७ ॥
 करालास्यं घोरं निशिचरयुगं कौणपवरं श्रुतीनां द्वेष्टारं मुनिमखविघाते
 च निरतम् । सुबाहुं मारीचं निशितविशिखेनोरसि दृढं निहत्येकैकेना-
 ध्वरभुवि पुरा प्राकृतधियम् ॥ ८ ॥ शिलाभृतां शापाच्चरणजसा
 गौतमवधूं यथापूर्वा कृत्वा परमसुभगां चातिविमलाम् । महोत्तुङ्गं
 चापं सपदि शितिकण्ठस्य सुदृढं द्विधा खण्डं चक्रे जनकनगरीं प्राप्य
 मुनिना ॥ ९ ॥ शरद्राकेशास्यां विमलकलधौताङ्गरुचिरां स्फुरद्रत्नाकल्पां
 जनकतनयां विश्वजननीम् । सुभार्यां यद्रामो विधिवदुपयेमे सुललितां
 महेन्द्रे शब्रह्मामरमुकुटनीराजितपदाम् ॥ १० ॥ महाघोरं त्रुव्यत्रिपुरहर-
 चापस्य निनदं समाकर्ण्य क्रोधाद्भृगुकुलपतेः क्षत्रियरिपोः । पथि प्राप्त-
 स्यास्य स्मयमपि जहर्थ त्वमतुलं महाविद्य प्रद्योतनकुलमणे पाहि
 नितराम् ॥ ११ ॥ सुराणां रक्षायै सपदि पितुराज्ञां सकरुणं समादाय
 प्रागावनमनुजयुक्तो वनितया । जनस्थानं प्राप्यमालवटतरूणां फलव-
 तामधश्चक्रे वासो दनुजकुलनाशाय च विभो ॥ १२ ॥ प्रभो लङ्केशस्य
 प्रबलतमवीर्यस्य भगिनीं विरूपां कृत्वा वै दनुजखरमुख्यान्निशिचरान् ।
 सुरारातीन्हत्वा द्विजकुलविघातेषु निरतान्निरातङ्गं चक्रे विपिनमपि
 स्वैरं जनपदम् ॥ १३ ॥ दशग्रीवाज्ञप्तः कनकमृगरूपेण विचरन्
 विचित्रो मारीचः प्रसभमभियातः स्वनिकटे । असौ मायावीति
 प्रणतजनसौभाग्यद विभो त्वया ज्ञात्वा नीतः सपदि विशिखेनान्त-
 कपुरीम् ॥ १४ ॥ मुमूर्षुः पौलस्त्यः कपटयतिवेषेण कुमतिः परोक्षं
 सीताया हरणमकरोच्चरिधुपते । सुराणां रक्षायै रजनिचरनाथस्य

हननं विमृश्यैतत्सर्वं खरहर तवैवेक्षितमभूत् ॥ १५ ॥ वियोगे
जानक्यास्तिवह मनुजभावेन विचरन्जटायुं दृष्ट्वा वै विपिनगतमासन्नम-
रणम् । त्वया तस्योद्धारः स्वकरकमलेनैव विहितस्तवैतद्वात्सल्यं विल-
सति हि भक्तेषु नितराम् ॥ १६ ॥ कबन्धं क्रव्यादं निशितकरवालेन
महता द्रुतं हत्वा पम्पातटमनुजयुक्तश्च गतवान् । युवां दृष्ट्वा ज्ञातुं
प्लवगपतिना वायुतनयः समाज्ञप्तश्चागाद्वरद तव पादाब्जयुगलम् ॥ १७ ॥
समाकर्ण्य त्वत्तः सकलमसुरारातिममलं विदित्वा निःशङ्कं दशरथसुतं
त्वां रघुपते । महोत्साहोन्नीतः सपदि गिरिपृष्ठे हनुमता प्रभुः
सुग्रीवेण प्लवगपतिना सख्यमकरोत् ॥ १८ ॥ कपीशं हत्वा वालि-
मतुलबलवीर्यं यभरं स्पदुरार्धर्षं देवैरसुरनिवहैरप्यसुलभम् । त्वया
सुग्रीवाय प्लवगकुलराजेन्द्रपदवीं प्रदत्ता देवेश प्रणतजनवात्सल्यजलधे
॥ १९ ॥ प्रतापात्ते नूनं सलिलनिधिमुलङ्घ्य तरसा गतो लङ्कां दृष्ट्वा
जनकतनयां चातिविमलाम् । निहत्याशं दग्ध्वा पुरमथ समुत्पाठ्य
विपिनं हनूमन्त्वत्पादं पुनरपि समागाद्रघुपते ॥ २० ॥ विदित्वा
सीतायाः पवनजमुखादुःखमतुलं निहन्तुं क्रव्यादेश्वरमपि तथा
राक्षसकुलम् । प्रतस्थे सुग्रीवाङ्गदहनुमदाद्यैः कपिभटैः सुगुप्तामादाय
प्लवगकुलसेनां च महतीम् ॥ २१ ॥ प्लवङ्गैर्भल्लकैरमितभुजवीर्यैः परिवृतो
निषङ्गी कोदण्डी शरमपि दधानः करतले । क्रमान्मार्गं नीत्वा सलिल-
निधितीरे सुविपुले गतस्त्वं सुग्रीवाङ्गदहनुमदाद्यैः कपिवरैः ॥ २२ ॥
तत्राग्रे तत्रागाच्छरणद दशास्यानुजवरः प्रपन्नस्त्वत्पादास्तुजयुगलमारा-
ध्यममरैः । कृपापारावारामितगुणनिधे सिन्धुपुलिने त्वया दत्ता तस्मै
वृजिनहर लङ्केशपदवी ॥ २३ ॥ उपित्वा तत्तीरे त्रिदिनमरविन्दाक्ष
कपिभिस्ततः किञ्चित्क्रोधान्नियमनभयात्ते जलनिधिः । पुरः प्रह्वीभूतो
रुचिरवचनैः श्रीरघुपते स्तुतिं चक्रे नत्वा पुलकिततनुर्गद्गदगिरा ॥ २४ ॥

अकूपारस्यान्ताद्दशदिशगतैर्वानरभटैस्त्वयाऽऽज्ञप्तैर्नीता निजभुजवलैः
 प्रस्तरचयाः । पुनस्तैः पाषाणैर्विपुल इह नीलेन रचितो महा-
 सेतुर्वाधौ तव विदितनाम्नोऽस्ति महिमा ॥ २५ ॥ यदेते पाषाणाः
 सततमुदके मज्जनपरास्तरन्त्यब्धौ नूनं जगति परमं चाद्भुतमिदम् ।
 किमाश्चर्यं तत्र क्षणचलितनेत्रान्तविभवः कटाक्षस्ते नूनं जगति कति
 ब्रह्माण्डरचनाः ॥ २६ ॥ समुत्तार्याशेषान्प्लवगनिवह्नालक्ष्मणयुतस्ततो
 लङ्कां गत्वा स्वयमपि समुत्तीर्णजलधिः । निहत्याजौ सर्वं रजनिचरवृन्दं
 च सकुलं दशग्रीवं हत्वा विमलतरमैश्वर्यमकरोः ॥ २७ ॥ विरिञ्ची-
 शेन्द्राद्यैरमरनिवहैः सिद्धमुनिभिः स्तुतः स्तोत्रैः कृत्वा कुसुमचयवृष्टिं
 सुविपुलाम् । कटाक्षेणैवैतांस्त्रिदशमुनिमुख्यान्करुणया विलोक्य प्रध्वस्तं
 भयमखिलमेषां रघुपते ॥ २८ ॥ प्रभो त्वं सुग्रीवप्रमुखविविधैर्वानर-
 भटैर्युतो वैदेहीं वै दहनसुविशुद्धां सुविपुलाम् । समादाय स्थित्वा
 धनपतिविमाने सुविमले वितन्वन्स्वानां वै मुदमतुलमागान्निजपुरीम्
 ॥ २९ ॥ सहस्रं वर्षाणामयुतमपि कुर्वन्वसुमतीं सनाथां वैदेहीरमण
 कृतवान् राज्यमतुलम् । अयोध्यायां देवासुरनृपकिरीटेषु निचितैर्महार-
 त्तैर्नीराजितचरणपङ्केरुह विभो ॥ ३० ॥ कृशानुः शेषाद्यः शशधरयुतो
 विजयमति (?) ते भजन्ति ध्यायन्तस्तव चरणपङ्केरुहयुगम् । गृहे तेषां
 पद्मा विहरति मुखे गीः सुललिता सुभोगान्भुक्त्वान्ते तव वरपदं
 यान्ति परमम् ॥ ३१ ॥ खत्रीजं शेषाग्नौ दहनमपरश्चैव पवनो
 नमोऽन्तः षड्वर्णापरमपदहेतुश्च भजताम् । इमं मन्त्रं यो वै जपति
 गुरुवक्त्रादधिगतं जगत्पूज्यो भोगान्भुवि परमदिव्यान्स लभते ॥ ३२ ॥
 घनश्यामं विद्युत्प्रभवसनमाकल्परुचिरं सरोजाक्षं चैवामितमदनला-
 वण्यसुभगम् । तडिद्वर्णां वामे जनकतनयां राघवमुखं प्रपश्यन्तीं
 ध्यायन् भजति परमां सिद्धिमतुलाम् ॥ ३३ ॥ अनन्तान्याहुर्वै तव

विविधरूपाणि भगवन्न तानि ज्ञातुं वै कथमपि समर्थाश्च विबुधाः ।
 विभूतीनामन्तं ते विमलबल को वेत्ति नितरामतद्व्यावृत्त्या वै त्वयि
 सकलवेदाश्च चकिताः ॥ ३४ ॥ तवेदं यद्रूपं सजलजलदाभं सुललितं
 तदेतत्तत्त्वज्ञा मुनिवरगणा हृत्सरसिजे । मुहुर्ध्यायन्ते वै विगतविषयाः
 सङ्गरहिता ययुर्नित्यानन्दं पदममरवन्द्यं रघुपते ॥ ३५ ॥ स्वमिन्दुस्त्वं
 सोमस्त्वमसि तरणिस्त्वं हुतवहस्त्वमापस्त्वं भूमिस्त्वमसि पवनस्त्वं
 च गगनम् । विरिञ्चिस्त्वं रुद्रस्त्वमसि सकलं दृश्यमिह यत्त्वदन्य-
 द्दस्त्वेकं न हि जगति भूमन्रघुपते ॥ ३६ ॥ त्वमेवादौ भूमन्निगमनि-
 चयानां जलनिधौ निमग्नानां चैवोद्धरणमकरोर्मीनवपुषा । सुधाकामैर्नीतं
 सलिलनिधिनिर्मन्थनविधौ गिरिं पृष्ठे त्वं वै दृढकमठरूपेण धृतवान्
 ॥ ३७ ॥ निहत्याजौ दैत्यं प्रलयजलधौ घोरमतुलं समुद्धारं भूमेर्गिरि-
 कुलयुतायाः सरभसम् ।.....महादंष्ट्राग्रेणामितगुणनिधे
 त्वं च कृतवान् ॥ ३८ ॥ स्वभक्तं प्रह्लादं परमविदुषामार्यममलं विदित्वा
 तं पित्रा कृतविविधदण्डं कुमतिना । विधायोग्रं रूपं नरहरिविचित्रं
 त्रिनयनं जघान त्वं दैत्येश्वरममितवीर्यं रघुपते ॥ ३९ ॥ सुना-
 सीरैश्वर्यं हृतमतुलवीर्येण बलिना विदित्वेदं राम प्रणतजनवात्स-
 ल्यजलधे । स्तुतस्त्वं शक्राद्यैरमरनिवहैर्वा मनवपुर्विधायोग्रं वैरोचनमपि
 बबन्धामररिपुम् ॥ ४० ॥ कुलं क्षात्रं सप्तत्रिगुणमपि कृत्वा
 रघुपते जघान त्वं राज्ञां प्रबलमिह शस्त्रास्त्रविशदम् । निहत्यो-
 ग्रान्कंसप्रमुखदितिजान्यादवकुले त्वमाविर्भूयोग्रं समरभुवि भारं च
 हृतवान् ॥ ४१ ॥ अनन्तान्येवं वै तव विविधरूपाणि च विभो प्रवक्तुं
 तानीह प्रभवति न कोऽप्यत्र जगति । परात्मन्श्रीराम त्रिगुणरहिताका-
 रपरमप्रभो पारावारामितगुणनिधे चिद्धन विभो ॥ ४२ ॥ नमस्ते
 श्रीराम ह्यमितगुणग्रामाय सततं नमो भूयो भूयो पुनरपि नमस्ते

रघुपते । नमो वेदैर्धन्वाखिलमुनिगणाराध्य भगवन्नमो भूयो भूयस्त्व
 चरणपङ्केरुहयुगे ॥ ४३ ॥ मया ते पादाम्भोरुहयुगलमाश्रित्य नितरा-
 मयोध्यायां भक्त्या विविधपदरम्यैः सुरचितम् । इदं रामस्तोत्रं प्रपठति
 नरो यः प्रतिदिनं स भुक्त्वा भोगान्वै भजति परमं शाश्वतपदम्
 ॥ ४४ ॥ सहस्रैः शेषो वै प्रभवति न दक्षैर्गुणगणान् प्रवक्तुं चाकल्पं
 कथमपि च ते राम सततम् । अतस्त्वां कः स्तोतुं प्रभवति ह्यलं
 श्रीरघुपते व्रजन्त्याकाशस्य क्वचिदपि च पारं हि मशकाः ॥ ४५ ॥
 तुभ्यं नमो भगवते रघुनन्दनाय श्रीजानकीप्रियतमाय खरान्तकाय ।
 योगीन्द्रपूजितपदाम्बुरुहद्वयाय संसारदुःखशमनाय नमो नमस्ते
 ॥ ४६ ॥ कामाद्या दुर्जयाश्चेन्मम भवतु पुनर्मुक्तियोपित्सु कामः
 क्रोधश्चेत्तावके वै तव चरणयुगाम्भोरुहे स्याच्च लोभः । मोहश्चेद्भ्रान्त-
 योगे भवतु मम पुनर्मत्सरोमत्सरो वै त्वत्पादाम्भोजसौख्यस्थितिमिह
 नितरां नैव पश्यामि भूमौ ॥ ४७ ॥ इति श्रीमद्रामाचार्यविरचितं
 श्रीराममहिम्नः स्तोत्रं समाप्तम् ॥

३९२. रामभुजङ्गप्रयातस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विशुद्धं परं सच्चिदानन्दरूपं गुणाधारमाधार-
 हीनं वरेण्यम् । महान्तं विभान्तं गुहान्तं गुणान्तं सुखान्तं स्वयंधाम
 रामं प्रपद्ये ॥ १ ॥ शिवं नित्यमेकं विशुं तारकाख्यं सुखाकारमाकार-
 शून्यं सुमान्यम् । महेशं कलेशं सुरेशं परेशं नरेशं निरीशं महीशं
 प्रमद्ये ॥ २ ॥ यदाऽवर्णयत्कर्णमूलेऽन्तकाले शिवो राम रामेति रामेति
 काश्याम् । तदेकं परं तारकब्रह्मरूपं भजेऽहं भजेऽहं भजेऽहं भजेऽहम्
 ॥ ३ ॥ महारत्नपीठे शुभे कल्पमूले सुखासीनमादित्यकोटिप्रकाशम् ।
 सदा जान ह्रीलक्ष्मणोपेतमेकं सदा रामचन्द्रं भजेऽहं भजेऽहम् ॥ ४ ॥

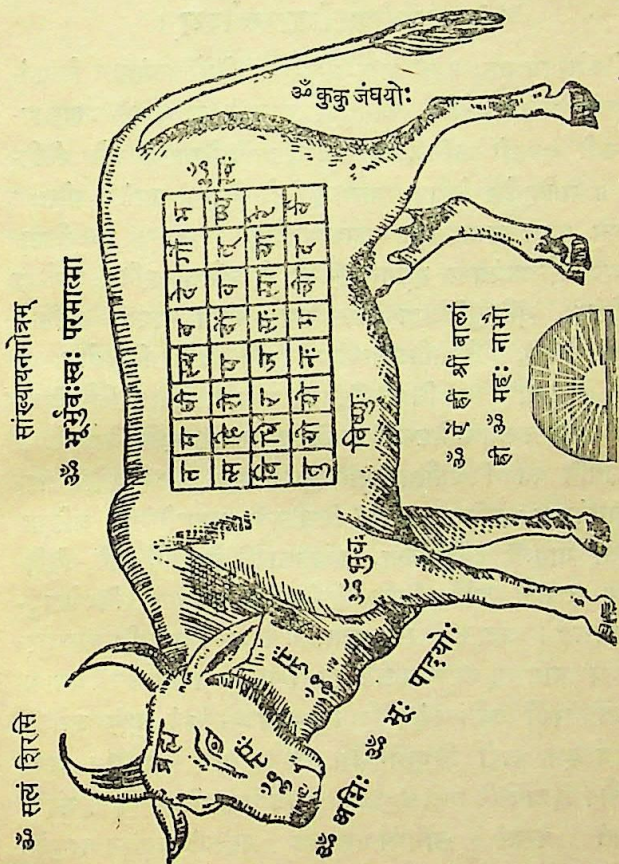
कणद्रत्नमञ्जरीपादारविन्दं लसन्मेखलाचारूपीताम्बराढ्यम् । महारत्न-
 हारोल्लसत्कौस्तुभाङ्गं नदच्चञ्चरीमञ्जरीलोलभालम् ॥ ५ ॥ लसच्चन्द्रि-
 कास्मेरशोणाधराभं समुद्यत्पतङ्गेन्दुकोटिप्रकाशम् । नमब्रह्मरुद्रादिको-
 टीररत्नस्फुरत्कान्तिनीराजनाराधिताङ्घ्रिम् ॥ ६ ॥ पुरः प्राञ्जलीना-
 ज्जनेयादिभक्तान्स्वचिन्मुद्रया भद्रया बोधयन्तम् । भजेऽहं भजेऽहं
 सदा रामचन्द्रं त्वदन्यं न मन्ये न मन्ये न मन्ये ॥ ७ ॥ यदा
 मत्समीपं कृतान्तः समेत्य प्रचण्डप्रकोपैर्भटैर्भीषयेन्माम् । तदाऽविष्क-
 रोषि त्वदीयं स्वरूपं सदापत्प्रणाशं सकोदण्डबाणम् ॥ ८ ॥ निजे
 मानसे मन्दिरे संनिधेहि प्रसीद प्रसीद प्रभो रामचन्द्र । ससौमित्रिणा
 कैकयीनन्दनेन स्वशक्त्यानुभक्त्या च संसेव्यमान ॥ ९ ॥ स्वभक्ताग्र-
 गण्यैः कपीशैर्महीशैरनीकैरनेकैश्च राम प्रसीद । नमस्ते नमोऽस्तवीश
 राम प्रसीद प्रशाधि प्रशाधि प्रकाशं प्रभो माम् ॥ १० ॥ त्वमेवासि
 दैवं परं मे यदेकं सुवैतन्यमेतत्त्वदन्यं न मन्ये । यतोऽभूदमेयं वियद्वा-
 युतेजोजलोर्व्यादिकार्यं चरं चाचरं च ॥ ११ ॥ नमः सच्चिदानन्दरू-
 पाय तस्मै नमो देवदेवाय रामाय तुभ्यम् । नमो जानकीजीवितेशाय
 तुभ्यं नमः पुण्डरीकायताक्षाय तुभ्यम् ॥ १२ ॥ नमो भक्तियुक्तानु-
 रक्ताय तुभ्यं नमः पुण्यपुञ्जकलभ्याय तुभ्यम् । नमो वेदवेद्याय चाद्याय
 पुंसे नमः सुन्दरायेन्दिरावल्लभाय ॥ १३ ॥ नमो विश्वकर्त्रे नमो विश्व-
 हर्त्रे नमो विश्वभोक्त्रे नमो विश्वमात्रे । नमो विश्वनेत्रे नमो विश्वजेत्रे
 नमो विश्वपित्रे नमो विश्वमात्रे ॥ १४ ॥ नमस्ते नमस्ते समस्तप्रपञ्च-
 प्रभोगप्रयोगप्रमाणप्रवीण । मदीयं मनस्त्वत्पदद्वन्द्वसेवां विधातुं
 प्रवृत्तं सुचैतन्यसिद्धयै ॥ १५ ॥ शिलापि त्वदङ्गघ्निक्षमासंगिरेणुप्रसादाद्धि
 चैतन्यमाधत्त राम । नरस्त्वत्पदद्वन्द्वसेवाविधानात्सुचैतन्यमेतीति किं
 चित्रमत्र ॥ १६ ॥ पवित्रं चरित्रं विचित्रं त्वदीयं नरा ये स्मरन्त्यन्वहं

रामचन्द्र । भवन्तं भवान्तं भरन्तं भजन्तो लभन्ते कृतान्तं न
 पश्यन्त्यतोऽन्ते ॥ १७ ॥ स पुण्यः स गण्यः शरण्यो ममायं नरो
 वेद यो देवचूडामणिं त्वाम् । सदाकारमेकं चिदानन्दरूपं मनोवागगम्यं
 परं धाम राम ॥ १८ ॥ प्रचण्डप्रतापप्रभावाभिभूत प्रभूतारिवीर प्रभो
 रामचन्द्र । बलं ते कथं वर्ण्यतेऽतीव बाल्ये यतोऽखण्डि चण्डीशको-
 दण्डदण्डम् ॥ १९ ॥ दशग्रीवमुग्रं सपुत्रं समित्रं सरिदुर्गमध्यस्थरक्षो-
 गणेशम् । भवन्तं विना राम वीरो नरो वाऽसुरो वाऽमरो वा
 जयेत्कस्त्रिलोक्याम् ॥ २० ॥ सदा राम रामेति रामामृतं ते सदा-
 राममानन्दनिष्यन्दकन्दम् । पिबन्तं नमन्तं सुदन्तं हसन्तं हनूमन्त
 मन्तर्भजे तं नितान्तम् ॥ २१ ॥ सदा राम रामेति रामामृतं ते सदाराम-
 मानन्दनिष्यन्दकन्दम् । पिबन्नन्वहं नन्वहं नैव मृत्योर्बिभेसि प्रसादाद-
 सादात्तवैव ॥ २२ ॥ असीतासमेतैरकोदण्डभूपैरसौमित्रिवन्द्यैरचण्ड-
 प्रतापैः । अलङ्केशकालैरसुग्रीवमित्रैररामाभिधेयैरलं दैवतैर्नः ॥ २३ ॥
 अवीरासनस्थैरचिन्मुद्रिकाढ्यैरभक्ताञ्जनेयादितत्त्वप्रकाशैः । अमन्दार-
 मूलैरमन्दारमालैररामाभिधेयैरलं दैवतैर्नः ॥ २४ ॥ असिन्धुप्रकोपैर-
 वन्द्यप्रतापैरबन्धुप्रयाणैरमन्दस्मिताढ्यैः । अदण्डप्रवासैरखण्डप्रबोधैर-
 रामाभिधेयैरलं दैवतैर्नः ॥ २५ ॥ हरे राम सीतापते रावणारे खरारे
 मुरारेऽसुरारे परेति । लपन्तं नयन्तं सदा कालमेवं समालोकयालोक-
 याशेषबन्धो ॥ २६ ॥ नमस्ते सुमित्रासुपुत्राभिवन्द्य नमस्ते सदा
 कैकयीनन्दनेड्य । नमस्ते सदा वानराधीशवन्द्य नमस्ते नमस्ते सदा
 रामचन्द्र ॥ २७ ॥ प्रसीद प्रसीद प्रचण्डप्रताप प्रसीद प्रसीद प्रचण्डा-
 रिकाल । प्रसीद प्रसीद प्रपन्नानुकम्पिन् प्रसीद प्रसीद प्रभो रामचन्द्र
 ॥ २८ ॥ भुजङ्गप्रयातं परं वेदसारं मुदा रामचन्द्रस्य भक्त्या च नित्यम् ॥
 पठन्सन्ततं चिन्तयन्स्वान्तरङ्गे स एव स्वयं रामचन्द्रः स धन्यः ॥ २९ ॥
 इति श्रीमच्छंकरभगवतः कृतौ श्रीरामभुजङ्गप्रयातस्तोत्रं संपूर्णम् ॥



❀ गायत्रीस्तोत्राणि । ❀

ॐ स्वः पुच्छे



❀ गायत्रीस्तोत्राणि । ❀

३९३. गायत्रीशापोद्धारस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीब्रह्मशापविमोचनमंत्रस्य निग्रहां-
 नुग्रहकर्ता प्रजापतिर्ऋषिः, कामदुवा गायत्री छंदः, ॐ ब्रह्मशाप-
 विमोचनी गायत्री शक्तिर्देवता, ब्रह्मशापविमोचनार्थे जपे विनि-
 योगः ॥ सवितुर्ब्रह्म मेत्युपासनात्तद्ब्रह्मविदो विदुस्तां प्रयतन्ति धीराः ।
 सुमनसा वाचा ममाग्रतः । ब्रह्मशापाद्विमुक्ता भव ॥ ॐ विश्वा-
 मित्रशापविमोचनमंत्रस्य नूतनसृष्टिकर्ता विश्वामित्र ऋषिः, वाग्देहा
 गायत्रीछंदः, भुक्तिमुक्तिप्रदा विश्वामित्रानुगृहीता गायत्री शक्तिः,
 सविता देवता, विश्वामित्रशापविमोचनार्थे जपे विनियोगः ॥
 तत्त्वानि चांगेष्वग्निचितो धियांसस्त्रिगर्भा यदुद्भवां देवाश्चोचिरे विश्व-
 सृष्टिम् । तां कल्याणीमिष्टकरीं प्रपद्ये यन्मुखान्निःसृतो वेदगर्भः ॥
 ॐ गायत्रि त्वं विश्वामित्रशापाद्विमुक्ता भव ॥ ॐ वसिष्ठशाप-
 विमोचनमंत्रस्य वसिष्ठ ऋषिः, विश्वोद्भवा गायत्रीछंदः, वसिष्ठा-
 नुगृहीता गायत्री शक्तिर्देवता, वसिष्ठशापविमोचनार्थे जपे विनि-
 योगः ॥ तत्त्वानि चांगेष्वग्निचितो धियांसः ध्यायति विष्णोरायु-
 धानि विभ्रत् । जनानता सा परमा च शश्वत् । गायत्रीमासाच्छुर-
 नुत्तम च धाम ॥ ॐ गायत्रीवसिष्ठशापाद्विमुक्ता भव । सोऽहमक-
 महं ज्योतिरर्को ज्योतिरहं शिवः । आत्मज्योतिरहं शुक्लं ज्योती-
 रसोऽहमोम् ॥ अहो विष्णुमहेशेशे दिव्ये सिद्धि सरस्वति । अजरे
 अमरे चैव दिव्ययोनि नमोऽस्तु ते ॥ अथ गायत्रीध्यानम् ॥ यद्देवैः
 सुरपूजितं परतरं सामर्थ्यतारात्मकं पुत्रागांबुजपुष्पनागबकुलैः
 केशैः शुकैरर्चितम् । नित्यं ध्यानसमस्तदीप्तिकरणं कालाग्निरुद्दीपनं

तत्संहारकरं नमामि सततं पातालसंस्थं मुखम् ॥ इति गायत्री-
शापोद्धारस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३९४. गायत्रीकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीपार्वत्युवाच ॥ देवदेव महादेव संसारार्णव-
तारकम् । गायत्रीकवचं देव कृपया कथय प्रभो ॥ १ ॥ श्रीमहादेव
उवाच ॥ मूलाधारे स्थिता नित्यं कुंडली तत्त्वरूपिणी । सूक्ष्माति-
सूक्ष्मपरमा विसतंतुस्वरूपिणी ॥ २ ॥ विद्युत्पुञ्जप्रतीकाशा कुंडली
श्रुतिसर्पिणी । परस्य ब्रह्मग्रहणी पञ्चाशद्वर्णरूपिणी ॥ ३ ॥ शिवस्य
नर्तकी नित्या परब्रह्मप्रपूजिता । ब्राह्मणस्यैव गायत्री चिदानंद-
स्वरूपिणी ॥ ४ ॥ ब्रह्मण्यवर्त्मवातेयं प्राणात्मा नित्यनूतनात् । नित्यं
तिष्ठति सानंदा कुंडली तव विग्रहे ॥ ५ ॥ अतिगोप्यं महत्पुण्यं
त्रिकोटीतीर्थसंयुतम् । सर्वज्ञानमयी देवी सर्वदानमयी सदा ॥ ६ ॥
सर्वसिद्धिमयी देवी पार्वती प्राणवल्लभा । ॐ ॐ ॐ ॐ भूः ॐ
ॐ भुवः ॐ ॐ स्वः ॐ ॐ त ॐ ॐ त्स ॐ ॐ वि ॐ ॐ तु
ॐ ॐ व ॐ ॐ रे ॐ ॐ ण्यं ॐ ॐ म ॐ ॐ र्गो ॐ ॐ
दे ॐ ॐ व ॐ ॐ स्य ॐ ॐ धी ॐ ॐ म ॐ ॐ हि ॐ
ॐ धि ॐ ॐ यो ॐ ॐ यो ॐ ॐ नः ॐ ॐ प्र ॐ ॐ चो
ॐ ॐ द ॐ ॐ यात् ॐ ॐ ॥ ॐ भूः ॐ पातु मे मूलं चतु-
र्दलसमन्वितम् । ॐ भुवः ॐ पातु मे लिङ्गं सजलं षड्दलात्मकम्
॥ ७ ॥ ॐ स्वः ॐ पातु मे कंठं संकाशं दलषोडशम् । ॐ त
ॐ पातु मे रूपं ब्रह्माणं कारणं परम् ॥ ८ ॥ ॐ त्स ॐ पातु मे
ब्रह्मरसं पातु सदा मम । ॐ वि ॐ पातु मे गंधं सदा शिशिर-
संयुतम् ॥ ९ ॥ ॐ तु ॐ पातु मे स्पर्शं शरीरस्य च कारणम् ।

ॐ वं ॐ पातु मे शब्दं शब्दविग्रहकारणम् ॥ १० ॥ ॐ रे ॐ
 पातु मे नित्यं सदा तत्त्वशरीरकम् । ॐ ण्यं ॐ पातु मे ह्यक्षं सर्व-
 तत्त्वैककारणम् ॥ ११ ॥ ॐ भ ॐ पातु मे श्रोत्रं श्रवणस्य च
 कारणम् । ॐ गौं ॐ पातु मे घ्राणं गंधोपादानकारणम् ॥ १२ ॥
 ॐ दे ॐ पातु मे वास्यं सभायां शब्दरूपिणी । ॐ व ॐ पातु मे वाहु-
 युगलं ब्रह्मकारणम् ॥ १३ ॥ ॐ स्य ॐ पातु मे लिङ्गं षड्दलं
 षड्दलैर्युतम् । ॐ धी ॐ पातु मे नित्यं प्रकृतिं शब्दकारणम्
 ॥ १४ ॥ ॐ म ॐ पातु मे नित्यं मनोब्रह्मस्वरूपिणम् । ॐ हि ॐ
 पातु मे बुद्धिं परब्रह्ममयं सदा ॥ १५ ॥ ॐ धियः ॐ पातु मे नित्य-
 महंकारं यथा तथा । ॐ यो ॐ पातु मे नित्यं जलं सर्वत्र सर्वदा ।
 ॐ नः ॐ पातु मे नित्यं तेजःपुञ्जो यथा तथा ॥ १६ ॥ ॐ प्र ॐ
 पातु मे नित्यमनिलं कार्यकारणम् । ॐ चो ॐ पातु मे नित्यमाकाशं
 शिवसन्निभम् ॥ १७ ॥ ॐ द ॐ पातु मे जिह्वां जपयज्ञस्य
 कारणम् । ॐ यात् ॐ मे नित्यं शिवज्ञानमयं सदा ॥ १८ ॥
 तत्त्वानि पातु मे नित्यं गायत्री परदैवतम् । कृष्णा मे सततं पातु
 ब्रह्माणी भूर्भुवःस्वरोम् ॥ १९ ॥ ॐ अस्य श्रीगायत्रीकवचस्य
 परब्रह्म ऋषिः, ऋग्यजुःसामाथर्वणश्छन्दांसि, ब्रह्मा देवता, धर्मार्थ-
 काममोक्षार्थं जपे विनियोगः ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः तत्सवितुर्वरेण्यं
 भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् । कामक्रोधादिकं
 सर्वं स्मरणाद्याति दूरतः । इदं कवचमज्ञात्वा ब्रह्मविद्यां जपेद्यदि
 ॥ २० ॥ शतकोटिजपेनापि न सिद्धिर्जायते प्रिये । गायत्री-
 कवचात्सर्वं स्मरणादिसिध्यति ध्रुवम् ॥ २१ ॥ पठित्वा कवचं विप्रो
 गायत्रीं सकृदुच्चेत् । सर्वपापविनिर्मुक्तो जीवन्मुक्तो भवेद्विजः
 ॥ २२ ॥ इदं कवचमज्ञात्वा ह्यन्यद्यः कवचं पठेत् । सर्वं तस्य

वृथा देवि त्रैलोक्यमंगलादिकम् ॥ २३ ॥ गायत्रीकवचं यस्य
 जिह्वायां विद्यते सदा । तदाऽमृतमयी जिह्वा पवित्रा जपपूजने
 ॥ २४ ॥ इदं कवचमज्ञात्वा ब्रह्मविद्यां जपेद्यदि । व्यर्थं भवति
 चार्वाङ्गि तज्जपो वनरोदनम् ॥ २५ ॥ ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्ग-
 नागमः । महांति पातकान्यस्य स्मरणाद्यान्ति दूरतः ॥ २६ ॥
 नश्वरं मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्रविनिर्मितम् ॥ २७ ॥ वातपित्त-
 कफैर्युक्तं स्थूलदेहं तदुच्यते । सूक्ष्मं ज्योतिर्मयं देहं पञ्चभूतात्मकं
 विदुः ॥ २८ ॥ महापद्मवनांतस्थं सर्वावयवसंयुतम् । आधार-
 देहसंबंधाद्गायत्री ब्रह्मणः स्वयम् ॥ २९ ॥ एतदेव परं ब्रह्म कथिते
 उभयात्मके । ब्राह्मणस्यैव जीवात्मा गायत्रीसहितो वपुः ॥ ३० ॥
 आत्मनां हृदयांभोजे प्रदीपकलिकोपमम् । निर्धूमं च यथा ज्योति-
 स्तैलाग्निवार्तियोगतः ॥ ३१ ॥ तज्ज्योतिः परमं ब्रह्म शुभदं नात्र
 संशयः । गायत्रीकवचं न्यासं मातृकास्थानसंधिषु ॥ ३२ ॥ स
 कृत्वा ब्राह्मणश्रेष्ठ चान्यन्यासं समाचरेत् । अन्यन्यासे
 तथा सिद्धिरन्यथाऽरण्यरोदनम् ॥ ३३ ॥ गायत्रीन्यासमात्रेण
 परब्रह्ममयो द्विजः । इदं कवचमज्ञात्वा ब्रह्मचर्यं करोति यः
 ॥ ३४ ॥ ब्रह्मचर्यं भवेद्यर्थं गायत्रीकवचं विना । कवचस्य
 प्रसादेन ब्राह्मणो ज्वलदग्निवत् ॥ ३५ ॥ कवचं परमेशानि
 सृष्टिस्थितिलयात्मकम् । कवचं ब्राह्मण इदं प्रातस्तथाय यः पठेत्
 ॥ ३६ ॥ गायत्रीं स सकृत्स्मृत्वा जपलक्षफलं भवेत् । गायत्रीं
 दशधा जप्त्वा दशलक्षफलं भवेत् ॥ ३७ ॥ एवं क्रमेण गायत्रीं
 शतधा प्रजपेद्यदि । शतलक्षफलं प्राप्य विहरेद्देववद्भुवि ॥ ३८ ॥
 सूर्येन्द्रोर्ग्रहणे चेदं पठित्वा कवचं द्विजः । सकृद्यदि जपेद्विद्यां गायत्रीं
 परमाक्षराम् ॥ ३९ ॥ तत्क्षणात् भवेत्सिद्धो ब्रह्मसायुज्यमाप्नुयात् ।

इदं कवचमज्ञात्वा गायत्रीं प्रजपेत्तु यः ॥ ४० ॥ जप एव बृथा
तस्य निस्तेजो न च सिद्धिदः । यः पठेत्कवचं देवि सततं शिव-
सन्निधौ ॥ ४१ ॥ विष्णुदेवस्य कवचं प्रजपेच्छक्तिसन्निधौ । तेजः-
पुञ्जमयो विप्रस्तत्क्षणाज्जायते ध्रुवम् ॥ ४२ ॥ इति श्रीरुद्रयामले
पार्वतीश्वरसंवादे गायत्रीकवचं संपूर्णम् ॥

३९५. गायत्रीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यस्मिन्दृष्टे नैव दृश्येत विश्वं यस्मिँल्लब्धे नैव
लब्धव्यशेषः । यस्मिन् ज्ञाते नैव वेद्यांतराशा गायत्र्यर्थं पंचवक्त्रं
प्रपद्ये ॥ १ ॥ या गायत्री नामधेयं महार्थं सार्थं कर्तुं संप्रविष्टोपनाये ।
मार्गे मंत्रान् सर्वतो दर्शयित्वा तारे लीना सर्ववेदार्थदीपे ॥ २ ॥
श्रोतव्यं मे वाक्यमेतत्समस्तैर्वर्णैर्भाव्यं स्वाश्रमप्राप्तचिह्नैः । तेभ्यस्तु-
ष्येच्छंकरः श्रीहरिर्वा प्रष्टव्यो वः श्रीगुरुः स्वैर्विनीतैः ॥ ३ ॥
गायत्री चेत्सम्यगाप्ता क्रमेण सा संज्ञता कर्मशुद्ध्या द्विजेन । सा
विज्ञाता गोपिता संप्रदायात्किं नो दद्याद्वेदमाता मता चेत् ॥ ४ ॥
बुद्धावीशारोहणं कर्म तस्याः सा चेत्त्यक्ता त्यक्त ईशो द्विजेन । यस्यां
सर्वा देवताः संप्रविष्टाः सर्वात्मानं मंत्रराजं प्रपद्ये ॥ ५ ॥ विष्णुः
शंभुर्भास्करो विघ्नराजो या वा का वा देवताऽस्या विभूतिः । सैको-
पास्या वेदमार्गैकनिष्ठैः क्षीराब्धौ किं दुग्धभिक्षाप्रयासः ॥ ६ ॥ नेयं
लभ्या मानुषाणां ज्ञाणां गंगाशब्दो मानुषत्वैकहेतुः । यस्या लब्धयै
वैदिकाप्रेसराणां वंशे वेदैः संस्कृते जन्महेतुः ॥ ७ ॥ मंत्रैः किं तैर्यैः
प्रतीक्ष्येत देवी गायत्र्यम्बा संप्रवेष्टुं द्विजेषु । देवैः किं तैरग्निना पुष्टि-
मद्भिस्तस्माद्भस्मोद्धूषितैः सा निषेव्या ॥ ८ ॥ दत्तं भस्म श्रीत्रिपादां-
बयैतद्भयघ्नघ्नैः शेषरूपं स्वरूपम् । तस्माद्भस्म प्रोच्यते भासनाच्च

भूतिर्गायत्र्यस्वयैक्या त्रिपुंड्रम् ॥ ९ ॥ शैवोऽन्यो वा यां विना किं
द्विजः स्याच्छैवोऽन्यो वा दीक्षया वेदमातुः । तस्माच्छैवो वैष्णवोऽन्येषु
गण्यो गायत्र्यास्ता ब्रह्मता वेदमान्या ॥ १० ॥ भेदापोहव्यापृतिं सा
विभर्ति ध्यानैर्भिन्नैर्ध्याननिष्ठैकवेद्याम् । तस्मान्नान्यत्र संयान्ति
सर्वाण्यस्या निष्ठा शंभवी वैष्णवी च ॥ ११ ॥ लोकस्थास्ते विष्णु-
रुद्रादिदेवाः कैश्चित्कामैः कैश्चिदेवाधिकारैः । गायत्र्यास्ता भूतयः सेव-
नीया गायत्र्यां ते सेविताः संभ्रमेण ॥ १२ ॥ ब्रह्मत्वं चेदाप्तु-
कामोऽस्युपास्त्व गायत्रीं चेलोककामोऽन्यदेवम् । कामो ज्ञातः स्वीय-
पादप्रवृत्त्या वादः को वा तृप्तिहीने प्रवृत्तिः ॥ १३ ॥ बुद्धेः साक्षी
बुद्धिगम्यो जपादौ गायत्र्यर्थः सोऽनवो वेदसारः । तद्ब्रह्मैव ब्रह्मतोपा-
सकस्याप्येवं मंत्रः कोऽस्ति तंत्रे पुराणे ॥ १४ ॥ जाल्यश्चः किं जाति-
माप्तं सकामो गत्यभ्यासात् स्पष्टतामेति जातिः । ब्रह्मत्वासौ कः
प्रयासो द्विजानां यद्गायत्र्या व्यज्यते चाष्टमेऽवदे ॥ १५ ॥ ब्रह्मत्वस्य
ख्यापनार्थं प्रविष्टा गायत्रीयं तावताऽस्य द्विजत्वम् । कर्णद्वारा ब्रह्म-
जन्मप्रदानादुक्तो वेदे ब्राह्मणो ब्रह्मनिष्ठः ॥ १६ ॥ एषा निष्ठा दुर्लभा
मर्त्यबुद्धौ तस्माल्लोके वैष्णवाः शंभवाश्च । भिन्नं भिन्नं मार्गमास्थाय
वेदं क्षामं कुर्वत्यास्तिकच्छब्दने मे ॥ १७ ॥ पक्षिद्वन्द्वं विद्यते स्वस्वदेहे
भोक्तारं सा ध्यानमाचष्ट एतत् । यावत्क्षीणा भोक्तृता स्यात्ततस्तु
ज्ञात्वा ब्रूयाद्ब्रह्मतां स्वस्य विद्वान् ॥ १८ ॥ गायत्र्यर्थं नो विजानाति
कश्चित्तस्मादन्यं देवमाह द्विजोऽपि । विज्ञातश्चेत्सर्ववादस्य शान्तिर्मुक्ति-
र्हस्ते गायमानस्य मंत्रम् ॥ १९ ॥ भस्मांतं चेद्विश्वमेतत्समस्तं भस्मो-
द्धूतं भस्म संभासते च । तस्माद्ब्रह्म प्रादुराद्यैर्वचोभिर्वेदास्तस्माद्भस्म
लिङ्गं द्विजानाम् ॥ २० ॥ इति श्रीशंकराचार्याभिप्रायः कृष्णभिक्षुणा ।

वर्णितस्तेन गायत्री विभूत्या सह नन्दतु ॥ २१ ॥ इति श्रीमत्परम-
हंसपरिव्राजककृष्णानन्दसरस्वतीप्रणीतं गायत्रीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३९६. गायत्रीकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ याज्ञवल्क्य उवाच ॥ स्वामिन्सर्वजगन्नाथ
संशयोऽस्ति महान्मम । चतुःषष्टिकलानां च पातकानां च तद्वद
॥ १ ॥ मुच्यते केन पुण्येन ब्रह्मरूपः कथं भवेत् । देहं च देवता-
रूपं मंत्ररूपं विशेषतः ॥ २ ॥ क्रमतः श्रोतुमिच्छामि कवचं विधि-
पूर्वकम् । ब्रह्मोवाच ॥ गायत्र्याः कवचस्यास्य ब्रह्मा विष्णुः शिवो
ऋषिः ॥ ३ ॥ ऋग्यजुःसामाथर्वाणि छंदांसि परिकीर्तिताः ।
परब्रह्मस्वरूपा सा गायत्री देवता स्मृता ॥ ४ ॥ रक्षाहीनं तु
यत्स्थानं कवचेन विना कृतम् । सर्वं सर्वत्र संरक्षेत्सर्वांगं भुवनेश्वरी
॥ ५ ॥ बीजं भर्गश्च युक्तिश्च धियः कीलकमेव च । पुरुषार्थ-
विनियोगो यो नश्च परिकीर्तितः ॥ ६ ॥ ऋषिं सूक्ष्मं न्यसेत्पूर्वं
मुखे छंद उदीरितम् । देवतां हृदि विन्यस्य गुह्ये बीजं नियोजयेत्
॥ ७ ॥ शक्तिं विन्यस्य पदयोर्नाभौ तु कीलकं न्यसेत् । द्वात्रिंशत्तु
महाविद्याः सांख्यायनसगोत्रजाः ॥ ८ ॥ द्वादशलक्षसंयुक्ता विनि-
योगाः पृथक्पृथक् । एवं न्यासविधिं कृत्वा करांगं विधिपूर्वकम् ॥ ९ ॥
व्याहृतित्रयमुच्चार्य ह्यनुलोमविलोमतः । चतुरक्षरसंयुक्तं करांगन्यास-
माचरेत् ॥ १० ॥ आवाहनादिभेदं च दश मुद्राः प्रदर्शयेत् । सा पातु
वरदा देवी अंगप्रत्यंगसंगमे ॥ ११ ॥ ध्यानं मुद्रां नमस्कारं गुरुमंत्रं
तथैव च । संयोगमात्मसिद्धिं च षड्विधं किं विचारयेत् ॥ १२ ॥
अस्य श्रीगायत्रीकवचस्य, ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः, ऋग्यजुःसामाथर्वाणि
छंदांसि, परब्रह्मस्वरूपिणी गायत्री देवता, भूर्बीजं, भुवः शक्तिः, स्वाहा
कीलकं, श्रीगायत्रीप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः । वर्णास्त्रां कुंडिकाहस्तां

शुद्धनिर्मलज्योतिषीम् । सर्वतत्त्वमयीं वन्दे गायत्रीं वेदमातरम्
 ॥ १३ ॥ अथ ध्यानम् ॥ मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्ष्णै-
 र्युक्तामिन्दुनिबद्धरत्नमुकुटां तत्त्वार्थवर्णात्मिकाम् । गायत्रीं वरदाभयां-
 कुशकशां शूलं कपालं गुणं शंखं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे
 ॥ १४ ॥ ॐ गायत्री पूर्वतः पातु सावित्री पातु दक्षिणे । ब्रह्मदिद्या
 च मे पश्चादुत्तरे मां सरस्वती ॥ १५ ॥ पावकीं मे दिशं रक्षेत् पाव-
 कोज्ज्वलशालिनी । यातुधानीं दिशं रक्षेद्यातुधानगणार्दिनी ॥ १६ ॥
 पावमानीं दिशं रक्षेत्पवमानविलासिनी । दिशं रौद्रीमवतु मे रुद्राणी
 रुद्ररूपिणी ॥ १७ ॥ ऊर्ध्वं ब्रह्माणी मे रक्षेदधस्ताद्वैष्णवी तथा । एवं
 दश दिशो रक्षेत् सर्वतो भुवनेश्वरी ॥ १८ ॥ ब्रह्मास्त्रस्मरणादेव वाचां
 सिद्धिः प्रजायते । ब्रह्म दण्डश्च मे पातु सर्वशस्त्रास्त्रभक्षकः ॥ १९ ॥
 ब्रह्म शीर्षस्तथा पातु शत्रूणां वधकारकः । सप्त व्याहृतयः पातु सर्वदा
 विंदुसंयुताः ॥ २० ॥ वेदमाता च मां पातु सरहस्या सदैवता ।
 देवीसूक्तं सदा पातु सहस्राक्षरदेवता ॥ २१ ॥ चतुःषष्टिकला
 विद्या दिव्याद्या पातु देवता । बीजशक्तिश्च मे पातु पातु विक्रम-
 देवता ॥ २२ ॥ तत्-पदं पातु मे पादौ जंघे मे सवितुः-पदम् ।
 वरेण्यं कटिदेशं तु नाभिं भर्गस्तथैव च ॥ २३ ॥ देवस्य मे
 तु हृदयं धीमहीति गलं तथा । धियो मे पातु जिह्वायां
 यः-पदं पातु लोचने ॥ २४ ॥ ललाटे नः पदं पातु मूर्धानं मे
 प्रचोदयात् । तद्वर्णः पातु मूर्धानं सकारः पातु भालकम् ॥ २५ ॥
 चक्षुषी मे विकारस्तु श्रोत्रं रक्षेत्तु कारकः । नासापुटे वकारो
 मे रेकारस्तु कपोलयोः ॥ २६ ॥ णिकारस्त्वधरोष्ठे च यकारस्तूर्ध्वं
 ओष्ठके । आस्यमध्ये भकारस्तु गोकारस्तु कपोलयोः ॥ २७ ॥ देकारः
 कंठदेशे च वकारः स्कंधदेशयोः । स्यकारो दक्षिणं हस्तं धीकारो

वामहस्तकम् ॥ २८ ॥ मकारो हृदयं रक्षेद्विकारो जठरं तथा । धिकारो
 नाभिदेशं तु योकारस्तु कटिद्वयम् ॥ २९ ॥ गुह्यं रक्षतु योकार
 ऊरू मे नः-पदाक्षरम् । प्रकारो जानुनी रक्षेच्चोकारो जंघदेशयोः
 ॥ ३० ॥ दकारो गुल्फदेशं तु यात्कारः पादयुग्मकम् । जातवेदेति
 गायत्री व्यंबकेति दशाक्षरा ॥ ३१ ॥ सर्वतः सर्वदा पातु आपो-
 ज्यीतीति षोडशी । इदं तु कवचं दिव्यं बाधाशतविनाशकम्
 ॥ ३२ ॥ चतुःषष्टिकलाविद्यासकलैश्वर्यसिद्धिदम् । जपारंभे च
 हृदयं जपांते कवचं पठेत् ॥ ३३ ॥ स्त्रीगोब्राह्मणमित्रादिद्रोहाद्य-
 खिलपातकैः । मुच्यते सर्वपापेभ्यः परं ब्रह्माधिगच्छति ॥ ३४ ॥
 पुष्पांजलिं च गायत्र्या मूलेनैव पठेत्सकृत् । शतसाहस्रवर्षाणां
 पूजायाः फलमाप्नुयात् ॥ ३५ ॥ भूर्जपत्रे लिखित्वैतत् स्वकंठे
 धारयेद्यदि । शिखायां दक्षिणे बाहौ कंठे वा धारयेद्बुधः
 ॥ ३६ ॥ त्रैलोक्यं क्षोभयेत्सर्वं त्रैलोक्यं दहति क्षणात् । पुत्रवान्
 धनवान् श्रीमान्नानाविद्यानिधिर्भवेत् ॥ ३७ ॥ ब्रह्मास्त्रादीनि सर्वाणि
 तदंगस्पर्शनात्ततः । भवंति तस्य तुच्छानि किमन्यत्कथयामि ते
 ॥ ३८ ॥ अभिमंत्रितगायत्रीकवचं मानसं पठेत् । तज्जलं पिबतो
 नित्यं पुरश्चर्याफलं भवेत् ॥ ३९ ॥ लघुसामान्यकं मंत्रं महामंत्रं
 तथैव च । यो वेत्ति धारणां युञ्जन् जीवन्मुक्तः स उच्यते ॥ ४० ॥
 सप्तव्याहृतिविप्रेन्द्रं सप्तावस्थाः प्रकीर्तिताः । सप्तजीवशता नित्यं
 व्याहृती अग्निरूपिणी ॥ ४१ ॥ प्रणवे नित्ययुक्तस्य व्याहृतीषु
 च सप्तसु । सर्वेषामेव पापानां संकरे समुपस्थिते ॥ ४२ ॥ शतं
 सहस्रमभ्यर्च्य गायत्री पावनं महत् । दशशतमष्टोत्तरशतं गायत्री
 पावनं महत् ॥ ४३ ॥ भक्तियुक्तो भवेद्विप्रः संध्याकर्म समा-
 चरेत् । काले काले प्रकर्तव्यं सिद्धिर्भवति नान्यथा ॥ ४४ ॥

प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य भूर्भुवःस्वस्त्यैव च । तुर्यं सहैव गायत्रीजप
 एवमुदाहृतम् ॥ ४५ ॥ तुरीयपादमुत्सृज्य गायत्रीं च जपेद्विजः ।
 स मूढो नरकं याति कालसूत्रमधोगतिः ॥ ४६ ॥ मंत्रादौ जननं
 प्रोक्तं मंत्रान्ते स्मृतसूत्रकम् । उभयोर्दोषनिर्मुक्तं गायत्री सफला
 भवेत् ॥ ४७ ॥ मंत्रादौ पाशबीजं च मंत्रान्ते कुशबीजकम् ।
 मंत्रमध्ये तु या माया गायत्री सफला भवेत् ॥ ४८ ॥ वाचि-
 कस्त्वहमेव स्यादुपांशु शतमुच्यते । सहस्रं मानसं प्रोक्तं त्रिविधं
 जपलक्षणम् ॥ ४९ ॥ अक्षमालां च मुद्रां च गुरोरपि न दर्शयेत् ।
 जपं चाक्षस्वरूपेणानामिकामध्यपर्वणि ॥ ५० ॥ अनामा मध्यया
 हीना कनिष्ठादिक्रमेण तु । तर्जनीमूलपर्यन्तं गायत्रीजपलक्षणम्
 ॥ ५१ ॥ पर्वभिस्तु जपेदेवमन्यत्र नियमः स्मृतः । गायत्री
 वेदमूलत्वाद्देदः पर्वसु गीयते ॥ ५२ ॥ दशभिर्जन्मजनितं
 शतेनैव पुरा कृतम् । त्रियुगं तु सहस्राणि गायत्री हन्ति किल्बिषम्
 ॥ ५३ ॥ प्रातःकालेषु कर्तव्यं सिद्धिं विप्रो य इच्छति । नादालये
 समाधिश्च संध्यायां समुपासते ॥ ५४ ॥ अंगुल्यग्रेण यज्जप्तं
 यज्जप्तं मेरुलंघने । असंख्यया च यज्जप्तं तज्जप्तं निष्फलं भवेत्
 ॥ ५५ ॥ विना वस्त्रं प्रकुर्वीत गायत्री निष्फला भवेत् । वस्त्रपुच्छं
 न जानाति वृथा तस्य परिश्रमः ॥ ५६ ॥ गायत्रीं तु परित्यज्य
 अन्यमंत्रमुपासते । सिद्धान्नं च परित्यज्य भिक्षामटति दुर्मतिः
 ॥ ५७ ॥ ऋषिश्छंदो देवताख्या बीजं शक्तिश्च कीलकम् ।
 नियोगं न च जानाति गायत्री निष्फला भवेत् ॥ ५८ ॥ वर्ण-
 मुद्राध्यानपदमावाहनविसर्जनम् । दीपं चक्रं न जानाति गायत्री
 निष्फला भवेत् ॥ ५९ ॥ शक्तिन्यासस्तथा स्थानं मंत्रसंबोधनं
 परम् । त्रिविधं यो न जानाति गायत्री तस्य निष्फला ॥ ६० ॥

पंचोपचारकांश्चैव होमद्रव्यं तथैव च । पंचांगं च विना नित्यं
गायत्री निष्फला भवेत् ॥ ६१ ॥ मंत्रसिद्धिर्भवेज्जातु विश्वामित्रेण
भाषितम् । व्यासो वाचस्पतिर्जीवस्तुता देवी तपःस्मृतौ ॥ ६२ ॥
सहस्रजप्ता सा देवी ह्युपपातकनाशिनी । लक्षजाप्ये तथा तच्च
महापातकनाशिनी । कोटिजाप्येन राजेन्द्र यदिच्छति तदामुयात्
॥ ६३ ॥ न देयं परशिष्येभ्यो ह्यभक्तेभ्यो विशेषतः । शिष्येभ्यो
भक्तियुक्तेभ्यो ह्यन्यथा मृत्युमामुयात् ॥ ६४ ॥ इति श्रीमद्रसिष्ठ-
संहितोक्तं गायत्रीकवचं संपूर्णम् ॥

३९७. सावित्रीपञ्जरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ भगवंतं देवदेवं ब्रह्माणं परमेष्ठिनम् । विधातारं
विश्वसृजं पद्मयोनिं प्रजापतिम् ॥ १ ॥ शुद्धस्फटिकसंकाशं महेन्द्र-
शिखरोपमम् । बद्धपिंगजटाजूटं तडित्कनककुण्डलम् ॥ २ ॥ शरच्चन्द्रा-
भवदनं स्फुरदिन्दीवरेक्षणम् । हिरण्मयं विश्वरूपमुपवीताजिनावृतम्
॥ ३ ॥ मौक्तिकाभाक्षवलयस्तंत्रीलयसमन्वितः । कर्पूरोद्भूलिततनुः
स्रष्टुर्नयनवर्धनम् ॥ ४ ॥ विनयेनोपसंगम्य शिरसा प्रणिपत्य च ।
नारदः परिपप्रच्छ देवर्षिगणमध्यगः ॥ ५ ॥ नारद उवाच ॥
भगवन् देवदेवेश सर्वज्ञ करुणानिधे । श्रोतुमिच्छामि प्रश्नेन भोग-
मोक्षैकसाधनम् ॥ ६ ॥ ऐश्वर्यस्य समग्रस्य फलदं द्वंद्ववर्जितम् ।
ब्रह्महत्यादिपापघ्नं पापाद्यरिभयापहम् ॥ ७ ॥ यदेकं निष्कलं
सूक्ष्मं निरंजनमनामयम् । यत्ते प्रियतमं लोके तन्मे ब्रूहि पितर्मम
॥ ८ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ शृणु नारद वक्ष्यामि ब्रह्ममूलं सनातनम् ।
सृष्ट्यादौ मन्मुखे क्षिप्तं देवदेवेन विष्णुना ॥ ९ ॥ प्रपंचबीज-
मित्याहुस्तपस्तिथिहेतुकम् । पुरा मया तु कथितं कश्यपाय

सुधीमते ॥ १० ॥ सावित्रीपञ्जरं नाम रहस्यं निगमत्रये । ऋष्या-
दिकं च दिग्दर्शनं सांगावरणकं क्रमात् ॥ ११ ॥ वाहनायुधमंत्रास्त्रं
मूर्तिध्यानसमन्वितम् । स्तोत्रं शृणु प्रवक्ष्यामि तव स्नेहाच्च नारद ।
॥ १२ ॥ ब्रह्मनिष्ठाय देयं स्याददेयं यस्य कस्यचित् । आचम्य
नियतः पश्चादात्मध्यानपुरःसरम् ॥ १३ ॥ ओमित्यादौ विचिंत्याथ
व्योम हैमाब्जसंस्थितम् । धर्मकंदगतज्ञानमैश्वर्याष्टदलान्वितम् ॥ १४ ॥
वैराग्यकर्णिकासीनां प्रणवग्रहमध्यगाम् । ब्रह्मवेदिसमायुक्तां चैतन्य-
पुरमध्यगाम् ॥ १५ ॥ तत्त्वहंससमाकीर्णां शब्दपीठे सुसंस्थिताम् ।
नादबिंदुकलातीतां गोपुरैरुपशोभिताम् ॥ १६ ॥ विद्याऽविद्या-
ऽमृतत्वादिप्रकारैरभिसंवृताम् । निगमार्गलसंछन्नां निर्गुणद्वार-
वाटिकाम् ॥ १७ ॥ चतुर्वर्गफलोपेतां महाकल्पवनैर्वृताम् ।
सांद्रानंदसुधासिंधुनिगमद्वारवाटिकाम् ॥ १८ ॥ ध्यानधारण-
योगादिनृणगुल्मलतावृताम् । सदसच्चित्स्वरूपाख्यां मृगपक्षिसमा-
कुलाम् । विद्याविद्याविचारत्वाल्लोकालोकाचलावृताम् ॥ १९ ॥
अविकारसमाश्लिष्टनिजध्यानगुणावृताम् । पंचीकरणपंचोत्थभूततत्त्व-
निवेदिताम् ॥ २० ॥ वेदोपनिषदर्थार्थ्यदेवर्षिगणसेविताम् । इति-
हासग्रहणैः सदारैरभिवेदिताम् ॥ २१ ॥ गाथाप्सरोभिर्यक्षैश्च
गणकिंनरसेविताम् । नारसिंहपुराणाख्यैः पुरुषैः कल्पचारणैः ॥ २२ ॥
कृतगानविनोदादिकथालापनतत्पराम् । तदित्यवाङ्मनोगम्यतेजोरूप-
धरां पराम् ॥ २३ ॥ जगतः प्रसवित्रीं तां सवितुः सृष्टिकारिणीम् ।
वरेण्यमित्यन्नमयीं पुरुषार्थफलप्रदाम् ॥ २४ ॥ अविद्यावर्णवज्यां
च तेजोवद्गर्भसंज्ञिकाम् । देवस्य सच्चिदानन्दपरब्रह्मरसात्मिकाम्
॥ २५ ॥ धीमह्यहं स वै तद्ब्रह्माद्वैतस्वरूपिणीम् । धियो यो नस्तु
सविता प्रचोदयादुपासिताम् ॥ २६ ॥ परोऽसौ सविता साक्षा-

देनोनिर्हरणाय च । परो रजस इत्यादि परं ब्रह्म सनातनम्
 ॥ २७ ॥ आपो ज्योतिरिति द्वाभ्यां पांचभौतिकसंज्ञकम् । रसो-
 ऽमृतं ब्रह्मपदैस्तां नित्यां तपिर्नीं पराम् ॥ २८ ॥ भूर्भुवःसुवरित्येतै-
 र्निगमत्वप्रकाशिकाम् । महर्जनस्तपःसत्यलोकोपरिसुसंस्थिताम् ॥ २९ ॥
 तादृगस्या विराड्रूपकिरीटवरराजिताम् । व्योमकेशालकाकाशरहस्यं
 प्रवदाम्यहम् ॥ ३० ॥ मेघभ्रुकुटिकाक्रांतविधिविष्णुशिवार्चिताम् ।
 गुरुभार्गवकर्णातां सोमसूर्याग्निलोचनाम् ॥ ३१ ॥ इडापिंगलसूक्ष्माभ्यां
 वायुनासापुटान्विताम् । संध्याद्विरोष्ठपुटितां लसद्वाग्भूपजिह्विकाम्
 ॥ ३२ ॥ संध्यासौ द्युमणेः कंठलसद्बाहुसमन्विताम् । पर्जन्यहृदया-
 सक्तवसुसुस्तनमंडलाम् ॥ ३३ ॥ आकाशोदरवित्रस्तनाभ्यवान्तरदेश-
 काम् । प्रजापत्याख्यजघनां कटींद्राणीति संज्ञिकाम् ॥ ३४ ॥ ऊरु
 मलयमेरुभ्यां शोभमानासुरद्विषम् । जानुनी जहुकुशिकवैश्वदेवसदा-
 भुजाम् ॥ ३५ ॥ अयनद्वयजंघाद्यखुराद्यपितृसंज्ञिकाम् । पदांग्रिनखरो-
 माद्यभूतलद्रुमलांछिताम् ॥ ३६ ॥ ग्रहराश्यृक्षदेवर्षिर्मुर्तिं च परसंज्ञि-
 काम् । तिथिमासर्तुवर्षाख्यसुकेतुनिमिषात्मिकाम् ॥ ३७ ॥ अहोरा-
 त्रार्धमासाख्यां सूर्याचंद्रमसात्मिकाम् । मायाकल्पितवैचित्र्यसंध्याच्छा-
 दनसंवृताम् ॥ ३८ ॥ ज्वलत्कालानलप्रख्यां तडित्कोटिसमप्रभाम् ।
 कोटिसूर्यप्रतीकाशां चंद्रकोटिसुशीतलाम् ॥ ३९ ॥ सुधामंडलमध्यस्थां
 सान्द्रानंदामृतात्मिकाम् । प्रागतीतां मनोरम्यां वरदां वेदमातरम्
 ॥ ४० ॥ चराचरमयीं नित्यां ब्रह्माक्षरसमन्विताम् । ध्यात्वा स्वात्मनि
 भेदेन ब्रह्मपंजरमारभेत् ॥ ४१ ॥ पंजरस्य ऋषिश्चाहं छन्दो
 विकृतिरुच्यते । देवता च परो हंसः परब्रह्माधिदेवता ॥ ४२ ॥
 प्रणवो बीजशक्तिः स्यादौ कीलकमुदाहृतम् । तत्तत्त्वं धीमहि
 क्षेत्रं धियोऽब्धं यः परं पदम् ॥ ४३ ॥ मंत्रमापो ज्योतिरिति

योनिर्हंसः सर्वधकम् । विनियोगस्तु सिद्ध्यर्थं पुरुषार्थचतुष्टये
 ॥ ४४ ॥ ततस्तैरंगषट्कं स्यात्तैरेव व्यापकत्रयम् । पूर्वोक्तदेवतां ध्यायेत्
 साकारगुणसंयुताम् ॥ ४५ ॥ पंचवक्त्रां दशभुजां त्रिपंचनयनैर्युताम् ।
 मुक्ताविद्रुमसौवर्णां सितशुभ्रसमाननाम् ॥ ४६ ॥ वाणीं परां रसां
 मायां चामरैर्दर्पणैर्युताम् । षडंगदेवतामंत्रे रूपाद्यवयवात्मिकाम्
 ॥ ४७ ॥ मृगेंद्रवृषपक्षींद्रमृगहंसासने स्थिताम् । अर्धेन्दुबद्धमुकुट-
 किरीटमणिकुंडलाम् ॥ ४८ ॥ रत्नताटंकमंगल्यपरग्रैवेयनूपुराम् । अंगु-
 लीयककेयूरकंकणाद्यैरलंकृताम् ॥ ४९ ॥ दिव्यस्रग्वस्त्रसंछन्नरविमण्डल-
 मध्यगाम् । वराभयाजयुगलां शंखचक्रगदांकुशान् ॥ ५० ॥ शुभ्रं
 कपालं दधतीं वहंतीमक्षमालिकाम् । गायत्रीं वरदां देवीं सावित्रीं
 वेदमातरम् ॥ ५१ ॥ आदित्यपथगामिन्यां स्मरेद्ब्रह्मस्वरूपिणीम् ।
 विचित्रमंत्रजननीं स्मरेद्विद्यां सरस्वतीम् ॥ ५२ ॥ त्रिपदा ऋज्यायी
 पूर्वामुखी ब्रह्मास्त्रसंज्ञिका । चतुर्विंशतितत्त्वाख्या पातु प्राचीं दिशं
 मम ॥ ५३ ॥ चतुष्पादयजुर्ब्रह्मदंडाख्या पातु दक्षिणाम् । षट्त्रिंश-
 त्त्त्वयुक्ता सा पातु मे दक्षिणां दिशम् ॥ ५४ ॥ प्रत्यङ्मुखी पंचपदी
 पंचाशत्तत्त्वरूपिणी । पातु प्रतीचीमनिशं सामब्रह्मशिरोंकिता ।
 ॥ ५५ ॥ सौम्या ब्रह्मस्वरूपाख्या साधर्वांगिरसात्मिका । उदीचीं
 षट्पदा पातु चतुःषष्टिकलात्मिका ॥ ५६ ॥ पंचाशत्तत्त्वरचिता
 भवपादा शताक्षरी । व्योमाख्या पातु मे चोर्ध्वा दिशं वेदांग-
 संस्थिता ॥ ५७ ॥ विद्युन्निभा ब्रह्मसंज्ञा मृगारूढा चतुर्भुजा ।
 चापेपुचर्मासिधरा पातु मे पावकीं दिशम् ॥ ५८ ॥ ब्राह्मी
 कुमारी गायत्री रक्तांगी हंसवाहिनी । विभ्रत्कमण्डल्वक्षस्त्रवस्तु-
 वान्मे पातु नैर्ऋतीम् ॥ ५९ ॥ चतुर्भुजा वेदमाता शुक्लांगी
 वृषवाहिनी । वराभयकपालाक्षस्तग्विणी पातु वारुणीम् ॥ ६० ॥

श्यामा सरस्वती वृद्धा वैष्णवी गरुडासना । शंखाराजाभयकरा
 पातु शैवीं दिशं मम ॥ ६१ ॥ चतुर्भुजा वेदमाता गौराङ्गी
 सिंहवाहना । वराभयाब्जयुगलैर्भुजैः पात्वधरां दिशम् ॥ ६२ ॥
 तत्तत्पार्श्वस्थिताः स्वस्ववाहनायुधभूषणाः । स्वस्वदिक्षु स्थिताः
 पातु ग्रहशक्त्यंगदेवताः ॥ ६३ ॥ मंत्राधिदेवतारूपा मुद्राधिष्ठान-
 देवता । व्यापकत्वेन पात्वस्मानापहृत्तलमस्तकी ॥ ६४ ॥ तत्पदं
 मे शिरः पातु भालं मे सचितुः-पदम् । वरेण्यं मे दृशौ पातु
 श्रुतीर्भगः सदा मम ॥ ६५ ॥ घ्राणं देवस्य मे पातु पातु
 धीमहि मे मुखम् । जिह्वां मम धियः पातु कंठं मे पातु यः-
 पदम् ॥ ६६ ॥ नः-पदं पातु मे स्कंधौ भुजौ पातु प्रचोदयात् ।
 करौ मे च परः पातु पादौ मे रजसेऽवतु ॥ ६७ ॥ अंसौ मे
 हृदयं पातु मम मध्यं सदावतु । ॐ मे नाभिं सदा पातु कटिं
 मे पातु मे सदा । ओमापः सक्थिनी पातु गुह्यं ज्योतिः सदा
 मम ॥ ६८ ॥ ऊरू मम रसः पातु जानुनी अमृतं मम । जंघे
 ब्रह्मपदं पातु गुल्फौ भूः पातु मे सदा ॥ ६९ ॥ पादौ मम
 भुवः पातु सुवः पात्वखिलं वपुः । रोमाणि मे महः पातु
 रोमकं पातु मे जनः ॥ ७० ॥ प्राणांश्च धातुतत्त्वानि तदीशः
 पातु मे तपः । सत्यं पातु ममायूषि हंसो बुद्धिं च पातु मे
 ॥ ७१ ॥ शुचिषत् पातु मे शुक्रं वसुः पातु श्रियं मम । मातिं
 पात्वन्तरिक्षं सद्भोक्ता दानं च पातु मे ॥ ७२ ॥ वेदिषत् पातु
 मे विद्यामतिथिः पातु मे गृहम् । धर्मं दुरोणसत् पातु नृषत् पातु
 सुतान्मम ॥ ७३ ॥ वरसत् पातु मे भार्यां मृतसत् पातु मे सुतान् ।
 व्योमसत् पातु मे बंधून् भ्रातृनब्जाश्च पातु मे ॥ ७४ ॥ पशून्मे
 पातु गोजाश्च ऋतजाः पातु मे भवम् । सर्वं मे अद्रिजाः पातु

यानं मे पातवृत्तं सदा ॥ ७५ ॥ अनुक्तमथ यत्स्थानं शरीरे-
ऽन्तर्बहिश्च यत् । तत्सर्वं पातु मे नित्यं हंसः सोऽहमहर्निशम् ॥ ७६ ॥
इदं तु कथितं सम्यङ् मया ते ब्रह्मपंजरम् । संध्ययोः प्रत्यहं
भक्त्या जपकाले विशेषतः ॥ ७७ ॥ धारयेद्विजवर्यो यः
श्रावयेद्वा समाहितः । स विष्णुः स शिवः सोऽहं सोऽक्षरः स
विराट् स्वराट् ॥ ७८ ॥ इति श्रीवसिष्ठसंहितायां ब्रह्मनारदसंवादे
सावित्रीपंजरस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३९८. गायत्रीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीनारद उवाच ॥ भक्तानुकम्पिन् सर्वज्ञ
हृदयं पापनाशनम् । गायत्र्याः कथितं तस्माद्गायत्र्याः स्तोत्रमीरय
॥ १ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ आदिशक्ते जगन्मातर्भक्तानुग्रह-
कारिणि । सर्वत्रव्यापिकेऽनन्ते श्रीसन्ध्ये ते नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥
त्वमेव सन्ध्या गायत्री सावित्री च सरस्वती । ब्राह्मणी वैष्णवी
रौद्री रक्तश्वेता सितेतरा ॥ ३ ॥ प्रातर्बाला च मध्याह्ने यौवनस्था
भवेत्पुनः । वृद्धा सायं भगवती चिन्त्यते मुनिभिः सह ॥ ४ ॥
हंसस्था गरुडारूढा तथा वृषभवाहिनी । ऋग्वेदाध्यायिनी भूमौ
दृश्यते या तपस्विभिः ॥ ५ ॥ यजुर्वेदं पठन्ती च अन्तरिक्षे
विराजते । या सामगापि सर्वेषु आम्न्यमाणा तथा भुवि ॥ ६ ॥
रुद्रलोकं गता त्वं हि विष्णुलोकनिवासिनी । त्वमेव ब्राह्मणो लोके-
ऽमर्त्यानुग्रहकारिणी ॥ ७ ॥ सप्तर्षिप्रीतिजननी माया बहुवरप्रदा ।
शिवयोः करनेत्रोत्था ह्यश्रुस्वेदसमुद्भवा ॥ ८ ॥ आनन्दजननी
दुर्गा दशधा परिपठ्यते । वरेण्या वरदा चैव वरिष्ठा वरवर्णिनी
॥ ९ ॥ गरिष्ठा च वराही च वरारोहा च सप्तमी । नीलगङ्गा तथा

सन्ध्या सर्वदा भोगमोक्षदा ॥ १० ॥ भागीरथी मर्त्यलोके पाताले
 भोगवत्यपि । त्रैलोक्यवाहिनी देवी स्थानत्रयनिवासिनी ॥ ११ ॥
 भूर्लोकस्था त्वमेवासि धरित्री लोकधारिणी । भुवर्लोके वायुशक्तिः
 स्वर्लोके तेजसां निधिः ॥ १२ ॥ महर्लोके महासिद्धिर्जनलोकेऽज-
 नेत्यपि । तपस्विनी तपोलोके सत्यलोके तु सत्यवाक् ॥ १३ ॥
 कमला विष्णुलोके च गायत्री ब्रह्मलोकगा । रुद्रलोके स्थिता गौरी
 हरार्धाङ्गनिवासिनी ॥ १४ ॥ अहमो महत्तत्त्वं प्रकृतिस्त्वं हि
 गीयते । साम्यावस्थात्मिका त्वं हि शबलब्रह्मरूपिणी ॥ १५ ॥
 ततः परा पराशक्तिः परमा त्वं हि गीयसे । इच्छाशक्तिः क्रिया-
 शक्तिर्ज्ञानशक्तिस्त्रिशक्तिदा ॥ १६ ॥ गङ्गा च यमुना चैव विपाशा
 च सरस्वती । शरयू रेविका सिन्धुर्नर्मदैरावती तथा ॥ १७ ॥
 गोदावरी शतद्रुश्च कावेरी देवलोकगा । कौशिकी चन्द्रमा चैव
 वितस्ता च सरस्वती ॥ १८ ॥ गण्डकी तापिनी तोया गोमती
 वेन्नवत्यपि । इडा च पिङ्गला चैव सुषुम्णा च तृतीयका ॥ १९ ॥
 गान्धारी हस्तजिह्वा च पूषाऽपूषा तथैव च । अलम्बुषा कुहूश्चैव
 शङ्खिनी प्राणवाहिनी ॥ २० ॥ नाडी च त्वं शरीरस्था गीयते
 प्राक्तनैर्बुधैः । हृत्पद्मस्था प्राणशक्तिः कण्ठस्था स्वप्ननायिका
 ॥ २१ ॥ तालुस्था त्वं सदाधारा बिन्दुस्था बिन्दुमालिनी । मूले
 तु कुण्डलीशक्तिर्यापिनी केशमूलगा ॥ २२ ॥ शिखामध्यासना
 त्वं हि शिखाग्रे तु मनोन्मनी । किमन्यद्बहुनोक्तेन यत्किञ्चिज्जगती-
 त्रये ॥ २३ ॥ तत्सर्वं त्वं महादेवि श्रिये सन्ध्ये नमोऽस्तु ते ।
 इतीदं कीर्तितं स्तोत्रं सन्ध्यायां बहुपुण्यदम् ॥ २४ ॥ महापाप-
 प्रशमनं महासिद्धिविधायकम् । य इदं कीर्तयेत्स्तोत्रं सन्ध्याकाले
 समाहितः ॥ २५ ॥ अपुत्रः प्राप्नुयात्पुत्रं धनार्थी धनमाप्नुयात् ।

सर्वतीर्थतपोदानयज्ञयोगफलं लभेत् ॥ २६ ॥ भोगान् भुक्त्वा
चिरं कालमन्ते मोक्षमवाप्नुयात् । तपस्विभिः कृतं स्तोत्रं स्नानकाले
तु यः पठेत् ॥ २७ ॥ यत्र कुत्र जले मग्नः सन्ध्याभजनजं फलम् ।
लभते नात्र सन्देहः सत्यं सत्यं तु नारद ॥ २८ ॥ शृणुयाद्योऽपि
तद्भक्त्या स तु पापात्प्रमुच्यते । पीयूषसदृशं वाक्यं सन्ध्योक्तं
नारदेरितम् ॥ २९ ॥ इति भगवतोक्तं श्रीगायत्रीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३९९. गायत्रीनामाष्टाविंशतिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ब्रह्मोवाच ॥ शताक्षरात्मकं देव्या नामाष्टा-
विंशतिः शतम् । शृणु वक्ष्यामि तत्सर्वमतिगुह्यं सनातनम् ॥ १ ॥
भूतिदा भुवना वाणी वसुधा सुमना मही । हरिणी जननी नन्दा
सविसर्गा तपस्विनी ॥ २ ॥ पयस्विनी सती त्यागा चैद्वी
सत्यवीरसा । विश्वा तुर्या परा रेच्या निर्वृणी यमिनी भवा
॥ ३ ॥ गोवेद्या च जरिष्ठा च स्कंदिनी धीर्मेतिर्हिमा । भीषणा
योगिनी पक्षी नदी प्रज्ञा च चोदिनी ॥ ४ ॥ धनिनी यामिनी
पद्मा रोहिणी रमणी ऋषिः । सेनामुखी सामयी च बकुला
दोषवर्जिता ॥ ५ ॥ सर्वकामदुघा सोमोद्भवाऽहंकारवर्जिता ।
द्विपदा च चतुष्पादा त्रिपदा चैव षट्पदा ॥ ६ ॥ अष्टापदी
नवपदी सा सहस्राक्षरात्मिका । इदं यः परमं गुह्यं सावित्रीमंत्र-
गर्भितम् ॥ ७ ॥ नामाष्टाविंशतिशतं शृणुयाच्छ्रावयेत्पठेत् ।
मर्त्यानाममृतत्वाय भीतानामभयाय च ॥ ८ ॥ मोक्षाय च
मुमुक्षूणां श्रीकामान् प्राप्तये श्रियः । विजयाय युयुत्सूनां व्याधि-
तानामरोगकृत् ॥ ९ ॥ वश्याय वश्यकामानां विद्यायै वेदकामि-
नाम् । द्रविणाय दरिद्राणां पापिनां पापशान्तये ॥ १० ॥ वादिनां

वादविजये कवीनां कविताप्रदम् । अन्नाय क्षुधितानां च स्वर्गार्थं
 नाकमिच्छताम् ॥ ११ ॥ पशुभ्यः पशुकामानां पुत्रेभ्यः पुत्रकांक्षि-
 णाम् । क्लेशिनां शोकशान्त्यर्थं नृणां शत्रुभयाय च ॥ १२ ॥
 राजवश्याय द्रष्टव्यं परमं नृपसेविनाम् । भक्त्यर्थं विष्णुभक्तानां
 विष्णौ सर्वांतरात्मनि ॥ १३ ॥ नायकं विधिसृष्टानां शान्तये
 भवति ध्रुवम् । निःस्पृहाणां नृणां मुक्तिः शाश्वती भवति ध्रुवम्
 ॥ १४ ॥ जप्यं त्रिवर्गसंयुक्तं गृहस्थेन विशेषतः । मुनीनां ज्ञान-
 सिद्ध्यर्थं यतीनां मोक्षसिद्धये ॥ १५ ॥ उद्यतं चंद्रकिरणमुपस्थाय
 कृतांजलिः । कानने वा स्वभवने तिष्ठन् शुद्धो जपेदिदम् ॥ १६ ॥
 सर्वान्कामानवाप्नोति तथैव शिवसंनिधौ । मम प्रीतिकरं दिव्यं
 विष्णुभक्तिविवर्धनम् ॥ १७ ॥ ज्वरार्तानां कुशाग्रेण मार्जयेत्कुष्ठ-
 रोगिणाम् । अंगमंगं यथालिंगं कवचेन तु साधकः ॥ १८ ॥
 मंडलेन विशुध्येत सर्वरोगैर्न संशयः । मृतप्रजा च या नारी
 जन्मबंध्या तथैव च ॥ १९ ॥ कन्यादिवंध्या या नारी तासामंगं
 प्रमार्जयेत् । पुत्रा नरोगिणस्तास्तु लभन्ते दीर्घजीविनः ॥ २० ॥
 तास्ताः संवत्सरादर्वाक् गर्भं तु दधिरे पुनः । पतिविद्वेषिणी या
 स्त्री अंगं तस्याः प्रमार्जयेत् ॥ २१ ॥ तमेव भजते सा स्त्री पतिं
 कामवशं नयेत् । अश्वत्थे राजवश्यार्थं बिल्वमूले स्वरूपभाक्
 ॥ २२ ॥ पालाशमूले विद्यार्थी तेजसोऽभिमुखो रवौ । कन्यार्थी
 चंडिकागेहे जपेच्छत्रुभयाय च ॥ २३ ॥ श्रीकामो विष्णुगेहे
 च उद्याने श्रीर्वशीभवेत् । आरोग्यार्थं स्वगेहे च मोक्षार्थी
 शैलमस्तके ॥ २४ ॥ सर्वकामो विष्णुगेहे मोक्षार्थी यत्र कुत्रचित् ।
 जपारंभे तु हृदयं जपान्ते कवचं पठेत् ॥ २५ ॥ किमत्र बहुनो-
 क्तेन शृणु नारद तत्त्वतः । यं यं चिंतयते कामं तं तं प्राप्नोति

निश्चितम् ॥ २६ ॥ इति श्रीमद्वसिष्ठसंहितायां ब्रह्मनारद-
संवादे गायत्रीनामाष्टाविंशतिस्तोत्रं समाप्तम् ॥

४००. गायत्र्यथर्वशीर्षम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमस्कृत्य भगवान् याज्ञवल्क्यः स्वयं परि-
पृच्छति त्वं ब्रूहि भगवन् गायत्र्या उत्पत्तिं श्रोतुमिच्छामि ॥ १ ॥
ब्रह्मोवाच ॥ प्रणवेन व्याहृतयः प्रवर्तन्ते, तमसस्तु परं ज्योतिष्कः
पुरुषः स्वयम् । भूर्विष्णुरिति ह ताः स्वांगुल्या मथेत् ॥ २ ॥
मथ्यमानात्फेनो भवति, फेनाहुहुदो भवति, बुहुदादंडं भवति,
अंडवानात्मा भवति, आत्मन आकाशो भवति, आकाशाद्वायुर्भवति,
वायोरग्निर्भवति, अग्नेरोंकारो भवति, ओंकाराद्व्याहृतिर्भवति, व्याहृत्या
गायत्री भवति, गायत्र्याः सावित्री भवति, सावित्र्याः सरस्वती
भवति, सरस्वत्या वेदा भवन्ति, वेदेभ्यो ब्रह्मा भवति, ब्रह्मणो लोका
भवन्ति, तस्मालोकाः प्रवर्तन्ते, चत्वारो वेदाः सांगाः सोपनिषदः
सेतिहासास्ते सर्वे गायत्र्याः प्रवर्तन्ते, यथाऽग्निर्देवानां ब्राह्मणो
मनुष्याणां मेरुः शिखरिणां गंगा नदीनां वसंत ऋतूनां ब्रह्मा
प्रजापतीनामेवासौ मुख्यो गायत्र्या गायत्री छंदो भवति ॥ ३ ॥ किं
भूः किं भुवः किं स्वः किं महः किं जनः किं तपः किं सत्यं किं तत्
किं सवितुः किं वरेण्यं किं भर्गः किं देवस्य किं धीमहि किं धियः
किं यः किं नः किं प्रचोदयात् ॥ ४ ॥ भूरिति भूर्लोकः भुव इत्यंत-
रिक्षलोकः । स्वरिति स्वर्लोको मह इति महर्लोको जन इति
जनो लोकस्तप इति तपोलोकः सत्यमिति सत्यलोकः । भूर्भुवः-
स्वरोमिति त्रैलोक्यम् ॥ ५ ॥ तदसौ तेजो यत्तेजसोऽग्निर्देवता सवितु-
रित्यादित्यस्य वरेण्यमित्यन्नम् । अन्नमेव प्रजापतिर्भर्ग इत्यापः ।

आपो वै भर्ग एतावत्सर्वा देवता देवस्येंद्रो वै देवयद्विवं तदिन्द्रस्त-
 स्मात्सर्वकृत् पुरुषो नाम विष्णुः ॥ ६ ॥ धीमहि किमध्यात्मं तत्परमं
 पदमित्यध्यात्मं यो न इति पृथिवी वै यो नः प्रचोदयात् काम
 इमाँल्लोकान् प्रच्यावयन् यो नृशंस्योऽस्तोष्यस्तत्परमो धर्म इत्येषा
 गायत्री किंगोत्रा कत्यक्षरा कतिपदा कतिकुक्षिः कतिशीर्षा च ॥ ७ ॥
 सांख्यायनसगोत्रा गायत्री चतुर्विंशत्यक्षरा त्रिपदा षट्कुक्षिः
 सावित्री कशास्त्रयः पादा भवन्ति ॥ ८ ॥ काऽस्याः कुक्षिः कानि पंच
 शीर्षाणि । ऋग्वेदोऽस्याः प्रथमः पादो भवति, यजुर्वेदो द्वितीयः
 सामवेदस्तृतीयः, पूर्वा दिक् प्रथमा कुक्षिर्भवति, दक्षिणा द्वितीया,
 पश्चिमा तृतीया, उदीची चतुर्था, ऊर्ध्वा पंचमी, अधरा षष्ठी कुक्षिः ।
 व्याकरणमस्याः प्रथमं शीर्षं भवति, शिक्षा द्वितीयं कः पस्तृतीयं
 निरुक्त, ज्योतिषामयनं पंचमम् ॥ ९ ॥ किं लक्षणं किमु चेष्टितं
 किमुदाहृतं किमक्षरं दैवत्यम् ॥ १० ॥ लक्षणं मीमांसा अथर्ववेदो
 विचेष्टितम् । छंदोविधिरित्युदाहृतम् ॥ ११ ॥ को वर्णः कः स्वरः ।
 श्वेतो वर्णः षट् स्वराणि इमान्यक्षराणि दैवतानि भवन्ति, पूर्वा भवति-
 गायत्री मध्यमा, सावित्री पश्चिमा, संध्या सरस्वती ॥ १२ ॥ प्रातः,
 संध्या रक्ता रक्तपद्मासनस्था रक्तांबरधरा रक्तवर्णा रक्तगंधानुलेपना
 चतुर्मुखा अष्टभुजा द्विनेत्रा दंडाक्षमालाकमंडलुस्रक्सुवधारिणी
 सर्वाभरणभूषिता कौमारी ब्राह्मी हंसवाहिनी ऋग्वेदसंहिता
 ब्रह्मदैवत्या त्रिपदा गायत्री षट्कुक्षिः पंचशीर्षा अग्निमुखा
 रुद्रशिवविष्णुहृदया ब्रह्मकवचा सांख्यायनसगोत्रा भूर्लोकव्यापिनी
 अग्निस्तत्त्वम्, उदात्तानुदात्तस्वरितस्वरमकार, आत्मज्ञाने विनियोगः ।
 इत्येषा गायत्री ॥ १३ ॥ मध्याह्नसंध्या श्वेता श्वेतपद्मासनस्था श्वेतांबर-
 धरा श्वेतगंधानुलेपना पंचमुखी दशभुजा त्रिनेत्रा शूलाक्षमाला

कमंडलुकपालधारिणी सर्वाभरणभूषिता सावित्री युवती माहेश्वरी
वृषभवाहिनी यजुर्वेदसंहिता रुद्रदैवत्या त्रिपदा सावित्री षट्कुक्षिः
पंचशीर्षा अग्निमुखा रुद्रशिखा ब्रह्मकवचा भारद्वाजसगोत्रा
भुवर्लोकव्यापिनी वायुस्तत्त्वम्, उदात्तानुदात्तस्वरितस्वरमकारः
श्वेतवर्ण आत्मज्ञाने विनियोगः । इत्येषा सावित्री ॥ १४ ॥ सायंसंध्या
कृष्णा कृष्णपद्मासनस्था कृष्णांबरधरा कृष्णवर्णा कृष्णगंधानु-
लेपना कृष्णमाल्यांबरधरा एकमुखी चतुर्भुजा द्विनेत्रा शंखचक्र-
गदापद्मधारिणी सर्वाभरणभूषिता सरस्वती वृद्धा वैष्णवी
गरुडवाहिनी सामवेदसंहिता विष्णुदैवत्या त्रिपदा षट्कुक्षिः
पंचशीर्षा अग्निमुखा विष्णुहृदया रुद्रशिखा ब्रह्मकवचा काश्यप-
सगोत्रा स्वर्लोकव्यापिनी सूर्यस्तत्त्वमुदात्तानुदात्तस्वरितमकारः कृष्ण-
वर्णा मोक्षज्ञाने विनियोगः । इत्येषा सरस्वती ॥ १५ ॥ रक्ता गायत्री
श्वेता सावित्री कृष्णवर्णा सरस्वती । प्रणवो नित्ययुक्तश्च व्याहृ-
तीषु च सप्तसु ॥ १६ ॥ सर्वेषामेव पापानां संकरे समुपस्थिते । दश
शतं समभ्यर्च्य गायत्री पावनी महत् ॥ १७ ॥ प्रहादोऽत्रिर्वसिष्ठश्च
शुकः कण्वः पराशरः । विश्वामित्रो महातेजाः कपिलः शौतको
महान् ॥ १८ ॥ याज्ञवल्क्यो भरद्वाजो जमदग्निस्तपो निधिः । गौतमो
मुद्गलः श्रेष्ठो वेदव्यासश्च लोमशः ॥ १९ ॥ अगस्त्यः कौशिको वत्सः
पुलस्त्यो मांडुकस्तथा । दुर्वासास्तपसा श्रेष्ठो नारदः कश्यपस्तथा ॥ २० ॥
उक्तात्युक्ता तथा मध्या प्रतिष्ठान्यासु पूर्विका । गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्
च बृहती पंक्तिरेव च ॥ २१ ॥ त्रिष्टुप् च जगती चैव तथातिजगती
मता । शकरी सातिपूर्वा यादृष्ट्यत्यष्टी तथैव च । धृतिश्चातिधृतिश्चैव
प्रकृतिः कृतिराकृतिः ॥ २२ ॥ विकृतिः संकृतिश्चैव तथातिकृति-
स्तकृतिः । इत्येताश्छंदसां संज्ञाः क्रमशो वच्मि सांप्रतम् ॥ २३ ॥

भूरिति छंदो भुव इति छंदः स्वरिति छंदो भूर्भुवःस्वरोमिति देवी
 गायत्री इत्येतानि छंदांसि प्रथममाग्नेयं द्वितीयं प्राजापत्यं तृतीयं सौम्यं
 चतुर्थमैशानं पंचममादित्यं षष्ठं बार्हस्पत्यं सप्तमं पितृदैवत्यमष्टमं
 भगदैवत्यं नवममार्यमं दशमं सावित्रमेकादशं त्वाष्ट्रं द्वादशं पौष्णं
 त्रयोदशमैन्द्राग्नं चतुर्दशं वायव्यं पंचदशं वामदैवत्यं षोडशं मैत्रावरुणं
 सप्तदशमांगिरसमष्टादशं वैश्वदेव्यमेकोनविंशं वैष्णवं विंशं वासवमेक-
 विंशं रौद्रं द्वाविंशमाश्विनं त्रयोविंशं ब्राह्मं चतुर्विंशं सावित्रम् ॥ २४ ॥
 दीर्घान्स्वरेण संयुक्तान् बिंदुनादसमन्वितान् । व्यापकान्विन्यसेत्पश्चा-
 द्दशपञ्चक्षराणि च । द्रवुपुंस इति प्रत्यक्षबीजानि । प्रह्लादिनी प्रभा
 सत्या विश्वा भद्रा विलासिनी । प्रभावती जया कान्ता शांता पद्मा
 सरस्वती ॥ २५ ॥ विद्रुमस्फटिकाकारं पद्मरागसमप्रभम् । इंद्रील-
 मणिप्रख्यं मौक्तिकं कुंकुमप्रभम् ॥ २६ ॥ अञ्जनाभं च गांगेयं वैडूर्यं
 चंद्रसन्निभम् । हारिद्रं कृष्णदुग्धाभं रविकांतिसमं भवम् ॥ २७ ॥
 शुक्पिच्छसमाकारं क्रमेण परिकल्पयेत् । पृथिव्यापस्तथा तेजो वायुरा-
 काश एव च ॥ २८ ॥ गंधो रसश्च रूपं च शब्दः स्पर्शस्तथैव च
 ॥ २९ ॥ घ्राणं जिह्वा च चक्षुश्च त्वक् श्रोत्रं च तथापरम् । उपस्थ-
 पायुपादादि पाणिर्वागपि च क्रमात् ॥ ३० ॥ मनो बुद्धिरहंकारमव्यक्तं
 च यथाक्रमम् । सुमुखं संपुटं चैव विततं विस्तृतं तथा । एकमुखं
 च द्विमुखं त्रिमुखं च चतुर्मुखम् ॥ ३१ ॥ पंचमुखं षण्मुखं
 चाधोमुखं चैव व्यापकम् । अंजलीकं ततः प्रोक्तं मुद्रितं तु त्रयोदशम्
 ॥ ३२ ॥ शकटं यमपाशं च ग्रथितं संमुखोन्मुखम् । प्रलंबं मुष्टिकं
 चैव मत्स्यः कूर्मो वराहकम् ॥ ३३ ॥ सिंहाक्रांतं महाक्रांतं मुद्गरं पल्लवं
 तथा । एता मुद्राश्चतुर्विंशद्गायत्र्याः सुप्रतिष्ठिताः ॥ ३४ ॥ ॐ मूर्ध्नि
 संघाते ब्रह्मा विष्णुर्ललाटे रुद्रो भ्रूमध्ये चक्षुश्चंद्रादित्यौ कर्णयोः शुक्र-

वृहस्पती नासिके वायुदैवत्यं प्रभातं दोषा उभे संध्ये मुखमग्निर्जिह्वा
सरस्वती ग्रीवा स्वाध्यायाः स्तनयोर्वसवो बाह्वोर्मरुतः हृदयं पर्जन्यमा-
काशमपरं नाभिरंतरिक्षं कटिरिन्द्रियाणि जघनं प्राजापत्यं कैलासमलयौ
ऊरु विश्वेदेवा जानुभ्यां जान्वोः कुशिकौ जंघयोरयनद्वयं सुराः पितरः
पादौ पृथिवी वनस्पतिर्गुल्फौ रोमाणि मुहूर्तास्ते विग्रहाः केतुमासा
ऋतवः संध्याकालत्रयमाच्छादनं संवत्सरो निमिषः अहोरात्रावादित्य-
चंद्रमसौ सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां दशापराम् । सहस्रनेत्रीं देवीं
गायत्रीं शरणमहं प्रपद्ये ॥ ३५ ॥ तत्सवितुर्वरेण्यं नमः तत्प्रातरा-
दित्याय नमः । सायमधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति ॥ ३६ ॥
प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । तत्सायंप्रातः प्रयुजानोऽपापो
भवति ॥ य इदं गायत्र्यथर्वशीर्षं ब्राह्मणः प्रयतः पठेत् । चत्वारो वेदा
अधीता भवन्ति । सर्वेषु तीर्थेषु स्नातो भवति सर्वैर्देवैर्ज्ञातो भवति ।
सर्वप्रत्यूहात्पूतो भवति ॥ ३७ ॥ अपेयपानात्पूतो भवति ॥ ३८ ॥
अभक्ष्यभक्षणात्पूतो भवति ॥ अलेह्यलेहनात्पूतो भवति ॥ अचोष्य-
चोषणात्पूतो भवति ॥ सुरापानात्पूतो भवति ॥ ३९ ॥ सुवर्णस्तेयात्पूतो
भवति ॥ पंक्तिभेदनात्पूतो भवति ॥ पतितसंभाषणात्पूतो भवति ॥
अनृतवचनात्पूतो भवति ॥ गुरुतल्पगमनात्पूतो भवति ॥ अगम्या-
गमनात्पूतो भवति ॥ वृषलीगमनात्पूतो भवति ॥ ४० ॥ ब्रह्महत्यायाः
पूतो भवति ॥ भ्रूणहत्यायाः पूतो भवति ॥ वीरहत्यायाः पूतो
भवति ॥ अब्रह्मचारी सुब्रह्मचारी भवति ॥ ४१ ॥ अनेनाथर्वशीर्षेणा-
धीतेन क्रतुशतेनेष्टं भवति । षष्टिसहस्रं गायत्री जप्ता भवति ॥ अष्टौ
ब्राह्मणान् ग्राह्येदर्थसिद्धिर्भवति । य इदं गायत्र्यथर्वशीर्षं ब्राह्मणः
प्रयतः पठेत् ॥ स सर्वपापैः प्रमुच्यते ब्रह्मलोके महीयते ब्रह्मलोके
महीयते ॥ ४२ ॥ इति गायत्र्यथर्वशीर्षं संपूर्णम् ॥

४०१. गायत्रीस्तवराजः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीगायत्रीस्तवराजस्तोत्रमंत्रस्य विश्वामित्र ऋषिः, सकलजननी चतुष्पदा गायत्री, परमात्मा देवता, सर्वोत्कृष्टपरं धाम प्रथमपादो बीजं, द्वितीयः शक्तिः । तृतीयः कीलकं, दशप्रणवसंयुक्ता सव्याहृतिका तुर्यपादसहिता व्यापकं, मम धर्मार्थकाममोक्षार्थे जपे विनियोगः ॥ अथ न्यासान्कुर्यात् ॥ अथ ध्यानम् ॥ गायत्रीं वेदधात्रीं शतमखफलदां वेदशास्त्रैकवेद्यां चिच्छक्तिं ब्रह्मविद्यां परमशिवपदां श्रीपदं वै करोति । सर्वोत्कृष्टं पदं तत्सवितुरनुपदाते वरेण्यं शरण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो नः प्रचोदयदित्यौर्वतेजः ॥ १ ॥ साम्राज्यबीजं प्रणवत्रिपादं सव्यापसव्यं प्रजपेत्सहस्रकम् । संपूर्णकामं प्रणवं विभूतिं तथा भवेद्वाक्यविचित्रवाणी ॥ २ ॥ शुभं शिवं शोभनमस्तु मह्यं सौभाग्यभोगोत्सवमस्तु नित्यम् । प्रकाशविद्यात्रयशास्त्रसर्वं भजेन्महामन्त्रफलं प्रिये वै ॥ ३ ॥ ब्रह्मास्त्रं ब्रह्मदंडं शिरसि शिखिमहद्ब्रह्मशीर्षं नमोन्तं सूक्तं पारायणोक्तं प्रणवमथ महावाक्यसिद्धांतमूलम् । तुर्यं त्रीणि द्वितीयं प्रथममनुमहावेदवेदांतसूक्तं नित्यं स्मृत्यानुसारं नियमितचरितं मूलमंत्रं नमोन्तम् ॥ ४ ॥ अस्त्रं शस्त्रहतं त्वघोरसहितं दंडेन वाजीहतं चादित्यादिहेतुं शिरोन्तसहितं पापक्षयार्थं परम् । तुर्यात्यादिविलोममन्त्रपठनं बीजं शिखांतोर्ध्वकं नित्यं कालनियम्यविप्रविदुषां किं दुष्कृतं भूसुरान् ॥ ५ ॥ नित्यं मुक्तिप्रदं नियम्य पवनं निर्दोषशक्तित्रयं सम्यग्ज्ञानगुरूपदेशविधिवद्देवीं शिखांतामपि । षष्ठ्यैकोत्तरसंख्ययानुमतसौपुम्नादिमार्गत्रयीं ध्यायेन्नित्यसमस्तवेदजननीं देवीं

त्रिसंध्यामयीम् ॥ ६ ॥ गायत्रीं सकलागमार्थविदुषां सौरस्य
 बीजेश्वरीं सर्वाभ्यायसमस्तमंत्रजननीं सर्वज्ञधामेश्वरीम् । ब्रह्मादित्रय-
 संपुटार्थकरणीं संसारपारायणीं संध्यां सर्वसमानतंत्रपरया ब्रह्मानु-
 संधायिनीम् ॥ ७ ॥ एकद्वित्रिचतुःसमानगणनावर्णाष्टकं पादयोः
 पादादौ प्रणवादिमंत्रपठने मन्त्रत्रयीसंपुटाम् । संध्याया द्विपदं
 पठेत्परतरं सायं तुरीयं युतं नित्यानित्यमनंतकोटिफलदं प्राप्तं नम-
 स्कुर्महे ॥ ८ ॥ ओजोऽसीति सहोऽस्यहो बलमसि आजोऽसि
 तेजस्विनी वर्चस्वी सविताग्निसोमममृतं रूपं परं धीमहि । देवानां
 द्विजवर्यतां मुनिगणे मुक्त्यर्थिनां शान्तिनामोमित्येकमृचं पठति
 यमनो यं यं स्मरेत्प्राप्नुयात् ॥ ९ ॥ ओमित्येकमजस्वरूपममलं
 तत्सप्तधा भाजितं तारं तंत्रसमन्वितं परतरे पादत्रयं गर्भितम् ।
 आपोज्योतिरसोऽमृतं जनमहः सत्यं तपः स्वर्भुवर्भूयोभूय नमामि
 भूर्भुवःस्वरोमेतैर्महामंत्रकम् ॥ १० ॥ आदौ बिंदुमनुस्सरन् परतरे
 बाला त्रिवर्णोच्चरन् व्याहृत्यादिसंबिंदुयुक्तत्रिपदातारत्रयं तुर्यकम् ।
 आरोहादवरोहतः क्रमगता श्रीकुंडलीत्थं स्थिता देवी मानसपंकजे
 त्रिनयना पंचानना पातु माम् ॥ ११ ॥ सर्वे सर्ववशे समस्तसमये
 सत्यात्मिके सात्त्विके सावित्री सवितात्मके शशियुते सांख्यायनी-
 गोत्रजे । संध्यात्रीण्युपकल्प्य संग्रहविधिः संध्याभिधानात्मके
 गायत्रीप्रणवादिमंत्रगुरुणा संप्राप्य तस्यै नमः ॥ १२ ॥ क्षेमं दिव्य-
 मनोरथः परतरे चेतः समाधीयतां ज्ञानं नित्यवरेण्यमेतदमलं
 देवस्य भर्गो धियम् । मोक्षश्रीर्विजयार्थनोऽथ सवितुः श्रेष्ठं
 विधिस्तत्पदं प्रज्ञा मेधप्रचोदयात्प्रतिदिनं यो नः पदं पातु माम्
 ॥ १३ ॥ सत्यं तत्सवितुर्वरेण्यविरलं विश्वादिमायात्मकं सर्वाद्यं
 प्रतिपादपादरमया तारं तथा मन्मथम् । तुर्यान्यद्वितयं द्वितीय-

मपरं संयोगसव्याहृतिं सर्वाध्यायमनोमयीं मनसिजां ध्यायामि
 देवीं पराम् ॥ १४ ॥ आदौ गायत्रिमंत्रे गुरुकृतनियमं धर्मकर्मानु-
 कूलं सर्वाद्यं सारभूतं सकलमनुमयं देवतानामगम्यम् । देवानां
 पूर्वदेवं द्विजकुलमुनिभिः सिद्धविद्याधराद्यैः को वा वक्तुं समर्थ-
 स्तवमनुमहिमावीजराजादिमूलम् ॥ १५ ॥ गायत्रीं त्रिपदां
 त्रिवीजसहितां द्विव्याहृतिं त्रैपदां त्रिब्रह्मात्रिगुणां त्रिकालनियमां
 वेदत्रयीं तां पराम् । सांख्यादित्रयरूपिणीं त्रिनयनां मातृत्रयीं
 तत्परां त्रैलोक्यत्रिदशत्रिकोटिसहितां संध्यां त्रयीं तां नुमः
 ॥ १६ ॥ ओमित्येतन्निमात्रात्रिभुवनकरणं त्रिस्वरं वह्निरूपं त्रीणि
 त्रीणि त्रिपादं त्रिगुणगुणमयं त्रैपुरांतं त्रिसूक्तम् । तत्त्वानां पूर्वशक्तिं
 त्रितयगुरुपदं पीठयंत्रात्मकं तं तस्मादेतत् त्रिपादं त्रिपदमनुसरं
 त्राहि मां भो नमस्ते ॥ १७ ॥ स्वस्ति श्रद्धातिमेधा मधुमतिमधुरः
 संशयः प्रज्ञाकांतिर्विद्या बुद्धिर्वलं श्रीरतनुधनपतिः सौम्यवाक्यानु-
 वृत्तिः । मेधा प्रज्ञा प्रतिष्ठा मृदुमतिमधुरापूर्णविद्याप्रपूर्णं प्राप्तं
 प्रत्यूषचित्तं प्रणवपरवशात्प्राणिनां नित्यकर्म ॥ १८ ॥ पंचाश-
 द्वर्णमध्ये प्रणवपरयुतं मंत्रमाद्यं नमोन्तं सर्वं सव्यापसव्यं शत-
 गुणममितो वर्म ह्यष्टोत्तरं ते । एवं नित्यं प्रज्ञं त्रिभुवनसहितं
 तुर्यमंतं त्रिपादं ज्ञानं विज्ञानगम्यं गगनसुसदृशं ध्यायते यः स
 मुक्तः ॥ १९ ॥ आदिक्षांतसर्विंदुयुक्तसहितं मेरुं क्षकारात्मकं
 व्यस्ताव्यस्तसमस्तवर्गसहितं पूर्णं शताष्टोत्तरम् । गायत्रीं जपतां
 त्रिकालसहितां नित्यं सनैमित्तिकमेवं जाप्यफलं शिवेन कथितं
 सद्भोग्यमोक्षप्रदम् ॥ २० ॥ सप्तव्याहृतिसप्ततारविकृतिः सत्यं
 वरेण्यं धृतिः सर्वं तत्सवितुश्च धीमहि महाभर्गस्य देवं भजे । धाम्नो
 धाम धमाधिधारणमहान्धीमत्पदं ध्यायते ॐ तत्सर्वमनुप्रपूर्णदशकं

पादत्रयं केवलम् ॥ २१ ॥ विज्ञाने विलसद्विवेकवचसः प्रज्ञानु-
 संधारिणीं श्रद्धामेध्ययशःशिरःसुमनसः स्वस्ति श्रियं त्वां सदा ।
 आयुष्यं धनधान्यलक्षिममतुलां देवीं कटाक्षं परं तत्काले सकलार्थ-
 साधनमदान्मुक्तिर्महत्त्वं पदम् ॥ २२ ॥ पृथ्वीगंधोऽर्चनायां नभसि
 कुसुमता वायुधूपप्रकर्षो वह्निर्दीपप्रकाशो जलममृतमयं नित्यसंकल्प-
 पूजा । एतत्सर्वं निवेद्यं सुखवति हृदये सर्वदा दंपतीनां त्वं सर्वज्ञा
 शिवं मे कुरु तव ममता भक्तवृन्दे प्रसिद्धा ॥ २३ ॥ सौम्यं
 सौभाग्यहेतुं सकलसुखकरं सर्वसौख्यं समस्तं सत्यं सद्भोगनित्यं
 सुखजनसुहृदं सुंदरं श्रीसमस्तम् । सौमंगल्यं समग्रं सकलशुभकरं
 स्वस्तिवाचं समस्तं सर्वाद्यं सद्विवेकं त्रिपदपदयुगं प्राप्तुमध्यासम-
 स्तम् ॥ २४ ॥ गायत्रीपदपंचपंचप्रणवद्वंद्वं विधौ संपुटं सृष्ट्यादि-
 क्रममंत्रजाप्यदशकं देवीपदं क्षुत्रयम् । मंत्रातिस्थितिकेषु संपुटमिदं
 श्रीमातृकावेष्टनं वर्णात्यादिविलोममंत्रजपनं संहारसंमोहनम्
 ॥ २५ ॥ भूराद्यं भूर्भुवःस्वस्त्रिपदपदयुतं त्र्यक्षमाद्यंतयोज्यं
 सृष्टिस्थित्यंतकार्यं क्रमशिखिसकलं सर्वमंत्रं प्रशस्तम् । सर्वाङ्गं मातृ-
 काणां मनुमयवपुषं मंत्रयोगप्रयुक्तं संहारं क्षादिवर्णं वसुशतगणनं
 मन्त्रराजं नमामि ॥ २६ ॥ विश्वामित्रमुदाहृतं हितकरं सर्वार्थ-
 सिद्धिप्रदं स्तोत्राणां परमं प्रभातसमये पारायणं नित्यशः । वेदानां
 विधिवादमंत्रसफलं सिद्धिप्रदं संपदां स प्राप्नोत्यपरत्र सर्वसुखद-
 मायुष्यमारोग्यताम् ॥ २७ ॥ इति श्रीविश्वामित्रप्रणीतो गायत्री-
 स्तवराजः संपूर्णः ॥

४०२. गायत्रीतत्त्वस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीगायत्रीतत्त्वमालामंत्रस्य विश्वामित्र
 ऋषिः, अनुष्टुप् छंदः, परमात्मा देवता, हलो बीजानि, स्वराः

शक्तयः, अव्यक्तं कीलकम्, मम समस्तपापक्षयार्थं गायत्री-
 तत्त्वपाठे विनियोगः ॥ चतुर्विंशतितत्त्वानां यदेकं तत्त्वमुत्त-
 मम् ॥ अनुशाधि परं ब्रह्म तत्परं ज्योतिरोमिति ॥ १ ॥ यो
 वेदादौ स्वरः प्रोक्तो वेदांते च प्रतिष्ठितः । तस्य प्रकृतिलीनस्य
 तत्परं ज्योतिरोमिति ॥ २ ॥ तत्सदादिपदैर्वाच्यं परमं पदमव्ययम् ।
 अभेदत्वं पदार्थस्य तत्परं ज्योतिरोमिति ॥ ३ ॥ यस्य मायांश-
 भागेन जगदुत्पद्यतेऽखिलम् । तस्य सर्वोत्तमं रूपमरूपस्याभिधीमहि
 ॥ ४ ॥ न पश्यन्ति परमं पश्यन्तो वै दिवौकसः । तं भूतानिलदेवं तु
 सुपर्णमुपधावताम् ॥ ५ ॥ यदंशः प्रेरितो जंतुः कर्मपाशनियंत्रितः ।
 आजन्मकृतपापानामपहंतुं दिवौकसः ॥ ६ ॥ इदं महामुनिप्रोक्तं
 गायत्रीतत्त्वमुत्तमम् । यः पठेत्परया भक्त्या स याति परमां
 गतिम् ॥ ७ ॥ सर्ववेदपुराणेषु सांगोपांगेषु यत्फलम् । सकृदस्य
 जपादेव तत्फलं प्राप्नुयान्नरः ॥ ८ ॥ अभक्ष्यभक्षणात्पूतो भवति ।
 आगम्यगमनात्पूतो भवति । सर्वपापेभ्यः पूतो भवति । प्रातरधीयानो
 रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति ।
 मध्यंदिनमुपयुंजानोऽसत्प्रतिग्रहादिना मुक्तो भवति ॥ ९ ॥ अनुष्ठवं
 पुरुषाः पुरुषमभिवदन्ति यं यं काममभिध्यायति तं तमेवाप्नोति
 पुत्रपौत्रान् कीर्तिसौभाग्यानि चोपलभते । सर्वभूतात्ममित्रं देहांते
 तद्विशिष्टो गायत्रीपरमं पदमाप्नोति ॥ १० ॥ इति श्रीवेदसारे
 गायत्रीतत्त्वस्तोत्रं संपूर्णम् ॥



❀ कार्तिकेयस्तोत्राणि ❀

शक्तिहस्तं विरूपाक्षं शिखिबाहं षडाननम् ।

दारुणं रिपुरोगघ्नं भावये कुक्कुटध्वजम् ॥

४०३. सुब्रह्मण्यस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शरणागतमातुरमाधिजितं करुणाकर कामद
कामहतम् । शरकाननसंभवचारुचे परिपालय तारक मारक
माम् ॥ १ ॥ हरसारसमुद्भव हैमवतीकरपल्लवलालित कम्प-
तनो । मुरवैरिविरिंचिमुदम्बुनिधे परिपालय० ॥ २ ॥ गिरिजासुत
सायकभिन्नगिरे सुरसिन्धुतनूज सुवर्णरुचे । शिशिजाशिखानल
वाहन हे ॥ परिपालय० ॥ ३ ॥ जय विप्रजनप्रिय वीर नमो जय
भक्तजनप्रिय भद्र नमः । यज देव विशाखकुमार नमः
परिपालय० ॥ ४ ॥ पुरतो भव मे परितो भव मे पथि मे भगवान्
भव रक्ष गतम् । वितराजिषु मे विजयं भगवन् ॥ परिपालय० ॥ ५ ॥
शरदिंदुसमानषडाननया सरसीरुहचारुविलोचनया । निरुपाधिकया
निजबालजया परिपालय० ॥ ६ ॥ इति कुक्कुटकेतुमनुस्मरतः
पठतामपि षण्मुखषट्कमिदम् । नमतामपि नन्दनमिन्दुभृतो न
भयं क्वचिदस्ति शरीरभृताम् ॥ ७ ॥ इति सुब्रह्मण्यस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

४०४. सुब्रह्मण्यभुजङ्गप्रयातम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ भजेऽहं कुमारं भवानीकुमारं गलोल्लासिहारं
नमस्कृद्विहारम् । रिपुस्तोमसारं नृसिंहावतारं सदा निर्विकारं गुहं
निर्विचारम् ॥ १ ॥ नमासीशपुत्रं जपाशोणगात्रं सुरारातिशत्रुं
रवीन्द्रमिनेत्रम् । महाबर्हिपत्रं शिवास्याब्जमित्रं प्रभासत्कलत्रं पुराणं

पवित्रम् ॥ २ ॥ अनेकार्ककोटिप्रभावज्वलंतं मनोहारिमाणिक्य-
भूषोज्ज्वलंतम् । श्रितानामभीष्टं सुशांतं नितांतं भजे पणमुखं तं
शरच्चंद्रकांतम् ॥ ३ ॥ कृपावारिकलोलभास्वत्कटाक्षं विराजन्मनोहा-
रिशोणाम्बुजाक्षम् । प्रयोगप्रदानप्रवाहैकदक्षं भजे कांतिकांताम्बर-
स्तोमरक्षम् ॥ ४ ॥ सुकस्तूरिकाविंदुभास्वल्ललाटं दयापूर्णचित्तं महा-
देवपुत्रम् । रवींदूलसद्रत्नराजतिकरीटं भजे क्रीडिताकाशगङ्गासुकूटम्
॥ ५ ॥ मुकुंदप्रसूनावलीशोभितांतं शरत्पूर्णचंद्रस्य षट्कांतिकांतम् ।
शिरीषप्रसूनाभिरासं भवंतं भजे देवसेनापतिं बल्लभं तम् ॥ ६ ॥
सुलावण्यसत्सूर्यकोटिप्रकाशं प्रभुं तारकारिं द्विषड्बाहुमीशम् ।
निजार्कप्रभादीप्यमानाखिलाशं भजे पार्वतीप्राणपुत्रं सुकेशम्
॥ ७ ॥ अजं सर्वलोकप्रियं लोकनाथं गुहं शूरपद्मादिदम्भोलिधारम् ।
सुबाहुं सुनासापुटं सच्चरित्रं भजे कार्तिकेयं सदा बाहुलेयम् ॥ ८ ॥
शरारण्यसम्भूतामैन्द्रादिवचं द्विषड्बाहुसङ्ख्यायुधश्रेणिरम्यम् ।
मरुत्सारथिं कुक्कुटेशं सुकेतुं भजे योगिहृत्पद्मव्याप्ताधिवासम् ॥ ९ ॥
विरिंचींद्र वल्लीशचीदेवेशमुख्य प्रशस्तामरस्तोमसंस्तूयमान । दिश
त्वं दयालो श्रियं निश्चलां मे विना त्वां गतिः का प्रभो मे प्रसीद
॥ १० ॥ पदांभोजसेवासमायातवृंदारकश्रेणिकोटीरभास्वल्ललाटम् ।
कलत्रोल्लसत्पार्श्वयुग्मं वरेण्यं भजे देवमाद्यं त्वहीनप्रभावम्
॥ ११ ॥ भवांभोधिमध्ये तरङ्गे पतंतं प्रभो मां सदा पूर्णदृष्ट्य
समीक्ष्य । भवद्वक्तिनावोद्धर त्वं दयालो सुगत्यंतरं नास्ति देव
प्रसीद ॥ १२ ॥ गले रत्नभूषं तनौ मञ्जुवेषं करे ज्ञानशक्तिं
दरस्मेरमास्थे । कटिन्यस्तपाणिं शिखिस्थं कुमारं भजेऽहं गुहादन्यदैवं
न मन्ये ॥ १३ ॥ दयाहीनचित्तं परद्रोहपात्रं सदा पापशीलं गुरोर्भक्ति-
हीनम् । अनन्यावलम्बं भवन्नेत्रपात्रं कृपाशील मां भो पवित्रं कुरु

त्वम् ॥ १४ ॥ महासेन गाङ्गेय वल्लीसहाय प्रभो तारकारे षडास्या-
मरेश । सदा पायसान्नप्रदातर्गुहेति स्मरिष्यामि भक्त्या सदाऽहं विभो
त्वाम् ॥ १५ ॥ प्रतापस्य बाहो नमद्वीरबाहो प्रभो कार्तिकेयेष्टकाम-
प्रदेति । यदा ये पठन्ते भवंतं तदैव प्रसन्नस्तु तेषां बहुश्रीं ददासि
॥ १६ ॥ अपारेऽतिदारिद्र्यपाथोधिमध्ये भ्रमन्तं जनिग्राहपूर्णं नितां-
तम् । महासेन मामुद्धर त्वं कटाक्षावलोकेन किञ्चित्प्रसीद प्रसीद
॥ १७ ॥ स्थिरां देहि भक्तिं भवत्पादपद्मे श्रियं निश्चलां देहि मह्यं
कुमार । गुहं चंद्रतारं स्ववंशाभिवृद्धिं कुरु त्वं प्रभो मे मनःकल्प-
साल ॥ १८ ॥ नमस्ते नमस्ते महाशक्तिपाणे नमस्ते नमस्ते लसद्वज्र-
पाणे । नमस्ते नमस्ते कटिन्यस्तपाणे नमस्ते नमस्ते सदाभीष्टपाणे ॥ १९ ॥
नमस्ते नमस्ते महाशक्तिधारिन् नमस्ते सुराणां महासौख्यदायिन् ।
नमस्ते सदा कुक्कुटेशाख्यक त्वं समस्तापराधं विभो मे क्षमस्व
॥ २० ॥ य एको मुनीनां हृदब्जाधिवासः शिवाङ्कं समाख्य सत्पीठ-
कल्पम् । विरिञ्चाय मन्त्रोपदेशं चकार प्रमोदेन सोऽयं तनोतु श्रियं मे
॥ २१ ॥ यमाहुः परं वेद शूरेषु मुख्यं सदा यस्य शक्त्या जगद्गीत-
भीतम् । यमालोक्य देवाः स्थिरं स्वर्गपालाः सदोङ्काररूपं चिदानन्द-
मीडे ॥ २२ ॥ गुहस्तोत्रमेतत्कृतांतारिसूनोर्भुजङ्गप्रयातेन पथेन
कांतम् । जना ये पठन्ते सदा ते महान्तो मनोवाञ्छितं सर्वकामान्
लभन्ते ॥ २३ ॥ इति श्रीसुब्रह्मण्यभुजङ्गप्रयातं संपूर्णम् ॥

४०५. कार्तिकेयस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ स्कंद उवाच ॥ योगीश्वरो महासेनः कार्ति-
केयोऽग्निनंदनः । स्कंदः कुमारः सेनानीः स्वामी शंकरसंभवः
॥ १ ॥ गांगेयस्ताम्रचूडश्च ब्रह्मचारी शिखिध्वजः । तारकारिहमा-

पुत्रः क्रौंचारिश्च षडाननः ॥ २ ॥ शब्दब्रह्मसमुद्रश्च सिद्धः
सारस्वतो गुहः । सनत्कुमारो भगवान् भोगमोक्षफलप्रदः ॥ ३ ॥
शरजन्मा गणाधीशपूर्वजो मुक्तिमार्गकृत् । सर्वागमप्रणेता च
वाञ्छितार्थप्रदर्शनः ॥ ४ ॥ अष्टाविंशतिनामानि मदीयानीति यः
पठेत् । प्रत्यूषं श्रद्धया युक्तो मूको वाचस्पतिर्भवेत् ॥ ५ ॥ महा-
मंत्रमयानीति मम नामानुकीर्तनम् । महाप्रज्ञामवाप्नोति नात्र
कार्या विचारणा ॥ ६ ॥ इति श्रीरुद्रयामले प्रज्ञाविवर्धनाख्यं
श्रीमत्कार्तिकेयस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

४०६. सुब्रह्मण्याष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ हे स्वामिनाथ करुणाकर दीनबंधो श्रीपार्वती-
शमुखपंकजपद्मबंधो । श्रीशादिदेवगणपूजितपादपद्म वल्लीसनाथ
मम देहि करावलंबम् ॥ १ ॥ देवाधिदेवसुत देवगणाधिनाथ
देवेंद्रवंद्य मृदुपङ्कजमंजुपाद । देवर्षिनारदमुनींद्रसुगीतकीर्ते वल्लीस-
नाथ मम देहि करावलंबम् ॥ २ ॥ नित्यान्नदाननिरताखिलरोग-
हारिन् भाग्यप्रदानपरिपूरितभक्तकाम । श्रुत्यागमप्रणववाच्यनिज-
स्वरूप वल्लीसनाथ मम देहि करावलंबम् ॥ ३ ॥ क्रौञ्चासुरेन्द्र-
परिखंडन शक्तिशूलचापादिशस्त्रपरिमंडितदिव्यपाणे । श्रीकुंडलीश-
धरतुण्डशिखींद्रवाह वल्लीसनाथ मम देहि करावलंबम् ॥ ४ ॥
देवाधिदेवरथमंडलमध्यवेद्य देवेंद्रपीडनकरं दृढचापहस्तम् । शूरं
निहत्य सुरकोटिभिरीड्यमान वल्लीसनाथ मम देहि करावलंबम्
॥ ५ ॥ हारादिरत्नमणियुक्तकिरीटहारकेयूरकुंडललसत्कवचाभि-
रामम् । हे वीर तारकजयामरवृंदवंद्य वल्लीसनाथ मम देहि
करावलंबम् ॥ ६ ॥ पञ्चाक्षरादिमनुमंत्रितगाङ्गतोयैः पञ्चामृतैः

प्रभुदितेन्द्रमुखैर्मुनीन्द्रैः । पट्टाभिषिक्तहरियुक्त परासनाथ वल्लीसनाथ
मम देहि करावलंबम् ॥ ७ ॥ श्रीकार्तिकेय करुणामृतपूर्णदृष्ट्या
कामादिरोगकलुषीकृतदुष्टचित्तम् । सिक्त्वा तु मामव कलाधरकांति-
कांत्या वल्लीसनाथ मम देहि करावलंबम् ॥ ८ ॥ सुब्रह्मण्याष्टकं
पुण्यं ये पठन्ति द्विजोत्तमाः । ते सर्वे मुक्तिमायांति सुब्रह्मण्यप्रसादतः
॥ ९ ॥ सुब्रह्मण्याष्टकमिदं प्रातस्तथाय यः पठेत् । कोटिजन्मकृतं
पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥ १० ॥ इति श्रीसुब्रह्मण्याष्टकं संपूर्णम् ॥

४०७. सुब्रह्मण्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ स्कंदो गुहः षण्मुखश्च भालनेत्रसुतः प्रभुः ।
पिङ्गलः कृत्तिकासूनुः शिखिबाहो द्विषड्भुजः ॥ १ ॥ द्विषड्नेत्रः
शक्तिधरः पिशिताशप्रभञ्जनः । तारकासुरसंहारी रक्षोबलविमर्दनः
॥ २ ॥ मत्तः प्रमत्त उन्मत्तः सुरसैन्यसुरक्षकः । देवसेनापतिः प्राज्ञः
कृपालुर्भक्तवत्सलः ॥ ३ ॥ उमासुतः शक्तिधरः कुमारः क्रौञ्च-
दारणः । सेनानीरग्निजन्मा च विशाखः शङ्करात्मजः ॥ ४ ॥ शिवस्वामी
गणस्वामी सर्वस्वामी सनातनः । अनंतशक्तिरक्षोभ्यः पार्वतीप्रियनंदनः
॥ ५ ॥ गङ्गासुतः शरोद्भूत आहूतः पावकात्मजः । जृम्भः प्रजृम्भ
उज्जृम्भः कमलासनसंस्तुतः ॥ ६ ॥ एकवर्णो द्विवर्णश्च त्रिवर्णः
सुमनोहरः । चतुर्वर्णः पञ्चवर्णः प्रजापतिरहर्षतिः ॥ ७ ॥ अग्निगर्भः
शमीगर्भो विश्वरेताः सुरारिहा । हरिद्वर्णः शुभकरो बटुश्च पटुवेष-
भृत् ॥ ८ ॥ पूषा गभस्तिर्गहनश्चंद्रवर्णः कलाधरः । मायाधरो
महामायी कैवल्यः शङ्करात्मजः ॥ ९ ॥ विश्वयोनिरमेयात्मा तेजो-
निधिरनामयः । परमेष्ठी परब्रह्मा वेदगर्भो विराट्सुतः ॥ १० ॥
पुल्लिङ्गकन्याभर्ता च महासारस्वतावृतः । आश्रिताखिलदाता च

रोगघ्नो रोगनाशनः ॥ ११ ॥ अनंतमूर्तिरानंदः शिखंडिकृत-
 केतनः । डम्भः परमडम्भश्च महाडम्भो वृषाकपिः ॥ १२ ॥ कारणो-
 त्पत्तिदेहश्च कारणानीतविग्रहः । अनीश्वरोऽमृतः प्राणः प्राणायाम-
 परायणः ॥ १३ ॥ चिरुद्धंता वीरघ्नो रक्तश्यामगलोऽपि च । सुब्रह्मण्यो
 गुहः प्रीतो ब्राह्मण्यो ब्राह्मणप्रियः ॥ वंशवृद्धिकरो वेदवेद्योऽक्षय-
 फलप्रदः ॥ १४ ॥ इति श्रीसुब्रह्मण्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥



पायूनि । आदित्यो वै शब्दस्पर्शरूपरसगन्धाः । आदित्यो वै वचना-
दानगमनानन्दविसर्गाः । आनन्दमयो ज्ञानमयो विज्ञानमय
आदित्यः । नमो मित्राय भानवे मृत्योर्मां पाहि आजिष्णवे विश्व-
हेतवे नमः । सूर्यो नो दिवस्पातु वातो अंतरिक्षात् । अग्निर्नः
पार्थिवेभ्यः । सूर्याद्भवन्ति भूतानि । सूर्येण पालितानि तु । सूर्ये
लयं प्राप्नुवन्ति । यः सूर्यः सोऽहमेव च । चक्षुर्नो देवः सविता ।
चक्षुर्न उत पर्वतः । चक्षुर्धाता दधातु नः । आदित्याय विद्महे
सहस्रकराय धीमहि । तन्नः सूर्यः प्रचोदयात् । सविता पश्चात्तात् ।
सविता पुरस्तात् । सवितोत्तरात्तात् । सविताधरात्तात् । सविता नः
सुवतु सर्वतातिम् । सविता नो रासतां दीर्घमायुः । ओमित्येकाक्षरं
ब्रह्म । घृणिरिति द्वे अक्षरे । सूर्य इत्यक्षरद्वयम् । आदित्य इति
त्रीण्यक्षराणि । एतद्वै सूर्यस्याष्टाक्षरं मनुं यः सदाऽहरहर्जपति सो
ब्रह्मण्यो ब्राह्मणो भवति । सूर्याभिमुखं जप्त्वा महाव्याधिभया-
त्प्रमुच्यते । अलक्ष्मीर्नश्यति । अभक्ष्यभक्षणात्पूतो भवति ।
अपेयपानात्पूतो भवति । अगम्यागमनात्पूतो भवति । व्रात्यसंभा-
षणात्पूतो भवति । मध्याह्ने सूर्याभिमुखः पठेत् । सद्यः पञ्चमहा-
पापात्प्रमुच्यते । सैषा सावित्री विद्या न कस्यचित्प्रशंसेत् । य
एतन्महाभागः प्रातः पठति स भाग्यवान् जायते । पशून्विदति
वेदार्थं लभते । त्रिकालं जप्त्वा ऋतुशतफलं प्राप्नोति । हस्तादित्ये
जपति स महामृत्युं तरति । य एवं वेद । इत्युपनिषत् ॥
इति सूर्याथर्वशीर्षं संपूर्णम् ॥

४०९. त्रैलोक्यमंगलं सूर्यकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीसूर्य उवाच ॥ सांब सांब महाबाहो शृणु

मे कवचं शुभम् । त्रैलोक्यमंगलं नाम कवचं परमाद्भुतम् ॥ १ ॥
 यज्ज्ञात्वा मंत्रवित्सम्यक् फलं प्राप्नोति निश्चितम् । यद्धृत्वा च महा-
 देवो गणानामधिपोऽभवत् ॥ २ ॥ पठनाद्वारणाद्विष्णुः सर्वेषां
 पालकः सदा । एवमिन्द्रादयः सर्वे सर्वैश्वर्यमवामुयुः ॥ ३ ॥ कवचस्य
 ऋषिर्ब्रह्मा छंदोऽनुष्टुबुदाहृतः । श्रीसूर्यो देवता चात्र सर्वदेवनम-
 स्कृतः ॥ ४ ॥ यशआरोग्यमोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः । प्रणवो
 मे शिरः पातु घृणिर्मे पातु भालकम् ॥ ५ ॥ सूर्योऽव्याघ्रयनद्वंद्वमा-
 दित्यः कर्णयुग्मकम् । अष्टाक्षरो महामंत्रः सर्वाभीष्टफलप्रदः ॥ ६ ॥
 ह्रीं बीजं मे मुखं पातु हृदयं भुवनेश्वरी । चंद्रविंबं विंशदाद्यं पातु मे
 गुह्यदेशकम् ॥ ७ ॥ अक्षरोऽसौ महामंत्रः सर्वतंत्रेषु गोपितः ।
 शिवो वह्निस्मायुक्तो वामाक्षीबिंदुभूषितः । एकाक्षरो महामंत्रः
 श्रीसूर्यस्य प्रकीर्तितः ॥ ८ ॥ गुह्याद्गुह्यतरो मंत्रो वाङ्मोचितामणिः
 स्मृतः । शीर्षादिपादपर्यंतं सदा पातु मनूत्तमः ॥ ९ ॥ इति ते
 कथितं दिव्यं त्रिषु लोकेषु दुर्लभम् । श्रीप्रदं कांतिदं नित्यं धनारोग्य-
 विवर्धनम् ॥ १० ॥ कुष्ठादिरोगशमनं महाव्याधिबिनाशनम् । त्रिसंध्यं
 यः पठेन्नित्यमरोगी बलवान्भवेत् ॥ ११ ॥ बहुना किमिहोक्तेन
 यद्यन्मनसि वर्तते । तत्तत्सर्वं भवेत्तस्य कवचस्य च धारणात् ॥ १२ ॥
 भूतप्रेतपिशाचाश्च यक्षगंधर्वाक्षसाः । ब्रह्मराक्षसवेताला न द्रष्टुमपि
 तं क्षमाः ॥ १३ ॥ दूरादेव पलायंते तस्य संकीर्तनादपि ॥ १४ ॥
 भूर्जपत्रे समालिख्य रोचनागरुकुंकुमैः । रविवारे च संक्रांत्यां सप्तम्यां
 च विशेषतः । धारयेत्साधकश्रेष्ठः स परो मे प्रियो भवेत् ॥ १५ ॥
 त्रिलोहमध्यगं कृत्वा धारयेद्दक्षिणे करे । शिखायामथवा कंठे सोऽपि
 सूर्यो न संशयः ॥ १६ ॥ इति ते कथितं सांब त्रैलोक्यमंगलाभिधम् ।
 कवचं दुर्लभं लोके तव स्नेहात्प्रकाशितम् ॥ १७ ॥ अज्ञात्वा कवचं

दिव्यं यो जपेत्सूर्यमुत्तमम् । सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि
॥ १८ ॥ इति श्रीब्रह्मयामले त्रैलोक्यमंगलं नाम सूर्यकवचं संपूर्णम् ॥

४१०. आदित्यहृदयम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शतानीक उवाच ॥ कथमादित्यमुद्यंतमुपतिष्ठे-
द्विजोत्तम । एतन्मे ब्रूहि विप्रेन्द्र प्रपद्ये शरणं तव ॥ १ ॥ सुमंतु-
रुवाच ॥ इदमेव पुरा पृष्टं शंखचक्रगदाधरम् । प्रणम्य शिरसा
देवमर्जुनेन महात्मना ॥ २ ॥ कुरुक्षेत्रे महाराज प्रवृत्ते भारते रणे ।
कृष्णनाथं समासाद्य प्रार्थयित्वाऽब्रवीदिदम् ॥ ३ ॥ अर्जुन उवाच ॥
ज्ञानं च धर्मशास्त्राणां गुह्याद्गुह्यतरं तथा । मया कृष्ण परिज्ञातं वाङ्मयं
सचराचरम् ॥ ४ ॥ सूर्यस्तुतिमयं न्यासं वक्तुमर्हसि माधव । भक्त्या
पृच्छामि देवेश कथयस्व प्रसादतः ॥ ५ ॥ सूर्यभक्तिं करिष्यामि कथं
सूर्यं प्रपूजयेत् । तदहं श्रोतुमिच्छामि त्वत्प्रसादेन यादव ॥ ६ ॥
श्रीभगवानुवाच ॥ रुद्रादिदैवतैः सर्वैः पृष्टेन कथितं मया । वक्ष्येऽहं
सूर्यविन्यासं शृणु पांडव यत्नतः ॥ ७ ॥ अस्माकं यत्त्वया पृष्टमेक-
चित्तो भवार्जुन । तदहं संप्रवक्ष्यामि आदिमध्यावसानकम् ॥ ८ ॥
अर्जुन उवाच ॥ नारायण सुरश्रेष्ठ पृच्छामि त्वां महायशाः । कथमा-
दित्यमुद्यंतमुपतिष्ठेत् सनातनम् ॥ ९ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ साधु
पार्थ महाबाहो बुद्धिमानसि पांडव । यन्मां पृच्छस्युपस्थानं तत्पवित्रं
विभावसोः ॥ १० ॥ सर्वमंगलमांगल्यं सर्वपापप्रणाशनम् । सर्वरोग-
प्रशमनमायुर्वर्धनमुत्तमम् ॥ ११ ॥ अमित्रदमनं पार्थ संग्रामे जयवर्ध-
नम् । वर्धनं धनपुत्राणामादित्यहृदयं शृणु ॥ १२ ॥ यच्छ्रुत्वा सर्व-
पापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः । त्रिषु लोकेषु विख्यातं निःश्रेयसकरं
परम् ॥ १३ ॥ देवदेवं नमस्कृत्य प्रातरुत्थाय चार्जुन । विघ्नान्यनेक-

रूपाणि नश्यन्ति स्मरणादपि ॥ १४ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सूर्यमावाह-
येत्सदा । आदित्यहृदयं नित्यं जाप्यं तच्छृणु पांडव ॥ १५ ॥ यज्ज-
पान्मुच्यते जंतुर्दारिद्र्यादाशु दुस्तरात् । लभते च महासिद्धिं कुष्ठव्या-
धिविनाशिनीम् ॥ १६ ॥ अस्मिन्मंत्रे ऋषिश्छंदो देवता शक्तिरेव
च । सर्वमेव महाबाहो कथयामि तवाग्रतः ॥ १७ ॥ मया ते गोपितं
न्यासं सर्वशास्त्रप्रबोधितम् । अथ ते कथयिष्यामि उत्तमं मंत्रमेव च
॥ १८ ॥ ॐ अस्य श्रीआदित्यहृदयस्तोत्रमंत्रस्य श्रीकृष्ण ऋषिः,
श्रीसूर्यात्मा त्रिभुवनेश्वरो देवता, अनुष्टुप् छंदः, हरितहयरथं दिवाकरं
घृणिरिति बीजम्, ॐ नमो भगवते जितवैश्वानरजातवेदस इति
शक्तिः, ॐ नमो भगवते आदित्याय नम इति कीलकम्, ॐ अग्नि-
गर्भदेवता इति मंत्रः, ॐ नमो भगवते तुभ्यमादित्याय नमो नमः ।
श्रीसूर्यनारायणप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः । अथ न्यासः ॥ ॐ हां
अंगुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः । ॐ हूं मध्यमाभ्यां नमः ।
ॐ ह्रै अनामिकाभ्यां नमः । ॐ ह्रौ कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ हः
करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । ॐ हां हृदयाय नमः । ॐ ह्रीं शिरसे
स्वाहा । ॐ हूं शिखायै वषट् । ॐ ह्रै कवचाय हुम् । ॐ ह्रौ नेत्रत्र-
याय वौषट् । ॐ हः अस्त्राय फट् । ॐ हां ह्रीं ह्रौ ह्रौ ह्रौ इति दिग्बन्धः ॥
अथ ध्यानम् ॥ भास्वद्रत्नाढ्यमौलिः स्फुरदधरुरचा रंजितश्चारुकेशो
भास्वान् यो दिव्यतेजाः करकमलयुतः स्वर्णवर्णः प्रभाभिः । विश्वा-
काशावकाशग्रहपतिशिखरे भाति यश्चोदयाद्रौ सर्वानंदप्रदाता हरिहर-
नमितः पातु मां विश्वचक्षुः ॥ १ ॥ पूर्वमष्टदलं पद्मं प्रणवादिप्रतिष्ठि-
तम् । मायाबीजं दलाष्टाग्रे यंत्रमुद्धारयेदिति ॥ २ ॥ आदित्यं भास्करं
भानुं रविं सूर्यं दिवाकरम् । मार्तण्डं तपनं चेति दलेष्वष्टसु योजयेत्
॥ ३ ॥ दीप्ता सूक्ष्मा जया भद्रा विभूतिर्विमला तथा । अमोघा

विद्युता चेति मध्ये श्रीः सर्वतोमुखी ॥ ४ ॥ सर्वज्ञः सर्वगश्चैव सर्व-
 कारणदेवता । सर्वेशं सर्वहृदयं नमामि सर्वसाक्षिणम् ॥ ५ ॥ सर्वात्मा
 सर्वकर्ता च सृष्टिजीवनपालकः । हितः स्वर्गापवर्गस्य भास्करोऽश-
 नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥ इति प्रार्थना ॥ नमो नमस्तेऽस्तु सदा विभावसो
 सर्वात्मने सप्तहयाय भानवे । अनंतशक्तिर्मणिभूषणेन ददस्व भुक्तिं
 मम मुक्तिमव्ययाम् ॥ ७ ॥ अर्कं तु मूर्ध्नि विन्यस्य ललाटे च रविं
 न्यसेत् । विन्यसेन्नेत्रयोः सूर्यं कर्णयोश्च दिवाकरम् ॥ ८ ॥ नासि-
 कायां न्यसेद्भानुं मुखे वै भास्करं न्यसेत् । पर्जन्यमोष्ठयोश्चैव तीक्ष्णं
 जिह्वांतरे न्यसेत् ॥ ९ ॥ सुवर्णरेतसं कंठे स्कंधयोस्त्रिभुजं तजसम् ।
 बाह्वोस्तु पूषणं चैव मित्रं वै पृष्ठतो न्यसेत् ॥ १० ॥ वरुणं दक्षिणे
 हस्ते त्वष्टारं वामतः करे । हस्तावुष्णकरः पातु हृदयं पातु भानु-
 मान् ॥ ११ ॥ उदरे तु यमं विद्यादादित्यं नाभिमंडले । कव्यां तु
 विन्यसेद्धंसं रुद्रमूर्ध्वोस्तु विन्यसेत् ॥ १२ ॥ जान्वोस्तु गोपतिं
 न्यस्य सवितारं तु जंघयोः । पादयोश्च विवस्वतं गुल्फयोश्च दिवा-
 करम् ॥ १३ ॥ बाह्यतस्तु तमोर्ध्वसं भगमभ्यंतरे न्यसेत् । सर्वा-
 णेषु सहस्रांशुं दिग्विदिक्षु भगं न्यसेत् ॥ १४ ॥ इति दिग्बन्धः ॥
 एष आदित्यविन्यासो देवानामपि दुर्लभः । इमं भक्त्या न्यसेत्पार्थ
 स याति परमां गतिम् ॥ १५ ॥ कामक्रोधकृतात्पापान्मुच्यते नात्र
 संशयः । सर्पादपि भयं नैव संग्रामेषु पथेष्वपि ॥ १६ ॥ रिपुसंघट्ट-
 कालेषु तथा चोरसमागमे । त्रिसंध्यं जपतो न्यासं महापातक-
 नाशनम् ॥ १७ ॥ विस्फोटकसमुत्पन्नं तीव्रज्वरसमुद्भवम् । शिरोरोगं
 नेत्ररोगं सर्वव्याधिबिनाशनम् ॥ १८ ॥ कुष्ठव्याधिस्तथा दद्रुरोगाश्च
 विविधाश्च ये । जपमानस्य नश्यन्ति शृणु भक्त्या तदर्जुन ॥ १९ ॥
 आदित्यो मंत्रसंयुक्त आदित्यो भुवनेश्वरः । आदित्यान्नापरो देवो

ह्यादित्यः परमेश्वरः ॥ २० ॥ आदित्यमर्चयेद्ब्रह्मा शिव आदित्य-
 मर्चयेत् । यदादित्यमयं तेजो मम तेजस्तदर्जुन ॥ २१ ॥ आदित्यं
 मंत्रसंयुक्तमादित्यं भुवनेश्वरम् । आदित्यं ये प्रपश्यन्ति मां पश्यन्ति
 न संशयः ॥ २२ ॥ त्रिसंध्यमर्चयेत्सूर्यं स्मरेद्भक्त्या तु यो नरः ।
 न स पश्यति दारिद्र्यं जन्मजन्मनि चार्जुन ॥ २३ ॥ एतत्ते कथितं
 पार्थ आदित्यहृदयं मया । शृण्वन्मुक्तश्च पापेभ्यः सूर्यलोके
 महीयते ॥ २४ ॥ नमो भगवते तुभ्यमादित्याय नमो नमः ।
 आदित्यः सविता सूर्यः खगः पूषा गभस्तिमान् ॥ २५ ॥ सुवर्णः
 स्फटिको भानुः स्फुरितो विश्वतापनः । रविर्विश्वो महातेजाः
 सुवर्णः सुप्रबोधकः ॥ २६ ॥ हिरण्यगर्भस्त्रिशिरास्तपनोः भास्करो
 रविः । मार्तण्डो गोपतिः श्रीमान् कृतज्ञश्च प्रतापवान् ॥ २७ ॥
 तमिस्रहा भगो हंसो नासत्यश्च तमोनुदः । शुद्धो विरोचनः केशी
 सहस्रांशुर्महाप्रभुः ॥ २८ ॥ विवस्वान् पूषणो मृत्युर्मिहिरो जाम-
 दग्न्यजित् । घर्मरश्मिः पतंगश्च शरण्योऽमित्रहा तपः ॥ २९ ॥
 दुर्विज्ञेयगतिः शूरस्तेजोराशिर्महायशः । शंभुश्चित्रांगदः सौम्यो
 हव्यकव्यप्रदायकः ॥ ३० ॥ अंशुमानुत्तमो देव ऋग्यजुः साम
 एव च । हरिदश्चस्तमोदारः सप्तसप्तिर्मरीचिमान् ॥ ३१ ॥ अग्नि-
 गर्भोऽदितेः पुत्रः शंभुस्तिमिरनाशनः । पूषा विश्वभरो मित्रः
 सुवर्णः सुप्रतापवान् ॥ ३२ ॥ आतपी मंडली भास्वास्तपनः
 सर्वतापनः । कृतविश्वो महातेजाः सर्वरत्नमयोद्भवः ॥ ३३ ॥
 अक्षरश्च क्षरश्चैव प्रभाकरविभाकरौ । चंद्रचंद्रांगदः सौम्यो हव्य-
 कव्यप्रदायकः ॥ ३४ ॥ अंगारको गदोऽगस्ती रक्तांगश्चांगवर्धनः ।
 बुधो बुद्धासनो बुद्धिर्बुद्धात्मा बुद्धिवर्धनः ॥ ३५ ॥ बृहद्भानुर्बृह-
 द्भासी बृहद्भामा बृहस्पतिः । शुक्लस्त्वं शुक्लेतास्त्वं शुक्लांगः

शुक्लभूषणः ॥ ३६ ॥ शनिमान् शनिरूपस्त्वं शनैर्गच्छसि सर्वदा ।
 अनादिरादिरादित्यस्तेजोराशिर्महातपाः ॥ ३७ ॥ अनादिरादिरूप-
 स्त्वमादित्यो दिक्पतिर्यमः । भानुमान् भानुरूपस्त्वं स्वर्भानु-
 र्भानुदीप्तिमान् ॥ ३८ ॥ धूमकेतुर्महाकेतुः सर्वकेतुरनुत्तमः ।
 तिमिरावरणः शंभुः स्रष्टा मार्तण्ड एव च ॥ ३९ ॥ नमः पूर्वाय
 गिरये पश्चिमाय नमो नमः । नमोत्तराय गिरये दक्षिणाय नमो
 नमः ॥ ४० ॥ नमो नमः सहस्रांशो ह्यादित्याय नमो नमः ।
 नमः पद्मप्रबोधाय नमस्ते द्वादशात्मने ॥ ४१ ॥ नमो विश्व-
 प्रबोधाय नमो आजिष्णुजिष्णवे । ज्योतिषे च नमस्तुभ्यं ज्ञानार्काय
 नमो नमः ॥ ४२ ॥ प्रदीप्ताय प्रगल्भाय युगांताय नमो नमः ।
 नमस्ते होतृपतये पृथिवीपतये नमः ॥ ४३ ॥ नमोऽङ्कार वषट्कार
 सर्वयज्ञ नमोऽस्तु ते । ऋग्वेदाय यजुर्वेद सामवेद नमोऽस्तु ते
 ॥ ४४ ॥ नमो हाटकवर्णाय भास्कराय नमो नमः । जयाय जय-
 भद्राय हरिदश्वाय ते नमः ॥ ४५ ॥ दिव्याय दिव्यरूपाय ग्रहाणां
 पतये नमः । नमस्ते शुचये नित्यं नमः कुरुकुलात्मने ॥ ४६ ॥
 नमस्त्रैलोक्यनाथाय भूतानां पतये नमः । नमः कैवल्यनाथाय
 नमस्ते दिव्यचक्षुषे ॥ ४७ ॥ त्वं ज्योतिस्त्वं द्युतिर्ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं
 प्रजापतिः । त्वमेव रुद्रो रुद्रात्मा वायुरग्निस्त्वमेव च ॥ ४८ ॥
 योजनानां सहस्रे द्वे शते द्वे द्वे च योजने । एकेन निमिषार्धेन क्रम-
 माण नमोऽस्तु ते ॥ ४९ ॥ नवयोजनलक्षाणि सहस्रद्विशतानि च ।
 यावद्धटीप्रमाणेन क्रममाण नमोऽस्तु ते ॥ ५० ॥ अग्रतश्च नमस्तुभ्यं
 पृष्ठतश्च सदा नमः । पार्श्वतश्च नमस्तुभ्यं नमस्ते चास्तु सर्वदा
 ॥ ५१ ॥ नमः सुरारिहन्त्रे च सोमसूर्याग्निचक्षुषे । नमो दिव्याय
 व्योमाय सर्वतन्त्रमयाय च ॥ ५२ ॥ नमो वेदांतवेद्याय सर्वकर्मादि-

साक्षिणे । नमो हरितवर्णाय सुवर्णाय नमो नमः ॥ ५३ ॥ अरुणो
माघमासे तु सूर्यो वै फाल्गुने तथा । चैत्रमासे तु वेदांगो भानु-
वैशाखतापनः ॥ ५४ ॥ ज्येष्ठमासे तपेदिन्द्र आषाढे तपते रविः ।
गभस्तिः श्रावणे मासि यमो भाद्रपदे तथा ॥ ५५ ॥ इषे सुवर्ण-
रेताश्च कार्तिके च दिवाकरः । मार्गशीर्षे तपेन्मित्रः पौषे विष्णुः
सनातनः ॥ ५६ ॥ पुरुषस्त्वधिके मासे मासाधिक्ये तु कल्पयेत् ।
इत्येते द्वादशादित्याः काश्यपेयाः प्रकीर्तिताः ॥ ५७ ॥ उग्ररूपा
महात्मानस्तपन्ते विश्वरूपिणः । धर्मार्थकाममोक्षाणां प्रस्फुटा हेतवो
नृप ॥ ५८ ॥ सर्वपापहरं चैवमादित्यं संप्रपूजयेत् । एकधा दशधा
चैव शतधा च सहस्रधा ॥ ५९ ॥ तपन्ते विश्वरूपेण सृजन्ति संहरन्ति
च । एष विष्णुः शिवश्चैव ब्रह्मा चैव प्रजापतिः ॥ ६० ॥ महेंद्र-
श्चैव कालश्च यमो वरुण एव च । नक्षत्रग्रहताराणामधिपो विश्व-
तापनः ॥ ६१ ॥ वायुरग्निर्धनाध्यक्षो भूतकर्ता स्वयं प्रभुः । एष
देवो हि देवानां सर्वमाप्यायते जगत् ॥ ६२ ॥ एष कर्ता हि भूतानां
संहर्ता रक्षकस्तथा । एष लोकानुलोकाश्च सप्तद्वीपाश्च सागराः
॥ ६३ ॥ एष पातालसप्तस्था दैत्यदानवराक्षसाः । एष धाता
विधाता च बीजं क्षेत्रं प्रजापतिः ॥ ६४ ॥ एक एव प्रजा नित्यं
संवर्धयति रश्मिभिः । एष यज्ञः स्वधा स्वाहा ह्रीः श्रीश्च पुरुषो-
त्तमः ॥ ६५ ॥ एष भूतात्मको देवः सूक्ष्मोऽव्यक्तः सनातनः ।
ईश्वरः सर्वभूतानां परमेष्ठी प्रजापतिः ॥ ६६ ॥ कालात्मा
सर्वभूतात्मा वेदात्मा विश्वतोमुखः । जन्ममृत्युजराव्याधिसंसार-
भयनाशनः ॥ ६७ ॥ दारिद्र्यव्यसनध्वंसी श्रीमान्देवो दिवाकरः ।
कीर्तनीयो विवस्वांश्च मार्तण्डो भास्करो रविः ॥ ६८ ॥
लोकप्रकाशकः श्रीमाँलोकचक्षुर्ग्रहेश्वरः । लोकसाक्षी त्रिलोकेशः

कर्ता हर्ता तमिस्त्रहा ॥ ६९ ॥ तपनस्तापनश्चैव शुचिः
 सप्ताश्ववाहनः । गभस्तिहस्तो ब्रह्मण्यः सर्वदेवनमस्कृतः ॥ ७० ॥
 आयुरारोग्यमैश्वर्यं नरा नार्यश्च मंदिरे । यस्य प्रसादात्संतुष्टि-
 रादित्यहृदयं जपेत् ॥ ७१ ॥ इत्येतैर्नामभिः पार्थ आदित्यं
 स्तौति नित्यशः । प्रातस्तथाय कौंतेय तस्य रोगभयं नहि ॥ ७२ ॥
 पातकान्मुच्यते पार्थ व्याधिभ्यश्च न संशयः । एकसंध्यं द्विसंध्यं
 वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ७३ ॥ त्रिसंध्यं जपमानस्तु पश्येच्च
 परमं पदम् । यदह्नात्कुरुते पापं तदह्नात्प्रतिमुच्यते ॥ ७४ ॥
 यद्रात्र्यात्कुरुते पापं तद्रात्र्यात्प्रतिमुच्यते । दद्रुस्फोटककुष्ठानि
 मंडलानि विपूचिका ॥ ७५ ॥ सर्वव्याधिमहारोगभृतबाधास्तथैव
 च । डाकिनी शाकिनी चैव महारोगभयं कुतः ॥ ७६ ॥ ये चान्ये
 दुष्टरोगाश्च ज्वरातीसारकादयः । जपमानस्य नश्यन्ति जीवेच्च शरदां
 शतम् ॥ ७७ ॥ अशीर्षा पश्यति च्छायामहोरात्रं धनंजय ।
 संवत्सरेण मरणं तदा तस्य ध्रुवं भवेत् । तथापि पठनादस्य
 मृतिर्भीर्न हि जायते ॥ ७८ ॥ यस्त्विदं पठते भक्त्या भानोर्वारि
 महात्मनः । प्रातःस्नाने कृते पार्थ एकाग्रकृतमानसः ॥ ७९ ॥
 सुवर्णचक्षुर्भवति न चांधस्तु प्रजायते । पुत्रवान् धनसंपन्नो जायते
 चारुजः सुखी ॥ ८० ॥ सर्वसिद्धिमवाप्नोति सर्वत्र विजयी भवेत् ।
 आदित्यहृदयं पुण्यं सूर्यनामविभूषिम् ॥ ८१ ॥ श्रुत्वा च निखिलं
 पार्थ सर्वपापैः प्रमुच्यते । अतः परतरं नास्ति सिद्धिकामस्य पांडव
 ॥ ८२ ॥ एतज्जपस्य कौंतेय येन श्रेयो ह्यवाप्स्यसि । आदित्यहृदयं
 नित्यं यः पठेत्सुसमाहितः ॥ ८३ ॥ भ्रूणहा मुच्यते पापात्कृतघ्नो
 ब्रह्मघातकः । गोघ्नः सुरापो दुर्भोजी दुष्प्रतिग्रहकारकः ॥ ८४ ॥
 पातकानि च सर्वाणि दहत्येव न संशयः । य इदं शृणुयान्नित्यं जपे-

द्वापि समाहितः ॥ ८५ ॥ सर्वपापविशुद्धात्मा सूर्यलोके महीयते ।
 अपुत्रो लभते पुत्रान्निर्धनो धनमाप्नुयात् ॥ ८६ ॥ कुरोगी मुच्यते
 रोगान्मृत्या यः पठते सदा । यस्त्वादित्यदिने पार्थ नाभिमात्रजले
 स्थितः ॥ ८७ ॥ उदयाचलमारूढं भास्करं प्रणतः स्थितः । जपते
 मानवो भक्त्या शृणुयाद्वापि भक्तितः ॥ ८८ ॥ स याति परमं स्थानं
 यत्र देवो दिवाकरः । अमित्रदमनं पार्थ यदा कर्तुं समारभेत् ॥ ८९ ॥
 तदा प्रतिकृतिं कृत्वा शत्रोश्चरणपांसुभिः । आक्रम्य वामपादेन
 ह्यादित्यहृदयं जपेत् ॥ ९० ॥ एतन्मंत्रं समाहूय सर्वसिद्धिकरं परम् ।
 ॐ ह्रीं हिमालीढं स्वाहा । ॐ ह्रीं निलीढं स्वाहा । ॐ ह्रीमालीढं
 स्वाहा । इति मंत्रः ॥ त्रिभिश्च रोगी भवति ज्वरी भवति पंचभिः ।
 जपैस्तु सप्तभिः पार्थ राक्षसीं तनुमाविशेत् ॥ ९१ ॥ राक्षसेनाभि-
 भूतस्य विकारान् शृणु पांडव । गीयते नृत्यते नम्र आस्फोटयति
 धावति ॥ ९२ ॥ शिवारूढं च कुरुते हसते क्रंदते पुनः । एवं संपीड्यते
 पार्थ यद्यपि स्यान्महेश्वरः ॥ ९३ ॥ किं पुनर्मानुषः कश्चिच्छौचाचार-
 विवर्जितः । पीडितस्य न संदेहो ज्वरो भवति दारुणः ॥ ९४ ॥ यदा
 चानुग्रहं तस्य कर्तुमिच्छेच्छुभंकरम् । तदा सलिलमादाय जपेन्मंत्रमिमं
 बुधः ॥ ९५ ॥ नमो भगवते तुभ्यमादित्याय नमो नमः । जयाय
 जयभद्राय हरिदश्वाय ते नमः ॥ ९६ ॥ स्नापयेत्तेन मंत्रेण शुभं भवति
 नान्यथा । अन्यथा च भवेद्दोषो नश्यते नात्र संशयः ॥ ९७ ॥
 अतस्ते निखिलः प्रोक्तः पूजां चैव निबोध मे । उपलिप्ते शुचौ देशे
 नियतो वाग्यतः शुचिः ॥ ९८ ॥ वृत्तं वा चतुरस्रं वा लिप्तभूमौ
 लिखेच्छुचि । त्रिधा तत्र लिखेत्पद्ममष्टपत्रं सकर्णिकम् ॥ ९९ ॥
 अष्टपत्रं लिखेत्पद्मं लिप्तगोमयमंडले । पूर्वपत्रे लिखेत् सूर्यमाग्नेय्यां
 तु रविं न्यसेत् ॥ १०० ॥ याम्यायां च विवस्वंतं नैर्ऋत्यां तु भगं

न्यसेत् । प्रतीच्यां वरुणं विद्याद्वायव्यां मित्रमेव च ॥ १ ॥ आदित्य-
 मुत्तरे पत्रे ईशान्यां मित्रमेव च । मध्ये तु भास्करं विद्यात्क्रमेणैवं
 समर्चयेत् ॥ २ ॥ अतः परतरं नास्ति सिद्धिकामस्य पाण्डव । महातेजः
 समुद्यंतं प्रणमेत्स कृताञ्जलिः ॥ ३ ॥ सक्केसराणि पद्मानि करवीराणि
 चार्जुन । तिलतंडुलयुक्तानि कुशगंधोदकानि च ॥ ४ ॥ रक्तचंदनमि-
 श्राणि कृत्वा वै ताम्रभाजने । धृत्वा शिरसि तत्पात्रं जानुभ्यां धरणीं
 स्पृशेत् ॥ ५ ॥ मंत्रपूतं गुडाकेश चार्घ्यं दद्याद्भक्तये । सायुधं
 सरथं चैव सूर्यमावाहयाम्यहम् ॥ ६ ॥ स्वागतो भव । सुप्रतिष्ठितो
 भव । संनिधो भव । संनिहितो भव । संमुखो भव । इति पंचमुद्राः ॥
 स्फुटयित्वाऽर्हयेत्सूर्यं भुक्तिं मुक्तिं लभेन्नरः ॥ ७ ॥ ॐ श्रीं विद्याकि-
 लिलिकिलिकटकेष्टसर्वार्थसाधनाय स्वाहा । ॐ श्रीं ह्रीं हूं हंसः सूर्याय
 नमः स्वाहा । ॐ श्रीं हां ह्रीं हूं हः सूर्यमूर्तये स्वाहा ॐ श्रीं ह्रीं खं
 खः लोकाय सर्वमूर्तये स्वाहा । ॐ हूं मार्तण्डाय स्वाहा । नमोऽस्तु
 सूर्याय सहस्रभानवे नमोऽस्तु वैश्वानरजातवेदसे । त्वमेव चार्घ्यं प्रति-
 गृह्ण देव देवाधिदेवाय नमो नमस्ते ॥ ८ ॥ नमो भगवते तुभ्यं नमस्ते
 जातवेदसे । दत्तमर्घ्यं मया भानो त्वं गृहाण नमोऽस्तु ते ॥ ९ ॥
 एहि सूर्य सहस्रांशो तेजोराशे जगत्पते । अनुकंपय मां देव गृहाणार्घ्यं
 नमोऽस्तु ते ॥ ११० ॥ नमो भगवते तुभ्यं नमस्ते जातवेदसे ।
 ममेदमर्घ्यं गृह्ण त्वं देवदेव नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥ सर्वदेवाधिदेवाय
 आधिव्याधिविनाशिने । इदं गृहाण मे देव सर्वव्याधिर्विनश्यतु ॥ १२ ॥
 नमः सूर्याय शांताय सर्वरोगविनाशिने । ममेप्सितं फलं दत्त्वा
 प्रसीद परमेश्वर ॥ १३ ॥ ॐ नमो भगवते सूर्याय स्वाहा ।
 ॐ शिवाय स्वाहा । ॐ सर्वात्मने सूर्याय नमः स्वाहा । ॐ अक्षय्य-
 तेजसे नमः स्वाहा । सर्वसंकटदारिद्र्यं शत्रुं नाशय नाशय । सर्व-

लोकेषु विश्वात्मन्सर्वात्मन् सर्वदर्शक ॥ १४ ॥ नमो भगवते सूर्य
 कुष्ठरोगान्विखंडय । आयुरारोग्यमैश्वर्यं देहि देव नमोऽस्तु ते
 ॥ १५ ॥ नमो भगवते तुभ्यमादित्याय नमो नमः । ॐ अक्षय्य-
 तेजसे नमः । ॐ सूर्याय नमः । ॐ विश्वमूर्तये नमः । आदित्यं च
 शिवं विद्याच्छिवमादित्यरूपिणम् । उभयोरंतरं नास्ति आदित्यस्य
 शिवस्य च ॥ १६ ॥ एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं पुरुषो वै दिवाकरः ।
 उदये ब्रह्मणो रूपं मध्याह्ने तु महेश्वरः ॥ १७ ॥ अस्तमाने स्वयं
 विष्णुस्त्रिमूर्तिश्च दिवाकरः । नमो भगवते तुभ्यं विष्णवे प्रभविष्णवे
 ॥ १८ ॥ ममेदमर्घ्यं प्रतिगृह्य देव देवाधिदेवाय नमो नमस्ते ।
 श्रीसूर्यनारायणाय सांगाय सपरिवाराय इदमर्घ्यं समर्पयामि ॥ १९ ॥
 हिमघ्नाय तमोघ्नाय रक्षोघ्नाय च ते नमः । कृताघघ्नाय सत्याय तस्मै
 सूर्यात्मने नमः ॥ १२० ॥ जयोऽजयश्च विजयो जितप्राणो जित-
 श्रमः । मनोजवो जितक्रोधो वाजिनः सप्त कीर्तिताः ॥ २१ ॥ हरित-
 हयरथं दिवाकरं कनकमयांबुणजरेपिंजरम् । प्रतिदिनमुदये नवं
 नवं शरणमुपैमि हिरण्यरेतसम् ॥ २२ ॥ न तं व्यालाः प्रबाधन्ते न
 व्याधिभ्यो भयं भवेत् । न नागेभ्यो भयं चैव न च भूतभयं
 क्वचित् ॥ २३ ॥ अग्निशत्रुभयं नास्ति पार्थिवेभ्यस्तथैव च । दुर्गतिं
 तरते घोरां प्रजां च लभते पशून् ॥ २४ ॥ सिद्धिकामो लभेत्सिद्धिं
 कन्याकामस्तु कन्यकाम् । एतत्पटेत्स कौंतेय भक्तियुक्तेन चेतसा
 ॥ २५ ॥ अश्वमेधसहस्रस्य वाजपेयशतस्य च । कन्याकोटिसहस्रस्य
 दत्तस्य फलमाप्नुयात् ॥ २६ ॥ इदमादित्यहृदयं योऽधीते सततं
 नरः । सर्वपापविशुद्धात्मा सूर्यलोके महीयते ॥ २७ ॥ नास्त्या-
 दित्यसमो देवो नास्त्यादित्यसमा गतिः । प्रत्यक्षो भगवान्विष्णुर्येन
 विश्वं प्रतिष्ठितम् ॥ २८ ॥ नवतिर्योजनं लक्षं सहस्राणि शतानि च ।

यावद्धृदीप्रमाणेन तावच्चरति भास्करः ॥ २९ ॥ गवां शतसहस्रस्य
सम्पद्गदत्तस्य यत्फलम् । तत्फलं लभते विद्वान् शांतात्मा स्तौति यो
रविम् ॥ १३० ॥ योऽधीते सूर्यहृदयं सकलं सफलं भवेत् ।
अष्टानां ब्राह्मणानां च लेखयित्वा समर्पयेत् ॥ ३१ ॥ ब्रह्मलोके
ऋषीणां च जायते मानुषोऽपि वा । जातिस्मरत्वमाप्नोति शुद्धात्मा
नात्र संशयः ॥ ३२ ॥ अजाय लोकत्रयपावनाय भूतात्मने गोपा
तये वृषाय । सूर्याय सर्वप्रलयांतकाय नमो महाकारुणिकोत्तमाय
॥ ३३ ॥ विवस्वते ज्ञानभृदंतरात्मने जगत्प्रदीपाय जगद्धितैषिणे ।
स्वयंभुवे दीप्तसहस्रचक्षुषे सुरोत्तमायामिततेजसे नमः ॥ ३४ ॥
सुरैरनेकैः परिसेविताय हिरण्यगर्भाय हिरण्मयाय । महात्मने
मोक्षप्रदाय नित्यं नमोऽस्तु ते वासरकारणाय ॥ ३५ ॥ आदित्य-
श्रार्चितो देव आदित्यः परमं पदम् । आदित्यो मातृको भूत्वा
आदित्यो वाङ्मयं जगत् ॥ ३६ ॥ आदित्यं पश्यते भक्त्या मां
पश्यति ध्रुवं नरः । आदित्यं पश्यते भक्त्या न स पश्यति मां नरः
॥ ३७ ॥ त्रिगुणं च त्रितत्त्वं च त्रयो देवास्त्रयोऽग्नयः । त्रयाणां
च त्रिमूर्तिस्त्वं तुरीयस्त्वं नमोऽस्तु ते ॥ ३८ ॥ नमः सवित्रे
जगदेकचक्षुषे जगत्प्रसूतिस्थितिनाशहेतवे । त्रयीमयाय त्रिगुणा-
त्मधारिणे विरिञ्चिनारायणशंकरात्मने ॥ ३९ ॥ यस्योदयेनेह जग-
त्प्रबुध्यते प्रवर्तते चाखिलकर्मसिद्धये । ब्रह्मेन्द्रनारायणरुद्रवंदितः स
नः सदा यच्छतु मंगलं रविः ॥ १४० ॥ नमोऽस्तु सूर्याय सहस्र-
रश्मये सहस्रशाखान्वितसंभवात्मने । सहस्रयागोद्भवभावभागिने
सहस्रसंख्यायुगधारिणे नमः ॥ ४१ ॥ यन्मंडलं दीप्तिकरं विशालं
रत्नप्रभं तीव्रमनदिरूपम् । दारिद्र्यदुःखक्षयकारणं च पुनातु मां
तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ ४२ ॥ यन्मंडलं देवगणैः सुपूजितं विप्रैः

स्तुतं भावनमुक्तिकोविदम् । तं देवदेवं प्रणमामि सूर्य पुनातु मां
त० ॥ ४३ ॥ यन्मंडलं ज्ञानघनं त्वगम्यं त्रैलोक्यपूज्यं त्रिगुणात्म-
रूपम् । समस्ततेजोमयदिव्यरूपं पुनातु मां तत्सवि० ॥ ४४ ॥
यन्मंडलं गूढमतिप्रबोधं धर्मस्य वृद्धिं कुरुते जनानाम् । यत्सर्व-
पापक्षयकारणं च पुनातु मां त० ॥ ४५ ॥ यन्मंडलं व्याधिविना-
शदक्षं यद्व्यजुःसामसु संप्रगीतम् । प्रकाशितं येन च भूर्भुवःस्वः
पुनातु मां त० ॥ ४६ ॥ यन्मंडलं वेदविदो वदन्ति गायन्ति यच्चा-
रणसिद्धसंघाः । यद्योगिनो योगजुषां च संघाः पुनातु मां त०
॥ ४७ ॥ यन्मंडलं सर्वजनेषु पूजितं ज्योतिश्च कुर्यादिह मर्त्यलोके ।
यत्कालकालादिमनादिरूपं पुनातु मां त० ॥ ४८ ॥ यन्मंडलं
विष्णुचतुर्मुखाख्यं यदक्षरं पापहरं जनानाम् । यत्कालकल्पक्षयकारणं
च पुनातु मां त० ॥ ४९ ॥ यन्मंडलं विश्वसृजां प्रसिद्धमुत्पत्ति-
रक्षाप्रलयप्रगल्भम् । यस्मिञ्जगत्संहरतेऽखिलं च पुनातु मां त०
॥ ५० ॥ यन्मंडलं सर्वगतस्य विष्णोरात्मा परं धाम विशुद्ध-
तत्त्वम् । सूक्ष्मांतरैर्योगपथानुगम्यं पुनातु मां त० ॥ ५१ ॥ यन्म-
ंडलं ब्रह्मविदो विदन्ति गायन्ति यच्चारणसिद्धसंघाः । यन्मंडलं वेद-
विदः स्मरन्ति पुनातु मां त० ॥ ५२ ॥ यन्मंडलं वेदविदोपगीतं
यद्योगिनां योगपथानुगम्यम् । तत्सर्ववेदं प्रणमामि सूर्य पुनातु मां
त० ॥ ५३ ॥ मंडलाष्टमिदं पुण्यं यः पठेत्सततं नरः । सर्वपाप-
विशुद्धात्मा सूर्यलोके महीयते ॥ ५४ ॥ ध्येयः सदा सवितृ-
मंडलमध्यवर्ती नारायणः सरसिजासनसंनिविष्टः । केयूरवान्म-
करकुंडलवान् किरीटी हारी हिरण्मयवपुर्धृतशंखचक्रः ॥ ५५ ॥
सशंखचक्रं रविमंडले स्थितं कुशेशयाक्रान्तमनंतमच्युतम् । भजामि
बुद्ध्या तपनीयमूर्तिं सुरोत्तमं चित्रविभूषणोज्ज्वलम् ॥ ५६ ॥ एवं

ब्रह्मादयो देवा ऋषयश्च तपोधनाः । कीर्तयन्ति सुरश्रेष्ठ देवं
नारायणं विभुम् ॥ ५७ ॥ वेदवेदांगशारीरं दिव्यदीप्तिकरं परम् ।
रक्षोघ्नं रक्तवर्णं च सृष्टिसंहारकारकम् ॥ ५८ ॥ एकचक्रो रथो
यस्य दिव्यः कनकभूषितः । स मे भवतु सुप्रीतः पद्महस्तो
दिवाकरः ॥ ५९ ॥ आदित्यः प्रथमं नाम द्वितीयं तु दिवाकरः ।
तृतीयं भास्करः प्रोक्तं चतुर्थं तु प्रभाकरः ॥ १६० ॥ पंचमं तु
सहस्रांशुः षष्ठं चैव त्रिलोचनः । सप्तमं हरिदश्वश्च अष्टमं तु
विभावसुः ॥ ६१ ॥ नवमं दिनकृत्प्रोक्तं दशमं द्वादशात्मकम् ।
एकादशं त्रयीमूर्तिर्द्वादशं सूर्य एव च ॥ ६२ ॥ द्वादशादित्य-
नामानि प्रातःकाले पठेन्नरः । दुःखप्रणाशनं चैव सर्वदुःखं च
नश्यति ॥ ६३ ॥ दद्रुकुष्ठहरं चैव दारिद्र्यं हरते ध्रुवम् । सर्व-
तीर्थप्रदं चैव सर्वकामप्रवर्धनम् ॥ ६४ ॥ यः पठेत्प्रातरुत्थाय
भक्त्या नित्यमिदं नरः । सौख्यमायुस्तथाऽऽरोग्यं लभते मोक्षमेव
च ॥ ६५ ॥ अग्निमीळे नमस्तुभ्यमिपेत्योर्जैस्वरूपिणे । अग्न
आयाहि वीतस्त्वं नमस्ते ज्योतिषां पते ॥ ६६ ॥ शं नो देवी
नमस्तुभ्यं जगच्चक्षुर्नमोऽस्तु ते । पंचमायोपवेदाय नमस्तुभ्यं नमो
नमः ॥ ६७ ॥ पद्मासनः पद्मकरः पद्मगर्भसमद्युतिः । सप्ताश्वरथसंयुक्तो
द्विभुजः स्यात्सदा रविः ॥ ६८ ॥ आदित्यस्य नमस्कारं ये कुर्वन्ति दिने
दिने । जन्मांतरसहस्रेषु दारिद्र्यं नोपजायते ॥ ६९ ॥ उदयगिरिमुपेतं
भास्करं पद्महस्तं निखिलभुवननेत्रं रत्नरत्नोपमेयम् । तिमिरकरिमृगेंद्रं
बोधकं पद्मिनीनां सुरवरमभिवंदे सुंदरं विश्वबंधम् ॥ १७० ॥ इति
श्रीभविष्योत्तरपुराणे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे आदित्यहृदयस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

४११. सूर्यकवचस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ याज्ञवल्क्य उवाच ॥ शृणुष्व मुनिशार्दूल
 सूर्यस्य कवचं शुभम् । शरीरारोग्यदं दिव्यं सर्वसौभाग्यदायकम्
 ॥ १ ॥ देदीप्यमानमुकुटं स्फुरन्मकरकुण्डलम् । ध्यात्वा सहस्र-
 किरणं स्तोत्रमेतदुदीरयेत् ॥ २ ॥ शिरो मे भास्करः पातु ललाटं
 मेऽमितद्युतिः । नेत्रे दिनमणिः पातु श्रवणे वासरेश्वरः ॥ ३ ॥ घ्राणं
 धर्मघृणिः पातु वदनं वेदवाहनः । जिह्वां मे मानदः पातु कंठं मे
 सुरवंदितः ॥ ४ ॥ स्कंधौ प्रभाकरः पातु वक्षः पातु जनप्रियः ।
 पातु पादौ द्वादशात्मा सर्वाङ्गं सकलेश्वरः ॥ ५ ॥ सूर्यरक्षात्मकं
 स्तोत्रं लिखित्वा भूर्जपत्रके । दधाति यः करे तस्य वशगाः सर्व-
 सिद्धयः ॥ ६ ॥ सुस्नातो यो जपेत्सम्यग्योऽधीते स्वस्थमानसः । स
 रोगमुक्तो दीर्घायुः सुखं पुष्टिं च विंदति ॥ ७ ॥ इति श्रीमद्याज्ञ-
 वल्क्यमुनिविरचितं सूर्यकवचस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

४१२. अगस्त्योक्तं आदित्यहृदयम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ततो युद्धपरिश्रांतं समरे चिंतया स्थितम् ।
 रावणं चाग्रतो दृष्ट्वा युद्धाय समुपस्थितम् ॥ १ ॥ दैवतैश्च समा-
 गम्य द्रष्टुमभ्यागतो रणम् । उपगम्याब्रवीद्राममगस्त्यो भगवांस्तदा
 ॥ २ ॥ राम राम महाबाहो शृणु गुह्यं सनातनम् । येन सर्वानरी-
 न्वत्स समरे विजयिष्यसे ॥ ३ ॥ आदित्यहृदयं पुण्यं सर्वशत्रु-
 विनाशनम् । जयावहं जपेन्नित्यमक्षयं परमं शिवम् ॥ ४ ॥ सर्व-
 मंगलमांगल्यं सर्वपापप्रणाशनम् । चिंताशोकप्रशमनमायुर्वर्धन-
 मुत्तमम् ॥ ५ ॥ रश्मिमंतं समुद्यंतं देवासुरनमस्कृतम् । पूजयस्व
 विवस्वन्तं भास्करं भुवनेश्वरम् ॥ ६ ॥ सर्वदेवात्मको ह्येष तेजस्वी

रश्मिभावनः । एष देवः सुरगणाल्लोकान् पातु गभस्तिभिः ॥ ७ ॥
 एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवः स्कंदः प्रजापतिः । महेंद्रो धनदः
 कालो यमः सोमो ह्यपांपतिः ॥ ८ ॥ पितरो वसवः साध्या अश्विनौ
 मरुतो मनुः । वायुर्वह्निः प्रजा प्राणा ऋतुकर्ता प्रभाकरः ॥ ९ ॥
 आदित्यः सविता सूर्य खगः पूषा गभस्तिमान् । सुवर्णस्तपनो भानुः
 स्वर्णरेता दिवाकरः ॥ १० ॥ हरिदश्वः सहस्रार्चिः सप्तसप्तिर्मरीचि-
 मान् । तिमिरोन्मथनः शंभुस्त्वष्टा मार्तण्डकोऽशुमान् ॥ ११ ॥
 हिरण्यगर्भः शिशिरस्तपनो भास्करो रविः । अग्निगर्भोऽदितेः पुत्रः
 शङ्खः शिशिरनाशनः ॥ १२ ॥ व्योमनाथस्तमोभेदी ऋग्यजुःसाम-
 पारगः । धनुर्वृष्टिरपां मित्रो विन्ध्यवीथीप्लवङ्गमः ॥ १३ ॥ आतपी
 मंडली मृत्युः पिङ्गलः सर्वतापनः । कविर्विश्वो महातेजा रक्तः सर्व-
 भवोद्भवः ॥ १४ ॥ नक्षत्रग्रहताराणामधिपो विश्वभावनः । तेजसा-
 मपि तेजस्वी द्वादशात्मन्नमोऽस्तु ते ॥ १५ ॥ नमः पूर्वाय
 गिरये पश्चिमायाद्रये नमः । ज्योतिर्गणानां पतये दिनाधिपतये नमः
 ॥ १६ ॥ जयाय जयभद्राय हर्यश्वाय नमो नमः । नमो नमः सह-
 स्वांशो आदित्याय नमो नमः ॥ १७ ॥ नम उग्राय वीराय सारंगाय
 नमो नमः । नमः पद्मप्रबोधाय प्रचंडाय नमोऽस्तु ते ॥ १८ ॥
 ब्रह्मेशानाच्युतेशाय सूरयादित्यवर्चसे । भास्वते सर्वभक्षाय रौद्राय
 वपुषे नमः ॥ १९ ॥ तमोग्नाय हिमघ्नाय शत्रुघ्नायामितात्मने ।
 कृतघ्नघ्नाय देवाय ज्योतिषां पतये नमः ॥ २० ॥ तप्तचामीकराभाय
 हरये विश्वकर्मणे । नमस्तमोऽभिनिघ्नाय रुचये लोकसाक्षिणे ॥ २१ ॥
 नाशयत्येष वै भूतं तदेव सृजति प्रभुः । पायत्येष तपत्येष वर्षत्येष
 गभस्तिभिः ॥ २२ ॥ एष सुप्तेषु जागर्ति भूतेषु परिनिष्ठितः । एष
 चैवाग्निहोत्रं च फलं चैवाग्निहोत्रिणाम् ॥ २३ ॥ देवाश्च ऋतवश्चैव

कतूनां फलमेव च । यानि कृत्यानि लोकेषु सर्वेषु परमप्रभुः ॥ २४ ॥
 एनमापत्सु कृच्छ्रेषु कांतारेषु भयेषु च । कीर्तयन्पुरुषः कश्चिन्नावसी-
 दति राघव ॥ २५ ॥ पूजयस्वैनमेकाग्रो देवदेवं जगत्पतिम् । एतन्नि-
 गुणितं जप्त्वा युद्धेषु विजयिष्यसि ॥ २६ ॥ अस्मिन्क्षणे महाबाहो
 रावणं त्वं जयिष्यसि । एवमुक्त्वा ततोऽगस्त्यो जगाम स यथागतम्
 ॥ २७ ॥ एतच्छ्रुत्वा महातेजा नष्टशोकोऽभवत्तदा । धारयामास
 सुप्रीतो राघवः प्रयतात्मवान् ॥ २८ ॥ आदित्यं प्रेक्ष्य जप्त्वेदं परं
 हर्षमवाप्तवान् । त्रिराचम्य शुचिर्भूत्वा धनुरादाय वीर्यवान् ॥ २९ ॥
 रावणं प्रेक्ष्य हृष्टात्मा युद्धार्थं समुपागमत् । सर्वयत्नेन सहता वधे
 तस्य धृतोऽभवत् ॥ ३० ॥ अथ रविरवदन्निरीक्ष्य रामं मुदितमनाः
 परमं प्रहृष्यमाणः । निशिचरपतिसंक्षयं विदित्वा सुरगणमध्यगतो
 वचस्त्वरेति ॥ ३१ ॥ इति श्रीबाल्मीकीयरामायणेऽगस्त्यप्रोक्तमा-
 दित्यहृदयस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

४१३. सूर्यस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ सप्ताश्वं समारुह्यारुणसारथिमुत्तमम् ।
 श्वेतपद्मधरं देवं त्वां सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥ १ ॥ बन्धूकपुष्पसंकाशं
 हारकुण्डलभूषणम् । एकचक्रधरं देवं त्वां सूर्यं ॥ २ ॥ लोहितस्वर्ण-
 संकाशं सर्वलोकपितामहम् । सर्वव्याधिहरं देवं त्वां सूर्यं ॥ ३ ॥
 त्वं देव ईश्वरः शक्रब्रह्मविष्णुमहेशराट् । परं धर्मं परं ज्ञानं त्वां
 सूर्यं ॥ ४ ॥ त्वं देवलोककर्ता च कीर्त्यात्मा करणांशकम् । तेजो
 रुद्रधरं देवं त्वां सूर्यं ॥ ५ ॥ पृथिव्यप्तेजो वायुश्चात्माप्याकाशमेव
 च । सर्वज्ञं श्रीजगन्नाथं त्वां सूर्यं ॥ ६ ॥ अखंडमंडलाकारं व्याप्तं
 येन चराचरम् । गगनलिङ्गमाराध्यं त्वां सूर्यं ॥ ७ ॥ निर्मलं निर्वि-

कल्पं च निर्विकारं निरामयम् । जगत्कर्ता जगद्धर्तृस्त्वां सूर्य० ॥ ८ ॥
 सूर्यस्तोत्रं जपेन्नित्यं ग्रहपीडाविनाशनम् । धनं धान्यं मनोवाञ्छां श्रियः
 प्राप्नोति नित्यशः ॥ ९ ॥ शिवरात्रिसहस्रेषु कृत्वा जागरणं भवेत् ।
 यत्फलं लभते सर्वं तद्वै सूर्यस्य दर्शनात् ॥ १० ॥ एकादशीसहस्राणि
 संक्रान्त्ययुतमेव च । सप्तकोटिसु दर्शेषु तत्फलं सूर्यदर्शनात् ॥ ११ ॥
 अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च । कोटिकन्याप्रदानानि तत्फलं
 सूर्यदर्शनात् ॥ १२ ॥ गयापिंडः परं दाने पितृणां च समुद्धरम् ।
 दृष्ट्वा ह्यग्न्येश्वरं देवं तत्फलं समवाप्नुयात् ॥ १३ ॥ अग्न्येश्वरसमोपेतो
 सोमनाथस्तथैव च । कैदारमुदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥ १४ ॥
 सूर्यस्तोत्रं पठेन्नित्यमेकचित्तः समाहितः । दुःखदारिद्र्यनिर्मुक्तः सूर्यलोकं
 स गच्छति ॥ १५ ॥ इति श्रीसूर्यस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

४१४. सूर्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वैशंपायन उवाच ॥ शृणुष्वावहितो राजन्
 शुचिर्भूत्वा समाहितः । क्षणं च कुरु राजेंद्र गुह्यं वक्ष्यामि ते हितम्
 ॥ १ ॥ धौम्येन तु यथा प्रोक्तं पार्थाय सुमहात्मने । नाम्नामष्टोत्तरं
 पुण्यं शतं तच्छृणु भूपते ॥ २ ॥ सूर्योऽयं मा भगस्त्वष्टा पूषार्कः
 सविता रविः । गभस्तिमानजः कालो मृत्युर्धाता प्रभाकरः ॥ ३ ॥
 पृथिव्यापश्च तेजश्च खं वायुश्च परायणम् । सोमो बृहस्पतिः शुक्रो
 बुधोऽङ्गारक एव च ॥ ४ ॥ इंद्रो विवस्वान् दीप्तिशुः शुचिः शौरिः
 शनैश्चरः । ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च स्कंदो वैश्रवणो यमः ॥ ५ ॥
 वैद्युतो जाठरश्चाग्निरैधनस्तेजसांपतिः । धर्मध्वजो वेदकर्ता वेदाङ्गो
 वेदवाहनः ॥ ६ ॥ कृतं त्रेता द्वापरश्च कलिः सर्वाभराश्रयः । कला
 काष्ठा मुहूर्तश्च क्षपा यामस्तथा क्षणः ॥ ७ ॥ संवत्सरकरोऽश्वत्थः

कालचक्रो विभावसुः । पुरुषः शाश्वतो योगी व्यक्ताव्यक्तः सनातनः
 ॥ ८ ॥ कालाध्यक्षः प्रजाध्यक्षो विश्वकर्मा तमोनुदः । वरुणः साग-
 रोंऽशश्च जीमूतो जीवनोऽरिहा ॥ ९ ॥ भूताश्रयो भूतपतिः सर्वलोक-
 नमस्कृतः । स्रष्टा संवर्तको वह्निः सर्वस्यादिरलोलुपः ॥ १० ॥
 अनंतः कपिलो भानुः कामदः सर्वतोमुखः । शयो विशालो वरदः
 सर्वधातुनिपेचिता ॥ ११ ॥ मनः सुपर्णो भूतादिः शीघ्रगः प्राणधा-
 रकः । धन्वंतरिर्धूमकेतुरादिदेवोऽदितेः सुतः ॥ १२ ॥ द्वादशात्मा-
 रविन्दाक्षः पिता माता पितामहः । स्वर्गद्वारं प्रजाद्वारं मोक्षद्वारं
 त्रिविष्टपम् ॥ १३ ॥ देहकर्ता प्रशांतात्मा विश्वात्मा विश्वतोमुखः ।
 चराचरात्मा सूक्ष्मात्मा मैत्रेण वपुषान्वितः ॥ १४ ॥ एतद्वै कीर्तनी-
 यस्य सूर्यस्यामिततेजसः । नाम्नामष्टशतं पुण्यं प्रोक्तमेतत्स्वयंभुवा
 ॥ १५ ॥ सुरगणपितृयक्षसेवितं ह्यसुरनिशाचरसिद्धवंदितम् । वरकनक-
 हुताशनप्रभं प्रणिपतितोऽस्मि हिताय भास्करम् ॥ १६ ॥ सूर्योदये
 यः सुसमाहितः पठेत्स पुत्रदारान् धनरत्नसंचयान् । लभेत् जातिस्मरतां
 नरः सदा धृतिं च मेधां च स विंदते पुमान् ॥ १७ ॥ इमं स्तवं
 देववरस्य यो नरः प्रकीर्तयेच्छुचिसुमनाः समाहितः । विमुच्यते
 शोकदवाग्निसागराल्लभेत् कामान्मनसा यथेप्सितान् ॥ १८ ॥ इति
 श्रीमहाभारते सूर्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

४१५. युधिष्ठिरकृतं सूर्यस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ त्वं भानो जगतश्चक्षुस्त्वमात्मा सर्वदेहिनाम् ।
 त्वं योनिः सर्वभूतानां त्वमाचारः क्रियावताम् ॥ १ ॥ त्वं गतिः
 सर्वसांख्यानां योगिनां त्वं परायणम् । अनावृतागलद्वारं त्वं गतिस्त्वं
 सुमुक्षताम् ॥ २ ॥ त्वया संधार्यते लोकस्त्वया लोकः प्रकाश्यते ।

त्वया पवित्रीक्रियते निर्व्याजं पाल्यते त्वया ॥ ३ ॥ त्वामुपस्थाय
काले तु ब्राह्मणा वेदपारगाः । स्वशाखाविहितैर्मन्त्रैरर्चयन्त्यृषिगणा-
र्चित ॥ ४ ॥ तव दिव्यं रथं यातमनुयांति वरार्थिनः । सिद्ध-
चारणगंधर्वा यक्षगुह्यकपन्नगाः ॥ ५ ॥ त्रयस्त्रिंशच्च वै देवास्तथा
वैमानिका गणाः । सोपेन्द्राः समहेन्द्राश्च त्वामिष्ट्वा सिद्धिमागताः
॥ ६ ॥ उपयांत्यर्चयित्वा तु त्वां वै प्राप्तमनोरथाः । दिव्यमंदार-
मालाभिस्तूर्णं विद्याधरोत्तमाः ॥ ७ ॥ गुह्याः पितृगणाः सप्त ये
दिव्या ये च मानुषाः । ते पूजयित्वा त्वामेव गच्छंत्याशु प्रधान-
ताम् ॥ ८ ॥ वसवो मरुतो रुद्रा ये च साध्या मरीचिपाः ।
वालखिल्यादयः सिद्धाः श्रेष्ठत्वं प्राणिनां गताः ॥ ९ ॥ स ब्रह्म-
केषु लोकेषु सप्तस्वप्यखिलेषु च । न तद्भूतमहं मन्ये यदर्कादति-
रिच्यते ॥ १० ॥ संति चान्यानि सत्त्वानि वीर्यवंति महान्ति च ।
न तु तेषां तथा दीप्तिः प्रभवो वा यथा तव ॥ ११ ॥ ज्योतींषि
त्वयि सर्वाणि त्वं सर्वज्योतिषां पतिः । त्वयि सत्यं च सत्त्वं च
सर्वे भावाश्च सात्त्विकाः ॥ १२ ॥ त्वत्तेजसा कृतं चक्रं सुनाभं
विश्वकर्मणा । देवारीणां मदो येन नाशितः शार्ङ्गधन्वना ॥ १३ ॥
त्वमादायांशुभिस्तेजो निदाघे सर्वदेहिनाम् । सर्वौषधिरसानां
च पुनर्वर्षासु मुंचसि ॥ १४ ॥ तपंत्यन्ये दहंत्यन्ये गर्जंत्यन्ये
यथा घनाः । विद्योतन्ते प्रवर्षन्ति तव प्रावृषि रश्मयः ॥ १५ ॥
न तथा सुखयत्यग्निर्न प्रावारा न कम्बलाः । शीतवातादितं
लोकं यथा तव मरीचयः ॥ १६ ॥ त्रयोदशद्वीपवर्ती गोभि-
र्भासयसे महीम् । त्रयाणामपि लोकानां हितायैकः प्रवर्तसे ॥ १७ ॥
तव यद्युदयो न स्यादधं जगदिदं भवेत् । न च धर्मार्थकामेषु
प्रवर्तेरभ्यनीषिणः ॥ १८ ॥ आधानपशुबंधेष्टिमंत्रयज्ञतपःक्रियाः ।

त्वत्प्रसादादवाप्यंते ब्रह्मक्षत्रविशां गणैः ॥ १९ ॥ यदहर्ब्रह्मणः
 प्रोक्तं सहस्रयुगसंमितम् । तस्य त्वनादिरंतश्च कालज्ञैः परि-
 कीर्तितः ॥ २० ॥ मनूनां मनुपुत्राणां जगतोऽमानवस्य च ।
 मन्वंतराणां सर्वेषामीश्वराणां त्वमीश्वरः ॥ २१ ॥ संहारकाले
 संप्राप्ते तव क्रोधचिनिःसृतः । संवर्तकाग्निस्त्रैलोक्यं भस्मीकृत्या-
 वतिष्ठते ॥ २२ ॥ त्वदीधितिसमुत्पन्ना नानावर्णा महाधनाः ।
 सैरावताः साशनयः कुर्वत्याभूतसंप्लवम् ॥ २३ ॥ कृत्वा द्वादशधा-
 त्मानं द्वादशादित्यतां गतः । संहृत्यैकार्णवं सर्वं त्वं शोषयसि
 रश्मिभिः ॥ २४ ॥ त्वामिंद्रमाहुस्त्वं रुद्रस्त्वं विष्णुस्त्वं प्रजा-
 पतिः । त्वमग्निस्त्वं मनः सूक्ष्मं प्रभुस्त्वं ब्रह्म शाश्वतम् ॥ २५ ॥
 त्वं हंसः सविता भानुरंशुमाली वृषाकपिः । विवस्वान्मिहिरः
 पूषा मित्रो धर्मस्तथैव च ॥ २६ ॥ सहस्ररश्मिरादित्यस्तपनस्त्वं
 गवां पतिः । मार्तंडोऽर्को रविः सूर्यः शरण्यो दिनकृत्तथा ॥ २७ ॥
 दिवाकरः सप्तसप्तिर्धामकेशी विरोचनः । आशुगामी तमोघ्नश्च
 हरिताश्वश्च कीर्त्यसे ॥ २८ ॥ सप्तम्यामथवा षष्ठ्यां भक्त्या
 पूजां करोति यः । अनिर्विण्णोऽनहंकारी तं लक्ष्मीर्भजते
 नरम् ॥ २९ ॥ न तेषामापदः संति नाधयो व्याधयस्तथा ।
 ये तवानन्यमनसा कुर्वत्यर्चनवंदनम् ॥ ३० ॥ सर्वरोगैर्विरहिताः
 सर्वपापविवर्जिताः । त्वद्भावभक्ताः सुखिनो भवंति चिरजीविनः
 ॥ ३१ ॥ त्वं ममापन्नकामस्य सर्वातिथ्यं चिकीर्षतः । अन्नमन्नपते
 दातुममितः श्रद्धयार्हसि ॥ ३२ ॥ ये च तेऽनुचराः सर्वे पादो-
 पांतं समाश्रिताः । माठरारुणदण्डाद्यास्तांस्तान्वंदेऽशनिश्रुभान्
 ॥ ३३ ॥ क्षुभया सहितो मैत्री याश्चान्या भूतमातरः । ताश्च
 सर्वा नमस्यामि पांतु मां शरणागतम् ॥ ३४ ॥ एवं स्तुतो

महाराज भास्करो लोकभावनः । ततो दिवाकरः प्रीतो दर्शयामास
 पाण्डवम् ॥ ३५ ॥ दीप्यमानः स्ववपुषा ज्वलन्निव हुताशनः ।
 विवस्वानुवाच ॥ यत्तेऽभिलपितं किञ्चित्तत्त्वं सर्वमवाप्स्यसि
 ॥ ३६ ॥ अहमन्नं प्रदास्यामि सप्त पञ्च च ते समाः । गृह्णीष्व
 पिठरं ताम्रं मया दत्तं नराधिप ॥ ३७ ॥ यावद्वर्त्स्यति पांचाली
 पात्रेणानेन सुव्रत । फलमूलामिषं शाकं संस्कृतं यन्महानसे
 ॥ ३८ ॥ चतुर्विधं तदन्नाद्यमक्षय्यं ते भविष्यति । इतश्चतुर्दशे
 वर्षे भूयो राज्यमवाप्स्यसि । वैशंपायन उवाच ॥ एवमुक्त्वा तु
 भगवांस्तत्रैवांतरधीयत ॥ ३९ ॥ इमं स्तवं प्रयतमनाः समाधिना
 पठेदिहान्योऽपि वरं समर्थयन् । तत्तस्य दद्याच्च रविर्मनीषितं तदामु-
 याद्यद्यपि तत्सुदुर्लभम् ॥ ४० ॥ यश्चेदं धारयेन्नित्यं शृणुयाद्वाप्य-
 भीक्ष्णशः । पुत्रार्थी लभते पुत्रं धनार्थी लभते धनम् ॥ ४१ ॥ विद्यार्थी
 लभते विद्यां पुरुषोऽप्यथ वा स्त्रियः । उभे संध्ये जपेन्नित्यं नारी वा
 पुरुषो यदि । आपदं प्राप्य मुच्येत बद्धो मुच्येत बंधनात् ॥ ४२ ॥
 इति श्रीमहाभारतोक्तं युधिष्ठिरविरचितं सूर्यस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

४१६. सूर्यशतकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जम्भारातीभकुम्भोद्भवमिव दधतः सान्द्र-
 सिन्दूररेणुं रक्ताः सिक्ता इवौवैरुदयगिरितटीधातुधाराद्रवस्य ।
 आयान्त्या तुल्यकालं कमलवनरुचेवारुणा वो विभूत्यै भूया-
 सुर्भासयन्तो भुवनमभिनवा भानवो भानवीयाः ॥ १ ॥ भक्ति-
 प्रह्लाया दातुं मुकुलपुटकुटीकोटरकोडलीनां लक्ष्मीमाकृष्टुकामा इव
 कमलवनोद्घाटनं कुर्वते ये । कालाकारान्धकाराननपतितजग-

१ सर्वरोगहरमिदं सटीकं शतकं काव्यमालया १९ तमपुष्पे प्रकाशितं
 वरीवर्ति.

त्साध्वसध्वंसकल्याः कल्याणं वः क्रियासुः किसलयरुचयस्ते करा
भास्करस्य ॥ २ ॥ गर्भेष्वम्भोरुहाणां शिखरिषु च शिताग्रेषु
तुल्यं पतन्तः प्रारम्भे वासरस्य व्युपरतिसमये चैकरूपास्तथैव ।
निष्पर्यायं प्रवृत्तास्त्रिभुवनभवनप्राङ्गणे पान्तु युष्मानूष्माणं संत-
ताध्वश्रमजमिव भृशं बिभ्रतो ब्रध्नपादाः ॥ ३ ॥ प्रभ्रश्यत्यु-
त्तरीयत्विषि तमसि समुद्वीक्ष्य वीतावृतीन्प्रागजन्तुंस्तन्तू-
न्यथा यानतनु वितनुते तिग्मरोचिर्मरीचीन् । ते सान्द्रीभूय
सद्यः क्रमविशददशाशादशालीविशालं शश्वत्संपादयन्तोऽम्बरम-
मलमलं मङ्गलं वो दिशन्तु ॥ ४ ॥ न्यकुर्वन्नोषधीशे मुषितरुचि
शुचेवौषधीः प्रोषिताभा भास्वद्भावोद्गतेन प्रथममिव कृताभ्युदतिः
पावकेन । पक्षच्छेदव्रणासृक्क्षुत इव दृषदो दर्शयन्प्रातरद्रेराताम्र-
स्तीव्रभानोरनभिमतनुदे स्ताद्गमस्त्युद्गमो वः ॥ ५ ॥ शीर्णघ्राणा-
ङ्घ्रिपाणीन्वणिभिरपघनैर्धर्धराव्यक्तघोषान्दीर्घाघ्रातानघौघैः पुनरपि
घटयत्येक उल्लाघयन्त्यः । घर्मांशोस्तस्य वोऽन्तर्द्विगुणघनघृणानिघ्न-
निर्विघ्नवृत्तेर्दत्तार्घाः सिद्धसंघैर्विदधतु घृणयः शीघ्रमंहोविघातम्
॥ ६ ॥ बिभ्राणा वामनत्वं प्रथममथ तथैवांशवः प्रांशवो वः क्रान्ता-
काशान्तरालास्तदनु दश दिशः पूरयन्तस्ततोऽपि । ध्वान्तादाच्छिद्य
देवद्विष इव बलितो विश्वमाश्रुभुवानाः कृच्छ्राण्युच्छ्रायहेलोपहसित-
हरयो हारिदश्वा हरन्तु ॥ ७ ॥ उद्गाढेनारुणिष्ठा विदधति बहुलं
येऽरुणस्यारुणत्वं मूर्धोद्धूतौ खलीनक्षतरुधिररुचो ये रथाश्वाननेषु ।
शैलानां शैखरत्वं श्रितशिखरिशिखास्तन्वते ये दिशन्तु प्रेङ्खन्तः खे-
खरांशोः खचितदिनमुखास्ते मयूखाः सुखं वः ॥ ८ ॥ दत्तानन्दाः
प्रजानां समुचितसमयाकृष्टसृष्टैः पयोभिः पूर्वाह्ने विप्रकीर्णा दिशि
दिशि विरमत्यह्नि संहारभाजः । दीप्तांशोर्दीर्घदुःखप्रभवभवभयोदन्व-

दुत्तारनावो गावो वः पावनानां परमपरिमितां प्रीतिमुत्पादयन्तु
 ॥ ९ ॥ बन्धध्वंसैकहेतुं शिरसि नतिरसावद्वसंध्याञ्जलीनां लोकानां
 ये प्रबोधं विदधति विपुलाम्भोजखण्डाशयेव । युष्माकं ते स्वचित्त-
 प्रथितपृथुतरप्रार्थनाकल्पवृक्षाः कल्पन्तां निर्विकल्पं दिनकरकिरणाः
 केतवः कल्मषस्य ॥ १० ॥ धारा रायो धनायापदि सपदि करालम्ब-
 भूताः प्रपाते तत्त्वालोकैकदीपास्त्रिदशपतिपुरप्रस्थितौ वीध्य एव ।
 निर्वाणोद्योगियोगिप्रगमनिजतनुद्वारि वेत्रायमाणास्त्रायन्तां तीव्र-
 भानोर्दिवसमुखसुखा रश्मयः कल्मषाद्वः ॥ ११ ॥ प्राचि प्रागा-
 चरन्त्योऽनतिचिरमचले चारुचूडामणित्वं मुञ्चन्त्यो रोचनाम्भः प्रचुर-
 मिव दिशामुच्चकैश्चर्चनाय । चादूतकैश्चक्रनाम्नां चतुरमविचलैर्लोच-
 नैरर्च्यमानाश्चेष्टन्तां चिन्तितानामुचितमचरमाश्चण्डरोचीरुचो वः
 ॥ १२ ॥ एकं ज्योतिर्दशौ द्वे त्रिजगति गदितान्यज्जजास्यैश्चतुर्भि-
 र्भूतानां पञ्चमं यान्यलमृतुषु तथा षट्सु नानाविधानि । युष्माकं
 तानि सप्तत्रिदशमुनिनुतान्यष्टदिग्भाजि भानोर्यान्ति प्राह्णे नवत्वं
 दश दधतु शिवं दीधितिनां शतानि ॥ १३ ॥ आवृत्तिभ्रान्त-
 विश्वाः श्रममिव दधतः शोषिणः स्वोष्मणेव ग्रीष्मे दावाभितप्ता
 इव रसमसकृद्ये धरित्र्या धयन्ति । ते प्रावृष्यात्तपानातिशयरुज
 इवोद्धान्ततोया हिमतौ मार्तण्डस्याप्रचण्डाश्चिरमशुभभिदेऽभीशवो
 वो भवन्तु ॥ १४ ॥ तन्वाना दिग्बधूनां समधिकमधुरालोक-
 रम्यामवस्थामारूढप्रौढिलेशो त्कलितकपिलिमालंकृतिः केवलैव ।
 उज्जृम्भाभोजनेत्रद्युतिनि दिनमुखे किञ्चिदुद्भिद्यमाना रश्मिश्रेणीव
 भासां दिशतु दशशती शर्म धर्मत्विषो वः ॥ १५ ॥ मौलीन्दो-
 मैष मोषीद्व्युतिमिति वृषभाङ्केन यः शङ्किनेव प्रत्यग्रोद्धाटिताम्भो-
 रुदकुहरगुहासुस्थितेनेव धात्रा । कृष्णेन ध्वान्तकृष्णस्वतनुपरि-

भवन्नस्नुनेव स्तुतोऽलं त्राणाय स्तात्तनीयानपि तिमिररिपोः स
 त्विषामुद्गमो वः ॥ १६ ॥ विस्तीर्णं व्योम दीर्घाः सपदि दश
 दिशो व्यस्तवेलाम्भसोऽब्धीन्कुर्वद्भिर्दृश्यनानानगनगरनगाभोगपृथ्वीं
 च पृथ्वीम् । पद्मिन्युच्छ्वास्यते यैरुपसि जगदपि ध्वंसयित्वा
 तमिस्रामुखा विस्त्रसयन्तु द्रुतमनसिमतं ते सहस्रत्विषो वः
 ॥ १७ ॥ अस्तव्यस्तत्वशून्यो निजरुचिरनिशानश्वरः कर्तुमीशो
 विश्वं वेशमेव दीपः प्रतिहततिमिरं यः प्रदेशस्थितोऽपि । दिक्का-
 लापेक्षयासौ त्रिभुवनमदतस्तिग्मभानोर्नवाख्यां यातः शातकृतव्यां
 दिशि दिशतु शिवं सोऽर्चिषामुद्गमो वः ॥ १८ ॥ मा गान्ध्यानि
 मृणालीमृदुरिति दययेवाप्रविष्टोऽहिलोकं लोकालोकस्य पार्श्वं
 प्रतपति न परं यस्तदाख्यार्थमेव । ऊर्ध्वं ब्रह्माण्डखण्डस्फुटनभय-
 परित्यक्तदैर्घ्यो द्युसीम्नि स्वेच्छावश्यावकाशावधिरवतु स वस्तापनो
 रोचिरोधः ॥ १९ ॥ अश्यामः काल एको न भवति भुवनान्तोऽपि
 वीतेऽन्धकारे सद्यः प्रालेयपादो न विलयमचलश्चन्द्रमा अप्युपैति ।
 बन्धः सिद्धाञ्जलीनां न हि कुमुदवनस्यापि यत्रोज्जिहाने तत्प्रातः
 प्रेक्षणीयं दिशतु दिनपतेर्धाम कामाधिकं वः ॥ २० ॥ यत्कान्तिं
 पङ्कजानां न हरति कुरुते प्रत्युताधिक्यरम्यां नो धत्ते तारकाभां
 तिरयति नितरामाशु यन्नित्यमेव । कर्तुं नालं निमेषं दिवसमपि परं
 यत्तदेकं त्रिलोक्याश्चक्षुः सामान्यचक्षुर्विसदृशमवभिज्ञास्वतस्तान्महो
 वः ॥ २१ ॥ क्ष्मां क्षेपीयः क्षमाम्भः शिशिरतरजलस्पर्शतर्षादतेव
 द्रागाशा नेतुमाशाद्विरदकरसरःपुष्कराणीव बोधम् । प्रातः प्रोलङ्घ्य
 विष्णोः पदमपि घृणयेवातिवेगाद्वीयस्युद्दामं द्योतमाना दहतु
 दिनपतेर्दुर्निमित्तं द्युतिर्वः ॥ २२ ॥ नो कल्पापायवायोरदयरथदलत्क्ष्मा-
 धरस्यापि गम्या गाढोद्गीर्णोज्ज्वलश्रीरहनि न रहिता नो तमःकज्जलेन ।

प्राप्नोत्पत्तिः पतङ्गान्न पुनरुपगता मोषमुष्णत्विवो वो वर्तिः
 सैवान्यरूपा सुखयतु निखिलद्वीपदीपस्य दीप्तिः ॥ २३ ॥
 निःशेषाशावपूरप्रवणगुरुगुणश्लाघनीयस्वरूपा पर्याप्तं नोदयादौ
 दिनगमसमयोपप्लवेऽप्युन्नतैव । अत्यन्तं यानभिज्ञा क्षणमपि तमसा
 साकमेकत्र वस्तुं ब्रह्मस्येद्वा रुचिर्वो रुचिरिव रुचितस्याप्तये
 वस्तुनोऽस्तु ॥ २४ ॥ विभ्राणः शक्तिमाशु प्रशमितबलवत्तारकौ-
 र्जित्यगुर्वो कुर्वाणो लीलयाधः शिखिनमपि लसच्चन्द्रकान्तावभासम् ।
 आदध्यादन्धकारे रतिमतिशयिनीमावहन्वीक्षणानां बालो लक्ष्मी-
 मपारामपर इव गुहोऽहर्षतेरातपो वः ॥ २५ ॥ ज्योत्स्नांशाकर्ष-
 पाण्डुद्युति तिमिरमपीशेषकलमाषमीषज्जृम्भोद्धृतेन पिङ्गं सरसिज-
 रजसा संध्यया शोणशोचिः । प्रातः प्रारम्भकाले सकलमपि जग-
 च्चित्रमुन्मीलयन्ती कान्तिस्तीक्ष्णत्विवोऽक्ष्णां मुदमुपनयतात्तूलि-
 केवातुलां वः ॥ २६ ॥ आयान्ती किं सुमेरोः सरणिररुणिता पाद्म-
 रागैः परागैराहोस्वित्स्वस्य माहारजनविरचिता वैजयन्ती रथस्य ।
 माज्जिष्ठी प्रष्टवाहावलिबिधुतशिरश्चामराली नु लोकैराशङ्कयालो-
 कितैवं सवितुरघनुदे स्तात्प्रभातप्रभावः ॥ २७ ॥ ध्वान्तध्वंसं
 विधत्ते न तपति रुचिमन्नातिरूपं व्यनक्ति न्यक्त्वं नीत्वापि नक्तं
 न वितरतितरां तावदहस्त्विवं यः । स प्रातर्मा विरंसीदसकल-
 पटिमा पूरयन्युष्मदाशामाशाकाशावकाशावतरणतरुणप्रक्रमोऽर्क-
 प्रकाशः ॥ २८ ॥ तीव्रं निर्वाणहेतुर्यदपि च विपुलं यत्प्रकर्षेण चाणु
 प्रत्यक्षं यत्परोक्षं यदिह यदपरं नश्वरं शाश्वतं च । यत्सर्वस्य प्रसिद्धं
 जगति कतिपये योगिनो यद्विदन्ति ज्योतिस्तद्विप्रकारं सवितुरवतु
 वो बाह्यमाभ्यन्तरं च ॥ २९ ॥ रत्नानां मण्डनाय प्रभवति नियतोद्देश-
 लब्धावकाशं बह्वेर्दावादि दग्धं निजजडिमतया कर्तुमानन्दमिन्दोः ।

यच्च त्रैलोक्यभूषाविधिरघदहनं ह्लादि वृष्ट्याशु तद्गो बाहुल्योत्पा-
द्यकार्याधिकतरमवतादेकमेवार्कतेजः ॥ ३० ॥ मीलच्चक्षुर्विजिह्व-
श्रुति जडरसनं निघ्नितघ्राणवृत्ति स्वव्यापाराक्षमत्वक्परिमुषितमनः
श्वासमात्रावशेषम् । विस्रस्ताङ्गं पतित्वा स्वपदपहरतादश्रियं वोऽर्क-
जन्मा कालव्यालावलीढं जगदगद इवोत्थापयन्प्राक्प्रतापः ॥ ३१ ॥
निःशेषं नैशमम्भः प्रसभमपनुदन्नश्रुलेशानुकारि स्तोकस्तोकापनीता-
रुणरुचिरचिरादस्तदोषानुषङ्गः । दाता दृष्टिं प्रसन्नां त्रिभुवन-
नयनस्याशु युष्मद्विरुद्धं वध्याद्रक्षस्य सिद्धाञ्जनविधिरपरः प्राक्त-
नोऽर्चिःप्रचारः ॥ ३२ ॥ भूत्वा जम्भस्य भेत्तुः ककुभि परिभवा-
रम्भभूः शुभ्रभानोर्विभ्राणा बभ्रुभावं प्रसभमभिनवाम्भोजजृम्भा-
प्रगल्भा । भूषा भूयिष्ठशोभा त्रिभुवनभवनस्यास्य वैभाकरी
प्राग्विभ्रान्ति भ्राजमाना विभवतु विभवोद्भूतये सा विभा वः
॥ ३३ ॥ संसक्तं सिक्तमूलादभिनवभुवनोद्यानकौतूहलिन्या
यामिन्या कन्ययेवामृतकरकलशावर्जितेनामृतेन । अर्कालोकः
क्रियाद्रो मुदमुदयशिरश्चक्रवालालवालादुद्यन् बालप्रवालप्रतिमरु-
चिरहः पादपप्राक्प्ररोहः ॥ ३४ ॥ भिन्नं भासारुणस्य
क्वचिदभिनवया विदुमाणां त्विषेव त्वङ्गन्नक्षत्ररत्नद्युतिनि-
करकरालान्तरालं क्वचिच्च । नान्तर्निःशेषकृष्णश्रियमुदधिमिव
ध्वान्तराशिं पिबन्स्तादौर्वः पूर्वोऽप्यपूर्वोऽग्निरिव भवदद्युष्टयेऽर्का-
वभासः ॥ ३५ ॥ गन्धवैर्गद्यपद्यव्यतिकरितवचोहृद्यमातोद्यवाद्यै-
राद्यैर्यो नारदाद्यैर्मुनिभिरभिनुतो वेदवेद्यैर्विभिद्य । आसाद्यापद्यते
यं पुनरपि च जगद्यौवनं सद्य उद्यद्बुद्ध्यतो द्योतितद्यौर्द्यतु
दिवसकृतोऽसाववद्यानि वोऽद्य ॥ ३६ ॥ आवानैश्चन्द्रकान्तैश्चयु-
ततिमिरतया तानवत्तारकाणामेणाङ्कालोकलोपादुपहतमहसामोषधीनां

लयेन । आरादुत्प्रेक्ष्यमाणा क्षणमुदयतटान्तर्हितस्याहिमांशोराभा
 प्राभातिकी वोऽवतु न तु नितरां तावदाविर्भवन्ती ॥ ३७ ॥ सानौ
 सा नौदये नारुणितदलपुनर्यौवनानां वनानामालीमालीढपूर्वा
 परिहृतकुहरोपान्तनिम्ना तनिम्ना । भा वोऽभावोपशान्तिं दिशतु
 दिनपतेर्भासमाना समाना राजी राजीवरेणोः समसमयमुदेतीव
 यस्या वयस्या ॥ ३८ ॥ उज्जृम्भाम्भोरुहाणां प्रभवति पयसां या
 श्रिये नोष्णतायै पुष्पात्यालोकमात्रं न तु दिशति दृशां दृश्यमाना
 विवातम् । पूर्वाद्रेरेव पूर्वं दिवमनु च पुनः पावनी दिङ्मुखाना-
 मेनांस्यैनी विभासौ बुदतु नुतिपदैकास्पदं प्राक्तनी वः ॥ ३९ ॥
 वाचां वाचस्पतेरप्यचलभिदुचिताचार्यकाणां प्रपञ्चैर्वैरञ्चानां तथो-
 चारितचतुरङ्गचां चाननानां चतुर्णाम् । उच्येतार्चासु वाच्यच्युति-
 शुचि चरितं तस्य नोच्चैर्विविच्य प्राच्यं वर्चश्चक्रासच्चिरमुपचिनु-
 तात्तस्य चण्डार्चिषो वः ॥ ४० ॥ मृर्ध्यद्रेर्धातुरागस्तस्वरुपे क्सिलयो
 विद्रुमौघः समुद्रे दिङ्मातङ्गोत्तमाङ्गेष्वभिनवविहितः सान्द्र-
 सिन्दूररेणुः । सीम्नि व्योम्नश्च हेम्नः सुरशिखरिभुवो जायते यः
 प्रकाशः शोणिम्नासौ खरांशोरुषसि दिशतु वः शर्म शोभैकदेशः
 ॥ ४१ ॥ अस्ताद्रीशोत्तमाङ्गे श्रितशशिनि तमःकालकूटे निपीते
 याति व्यक्तिं पुरस्तादरुणक्सिलये प्रत्युषःपारिजाते । उद्यन्त्यारक्त-
 पीताम्बरविशदतरोद्वीक्षिता तीक्ष्णभानोर्लक्ष्मीर्लक्ष्मीरिवास्तु स्फुट-
 कमलपुटापाश्रया श्रेयसे वः ॥ ४२ ॥ नोदन्वाङ्गन्मभूमिर्न तदु-
 दरभुवो बान्धवाः कौस्तुभाद्या यस्याः पद्मं न पाणौ न च नरक-
 रिपूःस्थली वासवेश्म । तेजोरूपापरैव त्रिषु भुवनतलेष्वादधाना
 व्यवस्थां सा श्रीः श्रेयांसि दिश्यादशिशिरमहसो मण्डलाग्नोद्गता
 वः ॥ ४३ ॥ रक्षन्वक्षुण्णहेमोपलपटलमलं लाघवादुत्पतन्तः

पातङ्गाः पङ्गववज्राजितपवनजवा वाजिनस्ते जगन्ति । येषां
वीतान्यचिह्नोन्नयमपि बहतां मार्गमाख्याति मेराबुच्चुद्दामदीप्ति-
र्द्युमणिमणिशिलावेदिकाजातवेदाः ॥ ४४ ॥ पुष्टाः पृष्ठेऽशुपातै-
रतिनिकटतया दत्तदाहातिरेकैरेकाहाक्रान्तकृत्स्नत्रिदिवपथपृथुश्वास-
शोषाः श्रमेण । तीव्रोदन्यास्त्वरन्तामहितविहतये सप्तयः सप्त-
सप्तेभ्याशाकाशगङ्गाजलसरलगलावाङ्गताग्रानना वः ॥ ४५ ॥
मत्त्वान्यान्पार्श्वतोऽश्वान्सफटिकतटदृष्टदृष्टदेहा द्रवन्ती व्यस्तेऽहन्यस्त-
संध्येयमिति मृदुपदा पद्मरागोपलेषु । सादृश्यादृश्यमूर्तिर्मरकत-
कटके क्लिष्टसूता समेरोर्मूर्धन्यावृत्तिलब्धध्रुवगतिरवतु ब्रह्मवाहा-
वलिर्वः ॥ ४६ ॥ हेलालोलं वहन्ती विषधरदमनस्याग्रजेनावकृष्टा
स्वर्वाहिन्याः सुदूरं जनितजवजया स्यन्दनस्य स्यदेन । निर्व्याजं
तायमाने हरितिमनि निजे स्फीतकेनाहितश्रीरश्रेयांस्यश्वपङ्क्तिः
शमयतु यमुनेवापरा तापनी वः ॥ ४७ ॥ मार्गोपान्ते सुमेरोर्नुवति
कृतनतौ नाकधानां निकाये वीक्ष्य व्रीडानतानां प्रतिकुहरमुखं
किंनरीणां मुखानि । सूतेऽसूयत्यपीपज्जडगति बहतां कंधराधैर्धल-
द्विर्वाहानां व्यस्यताद्वः सममसमहरेर्हेषितं कल्मषाणि ॥ ४८ ॥
धुन्वन्तो नीरदालीर्निजरुचिहरिताः पार्श्वयोः पक्षतुल्यास्ताल-
त्तानैः खलीनैः खचितमुखरुचश्च्योतता लोहितेन । उड्डीयेव
व्रजन्तो वियति गतिवशादर्कवाहाः क्रियासुः क्षेमं हेमाद्रिहृद्य-
द्रुमशिखरशिरःश्रेणिशाखाशुका वः ॥ ४९ ॥ प्रातःशैलाग्ररङ्गे
रजनिजवनिकापायसलक्ष्यलक्ष्मीर्विक्षिप्यापूर्वपुष्पाञ्जलिमुडुनिकरं सूत्र-
धारायमाणः । यामेव्वङ्केष्विव्राह्मः कृतरुचिषु चतुर्ष्वेव जात-
प्रतिष्ठामव्यात्प्रस्तावयन्वो जगदटनमहानाटिकां सूर्यसूतः ॥ ५० ॥
आक्रान्त्या बाह्यमानं पशुमिव हरिणा बाहकोऽय्यो हरीण

आम्यन्तं पक्षपाताज्जगति समरुचिः सर्वकर्मैकसाक्षी । शत्रुं
 नेत्रश्रुतीनामवजयति वयोज्येष्टभावे समेऽपि स्थान्नां धान्नां निधिर्यः
 स भवदधनुदे नूतनः स्तादनूरुः ॥ ५१ ॥ दत्तावैर्दूरनम्रैर्वियति
 विनयतो वीक्षितः सिद्धसायैः सानाथ्यं सारथिर्वः स दशशतरुचेः
 सातिरेकं करोतु । आपीय प्रातरेव प्रततहिमपयःस्यन्दिनीरिन्दुभासो
 यः काष्ठादीपनोऽग्रे जडित इव भृशं सेवते पृष्ठतोऽर्कम् ॥ ५२ ॥
 मुञ्चन् रश्मीन्दिनादौ दिनगमसमये संहरंश्च स्वतन्त्रस्तोत्रप्रख्यातवीर्यो-
 ऽविरतहरिपदाक्रान्तिवद्वाभियोगः । कालोत्कर्षाल्लघुत्वं प्रसभमधि-
 पतौ योजयन्त्यो द्विजानां सेवाप्रीतेन पूष्णात्मसम इव कृतस्त्रायतां
 सोऽरुणो वः ॥ ५३ ॥ शातः श्यामालतायाः परशुरिव तमोऽरण्य-
 वह्नेरिवार्चिः प्राच्येवाग्रे ग्रहीतुं ग्रहकुमुदवनं प्रागुदस्तोऽग्रहस्तः ।
 ऐक्यं भिन्दन्धुभूम्योरवधिरिव विधातेव विश्वप्रबोधं वाहानां वो
 विनेता व्यपनयतु विपन्नाम धामाधिपस्य ॥ ५४ ॥ पौरस्त्यस्तोयदर्तोः
 पवन इव पतत्पावकस्येव धूमो विश्वस्येवादिसर्गः प्रणव इव परं
 पावनो वेदराशेः । संध्यानृत्योत्सवेच्छोरिव मदनरिपोर्नन्दिनान्दी-
 निनादः सौरस्याग्रे सुखं वो वितरतु विनतानन्दनः स्यन्दनस्य ॥ ५५ ॥
 पर्याप्तं तप्तचामीकरकटकटे श्लिष्टशीतेतरांशावासीदत्स्यन्दना-
 श्वानुकृतिमरकते पद्मरागायमाणः । यः सोत्कर्षां विभूषां कुरुत
 इव कुलक्षमाभृदीशस्य मेरोरेनांस्यह्नाय दूरं गमयतु स गुरुः काद्रवेय-
 द्विषो वः ॥ ५६ ॥ नीत्वाऽश्वान्सप्त कक्षा इव नियमवशं चेन्नक-
 ल्पप्रतोदस्तूर्ण ध्वान्तस्य राशावितरजन इवोत्सारिते दूरभाजि ।
 पूर्वं प्रष्टो रथस्य क्षितिभृदधिपतीन्दर्शयन्स्त्रायतां वस्त्रैलोक्यास्थान-
 दानोद्यतदिवसपतेः प्राक्प्रतीहारपालः ॥ ५७ ॥ वज्रिज्जातं विकासी-
 क्षणकमलवनं भासि नाभासि वह्ने तातं नत्वाश्वपार्श्वान्नय यम्

महिषं राक्षसा वीक्षिताः स्थ । सप्तीन्सिञ्च प्रचेतः पवन भज जवं
वित्तपावेदितस्त्वं वन्दे शर्वेति जल्पन्प्रतिदिशमधिपान्पातु पूष्णो-
ऽग्रणीर्वः ॥ ५८ ॥ पाशानाशान्तपालादरुण वरुणतो मा ग्रहीः
प्रग्रहार्थं तृष्णां कृष्णस्य चक्रे जहिहि नहि रथो याति मे नैकचक्रः ।
योक्तुं युग्यं किमुच्चैःश्रवसमभिलषस्यष्टमं वृत्रशत्रोस्त्यक्तान्यापेक्ष-
विश्वोपकृतिरिति रविः शास्ति यं सोऽवताद्वः ॥ ५९ ॥ नो मूर्च्छा-
ल्लिन्नवान्छः श्रमविवशवपुनैव नाप्यास्यशोषी पान्थः पथ्येतराणि
क्षपयतु भवतां भास्वतोऽग्रेसरः सः । यः संश्रित्य त्रिलोकीमटति
पटुतरैस्ताप्यमानो मयूखैरारादारामलेखामिव हरितमणिश्यामलाम-
श्वपङ्क्तिम् ॥ ६० ॥ सीदन्तोऽन्तर्निमज्जज्जडखुरमुसलाः सैकते
नाकनद्याः स्कन्दन्तः कंदरालीः कनकशिखरिणो मेखलासु
स्खलन्तः । दूरं दूर्वास्थलोत्का मरकतदृषदि स्थास्त्वो यन्न याताः
पूष्णोऽश्वाः पूरयंस्तैस्तदवतु जवनैर्हुंकृतेनाग्रगो वः ॥ ६१ ॥
पीनोरःप्रेरिताभ्रैश्चरमखुरपुटाग्रस्थितैः प्रातरद्रावादीर्घाङ्गैरुदस्तो हरि-
भिरपगतासङ्गनिःशब्दचक्रः । उत्तानानूरूमूर्धावनतिहठभवद्विप्रतीप-
प्रणामः प्राह्ले श्रेयो विधत्तां सवितुरवतरन्व्योमवीथीं रथो वः
॥ ६२ ॥ ध्वान्तौघध्वंसदीक्षाविधिपटु वहता प्राक्सहस्रं करणा-
मर्यम्णा यो गरिम्णः पदमतुलमुपानीयताध्यासनेन । स श्रान्तानां
नितान्तं भरमिव मरुतामक्षमाणां विसोढुं स्कन्धात्स्कन्धं व्रजन्वो
वृजिनविजितये भास्वतः स्यन्दनोऽस्तु ॥ ६३ ॥ योक्त्रीभूतान्युगस्य
असितुमिव पुरो दन्दशूकान्दधानो द्वेधाव्यस्ताम्बुवाहावलिबिहित-
बृहत्पक्षविक्षेपशोभः । सावित्रः स्यन्दनोऽसौ निरतिशयरयप्रीणिता-
नूरुरेनःक्षेपीयो वो गरुत्मानिव हरतु हरीच्छाविधेयप्रचारः ॥ ६४ ॥
एकाहेनैव दीर्घा त्रिभुवनपदवीं लङ्घयन् यो लघिष्ठः पृष्ठे मेरोर्गरी-

यान्दलितमणिदृष्टिर्विपि पिंपन् शिरांसि । सर्वस्यैवोपरिष्ठादथ च
 पुनरधस्तादिवास्ताद्रिमूर्ध्नि ब्रह्मस्याव्यात्स एवं दुरधिगमपरिस्पन्दनः
 स्यन्दनो वः ॥ ६५ ॥ धूर्ध्वस्ताग्र्यग्रहाणि ध्वजपटपवनान्दोलि-
 तेन्दूनि दूरं राहौ ग्रासाभिलाषादनुरति पुनर्दत्तचक्रन्यथानि ।
 श्रान्ताश्चश्वासहेलाधुतविबुधधुनीनिर्झराम्भांसि भद्रं देयासुर्वो दवीयो
 दिवि दिवसपतेः स्यन्दनप्रस्थितानि ॥ ६६ ॥ अक्षे रक्षां निबध्य
 प्रतिसरवलयैर्योजयन्त्यो युगाग्रं धूःस्तम्भे दग्धधूपाः प्रहितसुमनसो
 गोचरे कूबरस्य । चर्चाश्चक्रे चरन्त्यो मलयजपयसा सिद्धवध्व-
 स्त्रिसंध्यं वन्दन्ते यं द्युमार्गे स नुदतु दुरितान्यंशुमत्स्यन्दनो वः
 ॥ ६७ ॥ उत्कीर्णस्वर्णरेणुद्रुतखुरदलिता पार्श्वयोः शश्वदश्वैरश्रान्त-
 श्रान्तचक्रक्रमनिखिलमिलन्नेमिनिम्ना भरेण । मेरोर्मूर्धन्यघं वो
 विघटयतु रवेरेकवीथी रथस्य स्वोष्मोदक्ताम्बुरिक्तप्रकटितपुलिनो-
 द्भूसरा स्वर्धुनीव ॥ ६८ ॥ नन्तुं नाकालयानामनिशमनुयतां पद्धतिः
 पङ्क्तिरेव क्षोदो नक्षत्रराशेरदयरयमिलच्चक्रपिष्टस्य धूलिः । हेषाहादो
 हरीणां सुरशिखरिदरीः पूरयन्नेमिनादो यस्याव्यात्तीव्रभानोः स दिवि
 भुवि यथा व्यक्तचिह्नोरथो वः ॥ ६९ ॥ निःस्पन्दानां विमानावलि-
 विततदिवां देववृन्दारकाणां वृन्दैरानन्दसान्द्रोद्यममपि वहतां
 विन्दतां वन्दितुं नो । मन्दाकिन्याममन्दः पुलिनभृति मृदुर्मन्दरे
 मन्दिराभे मन्दारैर्मण्डितारं दधदरि दिनकृतस्यन्दनः स्तान्मुदे वः
 ॥ ७० ॥ चक्री चक्रारपङ्क्तिं हरिरपि च हरीन्धूर्जटिर्धूर्ध्वजान्तानक्षं
 नक्षत्रनाथोऽरुणमपि वरुणः कूबराग्रं कुबेरः । रंहः संघः सुराणां
 जगदुपकृतये नित्ययुक्तस्य यस्य स्तौति प्रीतिप्रसन्नोऽन्वहमहिमरुचेः
 सोऽवतात्स्यन्दनो वः ॥ ७१ ॥ नेत्राहीनेन मूले विहितपरिकरः
 सिद्धसाध्यैर्मरुद्भिः पादोपान्ते स्तुतोऽलं बलिहरिरभसा कर्षणा-

बद्धवेगः । आस्यन्व्योमाम्बुराशावशिशिरकिरणस्यन्दनः संततं वो
 दिश्यालक्ष्मीमपारामतुलितमहिमेवापरो मन्दराद्रिः ॥ ७२ ॥
 यज्जयायो बीजमहामपहततिमिरं चक्षुषामञ्जनं यद्वारं यन्मुक्तिभाजां
 यदखिलभुवनज्योतिषामेकमोकः । यद्वृष्ट्यम्भोनिधानं धरणिरससुधा-
 पानपानं महद्यदिश्यादीशस्य भासां तदविकलमलं मङ्गलं मण्डलं
 वः ॥ ७३ ॥ वेलावर्धिष्णु सिन्धोः पय इव खमिवार्धोद्गताग्र-
 ग्रहोडु स्तोकोद्भिन्नस्य चिह्नप्रसवमिव मधोरास्यमस्यन्मनांसि । प्रातः
 पूष्णोऽशुभानि प्रशमयतु शिरःशेखरीभूतमद्रेः पौरस्त्यस्योद्गमस्ति-
 स्तिमिततमतमःखण्डलं मण्डलं वः ॥ ७४ ॥ प्रत्युस्तस्तहेमोज्ज्वल-
 रुचिरचलः पद्मरागेण येन ज्यायः किञ्जलकपुञ्जो यदलिकुल-
 शितेरम्बरेन्दीवरस्य । कालव्यालस्य चिह्नं महिततममहोमूर्ध्नि
 रत्नं महद्यदीप्तांशोः प्रातरव्यातदविकलजगन्मण्डनं मण्डलं वः
 ॥ ७५ ॥ कस्मात्ता तारकाणां पतति तनुरवश्यायविन्दुर्यथेन्दु-
 विद्राणा द्दक्सरारैरुरसि मुररिपोः कौस्तुभो नोद्गमस्तिः ।
 वह्नेः सापह्नवेव द्युतिरुदयगते यत्र तन्मण्डलं वो मार्तण्डीयं
 पुनीतादिवि भुवि च तमांसीव मुष्णन्महांसि ॥ ७६ ॥
 यत्प्राच्यां प्राक्चकास्ति प्रभवति च यतः प्राच्यसावुज्जिहानादिद्वं
 मध्ये यदहो भवति ततरुचा येन चोत्पाद्यतेऽहः । यत्पर्यायेण
 लोकानवति च जगतां जीवितं यच्च तद्वो विश्वानुग्राहि विश्वं
 सृजदपि च रवेर्मण्डलं मुक्तयेऽस्तु ॥ ७७ ॥ शुष्यन्त्यूढानुकारा
 मकरवसतयो मारवीणां स्थलीनां येनोत्तप्ताः स्फुटन्तस्तडिति
 तिलतुलां यान्त्यगेन्द्रा युगान्ते । तच्चण्डांशोरकाण्डत्रिभुवनदहना-
 शङ्कया धाम कृच्छ्रात्संहत्यालोकमात्रं प्रलघु विदधतः स्तान्मुदे

मण्डलं वः ॥ ७८ ॥ उच्चद्व्यूद्यानवाप्यां बहुलतमतमःपङ्कपूरं
विदार्य प्रोद्भिन्नं पत्रपार्श्वेष्वविरलमरुणच्छायया विस्फुरन्त्या ।
कल्याणानि क्रियाद्वः कमलमिव महन्मण्डलं चण्डभानोरन्वीतं
तृप्तिहेतोरसकृदलिकुलाकारिणा राहुणा यत् ॥ ७९ ॥ चक्षुर्दक्ष-
द्विपो यन्न तु दहति पुरः पूरयत्येव कामं नास्तं जुष्टं मरुद्भिर्यदिह
नियमिनां यानपात्रं भवाब्धौ । यद्वीतश्रान्ति शश्वद्धमदपि जगतां
भ्रान्तिमभ्रान्ति ब्रह्मस्याव्याद्विरुद्धक्रियमथ च हिताधायि तन्मण्डलं
वः ॥ ८० ॥ सिद्धैः सिद्धान्तमिश्रं श्रितविधि विबुधैश्चारणैश्चादुगर्भं
गीत्या गन्धर्वमुख्यैर्मुहुरहिपतिभिर्यातुधानैर्यतात्म । सार्व साध्यैर्मुनी-
न्द्रैर्मुदिततममनो मोक्षिभिः पक्षपातात्प्रातः प्रारभ्यमाणस्तुतिरवतु
रविर्विश्ववन्द्योदयो वः ॥ ८१ ॥ भासामासन्नभावादधिकतरपटोश्चक्र-
वालस्य तापाच्छेदादच्छिन्नगच्छतुरगखुरपुटन्यासनिःशङ्कतङ्कैः । निःसङ्ग-
स्यन्दनाङ्गभ्रमणनिकषणात्पातु वस्त्रिप्रकारं तसांशुस्तपरीक्षापर इव
परितः पर्यटन्हाटकाद्रिम् ॥ ८२ ॥ नो शुष्कं नाकनद्या विकसित-
कनकाभोजया भ्राजितं तु पुष्टा नैवोपभोग्या भवति भृशतरं नन्दनो-
द्यानलक्ष्मीः । नो शृङ्गाणि द्रुतानि द्रुतममरगिरेः कालधौतानि धौता-
नीदं धाम द्युसार्गे अदयति दयया यत्र सोऽर्कोऽवताद्वः ॥ ८३ ॥
ध्वान्तस्यैवान्तहेतुर्न भवति मलिनैकात्मनः पाप्मनोऽपि प्राक्पादो-
पान्तभाजां जनयति न परं पङ्कजानां प्रबोधम् । कर्ता निःश्रेय-
सानामपि न तु खलु यः केवलं वासराणां सोऽव्यादेकोद्यमेच्छा-
विहितबहुबृहद्विश्वकार्योऽर्यमा वः ॥ ८४ ॥ लोटल्लोष्टाविचेष्टः
श्रितशयनतलो निःसहीभूतदेहः संदेही प्राणितव्ये सपदि दश दिशः
प्रेक्षमाणोऽन्धकाराः । निःश्वासायासनिष्ठः परमपरवशो जायते जीव-
लोकः शोकेनेवान्यलोकानुदयकृति गते यत्र सोऽर्कोऽवताद्वः ॥ ८५ ॥

कामलोलोऽपि लोकाँस्तदुपकृतिकृतावाश्रितः स्थैर्यकोटिं नृणां दृष्टिं
 विजिह्वां विदधदपि करोत्यन्तरत्यन्तभद्राम् । यस्तापस्यापि हेतुर्भवति
 नियमिनामेकनिर्वाणदायी भूयात्स प्रागवस्थाधिकतरपरिणामोद-
 योऽर्कः श्रिये वः ॥ ८६ ॥ व्यापन्नर्तुर्न कालो व्यभिचरति फलं
 नौषधीर्वृष्टिरिष्टा नेष्टैस्तृप्यन्ति देवा नहि वहति मरुन्निर्मलाभानि
 भानि । आशाः शान्ता न भिन्दत्यवधिमुदधयो बिभ्रति क्षमाभृतः
 क्षमां यस्मिँस्त्रैलोक्यमेवं न चलति तपति स्तात्स सूर्यः श्रिये वः ॥ ८७ ॥
 कैलासे कृत्तिवासा विहरति विरहत्रासदेहोढकान्तः श्रान्तः शेते
 महाहावधिजलधि विना छद्मना पद्मनाभः । योगोद्योगैकतानो गमयति
 सकलं वासरं स्वं स्वयंभूर्भूरित्रैलोक्यचिन्ताभृति भुवनविभौ यत्र
 भास्वन्स वोऽव्यात् ॥ ८८ ॥ एतद्यन्मण्डलं खे तपति दिनकृतस्ता
 ऋचोऽर्चीषि यानि द्योतन्ते तानि सामान्ययमपि पुरुषो मण्डलेऽणु-
 र्यजूंषि । एवं यं वेद वेदत्रितयमयमयं वेदवेदी समग्रो वर्गः
 स्वर्गापवर्गप्रकृतिरधिकृतिः सोऽस्तु सूर्यः श्रिये वः ॥ ८९ ॥ नाकौकः
 प्रत्यनीकक्षतिपटुमहसां वासवाग्रेसराणां सर्वेषां साधु पातां जगदिदम-
 दितेरात्मजत्वे समेऽपि । येनादित्याभिधानं निरतिशयगुणैरात्मनि
 न्यस्तमस्तु स्तुत्यस्त्रैलोक्यवन्द्यैस्त्रिदशमुनिगणैः सोऽशुमान् श्रेयसे वः
 ॥ ९० ॥ भूमिं धाम्नोऽभिवृष्ट्या जगति जलमयीं पावनीं संस्मृताव-
 प्याग्नेयीं दाहशक्त्या मुहुरपि यजमानां यथाप्रार्थितायैः । लीनामाकाश
 एवामृतकरघटितां ध्वान्तपक्षस्य पर्वण्येवं सूर्योऽष्टभेदां भव इव
 भवतः पातु बिभ्रत्स्वमूर्तिम् ॥ ९१ ॥ प्राक्कालोन्निद्रपद्माकरपरिमल-
 नाविर्भवत्पादशोभो भक्त्यात्यक्तोरुखेदोद्गति दिवि विनतासूनुना
 नीयमानः । सप्ताश्चाप्तापरान्तान्यधिकमधरयन् यो जगन्ति स्तुतोऽलं
 देवैर्देवः स पायादपर इव मुरारादिरह्णांपतिर्वः ॥ ९२ ॥ यः स्रष्टाऽपां

पुरस्तादचलवरसमभ्युन्नतेर्हेतुरेको लोकानां यस्त्रयाणां स्थित उपरि
 परं दुर्विलङ्घ्येन धाम्ना । सद्यःसिद्ध्यै प्रसन्नद्युतिशुभचतुराशामुखः
 स्ताद्विभक्तो द्वेधा वेधा इवाविष्कृतकमलरुचिः सोऽर्चिषामाकरो वः
 ॥ ९३ ॥ साद्रिद्यूर्वादिनादिश दिशति दश दिशो दर्शयन्प्राग्दशो यः
 सादृश्यं दृश्यते नो सदशशतदृशि त्रैदशे यस्य देशे । दीप्तांशुर्वः स
 दिश्यादशिवयुगदशादर्शितद्वादशात्मा संशास्त्यश्वांश्च यस्याशयविदति-
 शयाद्वन्दूकाशनाद्यः ॥ ९४ ॥ तीर्थानि व्यर्थकानि हृदनदसरसीनिर्झ-
 रामभोजिनीनां नोदन्वन्तो नुदन्ति प्रतिभयमशुभं श्वभ्रपाता-
 नुवन्धि । आपो नाकापगाया अपि कलुषमुषो मज्जतां नैव यत्र
 त्रातुं यातेऽन्यलोकान्स दिशतु दिवसस्यैकहेतुर्हितं वः ॥ ९५ ॥ एत-
 त्पातालपङ्कजुतमिव तमसैवैकमुद्राढमासीदप्रज्ञाताप्रतर्क्य निरवगति
 तथाऽलक्षणं सुप्तमन्तः । यादृक्सृष्टेः पुरस्तान्निशि निशि सकलं जायते
 तादृगेव त्रैलोक्यं यद्वियोगादवतु रविरसौ सर्गतुल्योदयो वः ॥ ९६ ॥
 द्वीपे योऽस्ताचलोऽस्मिन्भवति खलु स एवापरत्रोदयाद्विर्या यामिन्यु-
 ज्वलेन्दुद्युतिरिह दिवसोऽन्यत्र तीव्रातपः सः । यद्वश्यौ देशकालाविति
 नियमयतो नो तु यं देशकालावव्यात्स स्वप्रभुत्वाहितभुवनहितो
 हेतुरह्नामिनो वा ॥ ९७ ॥ व्यग्रैरग्न्यग्रहेन्दुग्रसनगुरु भरैर्नो समग्रैरुदग्रै-
 प्रत्यग्रैरीषदुग्रैरुदयगिरिगतो गोगणैर्गौरयन्गाम् । उद्राढार्चिर्विलीनामः
 रनगरनग्रावगर्भामिवाह्मामग्रे श्रेयो विधत्ते ग्लपयतु गहनं स ग्रहग्रा-
 मणीर्वः ॥ ९८ ॥ योनिः सान्नां विधाता मधुरिपुरजितो धूर्जटिः
 शंकरोऽसौ मृत्युः कालोऽलकायाः पतिरपि धनदः पावको जातवेदाः ।
 इत्थं संज्ञा उवित्थादिवदमृतभुजां या यदृच्छापवृत्तास्तासामेकोऽभि-
 धेयस्तदनुगुणगुणैर्यः स सूर्योऽवताद्वः ॥ ९९ ॥ देवः किं बान्धवः
 स्यात्प्रियसुहृदथवाचार्य आहोस्विदर्यो रक्षा चक्षुर्नु दीपो गुरुस्त जनको

जीवितं बीजमोजः । एवं निर्णीयते यः क इव न जगतां सर्वथा सर्व-
दाऽसौ सर्वाकारोपकारी दिशतु दशशताभीषुरभ्यर्थितं वः ॥ १०० ॥
श्लोका लोकस्य भूत्यै शतमिति रचिताः श्रीमयूरेण भक्त्या युक्तश्चैतान्
पठेद्यः सकृदपि पुरुषः सर्वपापैर्विमुक्तः । आरोग्यं सत्कवित्वं मतिमतु-
लबलं कान्तिमायुःप्रकर्षं विद्यामैश्वर्यमर्थं सुतमपि लभते सोऽत्र
सूर्यप्रसादात् ॥ १०१ ॥ इति श्रीमयूरकविरचितं सूर्यशतकं संपूर्णम् ॥

४१७. सूर्यार्यास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शुकतुण्डच्छवि सवितुश्चन्द्ररुचेः पुण्डरीकवन-
बन्धोः । मण्डलमुदितं वंदे कुण्डलमाखण्डलाशयाः ॥ १ ॥ यस्योद-
यास्तसमये सुरमुकुटनिघृष्टचरणकमलोऽपि । कुरुतेऽञ्जलिं त्रिनेत्रः स
जयति धाम्नां निधिः सूर्यः ॥ २ ॥ उदयाचलतिलकाय प्रणतोऽस्मि
विवस्वते ग्रहेशाय । अंबरचूडामणये दिग्वनिताकर्णपूराय ॥ ३ ॥
जयति जनानंदकरः करनिकरनिरस्ततिमिरसंघातः । लोकालोकालोकः
कमलारुणमण्डलः सूर्यः ॥ ४ ॥ प्रतिबोधितकमलवनः कृतघटनश्चक्र-
वाकमिथुनानाम् । दर्शितसमस्तभुवनः परहितनिरतो रविः सदा
जयति ॥ ५ ॥ अपनयतु सकलकलिकृतमलपटलं सुप्रतप्तकनकाभः ।
अरविंदवृंदविघटनपटुतरकिरणोत्करः सविता ॥ ६ ॥ उदयाद्रिचारुचा-
मरहरितहयखुरपरिहितरेणुराग । हरितहय हरितपरिकर गगनांगनदीपक
नमस्ते ॥ ७ ॥ उदितवति त्वयि विकसति मुकुलीयति समस्तमस्तमित-
बिंबे । न ह्यन्यस्मिन्दिनकर सकलं कमलायते भुवनम् ॥ ८ ॥ जयति
रविरुदयसमये बालातपः कनकसंनिभो यस्य । कुसुमांजलिरिव
जलधौ तरन्ति रथसप्तयः सप्त ॥ ९ ॥ आर्याः सांबुपुरे सप्त आकाशा-
त्पतिता भुवि । यस्य कंठे गृहे वापि न स लक्ष्म्या वियुज्यते ॥ १० ॥
आर्याः सप्त सदा यस्तु सप्तम्यां सप्तधा जपेत् । तस्य गोहं च देहं च

पद्मा सत्यं न मुंचति ॥ ११ ॥ निधिरेष दरिद्राणां रोगिणां परमौषधम् ।
सिद्धिः सकलकार्याणां गाथेयं संस्मृता रवेः ॥ १२ ॥ इति
श्रीयाज्ञवल्क्यविरचितं सूर्यार्यास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

४१८. सूर्याष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ साम्ब उवाच ॥ आदिदेव नमस्तुभ्यं प्रसीद
मम भास्कर । दिवाकर नमस्तुभ्यं प्रभाकर नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥
सप्ताश्वरथमारूढं प्रचण्डं कश्यपात्मजम् । श्वेतपद्मधरं देवं तं सूर्यं
प्रणमाम्यहम् ॥ २ ॥ लोहितं रथमारूढं सर्वलोकपितामहम् ।
महापापहरं देवं तं सूर्यं ॥ ३ ॥ त्रैगुण्यं च महाशूरं ब्रह्माविष्णुमहे-
श्वरम् । महापापहरं देवं तं सूर्यं ॥ ४ ॥ वृंहितं तेजःपुंजं च वायुमा-
काशमेव च । प्रभुं च सर्वलोकानां तं सूर्यं ॥ ५ ॥ बंधूकपुष्पसंकाशं
हारकुंडलभूषितम् । एकचक्रधरं देवं तं सूर्यं ॥ ६ ॥ तं सूर्यं जगत्क-
र्तारं महातेजःप्रदीपनम् । महापापहरं देवं तं सूर्यं ॥ ७ ॥ तं सूर्यं
जगतां नाथं ज्ञानविज्ञानमोक्षदम् । महापापहरं देवं तं सूर्यं ॥ ८ ॥
सूर्याष्टकं पठेन्नित्यं ग्रहपीडाप्रणाशनम् । अपुत्रो लभते पुत्रं दरिद्रो
धनवान्भवेत् ॥ ९ ॥ आमिषं मधुपानं च यः करोति रवेर्दिने ।
सप्तजन्म भवेद्दोगी प्रतिजन्म दरिद्रता ॥ १० ॥ स्त्रीतैलमधुमांसानि
यस्यजेत्तु रवेर्दिने । न व्याधिः शोकदारिद्र्यं सूर्यलोकं स गच्छति
॥ ११ ॥ इति श्रीसूर्याष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

४१९. साम्बपञ्चाशिका ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शब्दार्थत्वविवर्तमानपरमज्योतीरुचो गोपते-
रुद्गीथोऽभ्युदितः पुरोऽरुणतया यस्य त्रयीमण्डलम् । भाव्यद्वर्णपदक्रमे-

रिततमः सप्तस्वराश्चैर्वियद्विद्यास्यन्दनमुन्नयन्निव नमस्तस्मै परब्रह्मणे
 ॥ १ ॥ ओमित्यन्तर्नदति नियतं यः प्रतिप्राणि शब्दो वाणी यस्मात्प्र-
 सरति पराशब्दतन्मात्रगर्भा । प्राणापानौ वहति च समौ यो मिथो
 ग्राससक्तौ देहस्थं तं सपदि परमादित्यमाद्यं प्रपद्ये ॥ २ ॥
 यस्त्वक्चक्षुःश्रवणरसनाघ्राणपाण्यद्विवाणीपायूपस्थस्थितिरपि मनो-
 बुद्ध्यहंकारमूर्तिः । तिष्ठत्यन्तर्बहिरपि जगद्भासयन्द्वादशात्मा मार्तेण्डं
 तं सकलकरणाधारमेकं प्रपद्ये ॥ ३ ॥ या सा मित्रावरुणसदनादुच्चरन्ती
 त्रिषष्टिं वर्णानत्र प्रकटकरणैः प्राणसङ्गात्प्रसूतान् । तां पश्यन्तीं प्रथम-
 मुदितां मध्यमां बुद्धिसंस्थां वाचं वक्त्रे करणविशदां वैखरीं च प्रपद्ये
 ॥ ४ ॥ ऊर्ध्वाधःस्थान्यतनुभुवनान्यन्तरा संनिविष्टा नानानाडिप्रसव-
 गहना सर्वभूतान्तरस्था । प्राणापानप्रसननिरतैः प्राप्यते ब्रह्मनाडी सा
 नः श्वेता भवतु परमादित्यमूर्तिः प्रसन्ना ॥ ५ ॥ न ब्रह्माण्डव्यवहितपथा
 नातिशीतोष्णरूपा नो वा नक्तं दिवगममिताऽतापनीयापराहुः । वैकु-
 ण्ठीया तनुरिव रवे राजते मण्डलस्था सा नः श्वेता भवतु परमा-
 दित्यमूर्तिः प्रसन्ना ॥ ६ ॥ यत्रारूढं त्रिगुणवपुषि ब्रह्म तद्विन्दुरूपं
 योगीन्द्राणां यदपि परमं भाति निर्वाणमार्गः । त्रय्याधारः प्रणव
 इति यन्मण्डलं चण्डरश्मेरन्तःसूक्ष्मं बहिरपि बृहन्मुक्तयेऽहं प्रपन्नः
 ॥ ७ ॥ यस्मिन्सोमः सुरपितृनरैरन्वहं पीयमानः क्षीणः क्षीणः
 प्रविशति यतो वर्धते चापि भूयः । यस्मिन्वेदा मधुनि सरघाकार-
 पद्मान्ति चाग्रे तच्चण्डांशोरमितममृतं मण्डलस्थं प्रपद्ये ॥ ८ ॥
 ऐन्द्रीमाशां पृथुकवपुषा पूरयित्वा क्रमेण क्रान्ताः सप्त प्रकटहरिणा
 येन पादेन लोकाः । कृत्वा ध्वान्तं विगलितबलिव्यक्ति पाताललीनं
 विश्वालोकाः स जयति रविः सत्त्वमेवोर्ध्वरश्मिः ॥ ९ ॥ ध्यात्वा
 ब्रह्म प्रथममतनु प्राणमूले नदन्तं दृष्ट्वा चान्तः प्रणवमुखरं व्याहृतीः

सम्यगुक्त्वा । यत्तद्वेदे तदिति सवितुर्व्रह्मणोक्तं वरेण्यं तद्गर्गाख्यं
किमपि परमं धामगर्भं प्रपद्ये ॥ १० ॥ त्वां स्तोष्यामि स्तुतिभि-
रिति मे यस्तु भेदग्रहोऽयं सैवाविद्या तदपि सुतरां तद्विनाशाय
युक्तः । स्तौम्येवाहं त्रिविधमुदितं स्थूलसूक्ष्मं परं वा विद्योपायः
पर इति बुधैर्गीयते खल्वविद्या ॥ ११ ॥ योऽनाद्यन्तोऽप्यतनुरगुणो-
ऽणोरणीयान्महीयान्विश्वाकारः सगुण इति वा कल्पनाकल्पिताङ्गः ।
नानाभूतप्रकृतिविकृतीर्दर्शयन् भाति यो वा तस्मै तस्मै भवतु परमादित्य
नित्यं नमस्ते ॥ १२ ॥ तत्त्वाख्याने त्वयि मुनिजना नेति नेति
ब्रुवन्तः श्रान्ताः सम्यक्त्वमिति न च तैरीदृशो वेति चोक्तः ।
तस्मान्नुभ्यं नम इति वचोमात्रमेवास्मि वच्मि प्रायो यस्मात्प्रसरतितरां
भारती ज्ञानगर्भा ॥ १३ ॥ सर्वाङ्गीणः सकलवपुषामन्तरे योऽन्तरात्मा
तिष्ठन्काष्ठे दहन इव नो दृश्यसे युक्तिशून्यैः । यश्च प्राणारणिषु
नियतैर्मथ्यमानासु सद्भिर्दृश्यं ज्योतिर्भवसि परमादित्य तस्मै नमस्ते
॥ १४ ॥ स्तोता स्तुत्यः स्तुतिरिति भवान् कर्तृकर्मक्रियात्मा क्रीडत्येक-
स्तत्र नुतिविधावस्वतन्त्रस्ततोऽहम् । यद्वा वच्मि प्रणयसुभगं गोपते
तच्च तथ्यं त्वत्तो ह्यन्यत्किमिव जगतां विद्यते तन्मृषा स्यात्
॥ १५ ॥ ज्ञानं नान्तःकरणरहितं विद्यतेऽस्मद्विधानां त्वं चालयन्तं
सकलकरणागोचरत्वादचिन्त्यः । ध्यानातीतस्त्वमिति न विना भक्तियो-
गेन लभ्यस्तस्माद्भक्तिं शरणममृतप्राप्तयेऽहं प्रपन्नः ॥ १६ ॥ हादं हन्ति
प्रथममुदिता या तमःसंश्रितानां सत्त्वोद्रेकात्तदनु च रजःकर्मयोग-
क्रमेण । स्वभ्यस्ता च प्रथयतितरां सत्त्वमेव प्रपन्ना निर्वाणाय व्रजति
शमिनां तेऽर्कं भक्तिस्त्रयीव ॥ १७ ॥ तामासाद्य श्रियमिव गृहे
कामधेनुं प्रवासे ध्वान्ते भाति धृतिमिव वने योजने ब्रह्मनाडिम ।
नावं चास्मिन् विषमविषयग्राहसंसारसिन्धौ गच्छेयं ते परमममृतं

यन्न शीतं न चोष्णम् ॥ १८ ॥ अग्नीषोमावखिलजगतः कारणं तौ
मयूखैः सर्गादाने सृजसि भगवन्हासवृद्धिक्रमेण । तावेवान्तर्विपुवति
समौ जुह्वतामात्मवह्नौ द्वावप्यस्तं नयसि युगपन्मुक्तये भक्तिभाजाम्
॥ १९ ॥ स्थूलत्वं ते प्रकृतिगहनं नैव लक्ष्यं ह्यनन्तं सूक्ष्मत्वं वा
तदपि सदसद्व्यक्त्यभावादचिन्त्यम् । ध्यायामीत्थं कथमविदितं
त्वामनाद्यन्तमन्तस्तस्मादर्कं प्रणिधिनि मयि स्वात्मनैव प्रसीद
॥ २० ॥ यत्तद्वेद्यं किमपि परमं शब्दतत्त्वं त्वमन्तस्तत्सद्व्यक्तिं
जिगमिषु शनैर्लाति मात्राकलाः खे । अव्यक्तेन प्रणववपुषा बिन्दु-
नादोदितं सच्छब्दब्रह्मोच्चरति करणव्यञ्जितं वाचकं ते ॥ २१ ॥
प्रातःसंध्यारुणकिरणभागुद्भयं राजसं यन्मध्ये चापि ज्वलदिव
यजुः शुक्लभाः सात्त्विकं वा । सायं सामास्तमितकिरणं यत्तमोह्ला-
सिरूपं साह्वः सर्गस्थितिलयविधावाकृतिस्ते त्रयीव ॥ २२ ॥ ये
पातालोदधिमुनिनगद्वीपलोकाधिवीजच्छन्दोभूतस्वरमुखनदत्सप्तसहिं-
प्रपन्नाः । ये चैकाग्रं निरवयववाग्भावमात्राधिरूढं ते त्वामेव
स्वरगुणकलावर्जितं यान्त्यनश्वम् ॥ २३ ॥ दिव्यं ज्योतिः सलिल-
पवनैः पूरयित्वा त्रिलोकीमेकीभूतं पुनरपि च तत्सारमादाय
गोभिः । अन्तर्लीनो विशसि वसुधां तद्रतः सूयसेऽन्नं तच्च
प्राणांस्त्वमिति जगतां प्राणभृत्सूर्य आत्मा ॥ २४ ॥ अग्नीषोमौ
प्रकृतिपुरुषौ बिन्दुनादौ च नित्यौ प्राणापानावपि दिननिशे ये च
सत्यानृते द्वे । धर्माधर्मौ सदसदुभयं योऽन्तरावेश्य योगी
वर्तेतात्मन्युपरतमतिर्निर्गुणं त्वां विशेत्सः ॥ २५ ॥ गर्भाधान-
प्रसवविधये सुप्तयोरिन्दुभासा सापत्न्येनाभिमुखमिव खे कान्त-
योर्मध्यसंस्थः । द्यावापृथ्व्योर्वेदनकमले गोमुखैर्बोधयित्वा पर्या-
येणापिबसि भगवन् षड्रसास्वादलोलः ॥ २६ ॥ सोमं पूर्णामृत-

मिव चरुं तेजसा साधयित्वा कृत्वा तेनानलमुखजगत्तर्पणं वैश्व-
 देवम् । आमावस्यं विघसमिव खे तत्कलाशेषमश्वन् ब्रह्माण्डान्तर्गृह-
 पतिरिव स्वात्मयागं करोषि ॥ २७ ॥ कृत्वा नक्तंदिनमिव जग-
 द्वीजमाव्यक्तिकं यत्तत्रैवान्तर्दिनकर तथा ब्राह्ममन्यत्ततोऽल्पम् ।
 दैवं पित्र्यं क्रमपरिगतं मानुषं चाल्पमल्पं कुर्वन्कुर्वन्कलयसि
 जगत्पञ्चधावऽऽर्तनाभिः ॥ २८ ॥ तत्त्वालोके तपन सुदिने ये परं
 संप्रबुद्धा ये वा चित्तोपशमरजनीयोगनिद्रामुपेताः । तेऽहोरात्रोपर-
 मपरमानन्दसंध्यासु सौरं भित्त्वा ज्योतिःपरमपरमं यान्ति
 निर्वाणसंज्ञम् ॥ २९ ॥ आ ब्रह्मेदं नवमिव जगज्जङ्गमस्थावरान्तं
 सर्गे सर्गे विसृजसि रवे गोभिरुद्रिक्तसोमैः । दीप्तैः प्रत्याहरसि च
 लये तद्यथायोनि भूयः सर्गान्तादौ प्रकटविभवां दर्शयन् रश्मि-
 लीलाम् ॥ ३० ॥ श्रित्वा नित्योपचितमुचितं ब्रह्मतेजःप्रकाशं
 रूपं सर्गस्थितिलयमुच्चा सर्वभूतेषु मध्ये । अन्तेवासिष्विव सुगुरुणा
 यः परोक्षः प्रकृत्या प्रत्यक्षोऽसौ जगति भवता दर्शितः स्वात्मनाऽऽत्मा
 ॥ ३१ ॥ लोकाः सर्वे वपुषि नियतं ते स्थितिस्त्वं च तेषामेकै-
 कस्मिन्युगपदगुणो विश्वहेतोर्गुणीव । इत्थंभूते भवति भगवन्न
 त्वदन्योऽस्मि सत्यं किं तु ज्ञस्त्वं परमपुरुषोऽहं प्रकृत्यैव चाज्ञः
 ॥ ३२ ॥ संकल्पेच्छाद्यखिलकरणप्राणवाण्यो वरेण्याः संपन्ना मे
 त्वदभिनवनाज्जन्म चेदं शरण्यम् । मन्ये चास्तं जिगमिषु शनैः
 पुण्यपापद्वयं तद्भक्तिश्रद्धे तव चरणयोरन्यथा नो भवेताम् ॥ ३३ ॥
 सत्यं भूयो जननमरणे त्वत्प्रपन्नेषु न स्तस्तत्राप्येकं तव नुतिफलं
 जन्म याचे तदित्थम् । त्रैलोक्येशः शम इव परः पुण्यकायो-
 ऽप्ययोनिः संसाराब्धौ प्लव इव जगत्तारणाय स्थिरः स्याम् ॥ ३४ ॥
 सौपुम्णेन त्वममृतपथेनैत्य शीतांशुभावं पुष्पास्यग्रे सुरनरपितृन्

शान्तभाभिः कलाभिः । पश्चादम्भो विशसि विविधाश्रौषधीस्तद्गतोऽपि
 ग्रीणास्येवं त्रिभुवनमतस्ते जगन्मित्रतार्क ॥ ३५ ॥ मन्दाक्रान्ते तमसि
 भवता नाथ दोषावसाने नान्तर्लीना मम मतिरियं गाढनिद्रां
 जहाति । तस्मादस्मंगमिततमसा पद्मिनीवात्मभासा सौरीत्येषा
 दिनकर परं नीयतामाशु बोधम् ॥ ३६ ॥ येन प्रासीकृतमिव
 जगत्सर्वमासीत्तदस्तं ध्वान्तं नीत्वा पुनरपि विभो तद्व्याघ्रातचित्तः ।
 धत्से नक्तंदिनमपि गती शुक्लकृष्णे विभज्य त्राता तस्माद्भव
 परिभवे दुष्कृते मेऽपि भानो ॥ ३७ ॥ आसंसारोपचितसदसत्कर्म-
 बन्धाश्रितानामाधिव्याधिप्रजनमरणक्षुत्पिपासार्दितानाम् । मिथ्या-
 ज्ञानप्रबलतमसा नाथ चान्धीकृतानां त्वं नस्त्राता भव करुणया
 यत्रतत्रस्थितानाम् ॥ ३८ ॥ सत्यासत्यस्खलितवचसां शौचलज्जो-
 जिज्ञितानामज्ञानानामफलसफलप्रार्थनाकातराणाम् । सर्वावस्थास्व-
 खिलविषयाभ्यस्तकौतूहलानां त्वं नस्त्राता भव पितृतया भोग-
 लोलाभकाणाम् ॥ ३९ ॥ यावद्देहं जरयति जरा नान्तकादेत्य दूती
 नो वा भीमस्त्रिफणभुजगाकारदुर्वारपाशः । गाढं कण्ठे लगति
 सहसा जीवितं लेलिहानस्तावद्भक्ताभयद सदयं श्रेयसे नः प्रसीद
 ॥ ४० ॥ विश्वप्राणग्रसनरसनाटोपकोपप्रगल्भं मृत्योर्वक्त्रं दहननय-
 नोद्दामदंष्ट्राकरालम् । यावद्दृष्ट्वा व्रजति न भिया पञ्चतामेष काय-
 स्तावन्नित्यामृतमय रवे पाहि नः कांदिशीकान् ॥ ४१ ॥ शब्दाकारं
 वियदिव वपुस्ते यजुःसामधाम्नः सप्तच्छन्दांस्यपि च तुरगा ऋद्धयं
 मण्डलं च । एवं सर्वश्रुतिमयतया मद्दयानुग्रहाद्वा क्षिप्रं मत्तः
 कृपणकरुणाक्रन्दमाकर्णयेमम् ॥ ४२ ॥ नाशं नास्त्रचरणशरणा
 यान्त्यपि ग्रस्यमाना देवैरित्थं सितमिव यशो दर्शयन्स्व त्रिलो-
 क्याम् । मन्ये सोमं क्षततनुममागर्भवृद्ध्या विवस्वन् शुक्लां छायां

नयसि शनकैः स्वां सुषुम्णांशुभासा ॥ ४३ ॥ आस्तां जन्मप्रभृति
भवतः सेवनं तद्धि लोके वाच्यं केनापरिमितफलं भुक्तिमुक्तिप्रकारम् ।
ज्योतिर्मात्रं स्मृतिपथमितो जीवितान्तेऽपि भास्वन्निर्वाणाय प्रभवसि
सतां तेन ते कः समोऽन्यः ॥ ४४ ॥ अप्रत्यक्षत्रिदशभजनाद्यत्परोक्षं
फलं तत्पुंसां युक्तं भवति हि समं कारणेनैव कार्यम् । प्रत्यक्षस्त्वं
सकलजगतां यत्समक्षं फलं मे युष्मद्वक्तेः समुचितमतस्तनु याचे यथा
त्वाम् ॥ ४५ ॥ ये चारोग्यं दिशति भगवान्सेवितोऽप्येवमाहुस्ते
तत्त्वज्ञा जगति सुभगा भोगयोगप्रधानाः । भुक्तेर्भुक्तेरपि च जगतां यच्च
पूर्णं सुखानां तस्यान्योऽर्कादमृतवपुषः को हि नामास्तु दाता ॥ ४६ ॥
हित्वा हित्वा गुरुचपलतामप्यनेकान्निजार्थान्यैरेकार्थीकृतमिव भवत्सेवनं
मत्प्रियार्थम् । तेषामिच्छाम्युपकृतिमहं स्वेन्द्रियाणां प्रियाणामादौ
तस्मान्मम दिनपते देहि तेभ्यः प्रसादम् ॥ ४७ ॥ किं तन्नामोच्चरति
वचनं यस्य नोच्चारकस्त्वं किं तद्वाच्यं सकलवचसां विश्वमूर्ते न
यत्त्वम् । तस्मादुक्तं यदपि तदपि त्वद्भुतौ भक्तियोगादस्माभिस्तद्भवतु
भगवँस्त्वत्प्रसादेन धन्यम् ॥ ४८ ॥ या पन्थानं दिशति शिशिराद्युत्तरं
देवयानं या वा कृष्णं पितृपथमथो दक्षिणं प्रावृडाद्यम् । ताभ्यामन्या
विषुवदभिजिन्मध्यमा कृत्यशून्या धन्या काचित्प्रकृतिपुरुषावन्तरा
मेऽस्तु वृत्तिः ॥ ४९ ॥ स्थित्वा किञ्चिन्मन इव पिबन्सेतुबन्धस्य
मध्ये प्राप्योपेयं ध्रुवपदमथो व्यक्तमुद्दाल्य तालु । सत्यादूर्ध्वं किमपि
परमं व्योम सोमाग्निशून्यं गच्छेयं त्वां सुरपितृगती चान्तरा
ब्रह्मभूतः ॥ ५० ॥ सर्वात्मत्वं सवितुरिति यो वाङ्मनःकायबुद्ध्या
रागद्वेषोपशमसमतायोगमेवारुरुक्षुः । धर्माधर्मप्रसनरशनामुक्तये
युक्तियुक्तां स श्रीसाम्बः स्तुतिमिति रवेः स्वप्रशान्तां चकार
॥ ५१ ॥ भक्तिश्रद्धाद्यखिलतरुणीवल्लभेनेदमुक्तं श्रीसाम्बेन प्रकटगहनं

स्तोत्रमध्यात्मगर्भम् । यः सावित्रं पठति नियतं स्वात्मवत्सर्व-
लोकान्पश्यन्सोऽन्ते व्रजति शुक्लवन्मण्डलं चण्डरश्मेः ॥ ५२ ॥ इति
परमरहस्यश्लोकपञ्चाशदेषा तपनवनपुण्या सागमब्रह्मचर्चा । हरतु
दुरितमस्मद्वर्णिताकर्णिता वो दिशतु च शुभसिद्धिं मातृवद्भक्तिभाजाम्
॥ ५३ ॥ इति श्रीसाम्बप्रणीता साम्बपञ्चाशिका संपूर्णा ॥

४२०. सूर्यस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ नमो भगवते आदित्यायाखिलजगतामा-
त्मस्वरूपेण कालस्वरूपेण चतुर्विधभूतनिकायानां ब्रह्मादिस्तंबपर्यंताना-
मंतर्हृदयेषु बहिरपि चाकाश इवोपाधिनाऽध्यवधीयमानो भगवानेक
एकक्षणलवनिमेषावयवोपचितसंवत्सरगणेनापामादानविसर्गाभ्यामिमां
लोकयात्रामनुवहति ॥ १ ॥ यदुह वाव विबुधर्षभ सवितरदस्तपत्यनु-
सवनमहराश्रायविधिनोपतिष्ठमानानामखिलदुरितवृजिनवीजावभर्जन-
भगवतः समभिधीमहि तपनमंडलम् ॥ २ ॥ य इह वाव स्थिरचरनि-
कराणां निजकेतनानां मनइंद्रियासुगणानात्मनः स्वयमात्मांतर्यामी
प्रचोदयति ॥ ३ ॥ य एवेमं लोकमतिकरालवदनांधकारसंज्ञाजगर-
ग्रहगलितं संमृतकमिव विचेतनमवलोक्यानुकंपया परमकारुणिकवी-
क्षयैवोत्थाप्याऽहरहरनुसवनं श्रेयसि स्वधर्माख्यात्मावस्थाने प्रवर्तयत्य-
वनिपतिरिवासाधूनां भयमुदीरयन्नटति ॥ ४ ॥ परित आशापालैस्तत्र
तत्र कमलकोशांजलिभिरुपहृताह्वणः ॥ ५ ॥ अथ ह भगवंस्तव
चरणनलिनयुगलं त्रिभुवनगुरुभिर्वंदितमहमथातयामयजुःकाम उप-
सरामीति ॥ ६ ॥ इति श्रीमद्भागवते द्वादशस्कंधे याज्ञवल्क्यकृतं
सूर्यस्तोत्रं संपूर्णम् ॥



❀ हनुमत्स्तोत्राणि ❀



मनोजवं मारुततुल्यवेगं
जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं
श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥

❀ हनुमत्स्तोत्राणि ❀

४२१. मारुतिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ नमो भगवते विचित्रवीरहनुमते प्रलय-
कालानलप्रभाप्रज्वलनाय । प्रतापवज्रदेहाय । अंजनीगर्भसंभूताय ।
प्रकटविक्रमवीरदैत्यदानवयक्षरक्षोगणग्रहबंधनाय । भूतग्रहबंधनाय ।
प्रेतग्रहबंधनाय । पिशाचग्रहबंधनाय । शाकिनीडाकिनीग्रहबंधनाय ।
काकिनीकामिनीग्रहबंधनाय । ब्रह्मग्रहबंधनाय । ब्रह्मराक्षसग्रहबंधनाय ।
चोरग्रहबंधनाय । मारीग्रहबंधनाय । एहि एहि । आगच्छ आगच्छ ।
आवेशय आवेशय । मम हृदये प्रवेशय प्रवेशय । स्फुर स्फुर ।
प्रस्फुर प्रस्फुर । सत्यं कथय । व्याघ्रमुखबंधन सर्पमुखबन्धं राजमु०
नारीमु० सभामु० शत्रुमु० सर्वमु० लंकाप्रासादभंजन । अमुकं
मे वशमानय । क्लीं क्लीं क्लीं ह्रीं श्रीं श्रीं राजानं वशमानय ।
श्रीं ह्रीं क्लीं स्त्रिय आकर्षय आकर्षय शत्रून्मर्दय मर्दय मारय मारय
चूर्णय चूर्णय खे खे श्रीरामचंद्राज्ञया मम कार्यसिद्धिं कुरु कुरु
ॐहां ह्रीं हूं ह्रैं ह्रौं हः फट् स्वाहा विचित्रवीर हनूमन् मग सर्वशत्रून्
भस्मीकुरु कुरु । हन हन हुं फट् स्वाहा ॥ एकादशशतवारं जपित्वा
सर्वशत्रून् वशमानयति नान्यथा इति ॥ इति श्रीमारुतिस्तोत्रं
संपूर्णम् ॥

४२२. हनुमद्वाडवानलस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीहनुमद्वाडवानलस्तोत्रमंत्रस्य ।
श्रीरामचंद्र ऋषिः । श्रीवडवानलहनुमान् देवता । मम समस्त-
रोगप्रशमनार्थं आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं समस्तपापक्षयार्थं सीता-

रामचंद्रप्रीत्यर्थं च हनुमद्वाडवानलस्तोत्रजपमहं करिष्ये । ॐ हां
 हीं ॐ नमो भगवते श्रीमहाहनुमते प्रकटपराक्रम सकलदिङ्माण्डल-
 यशोवितानधवलीकृतजगत्रितय वज्रदेह रुद्रावतार लंकापुरीदहन
 उमाभमलमंत्र उदधिवंधन दशशिरःकृतांतक सीताश्वसन वायुपुत्र
 अंजनीगर्भसंभूत श्रीरामलक्ष्मणानंदकर कपिसैन्यप्राकार सुग्रीवसाह्य
 रणपर्वतोत्पाटन कुमारब्रह्मचारिन् गभीरनाद सर्वपापग्रहवारण
 सर्वज्वरोच्चाटन डाकिनीविध्वंसन ॐ हां हीं ॐ नमो भगवते महावीर-
 वीराय सर्वदुःखनिवारणाय ग्रहमंडलसर्वभूतमंडलसर्वपिशाचमंडलोच्चा-
 टन भूतज्वरएकाहिकज्वरव्याहिकज्वरत्र्याहिकज्वरचातुर्थिकज्वरसंताप-
 ज्वरविषमज्वरतापज्वरमाहेश्वरवैष्णवज्वरान् छिंधि छिंधि यक्षब्रह्मराक्ष-
 सभूतप्रेतपिशाचान् उच्चाटय उच्चाटय ॐ हां श्रीं ॐ नमो भगवते
 श्रीमहाहनुमते ॐ हां हीं हूं हैं हौं हः आं हां हां हां हां हां औं सौं एहि
 एहि एहि ॐ हं ॐ हं ॐ हं ॐ हं ॐ नमो भगवते श्रीमहाहनुमते
 श्रवणचक्षुर्भूतानां शाकिनीडाकिनीनां विषमदुष्टानां सर्वक्षिं हर हर
 आकाशभुवनं भेदय भेदय छेदय छेदय मारय मारय शोषय शोषय
 मोहय मोहय ज्वालय ज्वालय प्रहारय प्रहारय सकलमायां भेदय
 भेदय ॐ हां हीं ॐ नमो भगवते महाहनुमते सर्वग्रहोच्चाटन परवलं
 क्षोभय क्षोभय सकलबंधनमोक्षणं कुरु कुरु शिरःशूलगुल्मशूलसर्व-
 शूलान्निर्मूलय निर्मूलय नागपाशानंतवासुकितक्षककर्कोटककालियान्
 यक्षकुलजलगतविलगतरात्रिचरदिवाचरसर्वान्निर्विषं कुरु कुरु स्वाहा ।
 राजभयचोरभयपरमंत्रपरयंत्रपरतंत्रपरविद्याश्छेदय छेदय स्वमंत्रस्वयं-
 त्रस्वतंत्रस्वविद्याः प्रकटय प्रकटय सर्वारिष्टान्नाशय नाशय सर्वशत्रून्नाशय
 नाशय असाध्यं साधय साधय हुं फट् स्वाहा ॥ इति श्रीबिभीषणकृतं
 हनुमद्वाडवानलस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

४२३. पञ्चमुखहनुमत्कवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीपञ्चमुखहनुमत्कवचमन्त्रस्य ।
 ब्रह्मा ऋषिः । गायत्री छन्दः । पञ्चमुखविराट् हनुमान् देवता ।
 ह्रीं वीजम् । श्रीं शक्तिः । क्रौं कीलकम् । क्लूं कवचम् । क्रैं
 अस्त्राय फट् । इति दिग्बन्धः ॥ श्रीगरुड उवाच ॥ अथ ध्यानं
 प्रवक्ष्यामि शृणु सर्वाङ्गसुन्दरि । यत्कृतं देवदेवेन ध्यानं हनुमतः
 प्रियम् ॥ १ ॥ पञ्चवक्त्रं महाभीमं त्रिपञ्चनयनैर्युतम् । बाहुभि-
 र्दशभिर्युक्तं सर्वकामार्थसिद्धिदम् ॥ २ ॥ पूर्वं तु वानरं वक्त्रं
 कोटिसूर्यसमप्रभम् । दंष्ट्राकरालवदनं भ्रुकुटीकुटिलेक्षणम् ॥ ३ ॥
 अस्यैव दक्षिणं वक्त्रं नारसिंहं महाद्भुतम् । अत्युग्रतेजोवपुषं भीषणं
 भयनाशनम् ॥ ४ ॥ पश्चिमं गारुडं वक्त्रं वक्रतुण्डं महाबलम् ।
 सर्वनागप्रशमनं विषभूतादिकृन्तनम् ॥ ५ ॥ उत्तरं सौकरं वक्त्रं
 कृष्णं दीप्तं नभोपमम् । पातालसिंहवेतालज्वररोगादिकृन्तनम्
 ॥ ६ ॥ ऊर्ध्वं हयाननं घोरं दानवान्तकरं परम् । येन वक्त्रेण
 विप्रेन्द्र तारकाख्यं महासुरम् ॥ ७ ॥ जघान शरणं तत्स्यात्सर्व-
 शत्रुहरं परम् । ध्यात्वा पञ्चमुखं रुद्रं हनूमन्तं दयानिधिम् ॥ ८ ॥
 खड्गं त्रिशूलं खट्वाङ्गं पाशमङ्कुशपर्वतम् । मुष्टिं कौमोदकीं वृक्षं
 धारयन्तं कमण्डलुम् ॥ ९ ॥ भिन्दिपालं ज्ञानमुद्रां दशभिर्मुनि-
 पुङ्गवम् । एतान्यायुधजालानि धारयन्तं भजाम्यहम् ॥ १० ॥
 प्रेतासनोपविष्टं तं सर्वाभरणभूषितम् । दिव्यमाल्याम्बरधरं
 दिव्यगन्धानुलेपनम् । सर्वाश्चर्यमयं देवं हनूमद्विश्वतोमुखम्
 ॥ ११ ॥ पञ्चास्यमच्युतमनेकविचित्रवर्णवक्त्रं शशाङ्कशिखरं कपि-
 राजवर्यम् । पीताम्बरादिमुकुटैरुपशोभिताङ्गं पिङ्गाक्षमाद्यमनिशं
 मनसा स्मरामि ॥ १२ ॥ मर्कटेशं महोत्साहं सर्वशत्रुहरं परम् ।

शत्रुं संहर मां रक्ष श्रीमन्नापदमुद्धर ॥ १३ ॥ ॐ हरिमर्कट मर्कट
मन्त्रमिदं परिलिख्यति लिख्यति वामतले । यदि नश्यति नश्यति
शत्रुकुलं यदि मुञ्चति मुञ्चति वामलता ॥ १४ ॥ ॐ हरिमर्कटाय
स्वाहा । ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय पूर्वकपिमुखाय सकलशत्रुसंहार-
काय स्वाहा । ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय दक्षिणमुखाय
करालवदनाय नरसिंहाय सकलभूतप्रमथनाय स्वाहा । ॐ नमो
भगवते पञ्चवदनाय पश्चिममुखाय गरुडाननाय सकलविषहराय
स्वाहा । ॐ नमो भगवते पञ्चवदनायोत्तरमुखायादिवराहाय सकल-
संपत्कराय स्वाहा । ॐ नमो भगवते पञ्चवदनायोर्ध्वमुखाय हयग्रीवाय
सकलजनवशंकराय स्वाहा । ॐ अस्य श्रीपञ्चमुखहनुमन्मन्त्रस्य ।
श्रीरामचन्द्र ऋषिः । अनुष्टुप् छन्दः । पञ्चमुखवीरहनुमान् देवता ।
हनुमानिति बीजम् । वायुपुत्र इति शक्तिः । अञ्जनीसुत इति
कीलकम् । श्रीरामदूतहनुमत्प्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ॥ इति
ऋष्यादिकं विन्यसेत् । ॐ अञ्जनीसुताय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ
रुद्रमूर्तये तर्जनीभ्यां नमः । ॐ वायुपुत्राय मध्यमाभ्यां नमः । ॐ
अग्निगर्भाय अनामिकाभ्यां नमः । ॐ रामदूताय कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।
ॐ पञ्चमुखहनुमते करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । इति करन्यासः ॥ ॐ
अञ्जनीसुताय हृदयाय नमः । ॐ रुद्रमूर्तये शिरसे स्वाहा । ॐ
वायुपुत्राय शिखायै वषट् । ॐ अग्निगर्भाय कवचाय हुम् । ॐ
रामदूताय नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ पञ्चमुखहनुमते अस्त्राय फट् ।
पञ्चमुखहनुमते स्वाहा ॥ इति दिग्बन्धः ॥ अथ ध्यानम् ॥ वन्दे
वानरनारासिंहखगराट्कोडाश्वक्वत्रान्वितं दिव्यालङ्कारणं त्रिपञ्चनयनं
देदीप्यमानं रुचा । हस्ताब्जैरसिखेटपुस्तकमुधाकुम्भाङ्कुशाद्रिं हलं खट्वाङ्गं
फणिभूरुहं दशभुजं सर्वारिवीरापहम् ॥ इति ॥ अथ मन्त्रः ॥ ॐ

श्रीरामदूतायाज्जनेयाय वायुपुत्राय महाबलपराक्रमाय सीतादुःखनि-
 वारणाय लङ्कादहनकारणाय महाबलप्रचण्डाय फाल्गुनसखाय कोलाह-
 लसकलब्रह्माण्डविश्वरूपाय सप्तसमुद्रनिर्लेङ्घनाय पिङ्गलनयनायामित-
 विक्रमाय सूर्यबिम्बफलसेवनाय दुष्टनिवारणाय दृष्टिनिरालंकृताय
 सञ्जीविनीसञ्जीविताङ्गदलक्ष्मणमहाकपिसैन्यप्राणदाय दशकण्ठविध्वं-
 सनाय रामेष्टाय महाफाल्गुनसखाय सीतासहितरामवरप्रदाय षट्प्रयो-
 गागमपञ्चमुखवीरहनुमन्मन्त्रजपे विनियोगः ॥ ॐ हरिमर्कटमर्कटाय
 बंबंबंबंबं वौषट् स्वाहा । ॐ हरिमर्कटमर्कटाय फंफंफंफं फट् स्वाहा ।
 ॐ हरिमर्कटमर्कटाय खेंखेंखेंखें मारणाय स्वाहा । ॐ हरिमर्कटमर्क-
 टाय लुंलुंलुंलुं आकर्षितसकलसम्पत्कराय स्वाहा । ॐ हरिमर्कट-
 मर्कटाय धंधंधंधंधं शत्रुस्तम्भनाय स्वाहा । ॐ टंटंटंटं कूर्ममूर्तये
 पञ्चमुखवीरहनुमते परयन्त्रपरतन्त्रोच्चाटनाय स्वाहा । ॐ कंखंगंधं
 चंलंजंलं टंठंडंणं तंधंधंधं पंफंबंभं यंरंलंवं शंषंसंहं लंक्षं स्वाहा ।
 इति दिग्बन्धः ॥ ॐ पूर्वकपिमुखाय पञ्चमुखहनुमते टंटंटंटं सकल-
 शत्रुसंहरणाय स्वाहा । ॐ दक्षिणमुखाय पञ्चमुखहनुमते करालवदनाय
 नरसिंहाय ॐ हांहींहूंहैहौहः सकलभूतप्रेतदमनाय स्वाहा । ॐ
 पश्चिममुखाय गरुडाननाय पञ्चमुखहनुमते मंमंमंमं सकलविषहराय
 स्वाहा । ॐ उत्तरमुखायदिवराहाय लंलंलंलं नृसिंहाय नीलकण्ठमू-
 र्तये पञ्चमुखहनुमते स्वाहा । ॐ ऊर्ध्वमुखाय हयग्रीवाय रूंरूंरूं
 रुद्रमूर्तये सकलप्रयोजननिर्वाहकाय स्वाहा । ॐ अञ्जनीसुताय
 वायुपुत्राय महाबलाय सीताशोकनिवारणाय श्रीरामचन्द्रकृपापादुकाय
 महावीर्यप्रमथनाय ब्रह्माण्डनाथाय कामदाय पञ्चमुखवीरहनुमते
 स्वाहा । भूतप्रेतपिशाचब्रह्मराक्षसशाकिनीडाकिन्यन्तरिक्षग्रहपरयन्त्रपर-
 तन्त्रोच्चाटनाय स्वाहा । सकलप्रयोजननिर्वाहकाय पञ्चमुखवीरहनुमते

श्रीरामचन्द्रवरप्रसादाय जंजंजंजं स्वाहा । इदं कवचं पठित्वा तु
महाकवचं पठेन्नरः । एकवारं जपेत्स्तोत्रं सर्वशत्रुनिवारणम् ॥ १५ ॥
द्विवारं तु पठेन्नित्यं पुत्रपौत्रप्रवर्धनम् । त्रिवारं च पठेन्नित्यं सर्वसंपत्करं
शुभम् ॥ १६ ॥ चतुर्वारं पठेन्नित्यं सर्वरोगनिवारणम् । पञ्चवारं पठेन्नित्यं
सर्वलोकवशङ्करम् ॥ १७ ॥ षड्वारं च पठेन्नित्यं सर्वदेववशङ्करम् ।
सप्तवारं पठेन्नित्यं सर्वसौभाग्यदायकम् ॥ १८ ॥ अष्टवारं पठेन्नित्यमि-
ष्टकामार्थसिद्धिदम् । नववारं पठेन्नित्यं राजभोगमवाप्नुयात् ॥ १९ ॥
दशवारं पठेन्नित्यं त्रैलोक्यज्ञानदर्शनम् । रुद्रावृत्तिं पठेन्नित्यं सर्वसिद्धि-
र्भवेद्ध्युवम् ॥ २० ॥ निर्वलो रोगयुक्तश्च महाव्याध्यादिपीडितः ।
कवचस्मरणेनैव महाबलमवाप्नुयात् ॥ २१ ॥ इति श्रीसुदर्शनसंहितायां
श्रीरामचन्द्रसीताप्रोक्तं श्रीपञ्चमुखहनुमत्कवचं संपूर्णम् ॥

४२४. हनुमलांगूलास्त्रस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ हनुमन्नञ्जनीसूनो महाबलपराक्रम । लोललां-
गूलपातेन ममारातीन्निपातय ॥ १ ॥ मर्कटाधिप मार्तण्डमण्डलग्रास-
कारक । लोल० ॥ २ ॥ अक्षक्षपण पिङ्गाक्ष दितिजासुक्षयंकर ।
लोल० ॥ ३ ॥ रुद्रावतारसंसारदुःखभारापहारक । लोल० ॥ ४ ॥
श्रीरामचरणाभोजमधुपायितमानस । लोल० ॥ ५ ॥ वालिप्रमथन-
क्लान्तसुग्रीवोन्मोचनप्रभो । लोल० ॥ ६ ॥ सीताविरहवारीशभग्न-
सीतेशतारक । लोल० ॥ ७ ॥ रक्षोराजप्रतापाग्निदह्यमानजगद्वन
लोल० ॥ ८ ॥ ग्रस्ताशेषजगत्स्वास्थ्य राक्षसाम्भोधिमन्दर
लोल० ॥ ९ ॥ पुच्छगुच्छस्फुरद्वीर जगद्गधारिपत्तन । लोल० ॥ १० ॥
जगन्मनोदुरुलङ्घ्यापारावारविलङ्घन । लोल० ॥ ११ ॥ स्मृतमात्र-
समस्तेष्टपूरक प्रणतप्रिय । लोल० ॥ १२ ॥ रात्रिचरतमोरात्रिकृन्त-
नैकविकर्तन । लोल० ॥ १३ ॥ जानक्या जानकीजानेः प्रेमपात्र

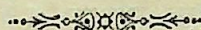
परंतप । लोल० ॥ १४ ॥ भीमादिकमहाभीमवीरावेशावतारक ।
 लोल० ॥ १५ ॥ वैदेहीचिरहृक्कान्तरामरोषैकविग्रह । लोल० ॥ १६ ॥
 वज्राङ्गनखदंष्ट्रेश वज्रिवज्रावगुण्ठन । लोल० ॥ १७ ॥ अखर्वगर्व-
 गन्धर्वपर्वतोद्भेदनस्वर । लोल० ॥ १८ ॥ लक्ष्मणप्राणसंत्राण त्रात-
 तीक्ष्णकरान्वय । लोल० ॥ १९ ॥ रामादिविप्रयोगार्त भरताद्याति-
 नाशन । लोल० ॥ २० ॥ द्रोणाचलसमुत्क्षेपसमुत्क्षिप्तारिवैभव ।
 लोल० ॥ २१ ॥ सीताशीर्वादसंपन्न समस्तावयवाक्षत । लोललांगूल-
 पातेन ममारातीन्निपातय ॥ २२ ॥ इत्येवमश्वत्थतलोपविष्टः शत्रुञ्जयं
 नाम पठेत्स्वयं यः । स शीघ्रमेवास्तसमस्तशत्रुः प्रमोदते मारुतजप्रसा-
 दात् ॥ २३ ॥ इति श्रीहनुमलांगूलास्त्रस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

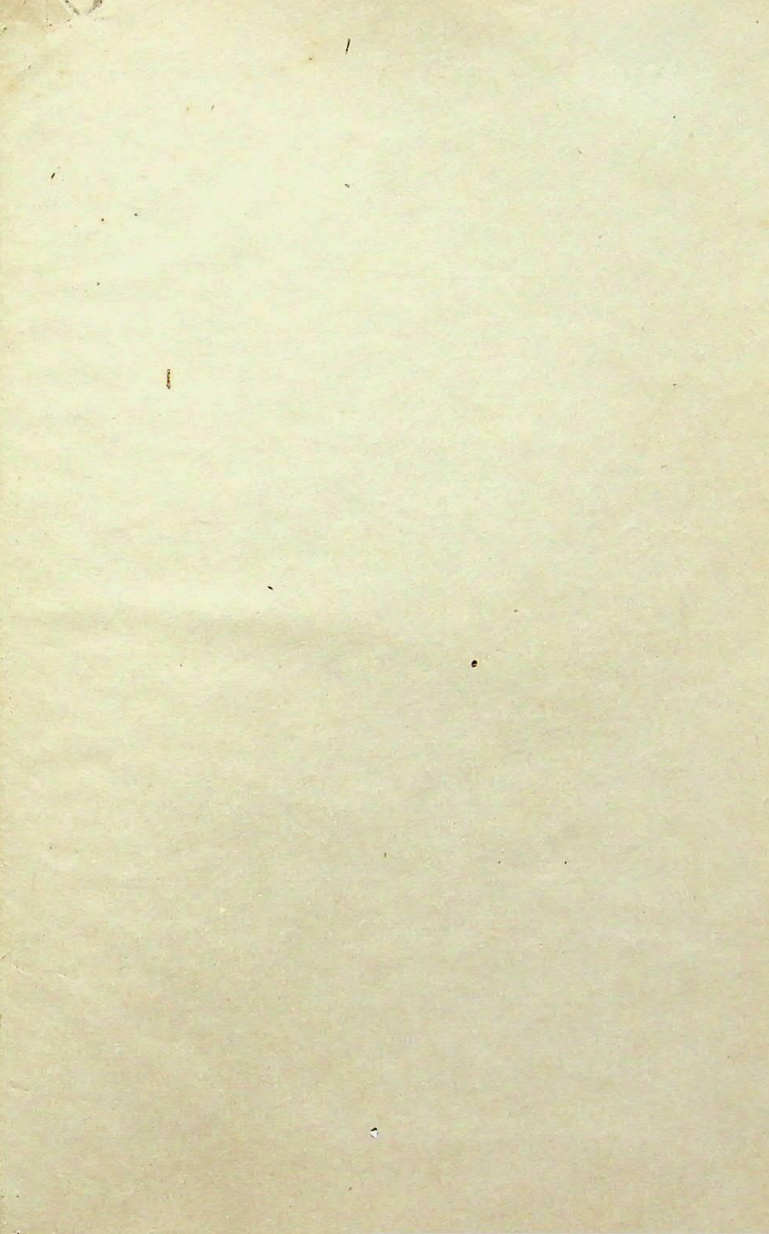
४२५. एकादशमुखहनुमत्कवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ लोपामुद्रा उवाच ॥ कुम्भोज्ज्व दयासिन्धो
 श्रुतं हनुमतः परम् । यन्नमन्नादिकं सर्वं त्वन्मुखोदीरितं मया
 ॥ १ ॥ दयां कुरु मयि प्राणनाथ वेदितुमुत्सहे । कवचं वायुपुत्रस्य
 एकादशमुखात्मनः ॥ २ ॥ इत्येवं वचनं श्रुत्वा प्रियायाः प्रश्रया-
 न्वितम् । वक्तुं प्रचक्रमे तत्र लोपामुद्रां प्रति प्रभुः ॥ ३ ॥ अगस्त्य
 उवाच ॥ नमस्कृत्वा रामदूतं हनूमन्तं महामतिम् । ब्रह्मप्रोक्तं तु
 कवचं शृणु सुन्दरि सादरम् ॥ ४ ॥ सनन्दनाय सुमहच्चतुरानन-
 भाषितम् । कवचं कामदं दिव्यं रक्षःकुलनिबर्हणम् ॥ ५ ॥
 सर्वसंपत्प्रदं पुण्यं मर्त्यानां मधुरस्वरे । अस्य श्रीकवचस्यैकादश-
 वक्त्रस्य धीमतः ॥ ६ ॥ हनूमत्स्तुतिमन्त्रस्य सनन्दन ऋषिः
 स्मृतः । प्रसन्नात्मा हनूमांश्च देवता परिकीर्तिता ॥ ७ ॥
 छन्दोऽनुष्टुप् समाख्यातं बीजं वायुसुतस्थथा । मुख्यः प्राणः शक्ति-

रिति विनियोगः प्रकीर्तितः ॥ ८ ॥ सर्वकामार्थसिद्ध्यर्थं जप
 एवमुदीरयेत् । ॐ स्कंदीजं शक्तिधृक् पातु शिरो मे पवनात्मजः
 ॥ ९ ॥ कौंदीजात्मा नयनयोः पातु मां वानरेश्वरः । क्ष्वीजरूपः
 कर्णौ मे सीताशोकविनाशनः ॥ १० ॥ ग्लौवीजवाच्यो नासां मे
 लक्ष्मणप्राणदायकः । वंदीजार्थश्च कण्ठं मे पातु चाक्षयकारकः
 ॥ ११ ॥ रांवीजवाच्यो हृदयं पातु मे कपिनायकः । वंदीज-
 कीर्तितः पातु बाहू मे चाञ्जनीसुतः ॥ १२ ॥ ह्रींवीजो राक्षसेन्द्रस्य
 दर्पहा पातु चोदरम् । हसौंवीजमयो मध्यं पातु लङ्काविदाहकः
 ॥ १३ ॥ ॐ ह्रींवीजधरः पातु गुह्यं देवेन्द्रवन्दितः । रंवीजात्मा
 सदा पातु चोरु मे वार्धिलङ्घनः ॥ १४ ॥ सुग्रीवसचिवः पातु
 जानुनी मे मनोजवः । पादौ पादतले पातु द्रोणाचलधरो हरिः ।
 आपादमस्तकं पातु रामदूतो महाबलः ॥ १५ ॥ पूर्वं वानरवक्त्रो
 मामाग्नेय्यां क्षत्रियान्तकृत् । दक्षिणे नारसिंहस्तु नैर्ऋत्यां गणना-
 यकः ॥ १६ ॥ वारुण्यां दिशि मामव्यात्खगवक्त्रो हरीश्वरः ।
 वायव्यां भैरवमुखः कौबेर्यां पातु मां सदा ॥ १७ ॥ कोव्यास्यः
 पातु मां नित्यमैशान्यां रुद्ररूपधृक् । ऊर्ध्वं हयाननः पातु गुह्याध्रः
 सुमुखस्तथा ॥ १८ ॥ रामास्यः पातु सर्वत्र सौम्यरूपो महाभुजः ।
 इत्येवं रामदूतस्य कवचं यः पठेत्सदा ॥ १९ ॥ एकादशमुख-
 स्यैतद्गोप्यं ते कीर्तितं मया । रक्षोघ्नं कामदं सौम्यं सर्वसंपद्विधायकम्
 ॥ २० ॥ पुत्रदं धनदं चोग्रशत्रुसंघविमर्दनम् । स्वर्गापवर्गदं दिव्यं
 चिन्तितार्थप्रदं शुभम् ॥ २१ ॥ एतत्कवचमज्ञात्वा मन्त्रसिद्धिर्न
 जायते । चत्वारिंशत्सहस्राणि पठेच्छुद्धात्मको नरः ॥ २२ ॥
 एकवारं पठेन्नित्यं कवचं सिद्धिदं पुमान् । द्विवारं वा त्रिवारं वा
 पठन्नायुष्यमामुयात् ॥ २३ ॥ क्रमादेकादशादेवमावर्तनजपा-

त्सुधीः । वर्षान्ते दर्शनं साक्षाल्लभते नात्र संशयः ॥ २४ ॥ यं यं
चिन्तयते चार्थं तं तं प्राप्नोति पूरुषः । ब्रह्मोदीरितमेतद्धि तवाग्रे
कथितं महत् ॥ २५ ॥ इत्येवमुक्त्वा वचनं महर्षिस्तूष्णीं बभूवे-
न्दुमुखीं निरीक्ष्य । संहृष्टचित्तापि तदा तदीयपादौ नमामातिमुदा
स्वभर्तुः ॥ २६ ॥ अथ मन्त्रः ॥ ओं स्फ्रं क्रौं क्षौं ग्लौं वं रां वां
ह्रौं ह्रीं रं । स्फ्रं क्रौं क्षौं ग्लौं क्षीं क्षौं दुं हां हलौं ह्रीं रं । इत्यगस्त्य-
सारसंहितायामेकादशमुखहनुमत्कवचं संपूर्णम् ॥





Mr. Mujoo

Tel no Srinagar

4873

